दक्षिण-पूर्व एशिया

ज्ञानमण्डल-ग्रन्थमालाका ८७ वाँ ग्रन्थ

दक्षिण-पूर्व एशिया

(कम्बुज, थाई, बर्मा, मलाया)

लेखक

रघुनाथ सिंह एम० पी०

भूमिका

स० का० पाटिल

वाराणसी

ज्ञानमण्डल लिमिटेड

मूल्य : सात रुपये पचास नये पैसे
विज[illegible] संवत २०१६

प्रकाशक–ज्ञानमण्डल लिमिटेड, वाराणसी (बनारस) १
मुद्रक–ओमप्रकाश कपूर, ज्ञानमण्डल लिमिटेड, वाराणसी. ५२२४–१६

महासागरके छोरतक
भारतीय संस्कृति ले जानेवाले
महान् नाविकोंको

भूमिका

दक्षिण-पूर्व एशियान्तर्गत कम्बुज, थाई, वर्मा तथा मलाया देशका भौगोलिक एवं प्राचीन इतिहास-सहित वर्णन किया हुआ दक्षिण-पूर्व एशिया नामक ग्रन्थ मैंने पढ़ा। मुझे यह लिखते हर्ष होता है कि यह पुस्तक बहुत ही विचारप्रवर्त्तक, पठनीय तथा माननीय है। उन देशोंकी कला, साहित्य, वेशभूषा, खान-पान, रहन-सहन आदि प्रकारोंका इतना सार्थ वर्णन इसमे किया गया है कि पुस्तक एक बार हाथमे लेनेपर छोड़नेका जी नहीं होता। मैं श्री रघुनाथ सिंहको इस अमूल्य पुस्तक-लेखनके लिए मनःपूर्वक बधाई देता हूँ।

स० का० पाटिल

दो शब्द

दक्षिण-पूर्व एशियाकी संज्ञा बर्मा, श्याम, कम्बोडिया, लाओस, वीतनाम, वीतमिन्ह, मलाया-संघ, सिगापुर तथा इण्डोनेशियासे दी जाती है। प्राचीन भारतीय वाङ्मयमे उनके लिए सुवर्णभूमि तथा सुवर्णद्वीप शब्द प्रयुक्त हुआ है। सुवर्णभूमिमे एशियाई भू-खण्डसे मिले देश अर्थात् बर्मा, श्याम, कम्बोडिया, लाओस, वीतनाम तथा वीतमिन्ह आते हैं। सुवर्णद्वीपसे मलाया-संघ, सिगापुर तथा इण्डोनेशियाके सहस्रो द्वीपोकी सज्ञा दी गयी है। वहाँ भारतीय सभ्यता, सस्कृति, धर्म, इतिहास, साहित्य, आचार, व्यवहार पूर्णरूपेणविकसित हुए थे यह बात वास्तु, स्थापत्य, ललित, मूर्ति कलादिके चिह्नो, अवशेषो तथा वहाँके निवासियोके जीवनके अध्ययनसे स्पष्ट लक्षित होती है। मलाया तथा इण्डोनेशियाके हिन्दुओने लगभग शत-प्रतिशत मुसलिम धर्म ग्रहण कर लिया है। यह केवल दो-तीन सौ वर्ष पूर्वकी घटना है। पूर्वधर्मके प्रति आस्था न होनेके कारण बहुत कुछ नष्ट हो गया है। भू-गर्भसे प्राप्त तथा कुछ अवशेषोके कारण पूर्व जीवनपर काफी प्रकाश पड़ता है।

दक्षिण-पूर्व एशियामे भारतीय सभी स्थानो तथा सभी व्यापारो एवं कार्योमे लगे मिलेगे। किसी भी भारतीय पर्यटकके लिए पर्यटन करना कठिन न होगा। पड़ोसी राष्ट्रोके जीवन, उनके विकास तथा उनके आन्तरिक एवं बाह्य सम्बन्धो, विचारो आदिका आधुनिकतम ज्ञान रखना स्वतन्त्र भारतके लिए आवश्यक है। भारतीय राजनीति बहुत-कुछ इन देशोके राजनीति एव व्यवहारपर भविष्यमे अवलम्बित रहेगी।

सुवर्णभूमिकी यात्रामे अपने साथ सर्वश्री राधारमण, नवाब सिंह चौहान, ओंकारनाथ ससद सदस्य तथा श्रीमती कौशल्या देवी धर्मपत्नी श्री राधारमण साथ थी। मलाया आदिकी यात्रामे सर्वश्री राधारमण, एम०आर० मलकानी, अकबर भाई चौढ़ा तथा महावीरप्रसाद भार्गव ससद सदस्य थे।

क्रम

कम्बुज

भारतसे सहस्रों कोस दूर भारतीय नर-नारियोंने पाषाण शिलाओंसे कुछ कहा था। उन्होंने सुना। सुनकर फूल उठी। अलंकारोंमें झूम उठीं। उनमें उमंग आयी, जीवन आया, मूक वाणी आयी।

वे मूक शिलाएँ कहानी कहती है। सुनने गया था—अपने पूर्वजोंकी गाथा। उन शिलाखण्डोंने सुनाया। हमने कान खोले। उन्होंने हृदय खोला। मानसकी पवित्र लहरियोंमें देखा—प्रबुद्ध भारत!

भारती मूर्तिको नमस्कार किया। इतिहासके पृष्ठोंसे पूछी एक बात। कोणीय स्तूपाकार मिस्रके पिरामिडोंसे पूछी एक बात। ताजमहलके उज्ज्वल संगमरमरोंसे पूछी एक बात। क्या एगकोर तुमने देखा है?

पृष्ठोंकी मसि मिलने लगी। पिरामिड जैसे भूमिमें धँसने लगे। ताजमहलकी उज्ज्वलता धूमिल होने लगी। प्रफुल्लित मन कह उठा—मैं अपने पूर्वजोंकी सन्तान हूँ। मैं भारतकी सन्तान हूँ। मैं उनकी सन्तान हूँ जिन्होंने एगकोरकी जड़ शिलाओंमें प्राण दिया है। जिन्होंने भारतीय गौरवको उच्चतम स्थान दिया है। जिन्होंने प्रमाणित किया है कि कलामें शायद एगकोर अतुलनीय है।

उसकी गाथा बहुतोंने गायी है, बहुत गाते रहेंगे। गाते-गाते भी वह पुरानी न होगी। स्वर-लहरियोंमें जीवन उछलता चलेगा। गंगाकी अबाध गतिके तुल्य वह शुद्ध रहेगी। अविच्छिन्न रहेगी। मानव उसकी झाँकी-मात्रमें कह उठेगा—मनुष्य! क्या तेरे लिए यह भी सम्भव था?

कथा आरम्भ

कथा आदिसे आरम्भ होती है। अन्तमें उसका अन्त होता है। हमारी यात्राकी अन्तिम मंजिल एगकोर था। अन्तिम मंजिलपर रुकूँगा

नहीं— लौटूँगा। आदिसे आरम्भ न कर सकूँगा। अन्तसे श्रीगणेश करना चाहता हूँ। इसमें एक रस है। कलाका वह रस पूर्णताको प्राप्त हो चुका है। पूर्ण घटसे रस लेनेमें ही रस है।

लिखता हूँ। आप पढ़ेंगे। बहुत लोग न पढ़ेंगे। जो न पढ़ेंगे वे शायद अच्छे रहेंगे। जब मुझे खुद लिखकर सन्तोष न हुआ, पढ़कर तृप्ति न हुई तब कैसे कह सकता हूँ कि आपको सन्तोष होगा। एंगकोर कला-कीर्ति है। यही शायद आप भी कहेंगे। मुझे आपके इस कथनसे सन्तोष होगा।

मैं पुरातत्त्वविद् नहीं हूँ। मैं इतिहासज्ञ नहीं हूँ। मैं विद्वान् नहीं हूँ, ख्यातिप्राप्त नहीं हूँ। मनुष्य हूँ। मनुष्य बननेका प्रयास करता हूँ। उस प्रयासमें कुछ देखा है। सहस्रों वर्ष पूर्व लोकने अपनी आत्मानुभूति-का सार, अपना सर्वस्व भगवान्के युगलपद्ममें अर्पित किया था। रंजनकी दृष्टिसे नहीं। कला भगवान्का रूप है। मूक पत्थरों एवं ईंटोंमें अपनी कल्पनाको पहना दिया था। सोचा था, भगवान्की शायद झाँकी मिल जाय। उनका यही प्रयास मानव बननेका प्रयास था। उस प्रयासकी गाथा कहनेका प्रयास करता हूँ।

एंगकोर पहुँचा—प्रातःकाल ४-४५ पर वायुयान बैंकाकके दान-मॉग विमानपत्तनसे उड़ा। सोमवार ३० जनवरी सन् १९५६ का दिन था। वायुयान 'थाई वायुपथ'का था। एक घण्टा तीस मिनटकी उड़ान-के पश्चात् वायुयानने सिएमरीपके विमानपत्तनका स्पर्श किया। स्थानीय समयानुसार प्रातः ९-३० पर पहुँचा। कम्बोडियाका प्रमाण-समय स्यामसे एक घण्टा आगे चलता है।

उतरनेके पूर्व वायुयानने चक्कर लगाया। नेत्र नत हुए। चकित हो गया। हरित भूमिमें, हरित अरण्यके बीच विशाल पाषाण नगर जैसे आकाशसे गिरकर भीमकाय फैला सो रहा था। उसकी भव्यताकी छाप हृदयपर लगी। एक भारतीय मन अपने पूर्वजोंकी भव्य कीर्ति देखकर फूल उठा।

विमानपत्तन वास्तवमे साधारण है। छोटा टिनसे छाया दो कमरा है। उसके आगे बरामदा है। प्रतिदिन विमान एक बार उतरता और उड़ता है। मुख्यतया पर्यटक आते है। तीन-चार फ्रांसीसी सैनिक-विमान भी वहाँ खड़े थे। कम्बोडिया, लाओस तथा वियतनाम फ्रासके संरक्षणमे हैं। एतदर्थ सैनिकोके मन बहलानेके लिए एगकोर अच्छा स्थान समझा गया है। वैमानिक सैनिक शिक्षा भी शायद दी जाती है। पदातिक सैनिकोको सैन्य-प्रदर्शन भूमिपर सैनिक अभ्यास करते देखा। वहाँसे सिएमरीप जनपद ६ मीलदूर है। सड़क अच्छी है। थाई वायुपथकी बस ग्राण्डहोटल पहुँचा देती है। वहाँसे नगरमे जानेके लिए रिक्शा मिल जाता है। होटलमे थाई वायुपथका कार्यालय है। होटलसे नगर आध मील होगा। विदेशी पर्यटकोके लिए ठहरनेका एकमात्र साधन होटल है। एक दिन रहनेका शुल्क केवल ८५) है!

सिएमरीपका नगर, कसबा, किंवा अरण्यीय जनस्थान कहा जा सकता है। सिएमरीप नदीके तटपर बसा है। नदी एगकोर वाट, एगकोर थाम तथा वरे ओरियण्टलके बीच बहती है। कुलेन पर्वतसे निकलकर कम्बोडिया-की विशाल झील तानले-सेपमे गिरती है। एगकोरकी सुरम्य वनस्थली इसकी उपत्यकामे है।

एगकोरके लिए सिएमरीप स्रोतस्विनीका वही महत्त्व है जो यूनानकी राजधानी एथेन्सके लिए पिरेससका था। पहियोसे जल ऊपर उठानेवाला यंत्र नदीमे लगा है। पहिया जलके वेगसे घूमता है। घूमनेके साथ ही रहटकी तरह पानी उठाकर उच्चस्थलीपर डालता है।

नगरमे बाहरसे अधिक वाट तथा विहार हैं। वे श्यामके वाट (भिक्षुओके रहनेका स्थान) से पूर्णतया मिलते है। दोनो देशोके वाटोंमे अन्तर करना कठिन है। स्यामकी अपेक्षा यहाँके वाट साधारण तथा सादे मालूम हुए। वाम तटपर 'शाला' अर्थात् धर्मशाला है। कम्बोडियामे शालाओंकी भरमार है। कोई भी आवासकी कमीका अनुभव नहीं कर सकता। उनमे किसी जाति, पंथ, मत, सम्प्रदाय, धर्म एव देशका व्यक्ति

निवास कर सकता है। अध्ययनशील तथा मध्यमश्रेणीके व्यक्तिके लिए ग्राण्ड होटलमे ठहरना व्यर्थ है। निरामिषभोजीको कठिनाईका सामना करना पड़ेगा। हम लोग ८५) रुपया देनेपर भी भूखे रहे। पर्यटकोंको, मुख्यतया एशियायी बन्धुओंको किसी शाला या वाटमे आश्रय लेना चाहिये। दो या तीन रुपयेमे सुन्दर भोजन मिल जायगा।

ग्राण्ड होटल—हम संसदके सदस्य थे। विदेशोमे स्वतन्त्र भारतके नागरिक थे। 'स्टैण्डर्ड'का निर्वाह करना आवश्यक था। विमानपत्तनसे वसपर हम चले। बसमे शराब, पावरोटी, शीतल पेय, आमिष सैण्डविच सब कुछ सजा था। विदेशी यात्रियोंने खाना आरम्भ किया। हम सभी निरामिष थे। विदेशियोंको किंचित् आश्चर्य हुआ। उनका मुख डोलने लगा। हमारी ऑखे खेतोमे कृपकोपर डोलने लगी। कृषि अच्छी है। भूमि उपजाऊ है। ग्रामीण मकान बर्मा एवं श्यामके समान लट्ठोपर गाड़कर बनाये गये है। भारतके बाहर आमिष भोजन एवं मद्यसे बचना कठिन है। पर्यटक किंचिन्मात्र चूकनेपर उनकी लपेट मे आ जायगा।

ग्राण्ड होटल एगकोरमे एकमात्र आधुनिक प्रसाधनोसे युक्त निवास-स्थान है। फ्रासीसी इसे चलाते हैं। ऊॅचाईपर बना है। पूर्वसूचना उन्हें हमारे आगमनकी मिल चुकी थी। एक भारतीय तिरुपतिकी दूकान सिएमरीपमे है। उसने पंडित श्री जवाहरलालजीके आगमनकालमे यहाँ उनकी सेवा तथा रहनेका प्रबन्ध किया था। उसके पास उस समयका फोटो भी है। मिलनेपर उसने बड़े उत्साह एवं स्नेहसे उसे दिखाया। उसने चीनी महिलासे विवाह कर लिया है। उसकी एक धर्मपत्नी मद्रासमे थी। इधरके भारतीय प्रायः इसी प्रकार रहते है। उनका एक घर भारत तथा दूसरा इन देशोमे होता है। मुसलमान हिन्दुओसे इस विषयमे अधिक व्यावहारिक एवं कार्यपटु है।

पैसा देकर हम यहाँ बेवकूफ बने। अंग्रेजी भाषा यहॉ कोई नही समझता था। सब काम संकेतसे लिया गया। हम लोगोका वेटर स्वयं परेशान था। उसके मुखपर पसीना आ जाता था। भोजन आमिष होनेके

कारण हम लोग कुछ न खा सके। उसकी परेशानी उसके मुखपर झलकती थी। केवल सलाद, पावरोटी और मक्खन किसी प्रकार उसे समझाकर मँगाया। उस समय उसे जो प्रसन्नता हुई, कभी भूल न सकूँगा।

कम्बोज एवं कम्बुज

कम्बोडिया भारतीय उपनिवेश था। भारतीयोका प्राचीन वैभव एव गौरव जो यहाँ देखनेको मिलेगा, अन्यत्र एशियामे दुर्लभ है।

कम्बोडिया समझनेके लिए उसका इतिहास समझना आवश्यक है। उसका इतिहास भारतीयोके उपनिवेशका इतिहास है। भारतीय विदेशमे जाकर किस प्रकार बसे! कैसे वहाँ उन्होने गौरवशाली जनजीवन स्थापित किया। लगभग पन्द्रह सौ वर्षोंतक कैसे भारतीय सभ्यता एव संस्कृतिकी दुन्दुभी बजाते रहे। इसे जाननेमे एक प्रकारका असीम आनन्द होगा। अपने पूर्वजोकी वंशावली, विरुदावली एवं गाथा सुननेमे सन्तानको जिस असीम सुखका अनुभव होता है, सम्भवतः उसकी कुछ छाया इन पंक्तियोमे मिल सके।

कम्बोडियाका इतिहास तीन कालोमे बाँटा जा सकता है। फुनान (१से ७वी शताब्दी), कम्बुज (८वीसे १४वी शताब्दी) एवं आधुनिक काल (१५वीं शताब्दीसे १९५६ तक)।

भारतीय पुरातत्ववादियोने पामीरकी सज्ञा कम्बोजसे दी है। अभिजात वाङ्मयमे कम्बोज शब्द मिलता है। उसका सम्बोधन जाति एवं देश दोनोंके लिए किया गया है। कम्बोडिया अंग्रेजी कम्बुजका अपभ्रश है। फ्रान्सीसी लोग उसके लिए कम्बोज शब्दका प्रयोग करते है। कम्बोज शब्द कम्बुजका अपभ्रश है। देशका नाम कम्बुज क्यो पड़ा, इसका वर्णन आगे किया जायगा। कम्बोज एवं कम्बुज दो देश हैं। उन्हे एक-दूसरेका पर्यायवाची नही समझना चाहिये। पामीर कम्बोज एवं कम्बोडिया कम्बुज है। इसे स्मरण रखना आवश्यक है। मैं कम्बोडियाके स्थानपर उसके शुद्ध वास्तविक नाम कम्बुजका ही प्रयोग करूँगा।

कम्बुजके इतिहासकी सामग्री देशमे अनेक संस्कृत, पाली एवं कम्बुज शिलालेखो आदिमे विखरी पड़ी है। भारतीय संस्कृत साहित्य किवा ग्रन्थोमे कम्बुज देशका वर्णन अथवा नाम नहीं मिलता। सुवर्णभूमि एक शब्दमे दक्षिण-पूर्व एशियाके देशोंका सम्बोधन किया गया है। महाजनक जातक तथा संख जातक मे कथानक मिलता है कि काशी तथा चम्पा (भागलपुर) से जहाज खुले समुद्रोको पार करते हुए सुवर्णभूमि पहुँचते थे। कौटिल्यने अर्थशास्त्रमे सुवर्णकुड्यक शब्द उस देशके लिए प्रयुक्त किया है जहाँ बहुमूल्य पदार्थ मिलते थे।

इस दिशामे स्थानीय देशवासियों द्वारा कुछ अन्वेषणकार्य नही किया गया है। फ्रासके पुरातत्वविशारदों एव विद्वानोने कुछ कार्य अवश्य किया है। उन्होंने पुस्तके भी लिखी है। हमारा ऐतिहासिक ज्ञान उन्हींके लेखो एवं सामग्रीपर आधारित है। अतएव यह पुस्तकीय ज्ञान परोक्ष ही कहा जायगा।

कम्बुज भिक्षुओ, भूतों एवं चरवाहोंका देश है। एगकोर थाम एवं वाटपर जिस प्रकारके वाहन पत्थरोंपर, आजसे हजार वर्ष पहलेके उत्कीर्ण मिलेंगे, वे ही सड़कोंपर आज चलते दिखाई देगे। धानके खेत, चलते करघे, सूखे तालपत्रोकी खड़खड़ाहट, पक्षियोंका पादपोंपर मुक्तकण्ठ विहार, सरोवरोंमे प्रसन्न कमलदलका खिलना, तैरते कमलपत्रोपर जलविन्दुओंका ढुलकना, खेतोंमे काम करते कृषकोका वृन्दगान, भगवान् बुद्धके ऊर्ण सदृश सरपर बाल रखे बालकोका खेलना आदि जैसे निसर्गचित्र शताब्दियाँ बीत जानेपर भी अपने पूर्वरूपमे फैले है। उत्तुङ्ग वृक्षोकी डालियोंपर भयहीन लगूरोका कूदना, पुष्पित लताओको हाथमें लिये बन्दरोंका किलकारी मारते हुए विहार, उत्तुंग वृक्षपक्तियोंका धीरे-धीरे झूमना, सब कुछ प्रकृतिने ज्योंका त्यों सुरक्षित कर रखा है।

फुनन

(१-७ शताब्दी)

पहली शताब्दीसे ही कम्बुजमे भारतीय उपनिवेश स्थापित हो गया।

कम्बुजपर भारतीयोका राज्य था। चीनी इतिहासकारोने कम्बुजके हिन्दू राज्यका नाम 'फुनन' रखा है।

चीनमे वर्णमाला एवं लिपि नही है। मिस्रके समान चित्रविद्या भी नही है। चीनी लोग सांकेतिक शब्दमय चिह्नोका प्रयोग करते है। कितने ही चिह्नोके स्वर एवं ध्वनिका लोप हो गया है। शब्दो एवं चिह्नोके मूल उच्चारणमे अन्तर पड़ता गया है। कितने चिह्नोके उच्चारणका अब पता लगाना कठिन है।

फुननका प्राचीन कम्बुज नाम फ्वाम अर्थात् आधुनिक फ्वोम है। फ्वोम शब्द फ्वामका अपभ्रंश है। फ्वोमका शाब्दिक अर्थ पर्वत है। कुछ इतिहास फुनन वंशको पर्वतीय राजवंशके नामसे सम्बोधित करते है। मेरा मत है कि फुनन शब्द संस्कृत वर्मनका अपभ्रश है। चीनने चम्पाके राजा-के लिए भी फन किवा वन शब्दका प्रयोग किया है। चम्पाके राजाकी भी पदवी वर्मन थी। शब्द वास्तवमे वर्मा है।

फुननकी सभ्यता एवं संस्कृति भारतीय थी। राजभाषा संस्कृत थी। राजधानी व्याधपुर थी। चीनी लेखक यित्सिंग (६७१–६९५) के अनुसार जनता 'देव'की उपासना करती थी। **कालान्तरमें बौद्धधर्म चीनसे कम्बुजमें आया।** स्पष्ट है कि फुनन हिन्दू धर्मावलम्बी थे। हिन्दू धर्म त्यागकर जनता बौद्ध क्यो हो गयी, इसपर आगे प्रकाश डाला गया है।

दो सहस्र वर्ष पूर्व—चीनी फुनन गाथा इस प्रकार है—'लगभग दो हजार वर्ष पहले कम्बुज निवासी नगे रहते थे। गोदना गुदवाते थे। नौकरो और सम्बन्धियोको मारकर मृतात्माके साथ कब्रमे गाड़ देते थे। उनका विश्वास था कि इससे उनके कुटुम्बकी श्रीवृद्धि होगी। मृतात्मा प्रसन्न होगी। अदृश्य शक्ति उनकी सहायता एव सरक्षा करती रहेगी। स्त्रियों एवं पुरुषोमे लज्जा नामकी कोई चीज नही थी। उनका जीवन अरण्यमय जीवन था। सभ्यता एवं सस्कृति उनसे बहुत दूर थी। धर्म एवं मानवीय विचारोका उदय नही हुआ था।'

कौण्डिण्य—कौण्डिण्य सोमवंशीय भारतीय ब्राह्मण थे। कट्टर धार्मिक थे। हिन्दू थे। भगवान्‌मे भक्ति थी। पूरे आस्तिक थे। भगवान् उनकी उपासनासे प्रसन्न हुए। रात्रिमे स्वप्न हुआ—'भगवान्‌ने उन्हे दैवी धनुप दिया। एक व्यापारी-जहाजपर सवार हुए। जहाज नील समुद्रकी लहरोपर यात्रा निमित्त चल पड़ा।

'प्रातःकाल मन्दिरमे उन्हे धनुप मिला। उन्हे स्वप्नकी बात सत्य मालूम होने लगी। धनुपके साथ एक व्यापारी-जलपोतपर आरुढ़ हुए। पोतने सागरकी उत्ताल तरंगोका अतिक्रमण करते हुए प्रस्थान किया।

'भगवान्‌ने हवाका रुख बदल दिया। जहाज फुनन तटपर आया। वहाँकी रानीका नाम सोमा था।' वह नागकन्या थी। सन् ६५९ ईसवीके चम्पाके आलेखोमे उसे 'नागिन' नामसे सम्बोधित दिया गया है। नागिनका प्रयोग नागा जातिकी कन्याके लिए होता है। नागिन उस जीवको भी कहते है जिसका कटिके ऊपरका भाग मानव एवं अधोभाग सर्प जैसा होता है। इस प्रकारके अर्धमानव जीवधारीको नागिन कहा गया है। इस प्रकारकी पापाणमूर्तियाँ विश्वमे कई स्थानोंपर मिली है। विश्वसाहित्यमे भी इस प्रकारके जीवकी कल्पना किवा उनके अस्तित्वका वर्णन मिला है।

नागकन्या सोमा—'सोमा' उनके जहाजको लूटनेके लिए आयी। कौण्डिण्यने उसकी नावपर बाण छोड़ा। बाण नावके आर-पार हो गया। नागकन्या सोमा बहुत भयभीत हुई। उसने आत्मसमर्पण कर दिया। कौण्डिण्यसे विवाह किया। प्रथम भारतीय कम्बुजके सिहासनपर बैठा।

एक दूसरी गाथा है। इन्द्रप्रस्थके राजा आदित्यवंश अपने एक पुत्रसे अप्रसन्न हो गये। उसे राज्यसे निकाल दिया। वह कम्बुजके एक भू-भागमे आये। वहाॅ चम्पाका एक राजा राज करता था। उसने राजाको मार भगाया। एक दिन वह समुद्र तटपर रह गया। एक 'नागी' नाग-कन्या वहाॅ आयी। दोनोमे अनुराग हुआ। शादी हुई। नागीका पिता नागराज था। उसने भूमिमे फैले जलको पी लिया। देश कम्बुज हो गया।

उसने इन्द्रप्रस्थपुर राजधानी बनाया। यह एगकोरका प्राचीन नाम कहा जाता है। प्टोलेमीने अपने भूगोलमे इसे मध्य चीनमे स्थित लिखा है।

इस गाथाका मूल भारतीय रूप है। नागकन्या उलूपी एव अर्जुनका विवाह भी करीब-करीब इसी कहानीसे मिलता है। उसमें जहाज एवं समुद्रयात्राका वर्णन नही है। गाथा है कि पल्लव जातिकी उत्पत्ति चोल-राज एवं नागिनके द्वारा हुई है। पल्लव राजाओकी उपाधि 'वर्मन' है। प्राचीन कम्बुज राजाओकी उपाधि भी 'वर्मन' है। पल्लव लोग अपनेको द्रोणाचार्यके वंशज मानते है।

तमिल काव्यमे मनी येगालाईमे एक नगर नागपुरम्का वर्णन मिलता है। वह शवक नदू अर्थात् जावामे था। यहाँके दो राजा भूमिचन्द्र तथा पुण्यराज इन्द्रवशज थे। नागी गाथा काँचीके पल्लवोमें भी प्रचलित है। द्रोणके पुत्र अश्वत्थामाने नागी कन्यासे विवाह किया था। उसकी सन्ताने स्कन्दशिष्य कहलायी। वे ही पल्लवोके पूर्वज थे। नवीं शताब्दीके शिलालेखसे प्रकट होता है। उत्तरी आरकटमे दूसरा शिलालेख मिला है। उसके अनुसार विरुकर्घने एक नागीसे विवाह किया। उसमे उसे राज्यचिह्न मिला। उसके पश्चात् स्कन्द शिव आये।

लिपाग (annals) चीनके अनुसार राज्यवंशका नाम कौण्डिण्य था। लोककथा प्रचलित थी कि भगवान् बुद्धके पिता शुद्धोधनकी पत्नी कम्बुज-की थी। इसमे सन्देह नही कि कौण्डिण्य भगवान् बुद्धके साथी तथा पंचवर्गीय भिक्षुओमे एक थे। उन्हे सारनाथमे धर्मचक्रवर्तनमे भगवान्ने अपना प्रथम उपदेश दिया था।

राज्यस्थापना—कौण्डिण्यने कम्बुजमे राज्यकी स्थापना की। कुछ लोगोंका कहना है कि कौण्डिण्यके नामपर ही देशका नाम कम्बुज पड़ा। भवपुरमें राजधानी स्थापित की गयी। उसने देशवासियोंको सभ्य बनाया। भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति फैलायी। जनताको वस्त्र पहनना, लज्जा करना, पढ़ना और मानवीय जीवनयापन सिखाया। उसने भारतीय धर्म, मनुस्मृतिकी व्यवस्था एवं रीति-रिवाज कायम किया। इसी कालमे काश्यप

मातंग धर्मरत्न चीनमें बौद्धधर्मका प्रचार कर रहे थे। उत्तरी भारतमें कुशान तथा दक्षिणमें आन्ध्र राज्यका उदय था।

कौण्डिण्यके वंशजोंने दो शताब्दीतक कम्बुजपर राज्य किया। अन्तिम राजा पन पण था। उसने राज्यभार अपने सेनापति फाण मान अथवा फाण ये-मनको दिया। तीन वर्षके पश्चात् उसकी मृत्यु हो गयी। जनताने २०० ईसवीमें फन ये चन किंवा फण यानको कम्बुज राजका राजा निर्वाचित किया।

उपर्युक्त घटनासे दो बातें स्पष्ट होती हैं। पहली यह कि कम्बुजमें मातृसत्तात्मक राज्य था। अर्थात् राज्य किंवा सम्पत्तिका उत्तराधिकारी पुत्र नहीं, कन्या होती थी। नागकन्या सोमा कम्बुजकी रानी थी। उसने कौण्डिण्यसे विवाह किया। कौण्डिण्यने मातृ उत्तराधिकारके स्थान पर पितृ-उत्तराधिकार (पिताके पश्चात् पुत्र) परम्परा स्थापित की। नागा जाति भारतीयोंके आनेके पूर्व कम्बुजमें थी। भारतमें अहिक्षत्र राज्य था। अहिका अर्थ नाग किंवा सर्प होता है। नेपालमें सर्प जातिके लोग हैं। आसामके पूर्व पर्वतमालाओंमें आज भी नागा जाति है। नागा शब्दका प्रयोग जातिवाचक था। नागाके पूर्वज होनेके कारण सम्भव है कि 'नागा' नामसे बाहरी लोगोंने उनका नाम नागा रख दिया हो। बुद्धकी पूजा करनेसे जिस प्रकार 'बौद्ध' नाम पड़ गया, नागकी पूजाके कारण उनका नागा नाम हो जाना असंगत प्रतीत नहीं होता। नागपूजा प्राचीन कालकी सभी समस्याओं एवं धर्मोंमें किसी न-किसी रूपमें थी।

प्रथम भारतीय साम्राज्य

फन-ये-चनने राज्यारोहणके पश्चात् देशकी सर्वतोमुखी उन्नति की। उसने शक्तिशाली नौबल संघटित किया। सात राज्योंपर विजय प्राप्त की। स्याम, मलाया एवं लाओस उसके राज्यके अन्तर्गत थे। उसने फुननके महाराजकी उपाधि धारण की। वह सुवर्ण-भूमि किंवा द्वीपपर आक्रमणकी तैयारी कर रहा था। बीमार पड़ा। हालत चिन्ता-जनक हुई। उसने फन-किंग-चेनको सेनाका भार लेनेके लिए भेजा।

इसी बीच राजा मर गया। उसके भानजे फन-किग-चेनकी अनुपस्थितिका लाभ उठाया। स्वयं अपनेको सन् २२५ ई० मे राजा घोषित कर दिया। दक्षिण-पूर्व एशियाका प्रथम भारतीय साम्राज्य कम्बुज द्वारा तीसरी शताब्दीके प्रारम्भमे सघटित एवं स्थापित किया गया।

भारतसे दूत सम्बन्ध—उसने सन् २४३ ईसवीमे चीन तथा भारतमे राजदूत भेजे। दोनो देशोमें सम्पर्क स्थापित किया। भारतमे भेजे गये कम्बुज राजदूतका नाम सु-वू था। टकोला बन्दरगाहसे उसने भारत-के लिए प्रस्थान किया। लगभग एक वर्प पश्चात् गंगासागर पहुँचा। सात सौ मील उलटी धारासे चलकर पाटलिपुत्रमे पहुँचा। मुरुण्डकी राज्य-सभामे गया था। इस समय पाटलिपुत्रपर कुशानोका राज्य था। वहॉ शक क्षत्रप किवा राज्यपाल मुरुण्ड शासन करता था। प्रयागके समुद्रगुप्तके स्तम्भलेखमे मुरुण्डका वर्णन है। वे समुद्रगुप्तके अधीन राजा थे।

कम्बुज इस समय स्वयं एक साम्राज्य हो गया था। एशियामे भारत, चीन तथा कम्बुज तीन साम्राज्य अपनी गरिमापर थे। चीनी गाथा कहती है—भारतीय राजाने कम्बुज राजदूतको भारतके अनेक भागोमे पर्यटन एवं देशदर्शन निमित्त भेजा। कम्बुज राजदूतकी विदाईका सुन्दर वर्णन मिलता है। भारतीय राजाने कम्बुज सम्राट्के लिए यू चे देशके ४ उत्तम घोड़े राजदूत सु-वूको विदाईमे दिये। सु-वू भारतसे प्रस्थान करनेके चार वर्प पश्चात् कम्बुज पहुँचा। भारतमे कुशान साम्राज्य पतनोन्मुख हो रहा था। आन्ध्रराज्य भी अवनतिशील था। बुद्धभिक्षु विघ्नने चीनी भाषामे धर्मपदका अनुवाद किया।

स्वर्गीय कम्बुज राजा फेन-चे-मनके कनिष्ठ पुत्र फन चेनने राज्यको बलात् ग्रहण करनेवाले राजाकी हत्या की। उस समय उसकी उम्र बीस वर्षकी थी। वह राज्य न कर सका। उसकी भी हत्या कर फन स्विन राजसिंहासन पर बैठा।

कम्बुजमें प्रथम भारतीय राजदूत—फन स्विनके राजत्वकालमे प्रथम भारतीय राजदूतका कम्बुज राजदरबारमे उपस्थित होना मिलता

है। चीनी पुरावृत्त लेखकोने लिखा है कि २४५-२५० के बीच भारतीय राजदूत चेम-सोगने (चित्र-सिंह ?) चीनी राजदूत ताई तथा चू विगसे भेट की थी। कम्बुज राजाने २३८ से २८७ सन्के बीच क्रमसे चार राजदूत चीन भेजे थे।

चीनमें भारतीय राजदूत—चीनी पुरावृत्तकारोने लिखा है कि सन् ३५७ मे प्रथम हिन्दू राजदूत चन-तन (चन्दन या चेतन शुद्ध नाम होगा) कम्बुजसे चीन राजदरबारमे आया था। उसे कम्बुज राजकी उपाधिसे विभूषित किया .था। आजकल भी राजदूतोको विभिन्न देशके लोग, जहाँ उपाधिकी प्रथा है, उपाधि देते हैं।

चीनके स्तीन वंशके इतिहाससे (२६५—४१०) प्रकट होता है कि कम्बुज राज चम्पासे ३००० ली दक्षिण स्थित था। चम्पा आधुनिक एनामका प्राचीन भारतीय नाम है। प्राचीरोसे घिरे अनेक नगर, जन-स्थान, गृह तथा राजप्रासाद थे। निवासी काले थे तथा बहुत सुन्दर नही थे। उनके बाल घुँघराले होते थे। शरीरपर वस्त्र नही होता था। नंगेपॉव चलते थे। सरल तथा शान्त स्वभावके होते थे। उनमे चोरी तथा डकैती-की आदत नही थी। मुख्य जीविकोपार्जनका उनका साधन कृषि था। एक साल बोकर तीन साल काटते थे। राज्य-कर सोना, चॉदी, मोती तथा सुगन्धित द्रव्योमे दिया जाता था। उनके पास बहुत पुस्तकें थी। देशमे अनेक स्थानोपर पुस्तकालय थे। उनका विवाह एवं दाहसस्कार चम्पा देशवासियोके तुल्य होता था। उनकी लिपि भारतीय थी।

फुननका धर्म—लिपाग इतिहासकारके अनुसार तत्कालीन फुननका धर्म हिन्दू था—'वे स्वर्गीय देवताकी उपासना करते थे। कॉसेकी मूर्तियॉ ढालते थे। किसीका दो मुख, चार हाथ और किसीका चार मुख, आठ हाथ होता था। अशौचकालमे वे दाढ़ी तथा सर मुण्डन कराते थे। चार प्रकारसे मृत शरीरकी अन्त्येष्टि करनेकी प्रणाली थी—शवका नदीमे प्रवाह, अग्निदाह, समाधि अर्थात् गाड़ना तथा पक्षियोंके भोजन निमित्त किसी अरण्य अथवा निर्जन स्थानमे त्याग देना। यह चारों संस्कार

शुद्ध हिन्दू धर्मानुसार शवकी अन्त्येष्टिके लिए ग्राह्य माने गये हैं।

कम्बुजमे इस समय प्राचीन वेदान्त धर्म ही फैला था। शिलालेखोमें 'ओम्'का प्रयोग किया गया है। वैदिक देवी एव देवताकी पूजा होती थी। दाहिना हाथ शुद्ध तथा बायाँ अशुद्ध माना जाता था। भारतमे भी अबतक यही प्रथा है। लोग दातुन करते थे। प्रातःस्नान अनिवार्य था। स्नानके पश्चात् पाठ एवं पूजा करते थे। भोजनके पूर्व पुनः स्नान करते थे। भोजनोपरान्त पुनः दाँत साफ करते थे। मध्याह्नमे पुनः प्रार्थना करते थे। भोजनमे घी, मलाई, शर्करा, चावल आदिका प्रयोग होता था।

अशौचकालमे वंशज सात दिनतक बिना अन्न एवं क्षौरके शोक मनाते थे। अस्थियाँ स्वर्ण किंवा रजतपात्रमे संचय की जाती थी। पात्र नदीकी बीचधारामे अस्थिसहित प्रवाहित किया जाता था। गरीब लोग रंगीन मिट्टीके बर्तनोमे अस्थिप्रवाह करते थे।

नरबलि—तिग पर्वतपर एक मन्दिर था। उसकी रक्षाके लिए ५ हजार सैनिक नियुक्त थे। ईशानपुरके पूर्व एक और मन्दिर था। वह प्रेतमन्दिर कहा जाता था। यहाँ राजा प्रतिवर्ष जाकर नरबलि चढ़ाता था। इस मन्दिरकी भी रक्षा एक हजार सैनिक रातदिन करते थे।

बुद्धधर्मका भी प्रभाव आरम्भ हो गया था। बोधिसत्व, शास्ता, मैत्रेय अवलोकितेश्वरका नाम मिलता है। उन्हे व्रह कमरतानकी पदवी दी गयी है।

उक्त वर्णनसे स्पष्ट प्रतीत होता है कि कम्बुजके भारतीय उपनिवेशकी आबादी दक्षिण भारतीयोकी थी। मनुष्यका वर्णन दक्षिण भारतसे मिलता है। दाहप्रथा चम्पामे दक्षिण भारतीयो द्वारा पहुँची थी। चम्पा कम्बुज सदृश ही भारतीय उपनिवेश था। विवाहप्रथा भी भारतीय थी। नगर तथा प्रासादोका प्राकारोसे घेरना दक्षिण भारतकी शैली है। आज भी दक्षिणमे देवस्थान प्राकारोसे घेरे जाते है। उत्तर भारतमे मन्दिरो एवं मकानोंको दीवारोसे घेरनेका रिवाज न था और न है। यहाँके मन्दिर एवं मकान दोनों ही खुले रहते है। स्पष्ट है कि कौण्डिण्य कालके पश्चात्

अर्थात् तीन सौ वर्षके अन्दर कम्बुज पूर्ण भारतीय हो गया था। उसका धर्म, उसकी रहन-सहन, संस्कृति एवं सभ्यता पहले जो भी रही हो, इस समयतक वह नया रूप ले चुकी थी। नये साँचेमें ढल चुकी थी। वह साँचा भारतीय था।

जयवर्मा—जयवर्मा-कालमें शिलालेख मिलने लगते हैं। सन् ४३४, ४३५ एव ४३८ मे जयवर्माने चीनी सम्राट्के यहाँ राजदूतको भेटके साथ भेजा। चीनी पुरावृत्तकार लिखता है—'सोग कालके उत्तरार्धमें (४२०-४७९) कम्बुज का राजा जयवर्मा था। उसके गोत्रका नाम कौण्डिण्य था। कैण्टनमे उसने कुछ व्यापारी भेजे थे। कम्बुज लौटते समय भारतीय साधु नागसेन उनके साथ लौट गया। मार्गमे तूफान आया। बाध्य होकर चम्पामे रुकना पड़ा। चम्पावालोंने व्यापारियोंको लूट लिया। नागसेन कम्बुज पहुँचा।

जयवर्माने सन् ४८४ मे एक प्रार्थनापत्रके साथ नागसेनको चीन सम्राट्के पास भेजा। पत्रमें उल्लिखित था—कम्बुजका विद्रोही 'क्यू च्यू हो' देश त्यागकर चम्पा चला गया है। वहाँ पहुँचकर चम्पाका राजा बन गया है। कम्बुजका विरोध करता है। नाना प्रकारसे परेशान करता है। सम्राट्से निवेदन है कि उसे दबानेमे सहायता दे।

माहेश्वर मत—नागसेनने अपने विद्वत्तापूर्ण भाषणसे चीनी राजसभा एवं सम्राट्को चकित किया था। उसने कम्बुजके माहेश्वर मतका यशोगान किया। उसने माहेश्वर बुद्ध एवं सम्राट्के सम्मानमें कविता पढ़ी। माहेश्वरकी बड़ाई की। सम्राट सैनिक सहायता न दे सका। उसने नम्रतापूर्वक कहा कि शस्त्रका आश्रय ग्रहण करना उचित नहीं है।

बुद्धप्रतिमा भेंट—जयवर्माने मूंगेकी बुद्धप्रतिमा चीन सम्राट्को भेटस्वरूप सन् ५०३ मे भेजी। सन् ५११ एवं ५१४ मे पुनः राजदूत चीन भेजा। कम्बुजके दो बौद्ध भिक्षु संघपाल एवं भद्रसेन चीन पहुँचे। वे वहीं बस गये। उन लोगोंने बौद्धधर्मग्रन्थोंका चीनी भाषामे अनुवाद किया।

कुलप्रभावती—कुलप्रभावती जयवर्माकी राजमहिषी थी। कम्बुजसे

प्राप्त एक शिलालेखसे स्पष्ट होता है कि उसके ज्येष्ठ पुत्रका नाम गुणवर्मा था। दासीपुत्र रुद्रवर्माने गुणवर्माकी हत्या कर राज्य ग्रहण किया। उसका भी एक संस्कृत शिलालेख मिला है। उसने सन् ५१७ से ५८९ तक ६ राजदूत चीन सम्राट्के दरबारमें भेजे थे।

कम्बुज—फुननके अन्तर्गत कम्बुज एक रियासत थी। प्रथम कम्बुजराज श्रुतवर्मा थे। उसके पुत्र श्रेष्ठवर्माने राज्यकी राजधानी श्रेष्ठपुरमें रखी। यह स्थान लिंग पर्वतपर है। लाओस देशके बसाकके समीप वाट फू पर्वतमालाके पड़ोसमें स्थित है। शिखरका नाम लिंग पर्वत था। वहीं राजवंशके इष्टदेव भद्रेश्वर शिवका मन्दिर था।

कम्बुज शक्तिशाली हुआ। फुननकी राजसत्ता अस्वीकार कर दी। स्वतन्त्र हो गया। सम्भवतः कम्बुजराज श्रुतवर्माने फुननपर आक्रमण किया। फुननका राजा पराजित हुआ।

कम्बुजकी व्युत्पत्ति—गाथा है कि प्राचीन कालमें कम्बुज मरुस्थल था। एक दिन आर्य देशके राजा कम्बु स्वयम्भूने अपनेको कम्बुजके घोर भयंकर स्थानमें पाया।

कम्बु शिवका उपासक था। शिवने महासुन्दरी अप्सरा देवी मीराको धर्मपत्नी स्वरूप उसे दिया था। मीराकी मृत्यु हुई। कम्बु अत्यन्त दुःखी हुआ। निश्चय किया कि किसी भयंकर स्थानमें जाकर प्राण विसर्जन कर दे। भगवान्की दया हुई। भयंकर स्थानमें अपने कल्पनानुसार अपनेको देखा।

उसने अपने चारों ओर विषधर नागोंको देखा। कम्बुने तलवार खींच ली। फणधारी नाग फण उठाये क्रूर दृष्टिसे उसकी ओर देख रहे थे। कम्बु सर्वश्रेष्ठ नागजीकी तरफ, जो उनका राजा किंवा नेता प्रतीत होता था, तलवार लिये बढ़ा।

नागने मानवीय भाषामें कम्बुका कुशल-मंगल पूछा। कम्बु चकित हुआ। उसने अपनी कहानी सुनायी। नाग बोला—तुम शिवके उपासक हो। शिव हमारे इष्टदेव हैं। मैं नागोंका राजा हूँ। तुम्हारा हम उपकार

न कर सकेंगे। हम तुम दोनों एक देवके उपासक हैं। प्रसन्नतापूर्वक यहाँ रहो।

कम्बु रहने लगे। नाग कभी-कभी मानव रूप भी धारण कर लेते थे। कालान्तरमें नागराजकी कन्यासे उसका विवाह हो गया। नागराज महाप्रतिभाशाली एव शक्तिसम्पन्न था। उसने मरुस्थलको आर्य देशके समान शस्य-श्यामल सुसम्पन्न बना दिया। कम्बु देशपर शासन करने लगा। उसके नामसे देशका नाम कम्बुज पड़ा। उसकी सन्तान कम्बुज कहलायी। गाथासे स्पष्ट है कि भारतीय एवं नाग जातिके वैवाहिक सम्बन्धसे उत्पन्न हुई सन्तान ही कम्बुज हुई। उनका नाम कम्बुज उसी प्रकार पड़ा जिस प्रकार शकदेशीय जातिका नाम शाकद्वीपी ब्राह्मण भारतमें रखा गया। शक भारतमें आये। यहाँ रह गये। यहाँके लोगोंसे विवाहशादी की। वे भारतीय हो गये। इसी तरहकी पुनरावृत्ति कम्बुजमें हुई।

एक दूसरी गाथा और है। एक राजपुत्र था। उसकी जाति ब्राह्मण थी। उसके पिताने उसे आजीवन निर्वासनकी आज्ञा दी। वह माँ गगा नदीके त्रिकोणीय भूमिसुखमें उतरा। राजपुत्रने चम आक्रामकोंको मार भगाया। नदीके तटपर पहुँचा। उसे त्रिभुवनसुन्दरी तुल्य एक नागकन्या मिली। दोनोंमें स्नेह उदय हुआ। नागराजने अपनी कन्याका उससे पाणिग्रहण संस्कार कर दिया। कम्बुजकी भूमि जलमय थी। नागराजने जल अगस्त्यकी तरह सोख लिया। जलके नीचेकी भूमि सूखकर उपजाऊ कृषि योग्य हो गयी। उनकी राज्यसीमा और बढ़ गयी। उसने अपने दौहित्र एवं कन्याके निमित्त एक राजधानीका निर्माण किया।

श्रुतवर्मा—कम्बुजके प्रथम ऐतिहासिक व्यक्ति श्रुतवर्मा थे। उन्होंने राज्यवंशकी स्थापना की। उनके पुत्रका नाम श्रेष्ठवर्मा था। उसने श्रेष्ठपुर बसाया। कम्बुजकी राजधानी बनाया। यह स्थान लाओस देशके बसाकके समीप वाट फू पहाड़पर है। कम्बुजकी वर्तमान राजधानी प्वामपेन्हसे २५० मिल उत्तर है। उस समय उसे लिंग पर्वत कहते थे। पर्वतके शिखरपर राजकुल देवता भद्रेश्वर शिवका शिवालय था।

छठी शताब्दीमें भववर्मा कम्बुजका राजा हुआ।

भववर्मा—नासिकमें गोदावरीके उद्गमस्थलीय पर्वतकी गोदमें त्र्यम्बकेश्वर महादेवका मन्दिर है। वहाँ सिंहस्थ स्नानका मेला लगता है। यह स्थान गोदावरीके दक्षिणतटपर स्थित है। मैने वहाँ जो मन्दिर देखा वह आधुनिक है। परन्तु त्र्यम्बकेश्वरका स्थान वही है।

श्यामकी सीमापर एक शिवलिंग प्राप्त हुआ है। उसकी पीठिकापर आलिखित लेखसे प्रकट होता है कि भववर्माने 'त्र्यम्बकेश्वर' शिवलिंगकी स्थापना की थी।

राजा भववर्माका एक शिलालेख और मिला है। आलेखमे लिखित शब्द कहते हैं—वह भववर्माकी भगिनी तथा श्रीवीरवर्माकी पुत्री थी। उसी हिरण्यवर्माकी माताको जिसने पत्नीरूपमे ग्रहण किया उन्हीं ब्राह्मणोंमें सोम समान स्वामी सामवेदवित् अग्रणी श्रीसोमशर्माने पूजा-विधि एवं अतुल दानके साथ सूर्य एवं त्रिभुवनेश्वरकी स्थापना-प्रतिष्ठा की। प्रतिदिन अखण्ड पाठके लिए उसने रामायण एवं पुराणके साथ सम्पूर्ण (महा) भारत प्रदान किया।

भववर्माने अपनी नवीन राजधानी भवपुर बसाया। उसने अपनेको कौण्डिण्य फुननवंशीय कहा है। कम्बुजवंशीय होना अबतकके प्राप्य आलेखोसे प्रकट नहीं हुआ है। उसकी मृत्युके पश्चात् उसके भाई चित्रसेनने महेन्द्रवर्मा नामसे राज्यारोहण किया।

महेन्द्रवर्मा—महेन्द्रवर्माका एक शिलालेख मिला है। उसमें शिव-पदके दानका वर्णन है। दिल्लीके कुतुबमीनारके स्थानका प्राचीन नाम विष्णुपद था। कुतुबकी मसजिद विष्णुपद मन्दिर था। चन्द्रगुप्तके लौहस्तम्भसे यह स्पष्ट प्रकट होता है। विष्णुपदके समान ही, शैव होनेके कारण, महेन्द्रवर्माने शिवपदका पूजन एवं उसके लिए दान दिया होगा।

शक संवत्—इन शिलालेखोमे शालिवाहनके शक संवत्का प्रयोग किया गया है। यही संवत् भारतीय राज्यसंवत् घोषित किया गया है। प्रशस्तिका उत्कीर्ण शिलालेख संस्कृत शैलीका उत्कृष्ट उदाहरण है।

सन् ६१६ में महेन्द्रवर्माका देहान्त हो गया। उसका पुत्र ईशानवर्मा राजा हुआ। वह भारत सम्राट् हर्षका समकालीन था। आर० सी० मजूमदारने उसका दूसरा नाम ईशान सेन दिया है। कम्बुजके प्राप्त आलेखों तथा वंशपरम्पराको देखते हुए ईशानवर्मा नाम ही ठीक प्रतीत होता है।

ईशानपुर—उसने लगभग ६३० ई० में फुनन राज्यपर पूर्ण विजय प्राप्त कर ली। फुनन राजवंशकी परम्परा एक प्रकारसे समाप्त हो गयी। उसका राज्य सम्पूर्ण आधुनिक कम्बुज, कोचीन चीन तथा डक्रेक पर्वतके उत्तर मून नदीकी उपत्यकातक फैल गया था। उसने अपनी राजधानी 'ईशानपुर', जिसे इस समय सम्बोर प्री कुक कहते हैं, बसाया।

उसने चीन साम्राज्यसे सन् ६१६–६१७ मे राजनितिक सम्बन्ध स्थापित किया। चम्पाके राजा जगधर्माके साथ अपनी कन्या श्रवणीका विवाह किया। श्रवणीका पुत्र प्रकाशवर्मा मध्य सातवीं शताब्दीमें चम्पाका राजा हुआ। उसने चम्पामें शान्ति स्थापित की।

ईशानपुरमें २० हजार मकान थे। सबका मुख पूर्व दिशाकी ओर होता था। मध्य नगरमें एक बड़ा भवन था। उसमें राजा बैठता था। इसके अतिरिक्त ३ नगर और थे। प्रत्येकमें एक राज्यपाल था। पाँच प्रकार के अधिकारी थे। राजसिंहासन के समुख आते ही वे तीन बार भूमि स्पर्शकर अभिवादन करते थे। राजा उन्हें ऊपर आनेका आदेश देता। वे दोनो हाथ दोनो कन्धों पर रखे आते थे। अर्ध्यवृत्ताकार राजाके सम्मुख बैठ जाते थे। सिंहासन भवनके द्वार पर एक हजार राजोके अंगरक्षक रहते थे।

हरिहर—ईशानवर्माने कम्बुजमें अनेक आश्रम बनवाये। उसमें एक नया मौलिक आदर्श स्थापित किया। उसके कालमें हरिहर मूर्तिकी स्थापना की गयी। उसने शैव और वैष्णव दोनों धर्मोंको एकही शरीरके दो भाग माना। उनकी धारा अलगसे प्रवाहित होकर एक-दूसरेकी पूरक है। आदर्श मूर्तरूपमें लोकके सम्मुख उपस्थित किया।

उसी समन्वय भावनाकी द्योतक हरिहरकी मूर्ति है।

शम्भुपुरी—सम्भुपुरी अर्थात् सम्बोर फुनन राज्यकी प्राचीन राजधानी थी। सैनानसे एगकोरवाली सड़कपर वह कम्पोंग थामके समीप है। स्थान घोर जंगलमें है। निर्माणमें ईंट और पत्थर दोनोंका प्रयोग किया गया है। मन्दिरोंपर घास-फूस, पीपल और गूलरकी जड़े छा गयी हैं। ईंटोंकी आलंकारिक रचना भारतीय शेरपुर तथा भीतरगाँवके स्थापत्यकी याद दिलाती है।

अभंग, (हांची)—शम्भुपुरीके निकट हाची स्थान है। संस्कृत शब्द अभगका अपभ्रंश है। आयताकार देवालय भूमिसे लगभग दो फुट ऊँची कुर्सीपर बना है। यह लाडखाँ मन्दिर एहोल (४८० ईसवी) की पहली मंजिलके ऊपर मध्यमें बनी कोठरीके तुल्य है। भमरा मन्दिरके गर्भगृह सदृश किसी हिन्दू मन्दिरका गर्भगृह रहा होगा। इसके द्वारमण्डपके द्वारोर्द्ध पर विष्णु अनन्त शाहईकी मूर्ति बनी हुई है। मूर्तिका मौखिक गढ़न आर्य है। उसमें संगोल आकार नहीं है। यह मूर्ति प्रमाणित करती है कि कलाकारपर भारतीय कलाकी छाप पड़ चुकी थी। सम्भव है कि उसका बनानेवाला कम्मिण भारतसे गया हो।

प्री कुक—प्री कुक घने अरण्यके बीच है। यह कोम्पोग थामके समीप है। इस देवस्थानमें द्वारमण्डप नहीं है। यह आयताकार है। लगभग दो फुट ऊँची कुर्सीपर उदग्र बना है। चौकोर है। छत भी चौकोर पटी है। इसके चारो कोनोंपर स्तम्भ है। बीचमें सादी पत्थर-शिला लगी है। छज्जा भी पत्थरका है। छज्जाके ऊपरके साधरण मुरेड़के पत्थरपर वृत्ताकार ताखेमें मूर्तियोंके मस्तकमात्र बने है। भारतीय गाँवोमें बने विष्णु, हनुमान तथा अन्य देवियोंके देवस्थान तुल्य यह कोठरीनुमा बना है। इस स्थानपर लगभग पचास देव स्थान ईंटोंके बने है। उनमेंसे बहुत बहुकोणीय उपक्रमापर बने हुए हैं। यह समूह हांचीकी अपेक्षा और अधिक भारतीय है।

बयांग—बयाग मन्दिर प्रारूपिक दक्षिणके मन्दिर तुल्य है। दक्षिणके

गाँवोंमे जैसे छोटे मन्दिर बनते हैं ठीक वही खाका इस मन्दिरका है। उसका उद्विक्षेप शुद्ध दाक्षिणात्य है। यह आयताकार है। यह काची-पुरमके कैलाशनाथ मन्दिरके द्वारमण्डपतुल्य है। मामल्लपुरम्के गणेशरथसे भी उसकी तुलना की जा सकती है। वह ईंटोंका बना है। निर्माणकाल सातवी शताब्दी है। मन्दिरकी अत्यन्त शोचनीय अवस्था है। उसका ऊपरी खण्ड ध्वस्तप्राय है। मध्यमे द्वार है। द्वारके दोनों ओर बन्द चैत्याकार बनावटी खिड़कियाँ हैं। ग्रीवासे ऊपर तीन खण्डमें मण्डपकी लदान ऊपर गयी है। धरातलीय उपक्रमा देखकर कोई भी अनायास कह सकता है कि भुमराके मन्दिरके धरातल उपक्रमाकी नकल है। मन्दिर आलंकारिक है। यवद्वीप (जावा) के मन्दिरोंसे मिलता है। गुप्तकालीन कलाशैली इसमें मुस्कुराती दिखाई पड़ती है।

फुननकालीन मन्दिर प्रायः ईंटोके बने हैं। उनमे आश्रम महाऋपी पत्थरका है। वर्गाकार है। उसका उद्विक्षेप मामल्लपुरम्के समुद्रतटीय तुल्य है। मामल्लपुरम्का यह मन्दिर पल्लवकालीन स्मारकोंमे उत्कृष्ट श्रेणीका है। महाऋपीकी तुलना पल्लवों द्वारा एनामलाईके पर्वत शिखरपर बने मन्दिरसे भी की जा सकती है। शम्भुपुरमे इस प्रकारके भग्नावशेष बहुत मिलेंगे।

गुप्त एवं पल्लवशैली—इस कालकी मूर्तिकला देखनेपर इस निष्कर्षपर पहुँचते है कि वह शुद्ध गुप्त एवं पल्लवकालीन है। कम्बुजके भारतीयोने भारतीय स्थापत्य एवं मूर्तिकला भारतके ही अनुरूप बनानेका प्रयास किया था। सम्भव है भारतसे कलाकार एवं अभियन्ता कम्बुज गये हो। उन्होंने वहाँ जाकर मूल निवासियोको कला सिखायी हो। भारतका ताजमहल एवं मुसलिम इमारते अरबी तथा ईरानी स्थापत्यकलासे प्रभावित हैं। उनकी शैली मुसलिम हो सकती है, उपक्रमाकार अरबी या ईरानी हो सकता है। पत्थरो, ईंटो एवं चूनोपर भावनामय रूप देनेका काम भारतीय कलाकारोने किया था। भारतीयोने अरब या ईरानी उपक्रमाकार एवं अभियन्तासे सीखा होगा। उन्होने उसपर अपना पानी चढ़ाया। भारतीय-

आत्मा दी। यही बात कम्बुजकी फुननकलाके सम्बन्धमे भी कही जा सकती है। श्रीकरवसमे बुद्धकी प्रतिमा पायी गयी है। वह कम्बुजकी राजधानी फ्नोम पेन्हके संग्रहालयमे रखी गयी है। उस प्रतिमाके देखनेसे मालूम होता है कि सारनाथमे खड़ी बुद्धमूर्ति कोई लाकर वहाँ रख गया है। मूर्तिपर वस्त्र उसी प्रकारका है जैसा सारनाथकी मूर्तिपर है। वस्त्रसे भीतरका शरीर दिखाई देता है। पारदर्शी वस्त्रसे बुद्धकी मूर्ति आभूषित करना उत्तरी भारत, मुख्यतः, मथुरा तथा सारनाथकी कलाकी एक विशेषता रही है।

गुप्तकालीन तथा अजन्ताकी गुफा सख्या १९ मे पत्थरपर उत्कीर्ण बुद्ध प्रतिमा जैसे करवसकी प्रतिमाका प्रागूरूप है। उत्तरी श्याममे बुद्धकी एक प्रतिमा मिली है। वह शीतलके सग्रहालयमे रखी है।

प्रतिमाकी भौ शास्त्रवर्णित नीमकी पत्तीके तुल्य है। नेत्र कमलके समान है। ओष्ठ किंचित् कुचित मिले है। भावभगी, ग्रीवारेखा, क्षीण कटि, विशाल वक्षस्थल सभी कुछ गुप्तकालीन कलाकी साक्षी देते है।

हरिहर मत—शम्भुपुरी (सम्बोर) के निकट आनन्दित प्रासादसे हरिहरकी एक मूर्ति प्राप्त हुई है जो फ्नोम पेन्हके संग्रहालयमे सुरक्षित है। मूर्ति खण्डित है। मूर्तिमे प्रसाद है। विनय है। लालित्य है। यह मूर्ति फुननकलाका उत्कृष्ट नमूना है। शिव एव विष्णुको एक ही मूर्तिमे अर्धनारीश्वरकी तरह मिलाया गया है। मूर्तिके बाये हाथमे दो हाथ है। विष्णुके चार हाथोमे दो बायी तरफ है। केहुनीपरसे हाथ टूट गया है। दाहिने हाथमे एक ही हाथ है। वह भी केहुनीसे टूट गया है। शिवकी कल्पना शिवके द्विभुज और विष्णुकी चतुर्भुजसे की गयी है। उसका निर्वाह मूर्तिमे बड़ी चातुरीके साथ दाहिनी ओर एक हाथ और बायी ओर दो हाथकी मूर्ति द्विपादीय है। कलाकारने उसे इतना सुन्दर बनाया है कि मालूम पड़ता है कि मूर्ति अब चलना ही चाहती है। वह किसी पवित्र प्रयोजनके लिए गतिशील है। खण्डित हाथोसे मालूम होता है कि विष्णु अंगके दोनों हाथोमे एक ऊर्ध्वमुखी तथा दूसरा नतोमुखी था। सम्भव है

शिववाला दाहिना हाथ अभयमुद्रामें उठा रहा हो। मूर्तिका कान छिदा हुआ है। पल्लवकालीन मूर्तियोंका कान छिदा होता है। प्रत्येक हिन्दूका कर्णछेदन संस्कार होता है। अपने बालकपनमें हम भी बाला पहनते थे। मराठा, पेशवा राजा आदिके जो चित्र प्राप्त होते हैं उनमें मध्ययुगके लोग बाला पहने मिलते हैं। दक्षिणमें यह प्रथा विशेष प्रचलित थी। कांचीपुरम्‌के कैलासनाथकी रचना भी सातवीं शताब्दीकी है। हरिहर एवं कैलासनाथ दोनों समकालीन हैं। दोनों ही मूर्तियोंके कान छिदे हुए हैं! मूर्तिका पहनावा आन्ध्र, गुप्त एवं पल्लव मूर्तिकला अमरावती, देवगढ़ और मामल्लपुरमसे मिलता है। सरका पहनावा कन्हेरीकी गुफा ताराके अवलोकितेश्वर समूहवाली मूर्तिसे मिलता है।

मूर्तिकलाशैली भारतीय है। कल्पना मौलिक कम्बुज है। शैव एवं वैष्णव धर्मका समन्वय है। जैसे नर-नारीका मूल स्रोत एक ही है। दोनोंके मिलनका स्वरूप ही सृष्टि है। दोनोंको अर्धनारीके रूपमें भारतमें कल्पना की गयी। इसी प्रकारकी कल्पना कम्बुजमें गये भारतीयोंने की। भारतसे शैव एवं वैष्णव दोनों गये होंगे। सम्भव है दोनोंमें संघर्ष एवं विवाद हुआ हो या विवादकी शंका हुई हो। उसे तिरोहित करनेके लिए दोनोंको एक मूर्तिमें मूर्तिमान कर दिया गया है। मूर्तिके पीछे वलय बना था ताकि मूर्तिको हानि न पहुँच सके। खड़ी मूर्तिको किसी प्रकार सहारा न लगाना पड़े। वह वलय नटराजकी मूर्तिके पीछे नालके आकारवाले वलयके समान अथवा अण्डाकार रहा होगा। टूट गया है। अतएव केवल कल्पनासे ही कहा जा सकता है।

पाषाण उत्कीर्णताकी मूर्ति पूर्णता है। प्रस्फुटित नेत्र, पूर्ण अधरपर किञ्चित् मुस्कान, अङ्गोंमें सजीवता, भावभंगिमामें कृपाशीलता, नाभिके किञ्चित् नीचेतक चुनी धोती, धोतीके ऊपर कटिप्रदेशमें रत्नमय मेखला, शरीरके दक्षिण एवं उत्तरी दोनों भागोंमें शिव एवं विष्णु जैसे कल्पनाका झलकता अन्तर देखते ही बनता है। मालूम होता है कि मूर्ति कुछ कहती आगे बढ़ना चाहती है। देखनेवाला उसे देखता ही रह जाता है।

भाषा संस्कृत—तत्कालीन राजभाषा संस्कृत थी। मुस्लिमकालमें जिस प्रकार फारसी भारतकी राजभाषा मुसलिम दरबारमें हो गयी थी उसी प्रकार कम्बुजकी राजभाषा संस्कृत थी। पह्लवोंके शिलालेख दो भाषाओंमें मिलते हैं। कम्बुजके शिलालेखकी संस्कृत अत्यन्त परिष्कृत, व्याकरणके अनुसार शुद्ध एवं आलंकारिक है। संस्कृतका कितना उत्तम ज्ञान उन लोगोंका था उसका ज्वलन्त उदाहरण प्राप्य शिलालेख है।

ईशानवर्माकालकी शम्भुपुरीमें अनेक संस्मारक मिले हैं। मन्दिर, आश्रमादि बहुत बड़े क्षेत्रमें फैले हैं। मन्दिरोंके समूह कहीं कहीं एक ही चहारदीवारीसे घिरे हैं। इनकी रचना ईटोंसे हुई है। ईटोंमें ही सुन्दर रूपांकन किये गये हैं। ईटोंपर एलोराकी गुफाके रूपाकनों एवं स्थापत्योंपर जिस प्रकार पलस्तर किया गया था ठीक उसी प्रकार पलस्तर उनपर भी किया गया था। इस प्रकारके पलस्तरोंका चिह्न एलोराके समान यहाँ भी मिलता है।

इस कालके बने स्थापत्योंकी दीवारोंपर बने आलंकारिक रूपाकन गुप्तकालीन रूपाकनसे मिलते हैं। उनके मकर भारतीय मकरके प्राग्रूप हैं। मूर्तियोंके सिरकी भूषा रोमन सम्राटोंके सिरोवेशके सदृश ऊपर नुकीली गयी है। रोमन लोगोंसे यह वेश-भूषा ईरानवालोंने ली थी। आलंकारिक मूर्तियोंमें भारतीयोंने इसे अपनाया था। भारतसे वह कम्बुजमें पहुँची।

शम्भुपुरीका प्रासाद या प्रसात सोपानीय स्तूपाकार है। कलाकारने कैलासकी कल्पना की है। सस्मारक का अधिष्ठान चौकोर है। फुननकालके पाँच सौ वर्षोंके कलाविकासका स्मारक है। दीवारोंके काम गहरे और उभड़े हैं। कमल, कमलपत्र, मृणाल तथा अन्य पुष्पीय उत्कीर्ण रूपाकन बहुत ही कलापूर्ण है। स्थापत्य एव मूर्तिकलामें प्रकाश एव छाया अत्यन्त सुन्दरतापूर्वक कलाकारने उत्कीर्ण किया है। कुछ रूपाकन अष्टकोण हैं। कुछ वर्गाकार एवं आयताकार हैं। गर्भगृहमें रूपाकन नहीं हैं। उनकी छतें मेक्सिकोके मायामन्दिरकी छतके समान ईटोंपर ईंट रखते कोणीय प्रकारकी बनी हैं। वे उठते शिखरतक जैसे आकाशमें लीन हो जाती

हैं। उनमें विष्णु, शिव, किंवा बड़ा शिवलिंग स्थापित रहता था। दक्षिणी भारतीय स्थापत्यसे अधिक प्रभावित थी।

माया एवं फुननकला—कुछ लोगोंका कहना है कि माया एवं फुननकलाका सम्बन्ध है। वेपांगके मुख्य स्मारकके रूपसे मिलता है। उसे कुलेनकला भी कहते हैं। इतना स्पष्ट ही है कि मेक्सिको तथा कम्बुज दोनों देशोंके निवासी निश्चयपूर्वक आज नहीं कह सकते कि उनके देशका वास्तविक इतिहास क्या था। उनके पूर्वजोंने क्या किया? कहा जाता है कि माया स्थापत्यका काल ९४ बी० सी० से १७६ ए० डी० तक है। फुननकलाका उदय बहुत बादमें हुआ है। दोनों ही देशों अर्थात् माया एवं फुननकलाका विकास अपनी-अपनी दिशामें स्वतन्त्ररूपसे हुआ है।

फुननका अन्त—ईशानवर्माके पश्चात् भववर्मा द्वितीय राजा हुआ। उसके पश्चात् जयवर्मा प्रथम राजा हुआ। उसका राजत्वकाल सन् ६५७ से ६७४ तक कहा जाता है। जयवर्मा प्रथमकी मृत्युके पश्चात् एक शताब्दीतकका इतिहास तिमिराच्छन्न है। भारतीय इतिहासज्ञोंको इस सम्बन्धमें अन्वेषण करना चाहिये। चाहे आवश्यक न हो, परन्तु भारतीय गौरवकी कड़ी मिलानेके लिए उनका यह पवित्र कर्तव्य जरूर है।

फुनन संस्कृति—फुननकाल कम्बुजका शास्त्रीयकाल कहा जाता है। वह कम्बुजकी शास्त्रीय कलाका गौरवमय काल था। इस कलाकी सामग्री एगकोरके समीपवर्ती स्थान वेनतीश्री या शम्भुपुरी, प्री कुक आदिके समान है। यह काल कम्बुज इतिहाससे पहली शताब्दीसे ७वीं शताब्दी-तकका काल कहा जाता है।

यह समय भारतके कलाकालका स्वर्णयुग था। गुप्तकालके एलोरा, अजन्ता (३२०-४९०), चालुक्यकालके बादामी गुफा, मन्दिर, एहोलका पत्थरका काम (३००-८८९), पल्लव कालके काची, मम्मलपुरम्, महाबलीपुरम् के स्थापत्य एवं मूर्तिकलाका उदय इसी समयमे हुआ था।

फुनन राजवंश किंवा फुनन लोग दक्षिण भारतीय थे। वहींसे वे जाकर कम्बुजमे उपनिवेश बसाये थे। उस समय भारतीय जहाजी बेड़ा विश्वमे सर्वश्रेष्ठ था। जिस समय रोम, यूनान, कार्थेज तथा मिस्रके जहाज भूमध्यसागर जैसे झीलकाय समुद्रसे बाहर नही जा सके, उन दिनों भारतीय जहाजी बेड़ा प्रशान्त, भारतीय तथा अतलातक महासागरकी उत्ताल तरंगोसे खेलता चलता था। दक्षिण-पूर्व एशियाके भारतीय उपनिवेश भारतीय जहाजी बेड़ेकी देन है। उन देशोका और भारतका सम्बन्ध नियमितरूपसे बना रहा। आवागमन सुगम था वह सम्बन्ध भारतीय पराधीनता अर्थात् मुसलिम आगमन कालसे टूटने लगा। भारतीय अपने ही देशमे पराधीन होने लगे। उनके स्थापत्य तथा मन्दिर टूटने लगे। वे अपनी घरेलू समस्याओमें उलझ गये। उन्हे बाहर देखने या सोचनेका अवसर ही न मिला। अस्तु, भारत ओर उसके उपनिवेशोंका १२ सौ वर्षोंका पुराना सम्बन्ध टूट गया।

फुननकाल दक्षिण भारतके चालुक्य तथा पल्लव राज्यकालका समकालीन था। अतएव इस कालकी फुनन स्थापत्यपर पल्लव तथा चालुक्यकालीन भारतीय स्थापत्यका प्रभाव पड़ना स्वाभाविक है।

कम्बुजके भग्नावशेषोको चार वर्गोमे वर्गीकरण किया जा सकता है। एगकोर वाट, एगकोर थाम, बेरी ओरिएण्ट तथा स्थानीय संस्मारक किंवा भग्नावशेष। फुननकालके भग्नावशेष चतुर्थ वर्गमे आयेगे। इस कालको क्ष्मेर कालीनकला काल कह सकते है। इस कलाका काल प्रथमसे ७ वी शताब्दीतक है।

भारतीय एवं कम्बुज

भारतीयोंने कम्बुजको अपना उपनिवेश नही, मातृभूमि बनाया। अथक परिश्रमसे उसे सुसंस्कृत एवं शुद्ध बनाया। कला, शिल्प, विद्या, आयुर्वेद एवं धर्म दिया। कम्बुजके जीवनको अपना जीवन माना। किसी भी मूल कम्बुजनिवासीके साथ कभी भारतीयोने अन्याय, अत्याचार एवं अविवेकपूर्ण कार्य किया हो, इसका चीन तथा तत्कालीन किसी भी साधनसे पता नही

चलता। भारतीयोंने सहिष्णुता एवं धैर्यसे ही कार्य लिया। अपनेको कम्बुज निवासियोंसे अलग रखकर अपना कोई अलग समुदाय एवं वर्ग तथा समाज नहीं बनाया।

उन्होंने कम्बुजका शोषण कर भारतीय मातृभूमिका घर विदेशी लक्ष्मीसे भरनेका कभी प्रयास नहीं किया। कम्बुज निवासी किसी भारतीय राजा एवं भारतीय श्रेष्ठोकी भारतमें कहीं मन्दिर, शाला आदि नहीं मिली है। कम्बुजके फलने-फूलनेमें ही उनका फलना-फूलना था। भारतकी ओर उनकी ऑंखें उठीं केवल कला, दर्शन एवं ज्ञानके निमित्त।

पश्चिमी तथा भारतीय उपनिवेश—भारतीय उपनिवेश एवं पश्चिमी राष्ट्रोंके औपनिवेशिक दृष्टिकोणमें मौलिक अन्तर है। इगलैण्ड, फ्रास, इटली, पुर्तगाल एवं हालैण्डके लोग जहॉं गये वहॉं अपने देशका झडा फहराया। उस देशको अपनी मातृभूमिके अधीन कर दिया। दूसरे शब्दोंमे उसे पराधीन बनाया। शोषण उनकी मूल नीति थी। उपनिवेशोंमे रहकर वे अपनी मूल मातृभूमिकी ओर ऑंख उठाये रहते थे। उपनिवेशोंने अपनी मातृभूमिसे सम्बन्ध विच्छिन्न करना चाहा तो उन्हें सघर्षोंका आश्रय अपनी ही मूल मातृभूमिसे लेना पड़ा। सयुक्तराष्ट्र अमेरिका एवं ब्रिटेनका सघर्ष इसका ज्वलन्त उदाहरण है।

भारतने दूसरे मार्गका अवलम्बन किया। उसकी सहिष्णुता, निःस्वार्थ-बुद्धि, विवेक एवं कर्तव्यज्ञान उसे उस मार्गकी ओर ले गया जहॉं सघर्ष एवं शोषणकी कल्पना भी नहीं की जा सकती थी। भारतीय जहॉं गये वहीं बस गये। उसे अपना देश मान लिया। उसके साथ अपना भाग्य जोड़ लिया! उनकी दृष्टि भारतकी ओर नहीं, उस भूमिकी ओर उठी जो उन्हे अन्न, जल एवं दैनिक जीवनका साधन देती थी। भारतीय मुस्लिम तथा ईसाइयोंके दृष्टिकोणमे यही सबसे बड़ा अन्तर था और है। यही है भारतके गौरवकी विशेषता।

चीनके लेखसे ज्ञात होता है कि आठवीं शताब्दीके आरम्भमें कम्बुज

दो भागोंमे विभक्त हो गया था। 'चेनला' तथा 'चेनलाजल'की संज्ञा उन्हे दी गयी थी। चेनलामे उत्तरी कम्बुज, लाओस, वानकिन तथा युन्नान थे। यह राज्य समृद्धिशाली था। सन् ७१७ मे चीनसे राजनीतिक सम्बन्ध स्थापित किया गया था। सन् ७७१ मे राजा चीन सम्राट्के दरबारमे गया था। ७७९ मे राजदूत चीनी सम्राट्के यहाँ कम्बुजसे भेजा गया था। कम्बुजके इस राज्यको उत्तरी कम्बुजकी संज्ञा दी जा सकती है।

चेनला जल अर्थात् दक्षिणी कम्बुजके इतिहासका पता अभीतक नहीं चला है। कम्बुजका यह भाग समुद्रतटीय भाग था। अतएव चेनला जल नाम रखा गया होगा। केवल यह पता चलता है कि शम्भुपुर, आनन्दित-पुर तथा व्याधपुरमे राज कायम थे। शम्भुपुर सम्बोर था। व्याधपुरभी मैकाग तटपर स्थित एगकोर बोरे था। चेनलाजलकी राजधानी व्याधपुर तथा चेनलाकी राजधानी शम्भुपर थी। अन्य राजधानियोके स्थानका अभी निश्चय नहीं हो पाया है कि वे किस स्थानपर स्थित थीं। प्राप्त शिलालेखसे मालूम हुआ है कि आनन्दितपुरके राजा नृपतेन्द्रवर्माका पुत्र पुष्कराक्षने अपने विवाहके कारण शम्भुपुरका राज्य प्राप्त किया था। बालादित्यने आनन्दितपुर, शम्भुवर्मा तथा नृपादित्यने शम्भुपुर तथा आनन्दितपुरमें राज्य किया था। यव द्वीप (जावा) के शैलेन्द्रवंशीय राजाकी राजसत्तामे कम्बुजका भाग आ गया था। आठवी शताब्दीका इतिहास एक प्रकारसे अन्धकारमय है।

कम्बुजकी स्वतन्त्रताप्राप्ति—कम्बुजके तिमिराच्छन्न गगनमें जय-वर्मा द्वितीय सूर्यकीत रह उदय होता है। गाथा है कि उसकी प्रपितामही राजा पुष्कराजकी भांजी थी। उसकी धर्मपत्नी राजा रुद्रवर्माकी भाजी थी। सप्रमाण सिद्ध है कि जयवर्मा कुछ दिनोतक यवद्वीपमे था। उन दिनो दक्षिणी कम्बुज अर्थात् चेनलाजल यवद्वीपके सत्ताधीन था।

बैंगकाक सग्रहालयमे एक शिलालेख है। उस लेखसे प्रतीत होता है—'लोककल्याण निमित्त, देवकी पवित्र जातिसे एक कमल उदय हुआ।

उस कमलमे मृणाल नही था। उसका मूल नही था। वह नवीन प्रफुल्लित पुष्पकी तरह उदय हुआ।'

तान्त्रिक हिरण्यदामा—जयवर्मा द्वितीय सन् ८०२ मे राज-सिंहासमपर बैठा। उसने तान्त्रिक ब्राह्मण हिरण्यदामाको बुलाया। उसने विचार किया कि तन्त्रशक्ति द्वारा कम्बुजको स्वतन्त्र एवं शक्तिशाली किया जाय।

देवराज मत—तान्त्रिक हिरण्यदामा सम्भवतः भारतसे बुलाये गये होगे। उन्होंने तान्त्रिक क्रियाएँ की और देवराज मत चलाया। यही मत राजधर्म हो गया। चम्पा तथा मध्य जावामे भी इस प्रकारके मतका प्रमाण मिलता है। चम्पाके शिलालेख से पता चलता है कि भद्रेश्वर शिव तथा राज्यवंश ही एक रहस्यमय सम्बन्ध था। कम्बुजमे हिरण्यदामा, जावामे भृगु तथा मध्य जावामे अगस्त्य इसके मुख्य आचार्य कहे जाते हैं। जावाके आलेखसे मालूम होता है कि दक्षिण भारतके कुजराकुजसे यह मत अगस्त्य द्वारा पहुँचा था।

हिरण्यदामाने राजपुरोहित शिव कैवल्यको अपने मतका रहस्य बताया। राजाने घोषणा की! शिव कैवल्यके वंशपरम्पराके ही राजपुरोहितका पद रहेगा। ढाई सौ वर्षतक राजपुरोहिती इसी वशमे स्थित रही। इस वंशने तत्कालीन नरेशोंकी वशावली लिखकर छोड़ दी है। नेपाल तथा हिन्दू राजाओके यहाॅ भी यही प्रथा थी। पुरोहित ही वशावली, जन्म, मृत्यु, राज्यारोहण आदि सबका अभिलेख रखता था। आज यह विशेष ऐतिहासिक महत्त्वका है।

चक्रवर्ती राजा—एक शिलालेख संस्कृतमे मिला है। उसमे जय-वर्माको चक्रवर्ती राजाकी उपाधिसे विभूषित किया गया है। लेख है—ब्राह्मण हरण्यदामाने सर्वशास्त्रोंके अध्ययन एवं अनुभवके पश्चात्ज गत्-कल्याण निमित्त सारस्वतरूप तान्त्रिक देवराज कल्पधर्मकी स्थापना की। तन्त्रविद्याका ज्ञाता ब्राह्मण हरण्यदामा जनपदसे आया था। महामहिम परमेश्वरने कम्बुजको यवद्वीपसे मुक्तकर स्वातन्त्र्यरक्षा एवं संस्कार निमित्त

आमन्त्रित किया था ताकि कम्बुजमें 'चक्रवर्ती' राजा हो।

सन् १०४२ के स्दोक कुक थामके प्राप्त शिलालेखसे प्रकट होता है कि देवराजधर्म प्रचलित करनेका एकमात्र उद्देश्य श्रीविजय (जावा) से कम्बुजकी रक्षा करना था।

शिवसोम—जयवर्माके मामा जयन्द्राधिपतिवर्माने शास्त्रोका अध्ययन शिवसोमसे किया था। गाथा है कि शिवसोम भारतसे आये थे। वे भागवत शंकराचार्यके शिष्य थे। उनसे विद्याध्ययन किया था। आद्य शंकराचार्यका भी यही काल है। कुछ लोगोंका मत है कि भागवत शंकराचार्य वास्तवमे शंकराचार्य ही थे। शिवसोम उन्हींके शिष्य थे।

सीएमरीपसे लगभग ३० मील दूर कुलेन पर्वत है। यह अधित्यका है। इसपर अनेक शिखर हैं। जंगलसे पटा है, वहॉसे स्रोतस्विनियॉ निकलती है। तेन लेप झील मे जाकर मिल जाती है। जयवर्मा द्वितीयने पर्वतपर अनेक स्मारक बनवाये हैं। सन् १९३६ मे खुदाईका काम वहॉ हुआ है। खनन-कार्यमे १७ प्रासाद देव स्थान, १६ गढ़ी हुई द्वारोर्ध्व स्थूण, १६ जोड़े छोटे स्तम्भ, ४ मूर्ति, पत्थरके सिर, फलक तथा बहुतसे मूर्तिउत्कीर्ण फलक मिले हैं।

प्राप्त सामग्रीसे एक नयी शैलीका पता चलता है। उसमे आठवी तथा नवी क्ष्मेर कलाका समन्वय है। भारत एवं कम्बुज भूमि अर्थात् दो देशोंकी अनुभूति एवं सम्पर्कका परिणाम है। कुलेन पर्वतीय शैली क्ष्मेर कालकी आठवी तथा नवी कलागतिको जोड़नेवाला सेतु है।

क्ष्मेर कलाकी मुख्य वस्तु उसका शिखरीय देवालय है। उसे प्रासाद कहते हैं। वे पहले पत्थरकी कुर्सीपर ईटोसे बनते थे। दशवी शताब्दीमे चूने और पत्थरसे बनने लगे। प्रासाद एक लम्बी चौड़ी कुर्सी देकर सामूहिक शिखरोमे बनाये जाते थे। प्रासाद एक-दूसरेसे दीर्घासे सम्बन्धित कर दिये जाते थे। एगकोर वाट इसी गतिका विकसित रूप है।

महेन्द्र पर्वत—पुरोहित वशीय अभिलेखसे प्रकट होता है कि इन्द्र-पुर, कुरी, (वेनती केडी) हरिहरालय एवं अमरेन्द्रपुरमे राजधानियोका निर्माण

किया गया था। इन्द्रपुर उत्तरपूर्व, अमरेन्द्रपुर वत्तम्बग जिलाके पश्चिममें तथा वेन्ती केडी एगकोरके पूर्व था। अन्तमें उसने महेन्द्र पर्वत एगकोरसे १३ मील दक्षिण जिसे आजकल शायद पवाम कुलेन कहते हैं—अपनी राजधानी बनाया। वहींपर देवराज मतका रहस्य उद्घोषित किया गया। कुछ लोग वीगमीलीकको भी महेन्द्र पर्वत कहते हैं। आधुनिक मत कुलेनके पक्षकी ओर अधिक है।

केतुमाल—केतुमाल जयवर्माका दूसरा नाम रखा गया था। उसने ५० वर्ष राज्य किया। कम्बुजका एकीकरण किया। गाथा है कि ८१७ सन्में चम्पाके राजाने कम्बुजको तहस-नहस किया। लेकिन जयवर्माकी शक्ति अक्षुण्ण बनी रही।

इन्द्रसुअन—जयवर्माको इन्द्रका पुत्र भी कहते हैं। गाथा है कि उसे उसके पिता इन्द्र अपने साथ इन्द्रपुरी ले गये थे। लौटनेपर पिताने उसके साथ एक वास्तुकलाविद् कर दिया। उन्होंने इन्द्रलोकीय देवताओंसे वास्तु, स्थापत्य एवं मूर्तिकला सीखी थी। उसने कम्बुजमें अनेक स्मारक बनाये।

इन्द्रका कृपाण—जयवर्माका कृपाण आजकल सुरक्षित है। गाथा है कि उसे इन्द्रने जयवर्माको दिया था। इसके सम्बन्धमें अलग ही लिखा गया है। राजप्रासादमें सुरक्षित रखा रहता है। उसपर रात-दिन प्राचीन ब्राह्मण वंशीय पुरोहित पहरा देते रहते हैं। राज्यारोहणके समय अब तक कम्बुजराज उसे धारण करते हैं।

कौण्डिण्य सोमवंशी थे। जयवर्माने सोमवंशसे अपना सम्बन्ध नहीं रखा। अपनेको सूर्यवंशीय कहा है। कम्बु सूर्यवंशी थे। उसने अपनी वंशावली कम्बुजसे मिलायी। अपनी पदवी कम्बुजेश्वर एवं कम्बुजेन्द्र रखा। वही पदवी कम्बुजके राजाकी आजतक चली आती है। वे कम्बुजेश्वर एवं कम्बुजेन्द्र कहे जाते हैं। राजमहिषीकी पदवी कम्बुजेश्वरी हुई। उसकी मृत्यु सन् ८५४ में हो गयी। उसका राज्य रोमके सीजरके राज्यसे क्षेत्रफलमें बड़ा था।

जयवर्धन—जयवर्मा द्वितीयका पुत्र जयवर्धन था। जयवर्मा तृतीय नामसे सिंहासनपर बैठा। ८७७ मे उनकी मृत्यु हो गयी। उसके साथ जयवर्माके वंशका लोप हो गया।

क्ष्मेर राज्यका वर्णन चीनी तथा अरबी दोनो देशोके इतिहासकारोने किया है। उनके अनुसार राज्य मध्य इण्डोचीन तथा दक्षिणी चीनके यून्नान प्रदेशतक फैला था।

नीक पीन—चाउत क्लोन लिखता है—'सरोवर नगरसे ४-५ ली उत्तर है। उसमे वर्गाकार शिखर है। वह सुवर्णमण्डित है। वहाँ लगभग १२ भवन पत्थरके है। सुवर्ण-चढ़े ताम्रपत्रमण्डित बुद्ध एवं विहार है। कॉसेका हाथी, नन्दी एव एक अश्व है।'

नीक पीन स्थानीय नाम है। इसका वास्तविक काल निर्णय अभी तक नहीं हो सका है। जनश्रुति है कि जयवर्मा द्वितीयके समय बना था। बौद्ध लोग इसे तेरहवी शताब्दीका बना बताते है। सम्भव है कि भविष्यमे अन्वेषण द्वारा इसपर कुछ अधिक प्रकाश पडे।

सन् १८७४ मे श्री फरातने इसका नाम निरपोन दिया है। सम्भव है कि यह निरूपम शब्दका अपभ्रंश हो। स्थान वास्तवमे निरुपमेय है। उसकी सुन्दरता देखकर ही अन्य सस्कृत नामोके समान उसका भी नाम निरुपम रखा गया हो। वही बिगड़कर नीक पीन अथवा निरपोन हो गया है। नीक पीनका लौकिक अर्थ परस्परा मिले नागोको कहते हैं।

नीक पीन कृत्रिम झील किवा सरोवर है। यह ३००० मीटर लम्बी एवं १००० मीटर चौडी है।

गाथा है कि हिमालयपर अनुतप्त सरोवर है। उस सरोवरसे एशियाकी ४ महान् नदियाँ निकली है। उनके नाम गंगा, सिन्धु, ब्रह्मपुत्र एवं सीकाग हैं। उनमे स्नान करनेसे पुण्य मिलता है। यह सरोवर वही अनुतप्त तीर्थ है। नीक पीनका मूल नाम शायद अनुतप्त सरोवर ही रहा हो। उसीका अपभ्रंश नीक पीन अथवा निरपोन भी हो सकता है। गाथा-के अनुसार इस महान् सरोवरकी महान् रचना की गयी है।

नाक पीनकी निर्माणकला विचित्र है। भारतमें इस प्रकारकी कला देखनेमें नहीं आती। यह वर्गाकार है। १५० मीटर लम्बा तथा १५० मीटर चौड़ा अर्थात् २२५०० वर्गमीटर क्षेत्रफल होगा। मध्यमें वर्गाकार सरोवर है। वह ७६० मीटरके लगभग लम्बा तथा उतना ही चौड़ा है। केन्द्रीय सरोवरके चारों दिशाओंमें उससे मिले चार सरोवर प्रत्येक दिशा-के मध्यमें बने हैं। छोटा सरोवर २८ मीटर लम्बा-चौड़ा वर्गाकार है। चारों छोटे सरोवरोंमें चारों ओर सीढ़ियाँ हैं। केन्द्रीय सरोवरमें भी सीढ़ियाँ बनी हैं। चारों छोटे सरोवरोंसे केन्द्रीय सरोवरमें जानेके लिए मार्ग हैं। लघु सरोवरोंमें सामनेसे जानेके लिए सीढ़ियाँ न होकर दाहिनी बगलसे बनी हैं।

कथानक कुछ ठीक मालूम होता है। रूपक बैठता है। अनुनत सरोवर मध्यमें है। उससे निकले चार लघु सरोवर ही जैसे गंगा, सिन्धु, ब्रह्मपुत्र एवं सीक्याग नदियाँ हैं। काशीमें भी पुष्कर, मानसरोवर आदि जैसे तीर्थ सरोवर रूपमें बनाये गये थे। वे आज भी मौजूद हैं। उसी प्रकार कम्बुजमें भी इस प्रकार सरोवरकी कल्पना की गयी होगी।

केन्द्रीय सरोवरके बीचमें गोलाकार द्वीप है। उसपर देवालय बना है। देवालयमें प्रवेशके निमित्त पश्चिम दिशासे मार्ग है। देवालयका द्वार भी पश्चिम दिशाकी ही ओर है। तीनों दिशाओंमें वह भारतीय शिवालयों-के समान बन्द है।

सन् १९३५ तक यह स्थान घास-फूस और पादपोंसे भरा पड़ा था। बृहत्तरझील प्रायः बढ़ भी गयी है। सन् १९३८ में वृक्षोंकी जड़ें मन्दिरसे साफ की गयीं। सरोवरके बीचमें द्वीप है। वृत्ताकार द्वीपका व्यास २४ मीटर होगा। इस द्वीपपर जानेके लिए सेतु नहीं बना है। नावसे ही जाया जा सकता है। जलके कम होनेपर द्वीपकी नींव दिखाई पड़ती है। वह पत्थरोंके ढोकोंकी दी गयी है। नींवके ऊपर वृत्ताकार शिला-मेखला है। मेखलापर कुछ चौड़ी फर्श है। फर्शसे पाँच सीढ़ियाँ ऊपर जाती हैं। ऊपर जाकर पुनः पद्म-पखुड़ियोंकी आलंकारिक शिला-मेखला है। मेखलाके

वेनतीश्री—गरुड, कम्बुज (१४ शती)
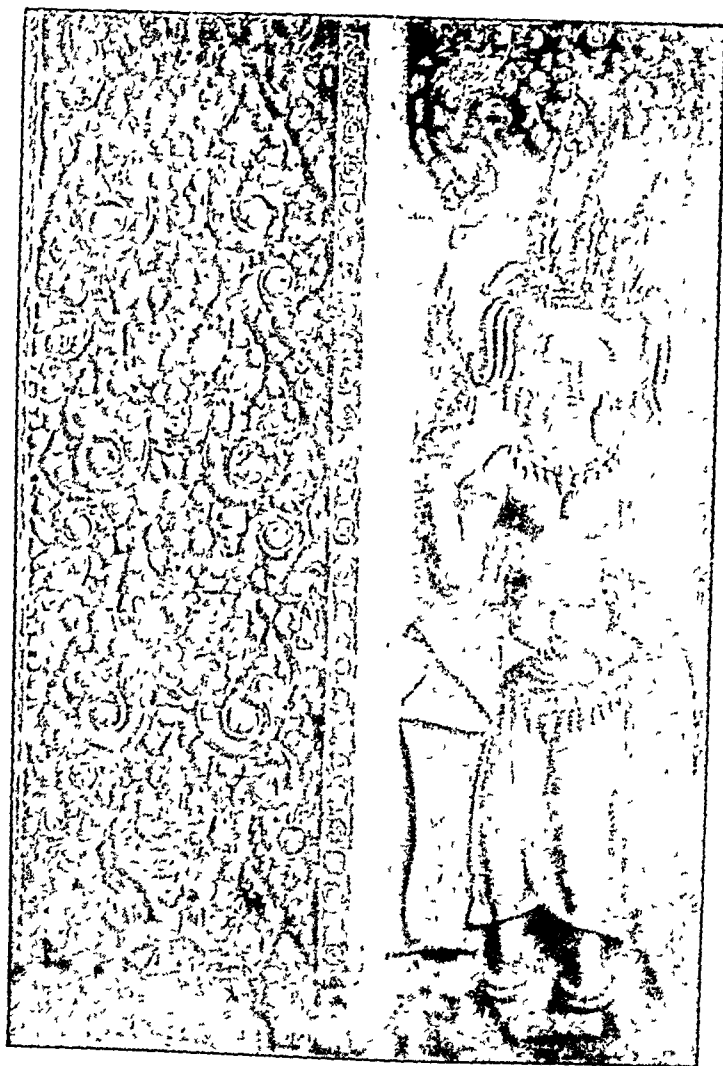
अंगकोर वाट—अपसरा (१२ शती), कम्बुज

ऊपर मन्दिरका फर्श किंवा अधिष्ठान हैं। मन्दिर चौकोर है। पश्चिम दिशामे द्वार है। अन्य तीनो दिशाओमे मन्दिरके पीछेकी दीवारमें देवताओकी अत्यन्त सुन्दर मूर्तियाँ खड़ी लगी हैं। इस मन्दिरकी शैली शिखराकार है। कुछ लोगोने खजुराहोके शिखरकी शैलीसे इनकी तुलना की है किन्तु वह गलत है।

मन्दिरके गर्भगृहसे प्रवेशके निमित्त नक्काशीके सुन्दर कामका दरवाजा है। गूलरके पेड़की जड़ोने इतने भयंकर ढगसे चारो ओर मन्दिरको दवा लिया था कि मन्दिर नष्ट हो जाता। अब वह जड़ हटा दी गयी है। प्रवेशद्वारके द्वारोर्ध्व स्थलपर कुछ मूर्तियाँ उत्कीर्ण थीं। वे नष्ट हो गयी है। जो बची हैं उनसे प्रतीत होता है कि रावण या कोई बैठा है। उसके दोनों हाथ ऊपर उठे है। हाथ त्रिमुखके अधिष्ठानसे लगा है। त्रिमुख आकृति उसके सरपर है। रावण या जो भी कोई गाथानुसार हो, स्वयं पत्थरके सिंहासनपर बैठा है। सिंहासनके दोनो ओर दो मूर्तियाँ पद्मासीन हाथ जोड़े बैठी है। यह दृश्य रावणके कैलाश उठाने जैसा प्रतीत होता है। प्रवेशद्वारके दोनो ओर खड़ेजेपर पत्थरकी नक्काशीका बड़ा ही उत्कृष्ट काम बना है। कैलाशके समीप ही अनुतप्त सरोवर होनेकी गाथा है। यह दृश्य कैलाश उठानेका ही है। गर्भगृहमे शिवलिंग स्थापित था। नीक पीन अथवा निरपोन अनुतप्त तीर्थ है।

कम्बुज साम्राज्य

जयवर्मा तृतीयके पश्चात् सन् ८७७ मे इन्द्रवर्मा राजा हुआ। जयवर्मासे उसका दूरका सम्बन्ध था। उसकी रानीका नाम इन्द्रादेवी था। कथा है कि उसके पिता भारतीय ब्राह्मण थे। माता व्याधपुर राजवंशकी थी। वे आर्यदेशीय ब्राह्मण अगस्त्यके वंशज थे।

इन्द्रवर्माके गुरु जयवर्मा द्वितीयके मामाके प्रपौत्र थे। उसने अनेक मन्दिर, भवनो एवं सरोवरोका निर्माण किया। उसके निर्मित मन्दिरोंको इन्द्रवर्मा मन्दिर शैली कहते है।

हरिहरालय—इन्द्रवर्माने अपनी राजधानी हरिहरालयमें बनायी। वह नगर एगकोर थामसे पूर्व बना था। इसे स्थानीय भाषामें वकोंग कहते हैं। सन् १९३६ तक यह स्थान स्तूपाकार भग्नावशेषके रूपमें पड़ा था। उसका खनन कार्य हुआ। कुछ मरम्मत भी हुई। प्राप्त आलंकारिक उत्कीर्ण पत्थरोंसे मालूम होता है कि वह नवी शताब्दीके स्थानपर ग्यारहवीके अन्त तथा बारहवीके प्रारम्भकालका है। क्यागके जैसी सुन्दर आलंकारिक नक्काशी है। उसी तरह यहाँकी भी है। प्रारम्भिक कालमे क्ष्मेर स्तूपाकार कुर्सीपर शिखराकार लघुदेवालय बनाते थे। वहाँ एगकोर वाट का प्रारूप मिलता है। प्रतीत होता है कि एगकोर वाटके स्थापत्य-कारने यहींसे प्रेरणा ली थी।

संस्कृत काव्य एवं पाणिनि—यशोवर्धन सन् ८२१ में यशोवर्माके नामसे राजा बना। शिव कैवल्यके प्रपौत्रके भतीजे वामशिवसे काव्य एवं शास्त्रोंका अध्ययन किया। सस्कृत काव्यशैलीके अनेक शिलालेख उनके समयके उपलब्ध हुए है। उसे कम्बुजका पाणिनि कहते हैं। उसने पंतजलि महाभाष्य लिखा था। अनेक मन्दिर एव आश्रमो (धर्मशाला) का निर्माण करवाया था। उसने अपनी राजधानी प्रथम कम्बुपुरी तत्पश्चात् यशोधरपुर मे बनवायी। उसका राजप्रासाद यशोधरपुरमें यशोधर शिखरपर था। उसे यशोधरपुर कहते है। नगरके उत्तर ओर कृत्रिम झील खुदवायी। उसका नाम यशोधर तड़ाग था। तड़ागका ही अपभ्रंश ताटक शब्द मालूम होता है। लगभग १० मीलके क्षेत्रफलमे यशोधरपुर आबाद था। वायुयानसे नगरकी रूपरेखा देखी जा सकती है। नगर आयताकार था। चारों ओर चौड़ी खाई थी। इस समय उस खाईका एकमात्र कार्य कृषकोंके धानके खेतोंको पानी देना है। सीएम रीप नदीमे बाढ़ आती है तो इसमे पानी भर जाता है।

वयाग यशोवर्मा प्रथमने बनवाया था। राजधानी यशोधरपुरके मध्यमें निर्मित थी। यह शिखराकार मन्दिर है। मन्दिर शिवको अर्पित किया गया था। जंगलसे स्थान बिलकुल पटा है।

दाहस्थान—एगकोर थामके उत्तर शिखराकार देवालय है। इसे फ्राम वाकेन तथा प्राग कहते है। यहाँ एक शिवलिंग मिला है। उसपर 'यशोधेश्वर' आलेख अंकित है। यशोवर्माका यह दाहस्थान प्रतीत होता है। महात्माजीके दाहस्थानपर दिल्लीमे सुन्दर बाग तथा चौकोर चबूतरा बना है। उसे गाँधीजीकी समाधि कहते हैं। वास्तवमे गाँधी दाहस्थान उसका नाम होना चाहिए। समाधि उस स्थानको कहते हैं जहाँ योगी गाड़े जाते हैं। राजपूतानेमे राजाओके नामपर छतरी बनानेकी चाल है। काशीमे बहुत मन्दिर हैं जो किसी न किसी व्यक्तिके नामपर उनके वंशजों द्वारा आत्मशान्ति निमित्त बनवाये गये है। यह प्राचीन भारतीय प्रथा है।

यशोवर्माने लोलीमे मन्दिर भी निर्माण कराया था। उनमें चार शिखर ईंटोंके मिले है। द्वार पत्थरका है। शिलालेखसे स्पष्ट होता है कि उसने शिव एवं पार्वतीका मन्दिर अपने माता-पिताके आत्मशान्तिहेतु बनवाया था।

लिपि—यशोवर्माकालकी लिपि श्रीविजयकी लिपि कलसन थी। पल्लवकालीन शिलालेख द्विभाषी मिले हैं। उसी प्रकार यशोवर्माके शिला-लेख दो भाषाओंमे प्राप्त हुए है। उनमे एककी भाषा शुद्ध सस्कृत है।

मन्दिर शासन—एगकोरके पूर्व बेनती केदी तथा पिता ब्रह्माके मन्दिर हैं। पिता ब्रह्मा दसवी शताब्दीकी निर्माणकला है। तेरहवी शताब्दीमे उसमें कुछ संस्मारक और बढ़ाये गये। यह देवालय पहले बुद्धके लिए निर्माण किया गया था। सूर्यवर्माके समय उसमे पुनः बुद्धपूजा होने लगी। प्राप्य शिलालेखसे मन्दिरकी विशालता एव पूजाका पता चलता है। मन्दिरकी व्यवस्थाके ८१ मुख्य अधिकारी तथा १२६४० अधीनस्थ कर्मचारी थे। मन्दिर गानके लिए ६१५ संगीतज्ञ थे। सोने और चाँदीके बहुत आभूषण एवं अलंकार थे। ३५ हीरा था। २ मोतियोंका पखा था। मोतीके ४०६२० दाने थे। बहुमूल्य ४५५० रत्न थे। एक बड़ा सुवर्णपात्र था। ताम्रपात्र अनेक थे।

मन्दिरमे उक्त संख्या वैतनिक कर्मचारियोंकी थी। इसके अतिरिक्त मन्दिरमे न जाने कितने व्यक्ति उपासना एवं कार्य निःशुल्क करते रहे होंगे। भारतवर्षके बडेसे वड़े मन्दिर एवं विश्वके सबसे वड़े देवस्थान पोप वेटिकनमे अव भी इतने कर्मचारी कार्य नही करते। रोमन कैथोलिक चर्चका संघटन सम्पूर्ण विश्वमे है। पुनरपि इस मन्दिरकी विशाल योजनाके सम्मुख वह छोटा ही प्रतीत होगा।

संस्कृत शिलालेख—यशोवर्मांके चार शिलालेख प्राप्त हुए हैं। उनमे क्रमसे ५०, ७५, ९३ तथा १०८ श्लोक हैं। बहुतसे ओर शिलालेख प्राप्त हुए है। उनकी श्लोकसंख्या ५० या उससे कुछ कम होगी।

प्रवरसेन मयूर—यशोवर्मांके शिलालेखमे प्रवरसेन तथा मयूरका नाम उल्लिखित है। प्रवरसेनने सेतवन्ध तथा मयूरने गुणाध्याय लिखा था। त्रयी, वेद, वेदान्त, स्मृति, वात्स्यायन कामसूत्र, विशालाक्ष आदिका उद्धरण शिलालेखोमे मिलता है। यहॉतक कि कालिदासके 'रघुवंश' काव्यके चार श्लोक अक्षरशः प्रोरूपके शिलालेखमे उद्धृत है।

प्रथम एगकोर थाम—एगकोर थाम यशोवर्मा प्रथम द्वारा बसाया यशोधरपुर है। इसका प्राचीन नाम यशोधरपुर कहा जाता है। थामका अर्थ है धाम। काशीधाम, पुरीधाम, रामेश्वरधाम भारतीय वाङ्मयमे प्रयुक्त होता है। नगरधाम भी इसका प्राचीन नाम हो सकता है। यह शब्द नगरधाम अथवा यशोधरपुरका अपभ्रंश है।

स्योक थामका शिलालेख कहता है—तत्पश्चात् परम शिवलोक यशोधरपुरकी नीव डाली। वह जगत नरराज (देवराज) को हरिहरालयसे लाकर यहॉ स्थापित किया। राजाके उपाध्याय कायशिवने केन्द्रमे लिंग स्थापित किया।

केन्द्रीय पर्वत नया नही है। इसका प्राचीन नाम यशोधरगिर था।

प्रस्तुत एगकोर थाम दो नगरोंका ध्वंसावशेष है। प्रथम नगर यशोवर्माने ८८९ से सन् ९१० के मध्य वसाया था। दूसरा नगर जयवर्माने

सन् ११८१-१२०१ के मध्य बसाया था। दोनों ही महान् राजाओंने इसे अपनी राजधानी बनाया था।

यशोवर्मा नगर जयवर्माके नगरसे क्षेत्रमें दूना था। उसका केन्द्र बरवंग था। नगर आयताकार था। प्राचीन भारतकालमें नगरनिर्माणका रूपांकन चौकोर ही किया जाता था। मध्यमें राजप्रासाद अथवा देवालय होता था। नगरके चारों ओर नहर होती थी। नहरके पश्चात् भूमि होती थी। भूमिके पश्चात् प्राकार होता था। दो मार्ग नगरको चार विभागोंमें विभाजित करते थे। एक उत्तरदक्षिणके प्राचीरके मध्य भागको मिलाता था। दूसरा पूर्वपश्चिमके मध्य भागको। सबके रहनेके लिए स्थान अलग नियत थे। ठीक यही प्राचीन भारतीय नगर-निर्माण शैली एगकोर नगरके प्रथम निर्माणमें अपनायी गयी थी।

मैंने काशीकी प्रदर्शनी (सन् १९३८) में प्राचीन नगर का एक माडल बनाया था। यह उससे बिलकुल मिलता है।

इस नगरके अन्दर एगकोरवाट पूर्वदक्षिणके कोनेपर नगर-निर्माण होनेके लगभग २५० वर्ष पश्चात् अर्थात् सन् १११३-११४५ के बीच बना था। जयवर्माका एगकोर थाम द्वितीय लगभग ३०० वर्ष पश्चात् अर्थात् ११८१-१२०१ के बीच बना था। एगकोर थाम कम्बुजके ५०० वर्षोंका इतिहास अपने गर्भमें रखे बैठा है।

प्रथम नगरकी सीमा पूर्वमें एगकोर वाट नगरको स्पर्श करती उत्तर दक्षिण गयी थी। उत्तरकी सीमा बफौन थी। दक्षिण एगकोर वाटकी दक्षिणी सीमासे आधा मील और दक्षिण जाकर पूर्व-उत्तर नहर जाती थी। नगरके चारों ओर चौड़ी नहर थी। नहरके पश्चात् सूखी चौड़ी भूमि थी। भूमिके पश्चात् ऊँचा प्राचीर था। बफौन पूर्वी-पश्चिमी दीवारकी उत्तरी सीमाके मध्यमें था। बरवग मध्यमें था। बफौनसे मार्ग निकलकर बरवंग होता दक्षिणी सीमाके पूर्व-पश्चिमवाले प्राचीरके मध्यमें मिलता था। दूसरा मार्ग बरवंग होता पहले मार्गपर समकोण बनाता पूर्व-पश्चिम जाता था। दोनों ही पूर्वी तथा पश्चिमी आकारके मध्यमें मिलते थे।

विश्वका श्रेष्ठ नगर—अपने समयका वह विश्वके बड़े नगरोंमें एक नगर था। उसकी खाई ३३० फुट चौड़ी थी। खाईके पश्चात् प्राचीर थी। नगर वर्गाकार था। दो मील लम्बा तथा उतना ही चौड़ा था। उसके मध्यमे भूमिसे उठता शिखराकार वफौनका मन्दिर था। क्मेर स्थापत्य एवं वास्तुकलाका उत्कृष्ट नमूना था। इसे कम्बुपुरी भी कहते थे।

वरवंग आयताकार था। पूर्व-पश्चिम लम्बा एवं उत्तर-दक्षिण चौड़ा था। दोनों ही मार्ग ठोस भूमिसे उठे बने थे। इसके पूर्व दिशामे सुमरा नदीका चिह्न दक्षिणसे उत्तर मिला है।

प्रथम नगरमे वरवंग, वेनथाम, वेओन मुख निर्माण थे। वफौन तथा (फीमेन कास) आकाश विमान उत्तरी सीमावर्ती नहरके वाहर थे। एगकोर नगरका आधा दक्षिणी भाग प्रथम नगरके अन्दर था।

यशोवर्माकी एक महान् कीर्ति वरवंग है। यह प्रथम एगकोर थामके केन्द्रमे था। दक्षिण उत्तर तथा पश्चिम पूरबकी सड़के मिलकर चौराहा या नगरका केन्द्र बनाती थीं।

कथा है, इन्द्रका विश्रामस्थान था। कुछ लेखक कहते हैं कि यशो-वर्मा प्रथमने देवराजके निमित्त निर्माण कराया था। इसकी भी शैली पर्वताकार है। सुमेरु किवा मेरु निर्माणकर उसपर देवराजकी स्थापना की गयी थी।

वरवग ठोस पत्थरका पंचखण्डीय चबूतरा है। सर्वोपरि चबूतरेपर पॉच शिखर है। बीचके चबूतरोपर भी छोटे-छोटे अनेक शिखराकार मन्दिर बने हैं। भारतमे तथा बर्माके बड़े मन्दिर तथा पगोडामे देखा गया है कि केन्द्रीय मन्दिर तथा पगोडाके समीप तथा उसीके अधिष्ठानपर लोग छोटे-छोटे मन्दिर अथवा पगोडा बना देते है। रंगूनके सेगून पगोडाके चारों ओर इस प्रकारके बहुतसे पगोडा है। काशी विश्वनाथ अथवा दक्षिणके मन्दिरोंमे भी छोटे मन्दिर लोग अपने यश किवा पुण्यके लिए बनवा देते हैं। मृत्यूपरान्त सम्माननीय व्यक्ति तथा राजा लोगोकी चौरियाँ छोटे मन्दिरके रूपमे बना देते हैं। इस प्रकारके शिखराकार मन्दिर

काठमाण्डूके पशुपतिके मन्दिरके दूसरी ओर अर्थात् वागमती नदीके दूसरे तटपर बने हैं। वे सती स्थान किंवा राजा अथवा राणाओंके मृत्यु-स्मारक है। चबूतरोंपर इसी प्रकारके मन्दिर बने है। यशोवर्माने मुख्य मन्दिर बनवाया होगा। :चबूतरोंके खाली स्थानोंपर कालान्तरमे पुण्यार्जन निमित्त दूसरे लोगों द्वारा मन्दिर बना दिये गये होगे। प्रथम एगकोर थाम राज्यका केन्द्र था। इसके चारो ओर लगभग आठ या दस वर्गमीलमे नगर फैला हुआ था।

वेथोन

यशोवर्माकी अमरकीर्ति वेथोन है। स्थापत्य एवं भास्कर्य कलाका सुन्दर नमूना है। पहले पर्यटक पूर्वी सड़कसे आते थे। आजकल दक्षिणीसे आते हैं।

यह स्थान अरण्यके बीचमे है। वनश्रीकी अभिरम्यता मोहक है। कम्बुज बालक एवं बालिकाएँ स्थानीय भग्नावशेषोंका फोटो बेचती थीं। वे जैसे वनके सरल पक्षी थे। वनकी पुष्पित लताओंकी मुसकान उनके अधरोपर मानो उतर आयी थी। हम उनकी भाषा नहीं जानते थे। उनके संकेत ज्ञानबोधमे आनन्द आया।

मनमें आया, विस्तृत चबूतरेपर बैठ जायँ। सीढियाँ खड़ी नहीं थी। उनके दोनो ओर कर्ण उठाये नाग वेदीका कार्यकर रहे थे। सर्प अधिष्ठानसे कमसे कम १२ फुट ऊँचे बने थे। उनके उठे फणोको देखा। उनमें गरुड़ारूढ़ विष्णु थे। मै वहीं बैठ गया! सम्मुख चौड़ी सड़क थी। दोनों ओर हरित ऊँचे वृक्ष झूम रहे थे। उनपर बन्दरोकी टोली उल्लासमय इधर-उधर घूम रही थी। सड़कपर पड़ती पादपीय छाया सुन्दर लग रही थी। वेथोनके चारों ओर समानान्तर सड़क थी।

भारतका अतीतगौरव आँखोके सम्मुख चला आ रहा था। उसीकी स्मृतिमें अनिर्वचनीय आनन्दका अनुभव कर रहा था। सोचता था, सहस्रों-मील दूर भारतमे बैठा हूँ। हमारे जैसे भारतीय यहाँ आये। उन्होने

भारतका मस्तक ऊँचा किया। उनकी सन्तान होनेके कारण मुझे भी गौरवका अनुभव हो रहा था।

हमारे सामने कम्बुज बालक-बालिकाएँ चित्र लिये बेच रही थीं। उनके हाथ चित्र बेचना चाहती थीं, जिनके पूर्वपुरुषोंने इनकी रचना की थी। वे सरल मानव सन्तान भूल गये थे। वह भारतीय कलाकृति है। उनके पूर्वपुरुष शायद भारतीय रहे हों। शायद उनमें भारतीय रक्त अभी भी बह रहा हो। दुनिया बहुत कुछ भूलती है। वे भी शायद भूल गये थे। केवल हमारी पीठके पीछे महान् भग्नावशेष भारतीय गौरवकी कहानी कहनेके लिए खंडहरोंमें पड़ा हमें देख रहा था।

वेथोनका अधिष्ठान धरातलसे काफी ऊँचा है। मैं चढ़ा। मुख्य मन्दिर-का द्वार सम्मुख था। कलाकारोंकी कीर्ति मूक पाषाण शिलाओंसे जैसे बोलने लगी। कला कभी मरती नहीं। इस जंगलमें आकर स्पष्ट देखा।

वेथोन शिखराकार है। अधिष्ठानसे यह पर्वतकी तरह ऊपर उठता है। प्रवेशस्थानके दाहिने और बायें दोनों ओर १६० मीटर लम्बा है। उसकी चौड़ाई १४० मीटर होगी। वेथोनका अधिष्ठान आयताकार है। उसपर ढालुआँ द्रोणीतुल्य छत है। चौकोर स्तम्भोंपर खड़ा है। दीर्घाओंके बीच-बीचमें शिखर है। उनपर मुख बने हैं। प्रथम दीर्घामें १६ शिखर हैं। हम इसे प्रथम खण्ड कहेंगे। दीर्घाएं बाहरकी ओर खुली हैं। भीतरकी ओर पत्थरकी दीवार है। दीवारोंपर पौराणिक गाथाएँ उत्कीर्ण हैं। दूसरा खण्ड पहले खण्डसे ऊँचा है। वह भी आयताकार है। पहली दीर्घासे दूसरी दीर्घामें जानेके लिए १६ मार्ग थे। परन्तु कालान्तरमें वे शायद गिरा दिये गये। दूसरी दीर्घामें भी १६ शिखर हैं। उनमें बाहरकी ओर खुले स्तम्भों-पर छत टिकी है। पीछे दीवार है। इन दीवारों पर कम्बुजका दैनिक जीवन उत्कीर्ण है। राजा, सन्त, ब्राह्मण, राजकन्याएँ, राजकुमार, राज-भवन, सैनिक अभियान, हाथी, घोड़ा, रथ, नाविक सघर्ष, मछली मारना, बाजार, पादप-पुष्प, फल सभी कुछ उत्कीर्ण है। उन्हें देखकर तत्कालीन जनजीवनके रहन-सहन, पहनावा आदि सभी कुछका ज्ञान हो जाता है।

उन्हे विस्तारके साथ कलाकारने दिखाया है। मूर्तियोकी भगिमासे प्रकट होता है कि वाणीके अतिरक्त उनमे सब कुछ है।

अनेक मुद्राओमे खड़ी, बैठी, नाचती अप्सराओकी मूर्तियाँ उत्कीर्ण हैं। मद्रासके मीनाक्षी, रामेश्वर, खजुराहो आदिमे भी अप्सराओका अंकन किया गया है। उक्त स्थानोकी अप्सराएँ सुन्दर मानवीय मूर्ति हैं। उनमे आकर्षण तथा गतिमत्ता है। वेथोनकी अप्सराएँ वास्तवमे स्वर्गीय देवियाँ हैं। उनकी भगिमामे कही चचलता, चपलता और रूपविन्यास नही है। वे भगवान्‌के श्रीचरणोकी उन उपासिकाओके तुल्य है जिन्होने सर्वस्व उनके चरणोमे अर्पण कर दिया है। उनके पास अपना जैसे कुछ रह नहीं गया है। यदि कुछ है तो उनकी वासनाहीन, रागहीन शान्ति अनुहार मात्र है। अद्भुत विशेषता है। क्षणमात्रके लिए भी शान्ति और भक्ति-भावनाके अतिरिक्त और किसी प्रकारकी भावनाका उदय होना कठिन है।

द्वितीय खण्ड किवा दूसरी दीर्घाके बीच वृत्ताकार केन्द्रीय शिखर है। केन्द्रीय शिखर भी अन्य शिखरोसे घिरा है। शिखरोकी चारो दिशाओंमे चतुर्मुख बने है। वेथोनको कुछ लोग ब्रह्माका मन्दिर, चतुर्मुख शिखरके कारण, कहते हैं; परन्तु बात ऐसी नहीं है। इस मन्दिरमे शिवलिग स्थापित था।

गर्भगृह बहुत छोटे हैं। कठिनतासे एक व्यक्ति उनमे प्रवेश कर सकता है। शिखरोकी मूर्तियाँ अत्यन्त शान्त एवं आकर्षक है। उनकी भव्यता देखकर मानवीय भयकी भावना नही होती। उसके स्थानपर शान्तिमय कौतूहल उत्पन्न होता है। उनके अभिप्राय जाननेकी भावनाका उदय होता है।

मुखोके मस्तकपर मुकुट है। कमललोचन अर्धप्रस्फुटित है। अधरो-पर हलकी मुसकान है। वे मिले नहीं, किञ्चित् खुले है। जैसे पवित्र आशी-र्वाद उनके मुखसे उद्भुत हो रहा है। ग्रीवाके ऊपरका मुखभाग ही उत्कीर्ण है। शिखरमे पूरी मूर्ति उत्कीर्ण करना सम्भव नही था। मुखपर

माधुर्य एवं कान्तिका समन्वय है। चारोंके ऊपर शिखर ऊपर उठा है। उनपर कमलकी पंखुड़ियाँ बनी हैं। उनकी वृत्ताकार मेखलाएँ एकके ऊपर दूसरी शिखराकार होती ऊपर गयी हैं। एगकोर वाटके ऊपरी भागके शिखरसे मिलता है।

मालूम होता है मुखके अतिरिक्त एगकोर वाटमें इस शिखरके आधारपर ही शिखर की रचना की गयी है। भारतमें मुझे ऐसा शिखर कहीं दिखाई नहीं दिया कि उसकी उपमा दे सकूँ। शिखरशैली कम्बुजकी अपनी मौलिक शैली है। भारतीय आध्यात्मिक आत्माको जैसे शिखरमें भी उरेहनेका प्रयास किया गया है। यह शिखर पशुपतिके शिवलिंगकी शायद कल्पना तुल्य हो। पशुपतिके शिवलिंगमें चार मुख हैं। मस्तकके ऊपर पुनः शिवलिंगका कुछ भाग पड़ता है।

केन्द्रीय मन्दिरका शिखर बारहवीं शताब्दीके चीनी लेखक चाऊ-क्वांनतेके कथनानुसार सुवर्णमण्डित था। यह सुवर्णमण्डित मन्दिर अपनी गौरवगरिमामें विश्वके सब मन्दिरों और कलाओंमें श्रेष्ठ रहा होगा। इतना बड़ा सुवर्ण-शिखर भारत किंवा जगत्‌में कहीं भी नहीं बनाया जा सका था। कल्पनामात्रसे रोमाच हो उठता है।

वेयोन मुखाकृतियोंका ऊपर उठता सुमेरु है। कुल ५० शिखर हैं। केन्द्रीय शिखरमें शिवलिंग था। इस प्रकार ५१ शिखरोंका पर्वत था। सर्वोच्च शिखरपर भगवान् कैलासपति स्वयं निवास करते थे। हिमालयमें अनेक शिखर हैं। उन शिखरोंमें कैलास हैं। कैलासपर कैलासपति शिव विश्राम करते हैं। कितनी सुन्दर कल्पनाको यहाँ मूर्तरूप दिया गया है। वेयोनके चारों ओर प्राचीर नहीं है। यदि कोई प्राचीर है तो एगकोर थाम प्रथमका ही प्राचीर रहा होगा।

इन मुखोंके विषयमें विचित्र सिद्धान्त हैं। कुछ लोग उन्हें लोकेश्वरका मुख कहते हैं। कुछ बुद्धका मुख कहते हैं। बुद्धका मुख इसलिए नहीं है कि बुद्धकी जितनी मूर्तियाँ बनी हैं वे केवल चार ही मुद्राओंमें मिलती हैं। जातक कथाओंके आधारपर अन्य प्रकारकी भी कल्पना की गयी है।

किन्तु इन मुखोपर सुन्दर मुकुट है। बुद्धकी मूर्तिमे मुकुट उनके बुद्धत्व प्राप्तिके पूर्व शाक्यकुमारके रूपमे ही मिलता है। मेरा ख्याल है कि शिखर-पर भी लिंगकी कल्पना कर उसपर महादेवका रूप बनाया गया था। चार मुख और मुखके ऊपर लिंगका शिखर है। आठवी शताब्दीके दक्षिणमे कुणाके मन्दिरके चतुर्मुख लिंगकी ही कल्पनाका यह विकास है। इस प्रकारके मुखलिंग, नागपुर, ग्वालियर के संग्रहालयोमे रखे हैं। अतएव अन्दर शिव, बाहर शिव, चारो दिशाओमे शिव, सर्वत्र शिव, शिवमयः जगत्की कल्पना की गयी होगी।

यह शिवका मन्दिर था। यही देवराजकी स्थापना शिवसोमने की थी। चतुर्मुखके मस्तकपर तृतीय नेत्र है। प्राचीनकालमे वह सुवर्ण-मण्डित था। तृतीय नेत्रके कारण हमे यह मानना ही होगा कि मूर्तियाँ ब्रह्मा नही, शिवकी है। प्रस्तुत चारो मुखोके ऊपर पंचम मुख सुवर्ण किंवा माथे पर चढ़े सोनेके पानीकी बनी रही होगी। जिसका वर्णन सभी प्राचीन पर्यटक करते है। सम्भव है यह सुवर्णमण्डित मूर्ति नष्ट हो गयी हो और पत्थरकी मूर्ति शेष रह गई है।

कुछ काल पूर्व वह स्थान बिलकुल नष्टप्राय हो गया था। वहाँसे चाहे जो चीज उठाकर ले जायी जा सकती थी। उत्कीर्ण पत्थरोका मूल्य साधारण पत्थरोके अतिरिक्त और कुछ नही था। धनलोलुपोने अनेक स्थानपर उसे खोदा है। सुवर्णशिखरोका सोना लूट लिया। बहुतसे स्मारक नष्ट कर दिये थे और नष्ट होनेके लिए प्रकृतिकी दयापर छोड़ दिये गये। उनपर पादप, घासफूस जम गये है। पत्थरोंके जोड़ोमे भयंकर दरारें पड़ गयी है।

इन निर्माणोकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि पत्थरोंको जोड़नेके लिए किसी प्रकारके गारे अथवा चूनेका प्रयोग नही किया गया है। शिलाखण्ड एकके ऊपर दूसरा रखकर लोहेसे दोनों भागोंको बझा दिया जाता था। दोनो पत्थरोकी सतह इतनी साफ गढ़ी जाती थी कि वे एक-दूसरेपर सफाईसे लकड़ीके जोड़ोके समान बैठ जाते थे।

निर्माणपर एक प्रकारका पलस्तर लगा दिया जाता था। बाहरसे किसी प्रकारका जोड नहीं मालूम होता था। इस दिशामे ताजमहलकी स्थापत्यकलासे क्मेरकला बहुत आगे थी। पलस्तर उसी ढंगपर किया जाता था जैसा एलोराके पत्थरोंके भास्कार्य, स्थापत्य एवं वास्तुकलाओंपर होता था। पलस्तरके कुछ बिखरे अंश एलोरा तथा यहाँ भी मिलते हैं। उनसे प्रकट होता है कि पत्थरके स्थापत्य और भास्कर्य केवल नीचेके ढाँचेमात्र थे। वास्तवमें कला उन पत्थरोंमें थी जहाँ वास्तविक कल्पना विकसित होती थी। जब ढाँचा आज भी इतना सुन्दर है तो वास्तविक वस्तु कितनी हृदयग्राही रही होगी इसकी कल्पना पाठक स्वयं कर सकते हैं।

यदि गारे अथवा चूनेका प्रयोग जोड़ देनेके लिए करते तो मूर्तिका मुख पत्थरोंके जोड़ोंके कारण चारखानेकी तरह प्रतीत होता। जिस कला-का वर्णन किया गया था उससे समस्त ढाँचा जैसे एक पत्थरका मालूम पड़ता रहा होगा। बिना मरम्मतके उनके जोड़ खुल गये हैं। वे मिस्रके भास्कर्य और स्थापत्य स्मारकोंके समान इस समय जोड़मय मालूम होते हैं।

क्मेर साहित्यमें बेथोन मध्य स्थित स्तूप कहा गया है। शिव मन्दिरके रूपमें था। कालान्तरमें लोकेश्वर मन्दिर कहा गया। १९३४ में यहाँके अन्वेषणमें नीचेकी कोठरीमें अनेक बुद्ध और लोकेश्वरकी मूर्तियाँ मिली हैं। बुद्धप्रतिमाके ऊपर सप्त फणधारी सर्प छत्र लगाये हैं। हिन्दू धर्मके प्रभावके कारण सम्भव है कि मूर्तियाँ हटाकर उनके स्थानपर हिन्दू मूर्तियाँ रख दी गयी हो। कहा जाता है कि यह बौद्ध मन्दिर था। इसे हिन्दुओंने हिन्दू मन्दिर बनाया। यह बात ठीक नहीं जँचती। जो मूर्तियाँ नीचे कोठरीमें मिली हैं वे सम्भव है खण्डित होनेके कारण या जैसे चढ़ावापर मूर्तियाँ चढायी जाती हैं और उन्हें रख दिया जाता है, उसी प्रकार वहाँ रख दी गयी हो। एगकोर बाटमें तीन-चार स्थानोंपर बुद्धप्रतिमाएँ सामूहिकरूपसे एकत्र कर रख दी गयीं हैं। यह नहीं कहा जा सकता कि हिन्दुओंने एगकोरवाली बुद्धमूर्तियोंको हटाकर उनके स्थानपर कभी हिन्दू मूर्ति रख दी थी।

वेदोंमे उत्कीर्ण गाथाओमे प्रद्युम्न, कृष्ण, रुक्मणी, शम्बर, अमृतमथन, शिवका विषपान, नीलकण्ठ स्वरूप, कामसंहार, रावणका कैलास उठाना, भगवान्‌के सम्मुख दण्डवत् करते नर-नारी बहुत ही परिष्कृत और पूर्ण भंगिमाके साथ हैं। बोस्टम संग्रहालयमे कॉसेकी अप्सरा मूर्ति वेदोकी अप्सराका प्रतिरूप है।

आकाश विमान—यशोवर्माने इसके निर्माणमे हाथ लगवाया था। यह उनके उत्तराधिकारी राजा हर्षवर्माके कालमे समाप्त हुआ। चीनी लेखक चाउत क्लान इसके विषयमे लिखता है—

एगकोर थामके राजप्रासादमे एक स्वर्ण शिखर था। उच्चतम शिखरपर राजा शयन करता था। जनश्रुति है कि उस शिखरमे सप्तमुखी नागिनकी आत्मा निवास करती है। वही नागिन भूमि और राज्यकी स्वामिनी है। नागिन रात्रिमे नारी रूप धारण करती है। राजा उसके साथ विहार करता है। यदि किसी रात्रिको नागिन अनुपस्थित रहती है तो समझ लिया जाता है कि राजाका अन्त समय आ गया। यदि राजा किसी दिन उस शिखरपर नही जाता तो उस दिन कोई-न-कोई अपशकुन होता है।

नाग जातिकी उत्पत्ति

नागकी एक कथा और प्रचलित है—विश्वके आदिकालमे केवल केरा काग (शेषनाग) थे। एक पुरुष तथा एक स्त्री भी थी।

भारतीय गाथाके अनुसार अन्तमे केवल शेषनाग शेष रहते है। उनपर पुरुषरूप विष्णु तथा स्त्रीस्वरूप लक्ष्मी निवास करती है। वही रूप शेषशायी किवा अनन्तशायी विष्णुकी मूर्तियोमे दिखाया गया है।

वह मनुष्य अम्बरका व्यापार करनेके लिए यात्राशील हुआ। उसकी स्त्रीका नाम 'री' था। कन्याका नाम 'एत' था। एक दिन री जगलमें लकड़ी काटने गयी। उसकी कुल्हाड़ी नागपर पड़ी। नागने कुल्हाड़ी ले ली। रीने वापस करनेके लिए विनय किया, नागने शर्त रखी, कि वह प्रतिदिन उसकी झोपड़ीमे रात्रिको आया करेगा, उसके साथ विहार करेगा।

रीने स्वीकार किया। रीकी कन्या नागको प्रतिरात्रि मार्गदर्शन कराती झोपड़ीमें लाती थी।

पति यात्रासे लौटा। उसे काफी समय बाहर बीत चुका था। उसने देखा 'री' गर्भिणी थी। कन्यासे पूछा, कन्याने सब कहानी कह दी।

नागने रात्रिमे सर्वदाकी भाँति घरमे प्रवेश किया। पतिने उसका मस्तक छिन्न कर दिया। उसकी पूछ काटी कन्या 'एत'से उसे आहार तुल्य पकानेके लिए कहा। आदेश दिया कि अपनी माँ 'री'को वह भोजन परोसकर खिलाये।

एक कौवा सब वृत्तांत सुन रहा था। 'री'से उसने सब कथा कह दी। वह भयंकर भोजन न कर सकी।

प्रसवका काल समीप आया। पतिने प्रस्ताव रखा कि सरोवरमे स्नान करना अच्छा होगा।

दोनों सरोवरमे स्नान करने गये। पतिने पत्नीका मस्तक काट डाला। छिन्न शरीरके कण्ठसे अनेक नाग निकलने लगे। पतिने उसे पकड़नेकी चेष्टा की, वह सफल न हो सका। नाग निकलकर भूमिकी दरारों, बिल और जंगलोमे फैल गये। वे ही भूमिके सब सर्पोंके आदिजनक हुए।

नाग-गीत—आज भी कम्बुजमे विवाहकालपर राजा एवं नागिनका अभिनय करना पड़ता है। उसके चारो ओर बन्धु बान्धव बैठते हैं। एक तस्तरीमें जलती मोमबत्ती आती है। बैठे लोग एकसे लेकर दूसरेको देते है। देवी नागिनका गीत गाया जाता है। और नाग-नागिनके अनेक कथानक किसी-न-किसी रूपमे कम्बुजमे प्रचलित हैं।

नागकथासे सम्बन्धित आकाश-विमान दर्शनीय है। यहाँके शिला-लेखसे ही स्पष्ट होता है कि यह वास्तवमे विष्णु मन्दिर था। किन्तु गाथा कुछ विचित्र है। मैने इसे ध्यानपूर्वक देखा। वास्तवमे यह आकाश-विमान तुल्य ही है। एक सरोवर है। चारो ओरसे सीढ़ियाँ सरोवरके तलमें गयी हैं। वह चौकोर है। उसके केन्द्रमे आकाश-विमानकी रचना की गयी है। धरातलसे साठ फुट ऊँचा है। पूर्णतया ठोस है। कल्पना

कीजिये कि धरातलसे ६० फुट ऊँचा चौकोर चबूतरा बना है। वह वर्गाकार अथवा आयाताकार है, इसकी पैमाइशका मुझे ध्यान न रहा। कुर्सी अर्थात् अधिष्ठान तिनमंजिला है। पहली मंजिलके ऊपर दूसरी मंजिल छोटी होती गयी हैं। चारों ओर चबूतरे किंवा अधिष्ठानसे सीढ़ियाँ उठती ऊपरतक गयी है। सीढ़ियोंपर चढ़ते ही दोनों ओर दो शेर सिंहासन-मुद्रामे बैठे हैं। सीढियोंके दोनों ओर वेदी है। प्रत्येक मंजिलके ऊपर वेदीपर चबूतरा बना है। उन चबूतरोपर भी सिंह रहे होंगे। चौथी और पाँचवी मंजिलमे भवन बना है। प्रत्येक सीढ़ीके शिरोभागपर भवनमे प्रवेश निमित्त सुन्दर द्वार बने हैं। मुख्यद्वारके ऊपर कभी शिखर या गोपुर बना था, जो भग्नावशेष रह गये है उन्हींके आधारपर कल्पना कर सकता हूँ। द्वारके दोनो ओर दो बन्द पत्थरके दरवाजे हैं। उनके दोनो ओर चार-चार खुले द्वार हैं। खम्भोपर पाँच मंजिलका भवन बना है। इस पाँचवीं मंजिलके ऊपर छठी मंजिल है। पाँचवी मंजिलके द्वारके ऊपरकी परिधिमे पीछे हटकर छठी मंजिलका द्वार है। यह भी चौकोर था। अधिष्ठानसे ऊपरतक सब कुछ चौकोर है। छठी मंजिलमे कमरा है। इसीमे राजा नागिनके साथ गाथाके अनुसार विहार करता था। इस छठी मंजिलके विहार-भवनके ऊपर जो शिखर था उसीको चीनी लेखकने सुवर्ण-मण्डित लिखा है। इतने ऊपरसे चारो ओरका दृश्य बड़ा सुन्दर मालूम होता है। राजाके विहार किंवा शयनकक्ष निमित्त वास्तवमे यह आदर्श स्थान था। माण्डूमे मुसलमानोने जहाज-महल बनवाया, परन्तु उसमे विलासिताकी झलक है। एगकोर थाम एवं बादकी जितनी रचनाएँ हैं, सभी चौकोर यज्ञवेदी तुल्य है। आकाश-विमान यज्ञवेदी तुल्य ही अधिष्ठानमे चौथी मंजिलतक बना है अर्थात् भवन-रचनामे भी पवित्रता एवं आध्यात्मिकताकी पीठिका थी।

इसकी दीवारोपर अनेक गाथाएँ उत्कीर्ण हैं। भवनके पत्थरोंपर नक्काशीके बहुत ही सुन्दर कार्य है। स्थापत्य मौलिक एवं दर्शनीय है। गरुड़, सिंह, अश्व, अश्वारोही, पदादिक सैनिक, शिकारका दृश्य, खेल,

मल्लयुद्धके दृश्य हैं। इसके अलिन्दमें राजा, रानी, अप्सराके अनेक दृश्य उत्कीर्ण मिलेंगे। उनके देखनेसे साधारणतया मनमें भावना उठती है कि राजाका शयनकक्ष अवश्य रहा होगा। परन्तु मेरा विचार है कि शिला-लेखके अनुसार यह विष्णुमन्दिर ही था। कालान्तरमें इसके साथ अनेक गाथाएँ सम्बन्धित हो गयीं।

काल—वेथोनके उत्तरवाली दीवारमें कुष्ठीय राजा अथवा कालकी गाथा दीवारके पत्थरोंपर उत्कीर्ण कही जाती है।

एक गम्भीर मानव प्रतिमा है। उसका अधिष्ठान स्वर्गीय अप्सराओं-के मस्तकपर आधृत है। उस अधिष्ठान चबूतरेपर एक मूर्ति बैठी है। कम्बुज लोग उसे कुष्ठीय राजा कहते हैं। मूर्ति भव्य है। यशोवर्मा काल-की कही जाती है। कितने ही विद्वान् उसे यशोवर्माकी मूर्ति कहते हैं। गाथा कहते हैं कि एक ऋषिके शापके कारण यशोवर्माको कुष्ठ हो गया था। आकाश-विमानका लेख ९१० सन्‌का है। उसमें उसके समीप ही मरनेका संकेत है। प्राचीनकालमें प्रथा थी कि कुष्ठ होनेपर बीमार नगर अथवा जनपदके बाहर रहने लगता था। बर्माके एक बौद्धीय गाथासे प्रकट होता है कि बनारसके एक राजाको कुष्ठ हुआ था। वह नगर ही उत्तर जाकर रहने लगा था। यशोवर्माके पश्चात् किसी राजाने अपना नाम यशोवर्मा नहीं रखा। कारण यही मालूम होता है कि कुष्ठीय राजाका नाम रखना अच्छा न समझा गया। मूर्तिके सिरपर उर्म अर्थात् भगवान् बुद्धके बालो जैसे बाल है। अनेक राजा मूर्तियाँ कम्बुजमें मिली हैं। किसीके सिरपर इस प्रकारके बाल नहीं हैं। उनपर मुकुट तथा वेशभूषा राजकीय है। मेरा मत है कि यह यशोवर्माकी मूर्ति नहीं है।

मूर्ति अत्यन्त भव्य है, किन्तु मुझे मुद्रा दुःखान्त किंवा उदासीन-सी लगी। ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे इस नश्वर जगतमें अनश्वर तुल्य मूर्ति चुपचाप जगलमें बैठी है। विश्वका खेल देख रही है। पक्षियोंका कलरव सुन रही है। हवाका झोंका सह रही है। मेघका गर्जना और बरसना दोनों सुन और सह रही है। घाममें शरीरको झुलसा रही है। और अपने

मस्तक एवं शरीरपर शताब्दियोसे सूखी पत्तियोका गिरना और गिरकर फिर उड़ना देख रही है।

मूर्तिके सरपर भगवान् बुद्धके समान घुँघराले बाल अर्थात् उर्म हैं। कान-स्कन्ध प्रदेशसे मिला है। नत नेत्र अर्ध उन्मीलित हैं। मुखाकृति अत्यन्त गम्भीर और आर्य है। गम्भीरतामे जैसे कठोरता है। अधर मिले और पीछे खिचे है। जैसे कोई बात निश्चय करनेपर लोगोकी विनय, लोगोकी प्रार्थना, लोगोकी करुणा, लोगोका दुःख, लोगोका आर्तनाद सब सुनते हुए कठोरताके साथ अधरपर अधर मिलाकर कह रहे हैं कि हमपर इसका कुछ असर नही पड़ेगा।

वक्षस्थलपर पत्थरोका जोड़ खुल गया है। मालूम होता है कि बार्यी ओरका गलाबन्द कुरता फट गया है। यह पत्थर वाम स्कन्ध-देशके कानके समीपसे फटकर सीधा नीचे आकर समकोण बनाता हृदय-केन्द्रकी ओर सीधी लकीर बनकर चला गया है। यकृत स्थानके समीप जाकर गड्ढा हो गया है। दाहिना हाथ खाली है। सम्भव है कि उसमे त्रिखोपड़ी-मय दण्ड रहा हो। मूर्तिकी ओर देखनेसे मन सहम जाता है। कुछ लोगोंका मत है वह पत्थरकी मूर्ति है। मुख्य कारण यह दिया जाता है कि वह श्यामकी राजधानी बकाक तथा कम्बुजकी राजधानी फोमपेन्हमें श्मशान नगरके उत्तर ओर है। वह स्थान भी एगकोर थामके उत्तर है। अतएव यह प्राचीन राज श्मशान है। भारतमे भी श्मशानोपर यम किंवा कालका लिग मिलता है। उसे श्मशानेश्वर अथवा काल किंवा महाकाल कहते हैं।

मेरा निजी मत है कि वह बुद्धमूर्ति नहीं है। उसमे करुणा, भंगिमा एव आसन प्रचलित एवं अप्रचलित दोनो प्रकारकी बुद्धमूर्तियोमेसे एकका भी नही है। बुद्धकी मूर्तियॉ ५ मुद्राओ—दया, भूमिस्पर्श, ध्यान, धर्म-चक्र प्रवर्तन, अभय एव निर्वाणमे ही मिलती है। इन मुद्राओमे वह एक भी नही है। राजाकी मूर्ति नही है, यह तर्क मैंने पहले ही उपस्थित कर दिया है।

मूर्ति यमकी ही है। इतने बड़े नगरमें श्मशान होना आवश्यक था। लोग हिन्दू थे। श्मशानमें श्मशानेश्वर अथवा महाकाल अथवा कालकी मूर्तिका होना अनिवार्य था। कम्बुजमें हिन्दू देवताओंकी मूर्तियाँ किसी न किसी रूपमें मिलती है। कालकी पूजा करना कोई पसन्द नहीं करता। उसका नाम लेनेसे भी लोग घबड़ाते हैं। उसका स्थान श्मशान ही है। राजाका दग्ध स्थान कहीं न कहीं होना चाहिये। सम्भव है यही स्थान हो। यदि यही स्थान है तो वह मूर्ति भी कालकी होगी।

इस महान् राजाकी मृत्यु सन् ७०८ ईसवीमें हुई। उसके दो पुत्र हर्षवर्मा प्रथम तथा ईशानवर्मा द्वितीय थे। दोनों एक दूसरेके पश्चात् राजा हुए।

आदर्श समाज

सन् ९१८ में अबूजैद हुसेन कम्बुज आया था। उसने देशकी तत्कालीन स्थितिका बड़ा सुन्दर वर्णन किया है। वह लिखता है कि देशमें एक भी व्यभिचारी व्यक्ति नहीं मिलेगा। जनता शराब अथवा मदिराका सेवन नहीं करती। लोग पैदल चलते हैं। विश्वमें कम्बुजसे अधिक जनाकीर्ण शायद ही कोई राज्य हो।

राजाके निजी कोषाध्यक्षको विष्णुबल कहते हैं। सेनापतिकी पदवी श्री नृपेन्द्रविजय थी। प्रणव शर्व यज्ञीय पाक बनानेवालेकी उपाधि थी। राज्य शयनागारके संरक्षककी पदवी शिवात्मा।

जयवर्मा चतुर्थ यशोवर्माका बहनोई था। ईशानवर्माके विरुद्ध विद्रोह किया। अलग राज्यस्थापन किया। सन् ९२८ मे ईशानवर्माकी मृत्यु हो गयी। जयवर्मा चतुर्थ कम्बुजका राजा बन बैठा। उसने अपनी राजधानी एंगकोरसे ५० मील उत्तरपूर्वको हटकर लिंगपर्वतपर बनायी। उसने अनेक झीलों तथा मन्दिरोंका निर्माण कराया।

सन् ९४८ में प्राप्त शिलालेखसे मन्दिर-निर्माणका पता चलता है। स्थान घने जंगलमें है। मन्दिरके चारो तरफ खाई है। सेतुपर नाग फण

उठाये वेदीका कार्य करते है। यहा १२ देवालय है। कल्प मन्दिरके दीर्घ पर भगवान् नरसिहकी मूर्ति बनी है। वह हिरण्यकश्यपको मार रहे है। एक दूसरे उद्यानमे प्राण शैलीका शिखराकार मन्दिर है। सन् ९४१ मे इसकी मृत्यु हो गयी।

हर्षवर्मा द्वितीय—हर्षवर्मा द्वितीयके नामसे उसका पुत्र राजा हुआ। उसके बनाये हुए स्मारकोंमे श्रीरूप तथा बकेसी प्रसिद्ध है।

श्रीरूप—उसने एगकोर थामनगरको बहुत सुन्दर बनाया। वह स्वयं शैव था, परन्तु उसके कालमे अनेक बौद्ध धर्मके स्मारक निर्माण किये गये थे। उनके मुख्य स्मारक श्रीरूप तथा मेबन है। मेबनमे पॉच मन्दिर, ब्रह्मा, शिव, पार्वती, विष्णु तथा महादेव लिगके निमित्त बनाये गये थे। उनमे उनकीमुर्तियॉ तथा लिंग थे। मन्दिर ईंटोका बना है।

बकेसी—हर्षवर्मा द्वितीयका अत्यन्त सुन्दर एव भव्य मन्दिर फ्नोम बखेगके समीप बक्सी है। रोलसका शिखर जैसे कोई उठाकर चतुर्कोणीय स्तूपाकार पर्वतपर यहॉ रख दिया हो। यह धरातलसे काफी ऊँचा है। यह हम लोगोंके यहॉ बने चौराके प्रतिरूप है। इसके चार खण्ड हैं। पहले खण्डके चौतरेपर दूसरा खण्ड उसपर छोटा, पुनः दूसरेपर तीसरा खण्ड उससे छोटा और चौथे खण्डपर मन्दिरका अधिष्ठान उससे छोटा है। यह चौकोर है। धरातलसे उठता ऊपर पतला होता गया है। सबके ऊपर मन्दिर है। मन्दिरमे मण्डप नही है। केवल गर्भगृह है। धरातलसे चबूतरे किंवा अधिष्ठानके मध्यसे शिखर अथवा गर्भगृहके द्वारपर सीढ़ी गयी है। यह देखनेमें पर्वताकार है। धरातलसे मन्दिरका अधिष्ठान लगभग ३६ फुट ऊँचा होगा। मन्दिर उत्तरी भारतके शिवालय जैसा बना है। इसपर बहुत घास तथा पादप जम गये है। गर्भगृहमे कोई हिन्दू मूर्ति नहीं है।

राजेन्द्रवर्मा—सन् ९४४ मे हर्षवर्मा द्वितीयकी मृत्यु हो गयी। यशोवर्माकी कनिष्ट भगिनीका पुत्र राजेन्द्रवर्मा राजा हुआ। राजेन्द्रवर्माने राजधानी पुनः यशोधरपुरमे स्थापित की। उसने चम्पापर आक्रमण किया। राज्यकी सीमा बढ़ायी। उसके समयके बहुतसे शिलालेख मिले

है। एक शिलालेख २१८ तथा दूसरा २९८ श्लोकोंका है। उनकी भाषा शुद्ध आलकारिक संस्कृत है।

बुद्धधर्मकाप्रदेश—राजेन्द्रवर्माकी मृत्यु सन् ९६९ मे हुई। उसका पुत्र जयवर्मा पंचमके नामसे राजा हुआ। इस समय तक कम्बुज का राजधर्म शैव था। जयवर्मा पंचमने सर्वप्रथम बौद्धधर्मका प्रचार करनेके निमित्त आदेश जारी किया। उसने हेम शृंगगिरीका महान स्मारक बनवाया। यह स्मारक इस समय किस स्थानपर है, पता नही चला है। गाथा है कि जयवर्मा पंचमकी बहन राजलक्ष्मीका विवाह दिवाकर भट्टसे हुआ था। वे ब्राह्मण थे। वह कालिन्दी अर्थात् यमुनातटसे कम्बुज गये थे। इस राजाने हिन्दू धर्मके स्थानपर बौद्ध धर्मका प्रचार क्यो किया यह गवेषणाका विषय है। उसकी मृत्यु सन् १००१ मे हुई।

राज्य स्थिति—कम्बुज साम्राज्य अत्यन्त समृद्धिशाली हो गया था। चीनके लेखोसे पता चलता है कि कम्बुज साम्राज्यके उत्तर सम्पूर्ण लाओस देश, चीनका नानकिंग प्रदेश, पश्चिम श्याम, लोपपुरी दक्षिण श्यामकी खाड़ीसे उत्तरमे कम्पेग (द्वारावती समीपवर्ती प्रदेश) थे। क्ष्मेर राष्ट्रकी परिभाषा के अन्तर्गत मेनान घाटीतकका प्रदेश आ जाता है। उत्तरी मलायाके 'क्रा' की सयोगभूमितक कम्बुजकी सीमा पहुँच गयी है।

सूर्यवर्मा—जयवर्माकी मृत्युके पश्चात् उदयादित्य, सूर्य एवं जयवर्मा राज्य निमित्त सघर्षशील प्रतीत होते हैं। सन् १०१० मे सूर्यवर्मा राजा हुए। गाथा है कि वह इन्द्रवर्माका वंशज था। उसकी रानी वीरालक्ष्मी यशोवर्माके राजवंशकी थी।

यशोवर्मा (शायद द्वितीय) ने एगकोर थामका पूर्वी गोपुर निर्माण कराया था। आठ सौ राजाओने सूर्यवर्माके प्रति निष्ठाकी शपथ ली थी। वह अलोपित है। कम्बुजके राजाके प्रति आज भी जो निष्ठा-शपथ खायी जाती है वह अपने मूलरूपमे यही है। सूर्यवर्मा बौद्ध था। मृत्योपरान्त उसका नाम निर्वाणपद स्पष्ट चकित करता है वह बौद्ध था।

श्यामकी गाथाके अनुसार सूर्यवर्मा मलयाके उत्तरी भागका सरदार

था। उसने मिनान घाटी जीतकर लवपुरी जीता था। तत्पश्चात् कम्बुजपर आक्रमण कर उसे जीत लिया था। उसने उत्तरी श्यामका एक भाग जीतकर अपना राज्यपाल नियुक्त किया था। जनश्रुति है कि उसने पूरे श्यामपर विजय प्राप्त कर ली थी। कहा जाता है कि दक्षिण वर्मा तक विजययात्रा की थी।

सूर्यवर्माके कालमें क्ष्मेर संस्कृति एवं सभ्यता मेनन घाटी तथा उत्तरमे सुखयाई और स्वर्णका लोकतक फैल गयी थी। वह काव्य, भाष्य एवं षट दर्शनों का ज्ञाता था। बौद्ध धर्मावलम्बी था। उसने राजधर्म शैव एवं वैष्णव मतको तिलाजलि नही दी थी। उसने शिव तथा विष्णूका मन्दिर निर्माण करवाया था। उसकी सन् १०४९ मे मृत्यु हो गयी।

शिव कपिलेश्वर—सूर्यवर्मा प्रथमके कालका दूसरा विशाल मन्दिर शिव कपिलेश्वरका था। इसे स्थानीय भाषामे तकियो कहते है। एगकोरके पूर्व तथा पिता ब्रह्मके उत्तरमे स्थित है। वह शिखराकार है। शिखर पत्थरके बने है। राजाके गुरु पण्डित योगेश्वरने शिव कपिलेश्वरको अर्पित किया था। इसमे शिव एवं दुर्गामूर्ति पूर्वकालमे थी।

प्रः खां—एगकोरसे ३० लोग पूर्व प्रः खा है। सूर्यवर्माने यहाँ मन्दिर बनवाया था। राजप्रासाद भी निर्माण कराया। मन्दिरके चारो ओर खाई, प्राकार, ठोस सेतु, दीर्घा आदि है। वह देवस्थान प्राप्त शिलालेखोसे मालूम होता है कि बुद्ध एवं शिव दोनोको अर्पित किया गया है। प्रतीत होता है कि सूर्यवर्मा बुद्ध एवं शिव दोनोका उपासक था। काठमाण्डूके पशुपतिके शिवलिगमे बुद्धका मुख बना है। बुद्धकी चारो मुद्राओके चार मुख चारो ओर लिगमे उभड़ा बनाया गया है। एलिफेण्टा गुफाके महायोगी शिव एवं बुद्धके आकारमे नाममात्रका ही अन्तर होगा। आजकल हिन्दू बुद्ध, शिव, विष्णु, हनुमान सभीकी पूजा करते है। सिखोके गुरुद्वारोमे भी जाते है। इसी प्रकारकी परम्परा उस समय भी रही होगी।

प्रः विहार—डेगरिक पर्वतपर विहार बना है। यह मन्दिर है। शिव शिखरेश्वरको चढ़ाया गया है।

एगकोर वरेके समीप इसी कालका वना एक मन्दिर है। उसे फ्रांम च्शिोर अर्थात पूर्वज सूर्य कहते हैं। मन्दिर राजदरवारी ब्राह्मण शिवाचार्य-ने वनवाया था। उसमें सम्भवतः सूर्यवर्माकी स्वयं वैठी मूर्ति स्थापित की गयी थी।

उदयादित्य द्वितीय—सूर्यवर्माकी मृत्युके पश्चात् उदयादित्य-वर्मा द्वितीयको मन्त्रिमण्डलने राजा निर्वाचित किया। राजा मेधावी और विद्वान था। वह धर्म एवं शास्त्रोका ज्ञाता था। राजपुरोहित जयेन्द्र पण्डितसे उसने होरा शास्त्र, गणित एवं व्याकरण पढा था। उसने सुवर्ण-पर्वत अर्थात् जम्वूद्वीपातर्गत सुमेरु पर्वत तुल्य देवस्थान राजधानीके मध्य मे वनवाया था। शिखरपर सुवर्ण मन्दिर वना था। मन्दिरमें शिवलिंग स्थापित था। इसी कालका वत्तवंग शहरके प्रासाद प्रः क्षेत्रमें उसने ब्रह्मा, विष्णु, एवं महेशका मन्दिर वनवाय था। शिवकैवल्यके वंशज वहाॅ रहते थे। दो सौ पचास वर्पतक वे राज्यपुरोहितके रूपमे अत्यन्त शक्तिशाली थे। फ्नोमपेन्ह-शिशोफेन लाइन लगभग ७ घण्टोमें फ्नोमपेन्हसे इस स्थान तक पहुँचाती है। दोनोंके वीच रास्ता केवल १३० मील है। यह गति एक्सप्रेस की है।

उसके राजत्वकालमें चम महासेनापतिने कम्बुजपर आक्रमण किया। कम्बुजकी सेना परास्त हो गयी। शम्भुपुर नगरपर अधिकार कर लिया गया। अनेक स्थान नष्ट किये गये। राजाकी सन् १०६६ में मृत्यु हो गयी।

हर्षवर्मा द्वितीय—मन्त्रिमण्डल तथा शकर पण्डितने उसके कनिष्ठ भ्राता हर्षवर्मा द्वितीयको राजा वनाया। सोमेश्वरके समीप चम्पा तथा कम्बुज सेनाओंमे युद्ध हुआ। कम्बुज सेनापति श्रीनन्दनवर्मादेव पकड़ लिया गया। कम्बुज सेना पराजित हुई।

पराजयके वाद गृहयुद्ध आरम्भ हो गया। जयवर्मा छठेने उत्तर तथा उत्तर-पूर्व भागमें सन् १०८२ मे स्वतन्त्र सत्ता स्थापित कर ली। जयवर्मा षष्ठ कालान्तरमें कम्बुजका राजा बना।

जयवर्मा षष्ठका निर्माण-कार्य मिलता है। व्यानके उत्तर पश्चिम तथा एगकोर थामके राज्यप्रासादके पश्चिम एक मन्दिर है। शिखराकार देवालय है। सुवर्ण पर्वत अथवा सुमेरु था।

दो दीर्घाओमे भगवान् विष्णु सम्बन्धी अनेक गाथाऍ उत्कीर्ण हैं। सम्भवतः इसी मन्दिरके विषयमे चीनी लेखक श्री चाउ ता फौनने कहा है कि (वयोन) सुवर्ण मण्डित मन्दिरसे एक मील दूर ताम्रपत्र मण्डित मन्दिर है। मन्दिरकी कल्पना मेरुके आधारपरकी गयी थी। देवालयको सुवर्ण शृंग कहते हैं। भित्ति पत्थरो पर खुदी गाथाऍ स्पष्ट हैं। कही इन्द्र ऐरावतपर चढ़े चले जा रहे है। उन पर छत्र लगा है। पारपद आगे-पीछे चल रहे हैं। किसी तपोवनमे कही ऋपि लोग वृक्षोके नीचे बैठे तपस्या कर रहे है, कहीं ब्रह्मा, विष्णु, महेश तीनों बैठे है। उपासिकाऍ उन्हें प्रणाम कर रही है। कही भगवान् सिहासनपर अर्द्धवज्रासनमे बैठे हैं। उनके सम्मुख तथा पीछे विनयशील नागरिक जैसे कुछ निवेदन कर रहे हैं। आकृतियॉ, स्पष्ट एवं सुन्दर है। मन्दिर नितान्त भग्नावस्थामे है। यह मन्दिर कभी व्याज शिखरसे भी ऊँचा था।

धरणीन्द्रवर्मा प्रथम—जयवर्मा षष्ठकी मृत्युके पश्चात् उसका जेष्ठ भ्राता धरणीन्द्रवर्मा प्रथम राजा हुआ। धरणीन्द्रवर्मा अपने भानजे सूर्यवर्मा द्वितीय द्वारा पराजित हुआ। सन् १११३ मे सूर्यवर्मा सिंहासन पर बैठा।

महान सूर्यवर्मा द्वितीय—सूर्यवर्मा कम्बुजका महान प्रतिभाशाली राजा था। यथानाम वह क्ष्मेर वंशका सूर्य था। उसने विखरे राज्यका एकीकरण किया। शान्ति स्थापित की। कम्बुज साम्राज्य दक्षिण वर्मा एवं उत्तर मलायातक पुनः स्थापित हो गया। उसने आठवी शताब्दिके पश्चात् पुनः कम्बुजको ऊपर उठाया और सन् १११७ तथा ११२१ मे चीन सम्राट्के दरवार मे राजदूत भेजा। चीन सम्राट्ने उसे उच्च पदवियोंसे सुशोभित किया। चीनके लेखक लिखते है कि उसकी सेनामे २,००,००० युद्धविद्या पारंगत हाथी थे।

होम—गुरु दिवाकर पण्डितके तत्वावधानमें उसने शास्त्रानुसार कोटि होम, लक्ष होम तथा महा होम किया। वह विष्णुका उपासक था। उसने विश्वकी सबसे आश्चर्यजनक चीज एगकोर वाटका निर्माण कराया।

सप्त आश्चर्य

विश्वके सात आश्चर्य माने गये हैं। यूनानके मोसोलिसकी समाधि, वृहस्पतिकी मूर्ति, मिस्रका पिरामिड, बाबुलका बाग (ईरान), डायनाका मन्दिर (तुर्की), सिकन्दरियाका चार सौ फुट ऊँचा दीपस्तम्भ (मिस्र), तथा रहोडसकी देवमूर्ति। उक्त सातो आश्चर्योंमेंसे केवल मिस्रका पिरामिड बच गया है। शेष किताबोंकी बातें मात्र रह गये है। विश्वके इन सातों आश्चर्योंकी बातें दो हाजार वर्ष पूर्व की हैं।

यदि सप्त आश्चर्योंका वर्गीकरण करनेवाला आज जीवित होता तो वह आश्चर्योंमें एगकोर वाटका पहला स्थान रखता। आज टेम्सकी नहर, ताजमहल, मिस्रके पिरामिड आश्चर्यकी बातोमें गिने जाते हैं। एगकोर वाट-को लोगोने बहुत कम देखा है। यदि देखा भी है तो उनके लिए विशाल पाषण शिलामय स्थापत्यके अतिरिक्त शायद और कुछ नहीं प्रतीत हुआ।

एगकोर वाट

एगकोर किंवा एंकोर आधुनिक नाम है। उसका शाब्दिक अर्थ नगर होता है। प्राचीन नाम एंकोर थामका यशोधरपुर था। विद्वानोका मत है कि नगर अथवा यशोधरका अपभ्रंश एगकोर शब्द है। थामका मूल शब्द संस्कृत धाम है। काशीधाम, द्वारकाधामका प्रयोग भारतवर्षमें होता है। अतएव एगकोर थामका मूलरूप नगर धाम किंवा यशोधर धाम रहा होगा। लेखसे इसका नाम परम विष्णुलोक प्रतीत होता है। इसे नोकोर वाट भी कहते है। इसका मुख पश्चिम है।

इन्द्र रचना गाथा—गाथा है कि एगकोर वाट इन्द्रकी रचना है। प्रथम उसने उसे कच्ची मिट्टीका बनाया। उसपर हिमपात, तुषार, रुई

सदृश कोई वस्तु डाल दी गयी। वह ठोस पत्थरका हो गया। वाटमे यत्र-तत्र गोल छिद्रोके विषयमे कहा जाता है कि वे इन्द्रकी अंगुलियोके निशान हैं।

कोतुमाल सूत्र गाथा—उन दिनों एक सद्गुणी राजा राज्य करता था। उसने अनेक प्रकारसे लोकरंजन किया। उसकी रानीका नाम तेवोदि था। अगणित चपल युवतियाँ उसकी सेवामे उपस्थित रहती थीं। प्रभुसत्ताहीन १०१ राजा उसे भेट दिया करते थे। राज्य कोषरत्न, स्वर्ण, रजतादिसे पूर्ण रहता था। आयुधधारी सैनिक तथा प्रत्येक प्रकारकी सेना उसके पास थी।

राजा-रानी सन्तानहीन थे। रानीको राजप्रासाद नहीं था। देवराज इन्द्र एक दिन इन्द्रलोकसे नील मरुत तुल्य उतरे। इन्द्रके कारण रानीको पुत्र-रत्न उत्पन्न हुआ। उसका नाम केतुमाल रखा गया।

अलकापुरीकी एक देवयानी एक चीनीके घरसे ६ फूल चुरा लायी। चीनी दरिद्र था। इन्द्रने देवयानीको अपराधके दण्डस्वरूप ६ वर्ष मृत्यु-लोकमे रहनेके लिए आदेश दिया।

देवयानीको एक पुत्र मृत्युलोकमे हुआ। उसका नाम पुण्णोकर रखा गया। शैशवावस्थासे बालकको पत्थरपर उपक्रमा (डिजाइन) बनानेका शौक था। ६ वर्ष पश्चात् देवयानी अलकापुरी लौट गयी। अपने तकियेपर चिह्न स्वरूप ६ पुष्प छोड़ती गयी।

पुण्णोकरकी अवस्था १० वर्षकी हुई। वह अपनी माताको खोजने लगा। अनेक कठिनाइयाँ झेलते हुए अलकापुरीमे माताके पास पहुँचा। पुत्रको लेकर माता इन्द्रके पास गयी। बालककी रुचि देखकर इन्द्रने स्थापत्य एव मूर्तिकला प्रवीण देवताओं के पास शिक्षाके लिए उसे भेज दिया।

इन्द्र केतुमालको भी इन्द्रलोकमे लाया। पुत्रकी दीर्घ आयु निमित्त औषधिमय जलमे सात बार सात दिनतक स्नान कराया।

समय आनेपर केतुमाल एवं पुण्णोकरको मृत्युलोक वापस भेजा। चलते समय पुण्णोकरको आदेश दिया कि देवलोकके अनुरूप जो भवन

केतुमाल कहे उसका निर्माण मृत्युलोकमे कर दे। किन्तु किसी भी अवस्थामे भवन इन्द्रलोकसे उत्तम न होना चाहिये।

पुण्णोकरने इन्द्रलोकीय भवनके आधारपर एगकोर वाटका मृत्यु लोकमे रूपांकण किया। केतुमाल इन्द्रके आशीर्वादसे राजा बना। सिहासनारोहणके समय स्वर्गीय कृपाण प्रा० खन केतुमालको दिया।

यह तलवार आज भी राज्यप्रासादमें ब्राह्मणो द्वारा सुरक्षित है। कम्बुज राजा राज्याभिषेकके समय उसे धारण करते है।

वाट निर्माण—एगकोर वाटको सूर्यवर्मा द्वितीय (१११३-११५५) ने बनवाया है। देवराज मतका सस्मारक है। यह उसी कालमे बना था जब इगलैण्डमे मैटाजेण्ट्स और फ्रासमे रोमानेसके भवन निर्माण हुए थे। भारतमे कन्नौजके प्रसिद्ध गहड़वाल नरेश गोविन्दचन्द्र तथा सोलकी नरेश कुमारपाल थे। महमूद गजनीका आक्रमण भारतपर हो चुका था। सोमनाथका प्रसिद्ध मन्दिर टूट चुका था। भारतवर्षकी स्वाधीनता अधरमें झूल रही थी। मन्दिरकी तोड़-फोड़ मन्दिर-निर्माताओके घर भारतमे होने लगी थी। इसी कालमे एक ओर भारत पतनोन्मुख हो रहा था तो दूसरी ओर भारतीय देवताओंको जैसे स्थान देनेके निमित्त सूर्यवर्माने एगकोर वाटमे हाथ लगाया। भारतीय गौरवका सूर्य पश्चिममे डूब रहा था। पूर्वसे वह सूर्यवर्माके साथ गर्वपूर्वक गगनमे उठता दिखाई देता है।

इसे परम विष्णुका मन्दिर भी कहते हैं। इसकी योजना अत्यन्त भव्य एवं विशाल है। शिल्पी जैसे छोटे पैमाने पर कल्पना करना ही भूल गया था। निर्माण स्थापत्य एवं वास्तु-कलाका आदर्श उदाहरण है। वह ज्यामितिके नापसे नपा-तुला एवं एक-एक इञ्च ठीक है।

एगकोर वाटके लिए मार्ग सीपरीपसे जाता है। सड़कके दोनों ओर वन देखने योग्य है। बन्दर ऊँचे वनोकी डालियोंपर स्वच्छन्दतापूर्वक विहार करते है। सडक सुन्दर पक्की अलकतरेकी बनी है। सड़क सीधे एगकोर वाटकी दक्षिणी खाईके मध्यमे पहुँचती है। वहाँसे खाईके तटपर होते पश्चिम कोणपर पहुँचती है। वहाँसे पुनः उत्तर खाईके समानान्तर

चलती है। वाटके मध्यमे पश्चिम ओर ठोस सेतु बना है। यहीं पर्यटकको रुकना पड़ता है। इस स्थानपर दो-चार चायकी दूकानें है। ठण्ढा जल तथा पेय पदार्थ मिल सकता है।

खाई २॥ मील लम्बी है। आयताकार एगकोर वाटके चारो ओर खाई है। खाई ६५० फुट चौड़ी है। आठ मीटर गहरी है। खाईके पश्चात् समतल भूमि है। भूमिके पश्चात् प्राचीर है। प्राचीरके समानान्तर खाई चारों ओर है। एगकोर वाटकी योजना शुद्ध आयताकार है। पूरब पश्चिम लम्बा तथा उत्तर दक्षिण चौड़ा है। दीवार १०८०×११०० गज लम्बी है। गोपुरसे विशाल मार्ग १५३० फुट लम्बा वाटके प्रथम दीर्घातक पहुँचता है। यह मार्ग वास्तवमे ठोस सेतु भूमिसे ७ फुट ऊँचा है। पूरा मार्ग पत्थरकी चौकोर शिला से पटा है। मार्गके दोनो ओर वेदी है। इसके दोनो ओर जल भरा रहता था। अर्थात् गोपुरसे यहाँतक अमृत-सरके सरोवरमे जैसे दरबार साहबतक पहुँचनेके लिए सेतु है और चारो ओर जल है ठीक यही अवस्था इस सेतुकी है। जलपूर्ण होनेपर सागरका आनन्द यहाँ आता है। मानसरोवर और रावणह्रद सरोवरके बीचका जैसे वह मार्ग कैलासतक पहुँचनेके लिए है।

सडकसे उतरते ही खाई परका सेतु मिलता है। पश्चिम ओरसे इसमे प्रवेश किया जाता है। दोनो ओर नागकी वेदी है। नागके फण प्रवेशस्थानकी सीढ़ीपर उठे हुए हैं। खाइयोमे पूर्ण जल खूब लहरा रहा था। उसमे कमल पत्र फैले थे। गोपुर भव्य है। काचीवरम् तथा रामेश्वर मन्दिरके गोपुरकी याद दिलाता है। उनमेसे हाथी, रथ आदि सवारी निकल जा सकती है। गोपुर पाँच मजिला है। ऊँचाई १८० फुट है। चौड़ाई ६० फुट होगी।

एगकोर वाट प्राकारके भीतर तीन खण्डोमे विभक्त है। प्रत्येक खण्ड पहलेके अन्दर है। यदि बाहरी प्राचीरको भी सम्मिलित कर ले तो चार खण्ड हो जायगा। प्राचीरके अन्दर तीन ही खण्ड है। उन्हे इसी नामसे सम्बोधित करूँगा।

गोपुरसे प्रशस्त मार्ग द्वारा पहले खण्डपर पहुँचते हैं। पहला खण्ड चारो ओर दीर्घासे घिरा है। भूमिसे ११ फुट ऊँचा यह प्राचीर तथा दूसरे खण्डकी दीर्घाके समानान्तर दूसरे खण्डके चारों ओर है। मध्य मार्गसे शायद ५ सीढियाँ चढ़कर एक बहुत बड़े चबूतरेपर आते हैं। पहले खण्डकी दीवारकी ऊँचाई ३ मीटर है। लम्बाई ८०० मीटर है। चारों कोनोंपर भी चार घनाकार बुर्जियाँ बनी हैं। दक्षिण तथा उत्तर दीर्घाके मध्यमे घनाकार गोपुर है। पश्चिम और पूर्वकी दीर्घामे तीन घनाकार मार्ग हैं। उनके मध्यका मार्ग शेष पार्श्वके मार्गोंसे बड़ा है। सभी मार्ग प्रथम खण्डके भूमितलसे मिलते हैं। पश्चिम मार्गसे प्रवेश करनेपर पूर्व ओर द्वितीय खण्डमे जानेका मार्ग है। मध्यमे घनाकार दीर्घा है। पश्चिमके प्रथम खण्डके तीनों प्रवेश द्वारोसे द्वितीय एवं प्रथम खण्डको मिलानेवाली दीर्घा द्वितीय खण्डसे मिल गयी है। प्रथम और द्वितीयके मध्य चौकोर दीर्घा है जो दोनों खण्डोमे सेतुका काम करती है। इसमे चार आँगन है। वे वास्तवमे सरोवर हैं, उनके उत्तर और दक्षिण खुले प्रागणमे दो भवन बने है। उनमे चारो तरफसे ऊपर जानेके लिए सीढ़ियाँ है। दोनों भवन सम्भवतः पुस्तकाश्रम अथवा पुस्तकायल थे। प्रथम एवं द्वितीय खण्डके बीच चारो ओर प्रागण है। यह दोनो खण्डोकी दीर्घाओकी सतहसे नीचा है। इसमे जल चारों ओर भरा रहता था।

रामायण-महाभारत—प्रथम खण्डकी दीर्घाकी लम्बाई पूर्वसे पश्चिम ८०० फुट है। उत्तरसे दक्षिण ६७५ फुट है। उत्तर दीर्घा देवासुर संग्राम तीन हजार फुट है।

पूर्वके, नारदके रक्षा निमित्त दानवोसे युद्ध, दक्षिण ओर अमृत मन्थन अदृश्य, और बाईं तरफ 'परम विष्णु लोक' का उल्लेख है। इस स्थानपर राजाकी शोभायात्रा उत्कीर्ण है। पश्चिमकी दिशामे महाभारतका दृश्य है। जावाके बोरबदरकी पत्थरोपर उत्कीर्ण मूर्तिसे वे उत्तम हैं। उसमे जीवन है। आध्यात्मिकता है। उसमे किसी प्रकारकी भौतिक भावनाकी झलक नही मिलती। हमने बड़े ध्यानपूर्वक इसे देखा।

द्वितीय खण्डके प्रागणकी तरफ दीर्घाकी दीवार है। उन्हींपर महाभारत, रामायण, हरिवश, कुरुक्षेत्र, कृष्णार्जुन, विराध वध, मारीच वध, बालि-सुग्रीव संघर्ष, अशोकवाटिकामे हनुमान-सीता सवाद, लका युद्ध, पुष्पक विमान आदिकी अनेक गाथाएँ उत्कीर्ण हैं। सामने खम्भोपर दीर्घा टिकी है, उसके बीच रेलिग लगी है। प्रत्येक खण्डमे सात खम्भे है। वे खम्भे इलोरा जैसे नही हैं। उनकी अपनी शैली अलग है। एगकोर वाटकी विशेषता है कि सब चीजोकी सख्या विषम (ताख) है— सात, नौ, ग्यारह, तेरह, पन्द्रह आदि। दीवारोपर यमालय तथा स्वर्गकी भी कल्पना की गयी है। यमयातनासे सम्बन्धित कृमिमय, कुतशानभली, अस्थिभंग, क्रकच्छेद, कुम्भिपाक, रौरव आदि नरकोकी कल्पना पत्थरोपर खुदी है। स्वर्गीय ३७ दृश्य भी दिये गये है। यदि प्रागणमे जल भरा हो तो पर्यटकको घूमकर पश्चिम प्रवेशद्वारसे होते हुए ऊपर वर्णित चार छोटे ऑगनों, किंवा जलाशयोवाले मार्गसे द्वितीय खण्डमे पहुँचना होगा।

दूसरा खण्ड भी आयताकार है। यह प्रथम खण्डसे २२ फिट ऊँचा है। इसमे प्रथम खण्डके तीनो प्रवेशद्वारोके सम्मुख सीढ़ियोसे चढ़कर तीन प्रवेशद्वार मिलेगे। यह द्वार द्वितीय खण्डके पश्चिमो दीर्घामे बना है। द्वितीय खण्डकी चारो दिशाओमे दीर्घाएँ बनी है। दीर्घाओके उत्तर, पूर्व एवं दक्षिण मध्यमे प्रथम खण्डके प्रागणसे आनेके लिए सीढ़ियॉ बनी हैं। द्वार पहली दीर्घाके ठीक सामने पडेगा। प्रथम तथा द्वितीय खण्डमे अन्तर यह है कि पूर्वकी ओर प्रथम खण्डमे ३ प्रवेशद्वार थे, परन्तु द्वितीय खण्डमे पूर्वमे एक ही द्वार है।

चारो कोनोपर चार शिखर है। पहले खण्डके ऑगनसे कुर्सी कमसे कम १५ फुट ऊँची होगी। चारो कोनोके शिखरसे ऑगन तक पहुँचनेके लिए दोनों ओर सीढ़ियॉ बनी है। चारो दीर्घाओके मध्यमे बने प्रवेश गोपुर सदृश बने हैं। द्वितीय खण्डका भी ऑगन जलसे भरा रहता था। वह सरोवरका रूप धारणकर लेता था। द्वितीय और तृतीय खण्डके मध्यमे जल चारो ओर रहता था।

तृतीय खण्डकी दीर्घामें पत्थरकी नक्काशीके काम बड़े ही सुन्दर बनाये गये हैं। जो बुद्धकी मूर्तियाँ रखी हैं उनमे अधिक मूर्तियाँ लकड़ीकी हैं। कुछ गल गयी हैं, कुछ खण्डित हैं। मालूम होता है कि ख्मेर स्थापत्य लोप होनेके पश्चात् यहाँकी मूर्तिकला गिर गयी। शायद लोग भूल भी गये हों। पत्थरका मिलना कठिन था। जगल चारों ओर है। लकडीकी मूर्ति बनाना आसान था। सम्भव है इन्ही कारणोंसे लकड़ीकी मूर्तियाँ प्रचलित हो गयी हों। बहुतसे स्थानोंपर तो सिंहासन बना है। उनपर कभी हिन्दू मूर्ति थी। उन्हें हटाकर अब बुद्धमूर्ति रख दी गयी है। चबूतरों अर्थात् सिहासनोंकी शैली बुद्ध-प्रतिमा रखनेकी नहीं है।

द्वितीय खण्डसे तृतीय खण्ड ४४ फिट ऊंचा है। पहुँचनेके लिए पश्चिमकी ओरसे घनाकार ठोस सेतु है। सेतुके दोनों ओर दो चौकोर भवन बने हैं। द्वितीय और तृतीय खण्डके मध्यवर्ती प्रांगणमें जल भरा रहता था। तृतीय खण्ड वर्गाकार है। उसे देखनेसे ही प्रतीत होता है कि वह शृंगशिखरतुल्य भूमिसे ऊपर उठ रहा है। उसके चारो कोनोंपर शिखर हैं। प्रांगणसे सीढ़ियाँ शिखरोंके गर्भगृहमे जाती हैं। चारो दीर्घाओके मध्य प्रवेशद्वार किंवा गोपुर है। यह धरातलसे पाँच मजिल ऊँचे हैं। चारो दीर्घाओके मध्यसे तृतीय खण्डके प्रांगणको चार आँगनोमें बाँटता केन्द्रबिन्दु तक बरामदा तुल्य गया है। चारो प्रांगणोंमें जल भरा रहता था। केन्द्रीय शिखरके चारो ओर जल हो जाता है। तृतीय खण्डके धरातल किंवा प्रांगणसे मन्दिर पर्वताकार उठता हुआ ११५ फुट ऊँचा गया है। केन्द्रीय मुख्य शिखर-अधिष्ठान अर्थात् भूमिकी सतहसे २१० फुट ऊँचा है अर्थात् प्रथम खण्डसे क्रमशः पर्वतकी तरह मन्दिरकी इमारतें ७५ फुट तृतीय धरातल तक आयी हैं। वहाँसे मन्दिर १२५ फुट ऊँचा गया है। विन्ध्याचलकी पहाडी जितनी ऊँची है उतना ऊँचा यह मन्दिर है।

शिखर शुद्ध भारतीय है। केन्द्रीय शिखरके गर्भगृहमें देवराजकी मूर्ति थी। इस समय वहाँ बुद्धकी अनेक मूर्तियाँ मूर्तिभण्डारस्वरूप एकत्रित कर रखी गयी हैं।

अमृतमन्थन—मुख्य मन्दिरमें एक कुँएका पता लगा है। वह १२० फुट गहरा है। उसमे सुवर्ण सामग्री मिली थी। एगकोर वाट सुमेर पर्वतकी कल्पना है। भगवान् सुमेरु पर्वतपर निवास करते है। मानवकृत यह सबसे बड़ा पर्वत है। अमृतमन्थनमें मेरु पर्वत मथानी माना गया है। यह कूप जैसे उस पर्वतकी विवर्तनी था। वासुकि नाग डोरी थे। सुर-असुर उसके मथनेवाले थे। कछुआ मेरु पर्वतको समुद्रमे अपनी पीठपर रखे था। किसी चीजको घूमनेके लिए कोई गहरा केन्द्रबिन्दु होना चाहिये। उसीकी कल्पना यह कूप करता है।

एगकोर वाटका उपक्रमाकार सूर्यवर्मा द्वितीयके गुरु दिवाकर थे। अमृतमन्थनका दृश्य यहाँ पग-पगपर उत्कीर्ण मिलता है। अमृतमन्थनमे विष्णु भगवान्ने अमृतकी रक्षाके लिए मोहिनीका रूप धारण किया था। सुर-असुर संघर्ष भी उसीके लिए हुआ था। मानव अमृतका आकांक्षी है। मृत्युसे अमृतकी ओर हम जायँ। श्रुति कहती है, अमरत्वकी कामना मानवजगत्‌की पुरानी कामना है। मानव उसके लिए अनन्तकालसे प्रयास करता चला आ रहा है। इसे अनेक रूपोंसे पटा दिखाया गया है।

अद्भुत आयोजन—देवराज दो सौ फुट ऊँचे शिखरपर विराजमान है। भगवान् प्रलयके पश्चात् क्षीरसागरमे शयन करते थे। एगकोर वाटके कल्पनाकारने मानवकृत पर्वताकार सुमेरुकी कल्पना की। प्रत्येक खण्डको जलसे घेरकर समुद्रके बीच उसे बनाया। ७५ फुट ऊँचाईतक प्रति फुट २५ फुटपर एक-एक सागर है। उस सागरके बीच प्रत्येक खण्ड है। इस प्रकारकी खाईको लेकर चार सागरोंके बीच प्रत्येक खण्ड एकसे ऊपर एक खड़ा है। तीन दीर्घा एवं एक बाहरी प्राचीरके मध्य केन्द्रीय शिखर चार शिखरोंके बीच उठता चला जाता है। द्वितीय खण्डके चार शिखरोंके पश्चात् तृतीय खण्डके चारो कोनोंके चार शिखर और उनके बीच नवां शिखर भगवान्‌का स्थान है। एगकोर वाटमे ताख सख्याका अनुकरण किया गया है। यही बात शिखरोंके सम्बन्धमे भी सिद्ध हुई है।

मुख्य शिखर घनाकार उपक्रमापर बना है। केन्द्रसे जैसे शाखाएँ

निकलकर सन्तुलित-रूपसे दीर्घाओं, सोपानों, सेतुओं एवं जल सभी स्थानों-को सम्बन्धित करती रहती हैं—देवराजकी ही ज्योतिने विश्व ज्योतिर्मय है। एकही स्थानसे निकली ज्योतिने चारो ओर प्रकाश फैलाया है। दिवारोंपर शैव, वैष्णव गाथाएँ उत्कीर्णकर जैसे बनाया गया है। सब भगवान्‌की लीलाएँ हैं। वह केन्द्रमें बैठा सब कुछ देख रहा है।

भगवान् चिदाकाश स्वरूप हैं। उसके पास पहुँचनेके लिए जल, स्थल, वायु सबको क्रमशः लाँघकर ही मानव आकाशमें पहुँच सकता है। उनके पास पहुँचनेके लिए कितने ही द्वार, कितने ही सेतु, कितने ही सागर पार करने पड़ते हैं। इस भवसागरको जो पार करेगा वही सोपान आरोहण करता हुआ भगवान्‌के श्रीचरणोंका दर्शन कर सकेगा।

वाटकी सबसे बड़ी विशेषता उसका अनुमाप है। स्थापत्य, भास्कर्य एवं वास्तुकलाकी परिशुद्धताका ज्वलन्त उदाहरण है। उसकी सिमेटरीमें एक इञ्चका भी अन्तर कहींसे न मिलेगा। परसी ब्राउनके शब्दोंमें-विश्वमें शायदही कोई ऐसी इमारत नाप-तौलमें इतनी परिशुद्ध हो।

वाटके शिखर भुवनेश्वर मन्दिरोंसे पूर्णतया नहीं मिलते परन्तु वे भारतीय शिखरोंके प्रारूप हैं। उनकी आत्मा भारतीय है, काया काम्बुज। शिखर चोकोर कुर्सीपर उठे हैं, परन्तु उनका रूप ताराके समान है। यहाँ एक-एक चीज, एक-एक पत्थरपर बने फूल, नक्काशी देखने योग्य है। मनुष्य उसमें अपनेको भूल सकता है।

भारत और काम्बुज कला

काम्बुज कलाकी सबसे बड़ी विशेषता मैंने पायी कि उनमें राजसिक एवं तामसिक भाव नहीं है। कलाकारके मनमें कामकी शायद कल्पना यक्षिणी, अप्सरा अथवा नारी मूर्ति उत्कीर्ण करते नहीं आयी।

दक्षिणके मन्दिर जगन्नाथपुरी आदिमें मिथुन मूर्तियाँ हैं। नोखसकी रुक्मिणी, साँचीकी यक्षिणी, दीदारगंजकी यक्षिणी, भूतेश्वरके वेदीस्तम्भकी उत्कीर्ण यक्षिणी, जैसिवापरकी वेदीस्तम्भकी यक्षिणी, सोन्दानीके गन्धर्व

स्वर्ण द्वीप—
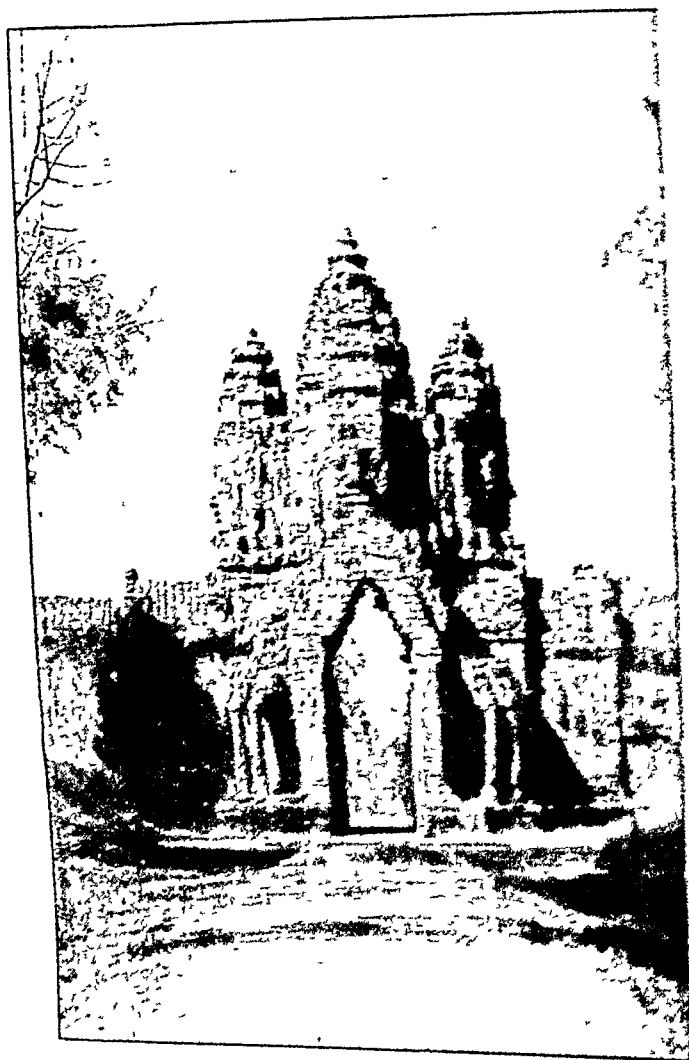
एंगकोर थाम—उत्तरी द्वार, कम्बुज

एगकोर थाम:—पूर्वीय प्रवेश त्रिना सोम (१३ शती), कम्बुज

एवं गन्धर्विणी, कोणार्क एवं वामन मन्दिर खजुराहो आदि पर उत्कीर्ण नारीरूपमें आकर्पण है। कलाकार अपने अचेतन कामको भूल नहीं सका। उपकरणोसे वह वस्तु झलक ही गयी। परन्तु एगकोरमे शुद्धता अपनी चरम सीमापर है। वहॉ काम, मिथुनकी झलक भी न मिलेगी। कलाकारने अप्सराओमे शान्ति एवं स्नेह जैसे भर दिया है। भारतीय कलासे वे प्रभावित थे परन्तु भारतीय कलामे विलासके दर्शनका जो दोष आ गया था उससे उन्होंने अपनेको मुक्त किया। प्रत्येक नर-नारीकी मूर्ति यहॉ आध्यात्मिकताकी प्रतिमूर्ति है। उन्हे देखकर एक ही भाव मनमे उठता है। भगवान्‌के मन्दिरमे उपासक एवं उपासिकाऍ अपनी कलाका नृत्य, संगीत आदि द्वारा दान दे रही है। वे आत्मसमर्पण कर रही हैं। भगवान्‌के चरणोमे। वे पर्यटको किवा यात्रियोके आकर्पण किंवा कलाकारके विलासकी द्योतक नही है। विलासकी भावनाकी कल्पनाको किसी रूपमे शायद उन्होंने अत्यन्त अनैतिक पाप समझा था। भारत एवं कम्बोजकी कलामें यह सबसे बड़ा अन्तर है।

तेरहवी तथा बारहवी शताब्दियॉ भारतीय जीवनका सबसे अन्धकार-मय काल है। हिन्दू अपना धर्म त्यागने लगे। मुसलमानोकी बढती शक्तिमे सुमात्रा, जावा, मलाया, बोरनियो आदिके लोग मुसलमान हो गये। भारतके मन्दिर गिरने लगे। भारत स्वय पराधीन हो गया। भारत अपनी समस्याओमे खुद उलझ गया। वहॉका ज्योति-दीप बुझ गया। बाहर प्रकाश जाना बन्द हो गया। एगकोर भी तेरहवी शताब्दीके पश्चात् पतनोन्मुख हुआ। भगवान् ही हमारे विपरीत थे। मीकांग नदीके मुखपर बालू भरने लगा। वर्षामे बाढ़ आने लगी। मीकागके उफानसे तेनले शेप झील उठती। उसके साथ सीपरीप नदी एगकोरको जलमय कर देती थी। नगर उजड़ गया। लोग भाग गये। श्याम और अनामके साथ हुए कम्बुज सघर्षोंने उसकी नीव हिला दी। स्थान जनाकीर्ण न रहा। लोग भूलने लगे। वह अरण्यस्थली बन गया। मनुष्योने जैसे एक-एक शिला-खण्ड रखकर उनका निर्माण किया था उसी प्रकार एक-एक शिलाऍ

धीरे-धीरे गिरने लगीं। स्थान महान ध्वंसावशेषके रूपमें किसी दानवके कृतिस्वरूप रह गया।

एगकोर वाट-निर्माता महान राजा सूर्यवर्माकी मृत्यु ११४५ में हो गयी। धरणीन्द्रवर्मा द्वितीय राजा हुआ। धरणीन्द्रवर्माके पश्चात् यशोवर्मा द्वितीय राजसिंहासनपर बैठा।

संजक प्रथा

यशोवर्माके राज्यकालमे गृहविद्रोहाग्नि सुलगने लगी। राज्यपर भी आक्रमण होने लगा। जयवर्मा सप्तमका पुत्र राजा श्रीन्द्रकुमार राजाकी सहायताके निमित्त आया। उसने विद्रोहियोंसे युद्ध किया। इसी प्रसगमें सजक प्रथाका वर्णन मिलता है। राजाके सामन्त प्रतिज्ञा करते थे कि वे राजाके शरीरकी रक्षा करेंगे। श्रीन्द्रकुमार युद्धके निमित्त आया तो उसके साथ दो सजक अर्थात् अगरक्षक थे। आक्रमणकालमें वे दोनो राजाके ही सम्मुख मारे गये। राजाने उनकी प्रशंसा की। उन्हे मृत्यूत्तर सम्मान दिया गया। उनकी प्रतिमाएँ देवस्थानमे स्थापित की गयीं। प्रतिमाओंके आलेखसे प्रकट होता है कि उनके लिए देवता पदका प्रयोग किया गया है।

चम्पाके साथ भी श्रीन्द्रवर्माका संघर्ष हुआ था। यहाँ भी वह अपने संजकोंके कारण जीवनरक्षामे सफल हो सका। उन्हे मृत्यूत्तर सम्मान दिया गया। प्रतिमाएँ स्थापित की गयीं। श्रीन्द्रकुमारको चम्पाके युद्धमें सफलता न मिली।

जयवर्मा सप्तमने स्वयं सेना लेकर चम्पा प्रस्थान किया। सेना देशसे बाहर रहनेका लाभ उठाकर त्रिभुवनादित्यवर्माने विद्रोह किया। वह चम्पासे लौटा। पहुँचनेके पूर्व ही राजाको पराजितकर लगभग ११६६ ईसवीमे उसे मार डाला।

त्रिभुवनादित्यवर्मा राजा बना। उसके राजत्वकालमें चम्पा और कम्बुजसे लम्बा युद्ध आरम्भ हो गया। चम्पाके जयेन्द्रवर्माने ११७० में

कम्बुजपर आक्रमण किया। सात वर्षतक युद्ध चलता रहा। चम्पाके राजाने नौ-शक्ति संघटित कर आक्रमणके लिए भेजा। नौबेड़ा मिकांग नदीके मुहानेतक पहुँच गया। राजधानी लूटी गयी। जयेन्द्रवर्मा लूटपाट कर चला गया। कम्बुज शिलालेखोंसे प्रतीत होता है कि त्रिभुवनादित्य-वर्मा युद्धमे मारा गया। जयवर्मा सप्तमके अकथनीय परिश्रम एवं वीरताके कारण कम्बुजकी रक्षा हो सकी।

जयवर्मा सप्तम—यह कम्बुजका अन्तिम महान् राजा था। वह ११८१ मे राजा बना। चम्पाकी आक्रमण नीति भूला नहीं था। आक्रमण किया। राजाको सिंहासनसे उतारा। अपने विश्वासी आदमीके हाथोमे राज्यभार सौंपा। चम्पा बहुत कालतक कम्बुजके अधीन रही। सन् १२०७–१२१८ के बीच उसने एनामसे युद्ध किया। उसकी बृहद् सेनामे चम्पा और बर्माके सैनिक थे। श्यामके विद्रोहकी सम्भावना देखकर उसने चम्पासे सन्धि कर ली और अपनी सेनाको वापस बुला लिया। उसका साम्राज्य दक्षिणी बर्मा, इण्डोचीन, टानकिन तथा मलाया प्रायद्वीपका दक्षिणी भागतक था।

एगकोर मन्दिर शासन

उसने एगकोर मन्दिरका प्रबन्ध करनेके लिए ३,४०० ग्राम चढ़ाये, ६६,६२५ व्यक्ति मन्दिरकी सेवाके लिए रखे गये। ९७० स्नातक ४३० अध्यापकों द्वारा शिक्षा पाते थे। उनका खाना-पीना, आवास सब कुछ-का खर्च राज्यकोषसे मिलता था। ५६६ मकान पत्थरके तथा २८८ मकान ईंटोके बने थे। उसने राज्यमे ७९८ मन्दिर, १०२ अस्पताल बनवाये। १५ अस्पतालोंके स्थानका निर्णय हो गया है। १८ अस्पतालोंके भग्नावशेषोंका पता लग चुका है। १,२१३ धर्मशालाएँ पर्यटकों एवं यात्रियोंके लिए बनायी गयी थीं। ४१ लाख मन चावल प्रतिवर्ष उक्त कार्योंके लिए दिया जाता था। प्रत्येक अस्पतालमे दो डाक्टर काम करते थे। उनकी सहायताके निमित्त अनेक सहायक होते थे। शिक्षा, शुश्रूषा

एवं औषधिका प्रबन्ध निःशुल्क होता था।

कम्बुजका अशोक—जयवर्मा सप्तम वास्तवमें कम्बुजका अशोक था। पिता ब्रह्मके शिलालेखसे प्रकट होता है कि उसे पवित्र बौद्ध कहकर सम्बोधित किया गया है। सर्वश्रेष्ठ मार्ग, सर्वोत्तम प्रकाश, यथार्थको जानने, तीनों लोकोंमें अमरत्वकी प्राप्तिके लिए मनुष्यको अपने रोगको अपनी तीक्ष्ण तलवारकी धारसे मारना चाहिये।

मानव-सेवा—टकोईके पूर्वमे एक पत्थरपर तत्कालीन अस्पतालका एक दृश्य खुदा है। एक कुष्ठ रोगी है। उसकी अँगुलियाँ मुड़ गयी हैं। गल-सी रही हैं। एक रमणी किंवा परिचारिका उसके अंगोंकी मालिश कर रही है। रमणीके मुखपर स्नेह है। नेत्रोंसे करुणा बरसकर जैसे रोगीपर फैल रही है। रोगीके दोनों ओर दो पात्रमे फल रखे है। शायद वे करवसके फल हैं। कम्बुजमे आज भी कुष्ठ रोगीको करवसका फल औषधि-रूपमें दिया जाता है। प्रकट है कि धर्म केवल संस्कार नहीं रह गया था। उसकी उपयोगिता भी थी।

द्वितीय एगकोर थाम—उसने एगकोर थामको अपनी राजधानी बनाया। एगकोर वाटसे एगकोर थाम एक मील उत्तर स्थित है। एगकोर वाटको सीमरीपसे आनेवाली सड़क ही एगकोर थामके मध्य होती फ्रा खातक जाती है।

एगकोर थाम और बरे ओरियण्टके बीच मध्य सीमरीप नदी बहती है। मुख्यतया ८ भग्नावशेष है—यथा १ (ब्यान), २ बाफौन, ३ फ्रा मैनाक्स, ४ आकाश विमान, ५ राज्य अलिन्द, ६ फ्रा पलिले, ७ फ्रा फिहस, ८ ख्लींग।

बरे ओरियण्टमे—१—तनी, २—तकोई, ३—पिता-ब्रह्म, ४—बेनती केडी, ५—श्र आग्, ६—प्री रूप और प्रसाद है।

एकगोर थाम तथा बरेके उत्तर—१—चनती प्री, २—फ्रा खां, ३—नीक पीन, १—फ्रा क्रोलका तथा पिता सोम है।

चीन यात्रीका वर्णन—'एगकोर थामका प्राकार ८ लीके घेरेमे है।

उसमे ५ गोपुर है। गोपुरके पिछले भागमे द्वार लगे है। प्राकारके बाद बहुत बड़ी खाई है। उसे पार करनेके लिए ठोस सेतु है। प्रवेशपथको दोनों ओर गोपुरके मूल से ५४ यक्ष दोनो ओर बने हैं। दोनो ओरके यक्षोंकी कुल सख्या १०८ है। १०८ पवित्र सख्या मानी जाती है। यक्षमूर्ति पत्थरकी है। वे अतिकाय, महान् एवं भयकर मालूम होते हैं।

'पॉचो गोपुरोंका रूपाकन एवं निर्माण एक-सा है। प्राकारके सेतुपर नवमुखी नागकी पत्थरमूर्ति है। गोपुरपर शिखर है। शिखरपर भगवान् बुद्धके पॉच मुख बने है। चारो दिशाओमे चार मुख मूर्ति और बीचके शिखरपर पॉचवी मूर्ति है। मध्यवाली मूर्ति स्वर्णमण्डित है। गोपुरके दोनों ओर पत्थरके हाथीकी मूर्तियॉ रखी है। नगरका प्राकार २ चग ऊँचा है। वे कुल पत्थरकी बनी हैं। पत्थरोके जोड़ उत्तम एवं सुन्दरतापूर्वक लगाये गये हैं। उनमे विदर नही है। जोड़ कहीं भी खुले नही है। जोडोंमे किसी प्रकारकी चीज जमी नही है। इधर-उधर कुछ खाली झोपडियॉ है। प्राकारके भीतर भूमि १० चंग ढालुआ होगी। उसके अन्तमे तोरणद्वार है। फाटक रात्रिमें बन्द कर दिये जाते है। प्रातःकाल खुलते है। फाटको-पर सरक्षक है। उनकी ऑख बचाकर कुत्ता भी प्रवेश नहीं कर सकता। प्राकारोके द्वारा आयताकार बन गया है। उनके चारो कोनोपर चार पत्थरके शिखर हैं।

'वे अपराधी जिनका अँगूठा काट लिया जाता है, नगरमे प्रवेश नहीं पा सकते। नगरके मध्यमे सुवर्णशिखर है। उसके पार्श्वमे २० पत्थरके शिखर हैं। सैकड़ों कमरे बने हैं। उनके पूर्व सुवर्णसेतु है। दो सुवर्णसिंह सेतुके दोनो ओर रखे गये हैं। आठ बुद्धकी सुवर्णमूर्तियॉ वेश्मके अधिष्ठानमे रखी हैं। लगभग एक ली सुवर्णशिखरसे उत्तर एक ताम्र-शिखर है। वह सुवर्णशिखरसे भी उत्तुङ्ग एव भव्य है। उसके अधिष्ठान-पर दस छोटे पत्थरके भवन है। उससे भी एक ली उत्तर राज्यप्रासाद (आकाश विमान) है। राजा यहॉ विश्राम करता है। इसका भी शिखर स्वर्णमण्डित है।

'राजप्रासाद तथा कुलीनोंके समस्त मकानोका मुख पूर्वकी ओर है। जनताके मकानोंकी छाजन, छत शीशे (धातु) की है। अधिकारियोंके मकानोंकी छतें पीली मिट्टीके बने चमकते थपुओसे छायी हैं।'

पत्थरोपर चित्रकारी उत्कीर्ण है। बुद्ध मूर्ति रंगीन उत्कीर्ण है। इमारतें अत्यन्त उत्कृष्ट एवं सुन्दर हैं।

राज्यभवन-गोष्ठीकी खिड़कियोंमें लगे छड़ सुवर्णके हैं। दाहिने और बायें चौखूटे स्तम्भ हैं। उनमें ४० अथवा ५० दर्पण खिड़कियोंकी तरफ लगे हैं। राज्यसिंहासनके दोनों तरफ दो बड़े धातुके दर्पण लगे हैं। उनके सम्मुख सुवर्णकलश रखा है। कलशके सम्मुख सुवर्णधूपदान है। उनके सम्मुख सुवर्णहाथी रखे हैं।

मैने सुना है कि भीतर बड़े ही सुन्दर कोष्ठ हैं। अनेक कोठरियाँ बनी है। उनके अन्दर प्रवेश पूर्णतया निषिद्ध है। राज्यप्रासादोंके अन्तःपुरमें एक शिखर है। राजा उसमे विश्राम करता है।

नर-नारी एवं राजा सभी केश मस्तकपर बाँधते हैं। उनका स्कन्ध-प्रदेश खुला रहता है। लुंगी पहनते हैं। उसे कटिपर बाँध लेते हैं। (यह वर्णन दक्षिण भारतीय मद्रासियोंमे मिलता है।)

'केवल राजा कामदार वस्त्र पहनता है'। वज्रधरके समान वह मुकुट धारण करता है। मुकुट न पहननेकी अवस्थामे अपने मस्तकके केश (मैसूर-जुट्ट) मे मोसली पुष्प तुल्य सुगन्धित पुष्प लगा लेता है। उसके हृदयस्थलपर डेढ़ सेरकी मोतियोकी माला रहती है। कंकण, भुजबन्ध एवं अँगूठी पहनता है। उनमे नीलमणि लगा रहता है। वह नंगे पैर चलता है। उसके तलवो तथा हथेलीमे लाल आलता लगा रहता है।

'राजा बाहर निकलता है तो उसके हाथोमे इन्द्रप्रदत्त सुवर्ण तलवार रहती है। सर्वोच्च अधिकारी सुवर्णपालकीमे चलते हैं। पालकीका डण्डा भी सुवर्णका होता है।

'राजा चलता है तो सर्वप्रथम अश्वारोही चलते हैं। राजचिह्न एवं निशान चलता है। उसके पीछे बाजा बजता है। चाहे दिन हो चाहे रात

बाजेके पीछे ५०० सुन्दर युवतियॉ जलती मोमबत्तियॉ हाथोमे लिये चलती हैं।

'राजप्रासादकी अनेक रमणियॉ राजकीय सुवर्ण एवं रजत पात्र, अलंकारोका संग्रह आदि लेकर चलती है। उन अलंकारोका प्रयोग कैसे किया जाता है, मैं नही जानता। उनका अनुकरण राजप्रासादकी परि-चारिकाऍ, ढाल, तलवार एवं भाला लिये करती है। राजाकी वह महिला सेना उसकी अन्तःपुरीय अगरक्षिका है।

'उनके पीछे अज एवं अश्व सुवर्णालंकृत रथ चलते हैं। राज्यके मन्त्रिगण, राजवंशके लोग हाथियोपर बैठे पीछे चलते है। अगणित छत्रधारिणी महिलाऍ चलती है। छत्रका रग लाल होता है।

'राजमहिषी, सेविकाऍ, दासियॉ पालकी, गाडी एव हौदेपर आती हैं। उनके साथ सैकड़ों छत्र एव चामरधारिणी रहती है।

'अन्तमे राजा स्वयं हाथीपर खड़ा आता है। उसके हाथमे अमूल्य सुवर्ण तलवार रहती है। हाथीका सूँड़ सुवर्णसे ढँका रहता है। उसके साथ २० से अधिक श्वेत छत्र जिनका डण्डा सुवर्णका होता है, लिये छत्रधर रहते हैं। अनेक हाथी तथा अश्वारोही उसे घेरे, उसके अंगकी रक्षा करते रहते है।'

चीनी लेखकका वर्णन अद्भुत है। एगकोर थाम यदि उस रूपमे आज वर्तमान होता तो सुवर्णपुरी होता। उसकी आज स्थिति क्या है, देखना चाहिये।

एगकोर थाम दो नगरोंका ध्वंसावशेष है। पहला नगर यशोवर्माने (सन् ८८९-९१०) बसाया था। उसका केन्द्र वरवग था। उत्तर तथा पूर्वमे एगकोर वाटकी खाई उसकी सीमा थी। दक्षिण वाटकी पूर्वी खाईसे आधा मील और दक्षिणतक बढ़ा था। यह नगर वर्गाकार था। एगकोर वाट दूसरे नगरकी खाईसे बाहर है। प्रथम नगरके अन्दर था। वरंवग दूसरे नगरसे बाहर था। दूसरा नगर जयवर्मा सप्तमने (११९१-१२०१) बसाया था। द्वितीय नगरमे बाफौन केन्द्रमे है। दक्षिणी सीमा

वरंवग एवं वेन थामके बीच पड़ती है। पूर्वमें एगकोर वाटकी खाईकी सीधमें और पश्चिम वेन थामके लगभग दो फरलांग पश्चिम जाती है। नगर वर्गाकार था।

दोनों नगरोंमे चारो ओर खाई थी। द्वितीय नगरका आधा दक्षिणी भाग पहले नगरके अन्दर था। द्वितीय नगरकी सीमा ८ मीलमें थी। उसमें ५ प्रवेशद्वार हैं। उसपर चार मुखाकार शिखर बने हैं जो दक्षिण भारतके गोपुरके तुल्य हैं। गोपुर ऊपर जाकर चौरस हो जाता है। परन्तु इसमें शिखर है। चीनी लेखकके अनुसार वह बिलकुल मिलते हैं।

चारो दिशाओंके चारो मुख वर्तमान हैं। चारो मुखोंके अन्दर बना मध्यका शिखरीय मुख पत्थरोंके गिर जानेके कारण कठिनतासे पहचाना जा सकेगा। कुछ लोगोंका कहना है कि यह कुबेरका मुख है। परन्तु ध्यानसे देखनेपर यह पंचमुखी प्रवेशद्वार है। नगरमें ५ प्रवेशद्वार थे। अतएव उस सोष्ठवके आधारपर प्रत्येक तोरण किंवा गोपुरपर पाँच मुखकी रचना कुछ तर्कसम्मत प्रतीत होती है।

द्वारको विजयद्वार भी कहते हैं। चीनी यात्रीने जो कुछ लिखा है, बिलकुल मिलता है। प्रवेशद्वार ग्रीवातक बड़ा है। गेट दभोई ११वीं शताब्दी जैसा है। ग्रीवाके ऊपर मुखीय शिखर है। सड़क उत्तम है। सड़कके दोनों ओर चीनी यात्री द्वारा वर्णित ५४ यक्ष हैं। दोनों मिलाकर सुमिरनीके दानेके समान १०८ होते हैं। उनके हाथमें नाग है। वास्तवमें अमृतमन्थनका दृश्य दिखाया गया है। एक ओर असुर तथा दूसरी ओर सुर है। सुर-असुर वेदीके स्तम्भका काम करते हैं। नागकी पूँछ द्वारसे आरम्भ होकर आगे बढ़ती है। दोनों ओरके सुर एवं असुर उसे हाथोंसे पकड़े हुए हैं। ५४ मूर्तिके पश्चात् सप्तफणीय नागका फण उठा है। अधिष्ठानसे वह ऊँचा है।

सुर एवं असुरकी पंक्तिके मध्य सड़कसे पर्यटक चलता है। मनपर स्थानकी गम्भीरता, नीरवता, गुरुताका विचित्र प्रभाव पड़ता है। नेत्र आश्चर्यचकित हो जाते हैं। कण्ठ मूक हो जाता है। केवल हरित वनश्रीमें

पक्षियोंके कलरव या बन्दरोंकी कुदानकी ध्वनि ही सुनाई पड़ती है। इस अद्‌भुत वेदीके मूलमे सड़ककी पटरीपर टूटे हुए पत्थर बहुत पड़े हैं। मालूम होता है कि जैसे-जैसे पत्थर मूल निर्माणसे गिरते जाते हैं, उन्हें उठाकर सड़कके किनारे रख दिया जाता है। सम्भव है, उनकी उपयोगिताका वास्तविक ज्ञान न होनेपर गिट्टी-स्वरूप वे भी पत्थरकी सड़कके अग एक दिन बन जायँ।

यह मार्ग भी एक रूपक है। मनुष्य दो अतियों अर्थात् दैवी और आसुरी वृत्तियोके बीच पड़ा है। उसके दोनो ओर वे खड़ी है। उसे अपना मार्ग चुनना है। वह महान् नगरमे प्रवेश पा सकता है—मध्यम मार्गका अनुसरण करके; दोनोके बीचका मार्ग चुनकर। जगत्मे रहकर मनुष्य पूर्ण देवता किवा राक्षस दोनो ही बनकर सफलता प्राप्त नही कर सकता। उसका सासारिक द्वार खुला है। वह सन्तुलित पदसे ही प्रवेश पा सकता है। कुछ लोग कहते है कि मुखमूर्ति बुद्ध अर्थात् अवलोकितेश्वर की है। कुछ कहते हैं, लोकेश्वर की है। यदि वह बुद्धकी है तो वह मार्ग माध्यमिक दर्शनकी ओर सकेत करता है।

गाथा है कि इन्द्रधनुष सुर एव मनुष्यके बीच सेतु है। मार्गके दोनों ओर वेदियोपर नाग फैलाकर दिखाया गया है कि क्ष्मेर सेतु इन्द्रधनुष तुल्य है। इनके द्वारा ही मानव आसुरी एव सुरी दोनो वृत्तियोसे अलग रहकर प्रवेशद्वारके लोकेश्वरकी कृपासे परममति पा सकेगे। लोकेश्वरका स्थान दोनोके बीच मध्य मार्गके ऊपर तोरणपर शायद इसीलिए रखा गया है। कुछ लोग कहते है कि उक्त मूर्तियाँ ब्रह्माकी हैं। यह इसलिए कहा जाता है कि ब्रह्माके चार मुख होते हैं। इस समय चार मुख ही अवशेष हैं अतएव किसी हिन्दूके मनमे अनायास यह भावना उत्पन्न हो सकती है। परन्तु मुख वास्तवमे पाच थे यह स्पष्ट है। हिन्दू गाथाके अनुसार वह पंचानन शिवकी ही मुखाकृति हो सकती है।

तोरण किवा गोपुरके नीचे पहुँचते ही दृष्टि ऊपर उठ जाती है। पर्यटक देखता रह जाता है। भग्नावस्थामे मूर्तिकी जो अवर्णनीय शोभा

अवशेष है वह अपने पूर्वरूपमें कितनी सुन्दर रही होगी यह कल्पनातीत है। मूर्तिके अधरोंपर मधुर मुस्कान है। मार्गकी ओर पलकें किंचित् नत हैं। वे चुपचाप लक्ष्यकर रही हैं कि उनके नगरमें कौन प्रवेश कर रहा है। मूर्तिकी करुणा आगन्तुकपर जैसे फैल जाती है। आगन्तुकका हृदय एक विचित्र किन्तु शान्त एवं पवित्र भावनासे जाग-सा उठता है। वह नगरमें प्रवेश कर रहा है। नगरमें वह पवित्रता, करुणा, शुद्धता एवं विवेकके साथ जाय, शायद यही मूर्ति मूक आदेश देती है।

एगकोर थाम वास्तवमें उद्याननगर था। उसमें अनेक सरोवर बने हैं। सरोवरोंके भग्नावशेष देखनेसे स्पष्ट प्रकट होता है कि उनकी निर्माण-कला भारतीय है। वे प्रायः आयताकार हैं। उनमें पत्थरकी सीढ़ियाँ ऊपर-से नीचेतक लगी हैं। धरातल समतल और पक्का है। यह रचना हमारे यहाँ ग्रामीण सरोवरोंमें मिलती है। दक्षिणके सरोवर तो इसके उदाहरण हैं जिनकी वे नकल हैं।

थामके सरोवर, जलाशय, नहर, सबका एक-दूसरेके साथ सम्बन्ध है। वर्षाकालमें सीमरीप (सुमराह, सोम या सुमेर) नदी बढती है। उससे चारो ओरके जलाशय भर जाते थे। पानी घटता था तो जल बहकर निकल जाता था। इस प्रकार प्रति वर्ष जल नया हो जाता था। सरोवरोंमें वर्षापर्यन्त एकत्र हुआ कूड़ा-करकट स्वतः निकल जाता था। उस समय-की कितनी अच्छी सूझ एवं स्थापत्यकला थी।

पिता-ब्रह्माकी पूर्वी दीर्घामें एक ६ फुटका शिलालेख मिला है। वह सन् ११८६ का है। उसमें राजाकी प्रशस्ति, उसकी संघटनशक्ति आदिका सुन्दर वर्णन किया गया है।

अमरेन्द्रपुर

वेन्ती च्हमर—शिशोफोन नगरसे वेन्ती च्हमर सूखी ऋतुमें जाया जा सकता है। वह संकुचित दुर्ग तुल्य है। कम्बुज आकर इसे देखना आवश्यक है। नगरसे यह स्थान ४० मील दूर स्थित है। यहाँकी यात्रा

दिनमे दो घण्टेमे कारसे समाप्त होगी। शिशोफोन नगरमे ही आकर विश्राम करना पड़ेगा। रात्रिमे निवास करना खतरेसे खाली नही है। स्थान घोर जंगलमे है। नगर अथवा देवालय आदि परित्यक्तसे प्रतीत होते हैं। स्मारकोपर पेड़ आदि उग आये है। इसका अस्तित्व कम्बुजवाले भी भूल गये थे। फ्रेंच अन्वेषकोके कारण इसके अस्तित्वका पता चला है। यहाँ श्यामवालोंका आक्रमण होता रहा है। क्मेर तथा श्याम सेनाओंका कुरुक्षेत्र था। इसका बड़ा विस्तार था। यह स्थान मूलतः जयवर्मा सप्तम द्वारा निर्मित नहीं हुआ था। प्राचीन स्थान था। उसका एक प्रकार-से जयवर्मा सप्तमने जीर्णोद्धार किया था।

विश्वका सबसे बड़ा मन्दिर—फ्रेंच लेखक ग्रोम लियर लिखता है—इस विशाल निर्माणके निमित्त ४४,००० कर्मियोंने दस घण्टा प्रतिदिन-के हिसाबसे आठ वर्षतक लगातार कार्य किया होगा। यहाँके शिलाखण्डों-को मन्दिररूप देनेमे १७१ दिन उन श्रमिकोको कार्य करना पडा होगा। एक हजार मजदूर या कलाकार २१ वर्ष लगातार कार्य करनेपर ही इसे पूर्ण कर सके होगे। दीवारे खड़ी हो जानेके पश्चात् पत्थरोंपर नक्काशीका काम किया गया होगा। यहाँ पहले नक्काशी अथवा प्रतिमादि गढ़ित पत्थरोके जुड़ानेकी शैली नहीं थी। भवन-निर्माणके पश्चात् दीवारो, दरवाजो एवं मूर्तिके पत्थरोपर कलाकार अपनी छेनी चलाता था।

यह स्थान आयताकार था। सभी दीर्घाएँ एवं अलिन्द समकोणपर मिलते हैं। दीर्घाओं, अलिन्दो एवं मार्गोंके मिलनेके स्थानपर चतुर्मुख शिखर बना है। वह शिखर बेयोन शैलीका है। उसके समीप जैसे-जैसे पर्यटक पहुँचता है, शिखर उठने लगते हैं। बीस फुट ऊँचे अधिष्ठानपर केन्द्रीय शिखर साठ फुटसे अधिक ऊँचा है। उसपर ५६ शिखर बने थे। मध्यमे लोकेश्वरकी मूर्ति थी।

एगकोर वाट तथा बेयोनके पश्चात् कम्बुजमे इसी निर्माणका स्थान आता है। क्षेत्रफलकी दृष्टिसे विश्वका यह सबसे बड़ा मन्दिर है। मन्दिरके चारो ओर मीलोंतक जगलोमे नगरके भग्नावशेष पड़े है।

कम्बुजमें सारनाथ

विश्वमें जापानने नारा नगर तथा कम्बुजने वेन्तीश्रीका सारनाथ (मृगदाव) के अनुरूप बनानेका प्रयास किया है। इसके चारो ओर नहर थी। ठोस सेतु बने हैं। सेतुके दोनों ओर सुर असुरकी वेदी है। नगरके चारों ओर नहरके पश्चात् प्राकार था। इस प्राकारके अन्दर 'मृगदाव' ऋषिपत्तन अथवा सारनाथ बना था। क्ष्मेर कालमे उसमे हरिण रखे गये थे। पूर्व ओर वरे अर्थात् वहुत वड़ा सरोवर है (सारनाथमें भी है)। उसीसे नगरमे जल दिया जाता था। सरोवरमे पश्चिम ओर सीढ़ियाँ थीं। दीवारोपर अनेक पक्षी कमलपर मडराते दिखाये गये है।

केन्द्रीय मन्दिरकी नहर २०० फुट चौड़ी है। उसकी गहराई १४ फुट होगी। चारो दिशाओसे चार ठोस सेतु मन्दिरकी ओर गये है। सेतुकी चौड़ाई ३६ फुट है। सेतुका मार्ग मन्दिरके चार गोपुरसे गया है। प्रत्येक गोपुरपर चतुर्मुख बना है। सीढ़ियोके दोनो ओर सिंह वैठे हैं। सीढ़ियाँ मन्दिरतक पहुँचाती हैं। उनकी दीर्घामे अनेक ऐतिहासिक घटनाएं पत्थरोपर उत्कीर्ण हैं। इनकी भास्कर्यकला विश्वकी किसी भास्कर्य-कलाको चुनौती दे सकती है। जयेन्द्रवर्माका चम्पाके साथ युद्धकी घटनाका चित्रण वड़ी ही उत्तमतापूर्वक किया है। केन्द्रीय मन्दिरकी दीर्घा आयताकार है। यहाँकी कलामे जीवन है। खडहरोंमे पड़े निर्जीव पत्थर कम्बुज-जीवनकी कहानी कहनेके लिए सर्वदा उद्यत रहते हैं। दुःख है कि उनकी कहानी सुनने वर्षोंमे शायद कोई एक आता हो।

जयवर्माकी मृत्यु सन् १२४३ में हुई। मृत्यूपरान्त उसका नाम परमसौगत पड़ा। उसके साथ ही भारतमे जो अन्धकार छाया था वह कम्बुजमे भी छा गया। दोनों देशोकी पतनावस्था आरम्भ हो गयी। दोनों ही स्थानोंपर हिन्दूसूर्य डूब गया। हिन्दू जाति विपन्न हो उठी।

इन्द्रवर्मा राजा हुआ। उसका काल-निर्णय नही हुआ है। उसके पश्चात् जयवर्मा अष्टम राजा वना। सन् १२५० मे श्यामकी शक्ति बढ़ने

लगी। उत्तर एवं पश्चिम श्याममे कम्बुजकी सत्ताके विरुद्ध विद्रोह हुआ। कम्बुजसे सम्बन्ध छिन्न हो गया। इन्द्रादित्यके एक भाईने सुखोदया (सुखथाई) मे स्वतन्त्र राज्य स्थापित किया।

मङ्गोल कुबलाखॉ चीनका सम्राट् बन गया। कम्बुजसे अपनी सत्ता स्वीकार करवानी चाही। कम्बुजने अस्वीकार कर दिया।

सन् १२९१ में मार्कोवानो चीनसे बिदाई लेकर कम्बुज आया। उसके साथ चीनी सम्राट् द्वारा तोहफेके रूपमे ईरानके शाहको देनेके लिए महिला कुतर्र भी थी। उसने एगकोर भी देखा। एगकोर अपनी गरिमासे उतर रहा था।

जयवर्मा अष्टमने सन् १२९५ मे राज्य अपने दौहित्र श्रीन्द्रवर्माको दे दिया। श्रीन्द्रवर्माके कालमे सन् १२९६ मे चीन सम्राट्का राजदूत कम्बुज राजदरबारमे आया। उसीके साथ—च्यू ता क्लान लेखक भी था। उसने उस समयकी निर्माणकला एवं व्यवस्थाका वर्णन किया है। उनका उल्लेख स्थान स्थानपर किया गया है।

श्यामके राजा राम कम्हेगके इसी दशकमे दक्षिण बर्मा तथा कम्बुज-के अन्दरतक प्रवेशकर विजय प्राप्त की। च्यू ता क्लानने लिखा है कि एगकोर श्याम सेनासे आक्रान्त हो उठा था। किन्तु राम लौट गये और कम्बुज राज्य कायम रहा।

वेनतीश्री—क्ष्मेरकालीन कलाका अन्तिम दर्शन वेनतीश्रीमे मिलता है। इस मन्दिरकी रचनाके साथ क्ष्मेरकाल एवं कम्बुजमे हिन्दुत्वका अन्त होता है।

वेनतीश्री मन्दिरोका समूह है। श्रीन्द्रवर्माके गुरु तथा सम्बन्धियोने इनका निर्माण करवाया था। दक्षिण एवं उत्तर भारत दोनों शैलीके मन्दिर यहॉ मिलेगे। पत्थरकी नक्काशी विश्वमे अपना सानी नही रखती। प्रतीत होता है कि महान् निर्माणोके पश्चात् कलाकारने अपनी कला छोटे मन्दिरोके पत्थरोपर नक्काशीके रूपमे लगा दी थी।

प्राचीन स्थान ईश्वरपुर एगकोरसे २२ मील उत्तर-पूर्व स्थित है। घोर

जंगलमें है। सूखी ऋतुमें ही यहाँ जाना सम्भव हो सकता है। मन्दिरोंमें शिवकी स्थापना की गयी थी।

अंगोरकालीन अन्य निर्माण एवं देवस्थान हाथीके रंगके पत्थरोंके बने हैं। बेनतीश्रीके निर्माणमें उज्ज्वल रक्तवर्णी पत्थर लगे हैं। उन्हें गुलाबी कहा जा सकता है। इतनी सुन्दर, पूर्ण, गौरवशाली, नाप-जोखमें शुद्ध और अनुप्राणित करनेवाली कला है कि उनका वर्णन कठिन है। मानवकृत कलाका उन्हें उत्कृष्ट नमूना माना जा सकता है। वे अंगूठीका नगीना हैं। उनकी स्मृति हृदयपटलपर विराजती रहती है। उदासीमें, क्षोभमें एवं दुःखमय जीवनकालमें उनकी स्मृतिसे एक प्रकारकी शान्तिका अनुभव होगा।

सन् १९१४ के खननकार्यमें यहाँ सन् ९४४ अर्थात् हर्षवर्माकाल-का एक शिलालेख मिला है। इससे प्रकट होता है कि यह स्थान चार सौ वर्ष पहले भी प्रसिद्ध था।

पत्थरके कामोंमें देवताओंकी मूर्ति, गाथाएँ उत्कीर्ण हैं। पत्थरकी अलंकारिता इतनी उत्तम है कि भारतकी श्रेष्ठसे श्रेष्ठ कलाकृतिका मुकाबला कर सकती है। इनका रूपांकन पूर्णतया भारतीय है। प्राचीन हिन्देशियाके भारतीय स्मारकोंकी हल्की झलक इसमें मिलेगी। सुरम्य वनस्थली यहाँकी शोभा और बढ़ा देती है। पर्यटकको शान्ति एवं शीतलताके साथ बौद्धिक खुराक खूब मिलेगी।

उत्तरभारतके शिवालयोंमें गर्भगृहके सम्मुख मण्डप बना रहता है। मण्डपमें नन्दी किंवा स्थापित देवके वाहनकी मूर्ति रहती है। यहाँके मन्दिरोंमें मण्डप नहीं हैं। वे कुछ ऊँचे अधिष्ठानपर बने हैं। प्रवेशद्वारों-पर सुन्दर नक्काशी है। मन्दिरकी बाहरी दीवारोंपर देवताओंकी मूर्तियाँ उत्कीर्ण हैं। ग्रीवाके ऊपर शिखरोंमें प्रायः चार खण्ड तथा ऊपर कलश हैं।

रावण कैलास—एलोराकी गुफामें चालुक्यकालीन कैलास मन्दिर है। उसमें रावणके कैलास उठानेका दृश्य उत्कीर्ण है। मैंने उसे भी देखा है। यहाँका मुझे एलोरासे अधिक प्रिय लगा। चैत्याकार ताखा है।

ताखाका शिखरीय किनारा अत्यन्त सुन्दर नक्काशीके कामोंसे भरा है। उसी ताखेके पृष्ठभागके पत्थरपर कैलास उठानेका दृश्य उत्कीर्ण है, चार खण्डीय अधिष्ठान ताखेमे नीचेसे ऊपर छोटे होते जाते है। अधिष्ठान चौकोर हैं। उन अधिष्ठानोंकी बाहरी दीवारोंपर मूर्तियाँ बनी है।

प्रथम अधिष्ठानमे रावणका दृश्य है। उसका पैर पहले अधिष्ठानके धरातलमे है। मस्तक दूसरे अधिष्ठानके धरातलके नीचेतक पहुँचा है। इन अधिष्ठानोका आकार ही पर्वताकार हो गया है। वकेसी स्मारकके समान इसे समझना चाहिये।

रावणकी भुजाएँ फैली है। वाम पैरका पंजा भूमिमे तथा एड़ी रानसे लगी है। पैरकी केहुनी भूमि-स्पर्श करती है। दाहिने पैरकी एड़ी भूमिमे तथा पंजा उठा है। यह मुद्रा अत्यधिक शारीरिक बल लगाकर किसी चीजको मस्तकपर ऊपर उठानेकी होती है। दाहिना हाथ दाहिने पैरकी उठी केहुनीपर लगा जोर दे रहा है। कलाकारने बड़ी सुन्दरतापूर्वक रावणकी भगिमाएँ दिखायी हैं। वह प्रयत्न कर रहा है परन्तु कैलास उठानेमे समर्थ नहीं हो रहा है।

इन्द्रप्रस्थकी स्थापना—सन् १४३४ मे कम्बुजराज पाण्डुने नवीन राजधानी स्थापित करनेका विचार किया। वह श्याम तथा एनामके आक्रमणीय क्षेत्रोसे बाहर रहना चाहता था। इन्द्रप्रस्थ (फ्रोमपेन्ह) मे आधुनिक राजधानीकी स्थापना की। कालान्तरमे इन्द्रप्रस्थ लोग भूल गये, उसका अपभ्रंश पनोमपेन्ह लोगोको स्मरण रहा। आज भी वही कम्बुजकी राजधानी है। पाण्डवोने इन्द्रप्रस्थ बसाया था। कम्बुजमे हिन्दू जाति एवं हिन्दू संस्कृतिके सम्बन्धका यह अन्तिम उदाहरण मिलता है। इसके पश्चात् किसी राजाने इस दिशामे प्रयास नहीं किया। वे अपनी घरेलू समस्यासे उलझ गये। भारत भी पराधीन हो गया। वहाँसे कोई प्रेरणा न मिली। मालूम होता है कि इन्द्रप्रस्थ सन् १४३९ तक राजधानी रहा। वह फिर उखड़ गयी। पुनः १८१३ मे उसे राजधानी बननेका सौभाग्य प्राप्त हुआ। कुछ कालतक वह पुनः विधवा हुई। सन् १८६७ मे पुनः सिन्दूर माँगमे

पड़ा। इस समय वही राजधानी है। कम्बुजकी तेरहवीं तथा चौदहवीं शताब्दीका इतिहास अन्धकारमय है। इन शताब्दियोंमे कोई रचना न हुई। अगर हुई भी होगी तो कोई जानता नहीं। हिन्दूधर्मका लोप हो गया।

हिन्दू क्या हुए ?—दो शताब्दियोके बीच हिन्दू क्या हुए, कुछ पता नहीं चलता। जिस हिन्दू जाति एवं धर्मने तेरह सौ वर्षोतक अविच्छिन्नरूपसे कम्बुज, चम्पा, श्याम आदिमे हिन्दुओके इतिहासोको बनाया, उनका लोप हो गया। भारतमे बुद्धधर्मका और पूर्वमे हिन्दूधर्मका इस तरह लोप हुआ मानो कभी वहाँ बौद्ध अथवा हिन्दू थे ही नहीं। भारतमे एकमात्र हिन्दूधर्म रह गया और कम्बुज आदिमे बौद्धधर्म।

तेरहवी और चौदहवीं शताब्दीमे भारतसे हिन्दूधर्मपर मुसलमानी,आक्रमण, मुसलमानी सत्ता, मुसलमानी तबलीगने हिन्दूधर्मकी नीव डिगा दी। इसी कालमे कम्बुजादिमे हिन्दूधर्म लोप होने लगा। दक्षिण-पूर्व एशियामे हिन्दू जाति इन शताब्दियोंमे समाप्त हो गयी। भारतमे हिन्दू मन्दिर टूटे। हिन्दू मुसलमान होने लगे। हिन्दूधर्म रूढ़ि हो गया। वह समयकी गति नहीं पहचान सका। उसमे वह शक्ति न रह गयी जो इस्लामके नये बढ़ावको रोकती। अफगानिस्तान मुसलमान हो गया। कश्मीर, सीमान्त, बलूचिस्तान, सिन्ध आदि मुसलमान हो गये। अतलान्तक महासागरसे रावी नदीतक इस्लामका झण्डा लहरा उठा। यह झण्डा पुनः लहराया जावा, सुमात्रा, मलाया और बोर्नियोमे। वहाँके लोगोने भी इस्लाम ग्रहण किया।

सबसे बड़े आश्चर्यकी बात यह है कि जहाँ हिन्दू थे वहाँ मुसलिम धर्म फैला। जिन देशोमे लोग बौद्ध या ईसाई हो गये थे वहाँ इस्लामकी जड़ न जम सकी। इसके उज्ज्वल उदाहरण बर्मा, चीन, जापान, लाओस, श्याम, कम्बोडिया और वियतनाम है। मेरा मत है कि 'यदि कम्बुजादिने बौद्धधर्म ग्रहण न किया होता तो वे भी हिन्देशिया, अफगानिस्तान, कश्मीर, बलूचिस्तान, सिन्धके समान मुसलिम हो गये होते। जाति-पाँति-

हीन, सामाजिक एवं रूढ़ियोंसे मुक्त बुद्धधर्म अपनेको समयकी गतिके अनुसार ढालता गया। हिन्दू अपनेको ढाल न सके। चीन, बर्मा, श्याम, कम्बुज आदि भूखण्डोका एक पूर्ण क्षेत्र था। हिन्देशिया द्वीपोमें बड़ा था। एक-दूसरेकी सहायता शायद न कर सकते थे। पश्चिमी भारतमें भी इस्लाम इसीलिए फैला कि उनके पीछे इस्लाम लोककी मजबूत दीवार अतलान्ततक फैली थी। इसलामके नामपर सघटित हो सकते थे। दक्षिण-पूर्व एशियामे इस्लामी शक्ति राजसत्ता कायम करनेमे विफल रही। उनका धर्म बौद्धधर्मसे अधिक उदार एव सहिष्णु न था। विवाहका बन्धन, धर्मका बन्धन, सामाजिक बन्धन इस्लाममे भी होते थे। आजका संन्यासी कल गृहस्थ हो सकता था। दूसरा धर्म ग्रहण कर सकता था। हिन्दूधर्मने अपनेको बढ़ाना न सीखा। अपने अतीत गौरवके स्वप्नमे फना हो गया। उनमेसे लोग निकलते गये। पूर्णकलशके महीन छिद्रसे बून्द-बून्द पानी निकलता ही गया, फिर भी एशिया किंवा भारतीय धर्मकी सहिष्णुता एवं विचार स्वातन्त्र्यका जो स्थायी भाव था वह कायम रहा। चीन और भारतीय सस्कृतिमे कभी सघर्ष नहीं हुआ। वे एक-दूसरेके पूरक हुए। विरोधी नहीं हुए। भगवान् बुद्धने दोनोको एक ही सूत्रमे बाँध रखा। उन्हें अलग न होने दिया। कम्बुजके राजा बुद्ध, विष्णु, शिव, ब्रह्मा सबकी उपासना करते रहे। सबके लिए भवनोंका, मन्दिरोका निर्माण कराते रहे। बुद्ध एवं हिन्दू, दोनो विचारधाराएँ साथ चलती रहीं। दो भाषाएँ साथ चलती रहीं। आजका हिन्दू भगवान् बुद्धके सम्मुख भी माथा टेकता है और शिव, विष्णुके सामने भी। बुद्धको अवतार मानता है। बौद्धधर्मको अन्य धर्म न मानकर भारतीय हिन्दू धर्मकी देन समझता है। वही धारा उन दिनो भी रही होगी। इस्लामके खतरेको देखते ही अपनी रक्षामे जिस व्यवहार, जिस उपाय, जिस सामाजिक व्यवस्थासे मदद मिल सकती थी उसे उन्होने तुरत अपनाया। उनके इस अपनानेमे ही उनकी रक्षा हो सकी। अन्यथा सम्भव था कि हिन्देशिया अथवा मध्यएशिया तथा पाकिस्तानके समान वे भी मुसलमान हो गये होते। भारत उस स्थानसे,

जहाँसे उसे सहायताकी प्रेरणाकी आशा मिल सकती थी, स्वयं अपनी समस्यामें उझल गया। अतएव कम्बुजके लोगोंको अपने पैरोंपर खड़ा होना था। उन्होंने देखा कि बौद्धधर्मके अधिक समीप जानेसे रक्षा हो सकेगी। उन्होंने हिन्दू धर्मका विरोध नहीं किया।

पाश्चात्योंका आगमन

पश्चिमी राष्ट्रोंके उत्थानमे पूर्वका पतन छिपा था। कम्बुजका गौरवपूर्ण इतिहास तेरहवीं शताब्दीसे गिरने लगता है। १५ वीं शताब्दीमे अचानक बन्द हो जाता है।

सन् १५१६-१५६६ तक अंगसने कम्बुजके राजाको कम्बुजसे निकाला। इसी समय पहले पुर्तगाली मिशनरीने कम्बुजकी भूमिमे पैर रखा। उसका नाम डीगो विलोसो था। वह लिसबन निवासी था। कम्बुज राजदरबारमे १५८० मे प्रवेश किया। राजा इतना प्रभावित हुआ कि एक राजकन्यासे उसका विवाह कर दिया। राजाका नाम ची-चेथा प्रथम था। विलोसोने अनेक स्पेनवालो तथा पुर्तगालियोको देशमे बुलाया।

श्याम राजाने कम्बुजपर दबाव डालना आरम्भ किया। बिलोसोने फिलीपाइनके राज्यपालसे सहायता माँगी। विश्वास दिलाया कि इस नीतिसे ईसाई धर्म बढ़ सकता है। स्पेनिश राज्यपालने सहायता न भेजी।

विलोसो फिलीपाइनसे लौटा भी न था कि श्यामने कम्बुजपर आक्रमण कर दिया। कम्बुजराज भाग गया। विलोसो कम्बुजमें आते ही पकड़ लिया गया। इसी बीच उसका भतीजा श्रीरामशियेगने राज्य हड़प लिया। उसने श्यामी सेनाको कम्बुजसे बाहर कर दिया।

सन् १५९६ में फिलीपाइनके राज्यपालने ३ जंगी जहाज विलोसोकी सहायता निमित्त दिया। कम्बुजमे आकर विलोसोने राज्यप्रासादपर आक्रमण किया। राजा मारा गया। विलोसोने चेथाके पुत्रको राजा बनाया। राजाने वेफनोय प्रदेशकी जागीर उसे दी।

मुसलिम विद्रोह

ईसाइयोंकी शक्ति बढ़ती देखकर मलायाके मुसलमान शकित हुए। मलायाके मुसलमान कम्बुज जहाजोमे काम करते थे। चीनी और जापानी व्यापारियोंकी उन्हें सहायता मिल गयी। सभी स्पेनिश तथा पुर्तगाली मार डाले गये। मुसलमानोंने बिलोसोको मार डाला।

राजा ची-चेथा द्वितीय बालक था। सन् १६१८-१६३६ तक वह श्यामके यहाँ शरीर-बन्धक स्वरूप था। वह श्यामकी राजधानी अयोध्यामे रहता था। श्यामसे घृणा करता था। उसने श्यामसे लौटनेपर एनामी राजकन्या ल्यूसे विवाह कर लिया।

राम मुसलमान हुआ—ची-चेथाका चतुर्थ उत्तराधिकारी राम (१६४२-१६५७) राजा था। उसने भी एनामी कन्यासे विवाह किया। मलायाके मुसलमान उसकी सहायता करेंगे इस आशामे वह मुसलमान हो गया।

उसने सार्वजनिकरूपसे इस्लाम ग्रहण किया। उसका खतना किया गया। नाम इब्राहीम रखा गया। कुरानशरीफकी आयतें खुलेआम पढ़ने लगा।

रामकी हत्या—विधवा राजमाता एनामी कन्या न्गुसेन जीवित थी। उसने अपने मायके ह्यू तथा एनामसे सेना मँगायी। स्वयं सेनाका सचालन किया। इब्राहीम हार गया। उसे पिंजड़ेमे बन्द कर रख दिया गया। कुछ ही समय बाद वह मर गया। धर्मपरिवर्तन उसकी तथा उसके देशकी रक्षा करनेमें समर्थ न हो सका।

सन् १६९८ मे कम्बुजसे सेगॉवतक एनामी लोगोंने ले लिया। यह वियतनामकी राजधानी हुई। उस समय कोचीनचीन कम्बुजमे था। १७१५ में राजा आगा तगने टन-टन तथा गोकगाप्रदेश भी उन्हें दे दिया। राजा एनामी लोगोंसे परेशान होकर श्याम चला गया। वत्तमवेग प्रदेश राजा वेनको दे दिया। वेनके वंशज सन् १९०७ तक वहाँ राज्य

करते रहे। अङ्गचन द्वितीय (१७९४-१८३४) तक कम्बुजका राजा रहा। राजाकी मृत्युपर उसकी कन्या अङ्गीवीको प्रतिराज (रीजेण्ट) रानी घोषित किया। कम्बुज इतिहासमें प्रथम महिलाने राजसूत्र धारण किया। वह सन् १८४१ तक शासन करती रही। उसका चाचा अङ्गडाङ्गने (१८४५-१८५० तक) कम्बुजपर राज्य किया। उसने श्याम और एनामसे परेशान होकर फ्रान्सकी शरण ली।

स्वतन्त्रताका अन्त—अङ्गडाङ्ग सन् १८५९ में मर गया। उसका पुत्र नरोत्तम राजा हुआ। सन् १८६३ मे फ्रान्सने उसे समझाया कि श्याम एवं एनामकी रक्षाका एकमात्र उपाय उसका फ्रान्सकी संरक्षतामें आ जाना है। नेपोलियन तृतीय तथा नरोत्तमके बीच सन्धि हुई। कम्बुजकी प्रभुसत्ता नेपोलियनके हाथमे आयी। नरोत्तम अप्रैल १९०४ में मर गया। उसके स्थानपर उसका सौतेला भाई श्रीस्वस्तिक राजा हुआ।

कलाका पुनर्जीवन—उसने कम्बुज नृत्य एवं संगीतकलाको पुनर्जीवित किया। कम्बुज बालिकाएँ ८ वर्षकी आयुसे नृत्य सीखना आरम्भ करती है। चार वर्ष परिश्रम करनेपर राजा, रानी, बन्दर तथा राक्षस आदिका अभिनय कर सकती है।

उसने अनेक बार पश्चिमी देशोंकी यात्रा की। कम्बुज नृत्यका यूरोपमें सर्वप्रथम प्रदर्शन किया। फ्रान्सके अनुरूप न्याय विभाग स्थापित किया। नवीन दण्डविधान लागू किया गया। १९२८ मे उसकी मृत्यु हो गयी। उसका पुत्र पुनीवंग राजा हुआ। उसकी मृत्यु सन् १९४७ मे हुई। जापानने कम्बुजपर अधिकार कर लिया। १९४६ मे युवराज (स्वस्तिक) प्रधान मन्त्री हुआ। संविधानसभाका चुनाव हुआ। सन् १९४९ में संविधान देशमे लागू किया गया। राजा नरोत्तम सेना-नायक हुआ। उसने १९५५ मे राज्य अपने पिता राजा सुरामृतके हकमे छोड़ दिया।

आधुनिक कम्बुज

आधुनिक कम्बुज देशका क्षेत्रफल १,८१,००० कीलोमीटर है। जनसंख्या केवल एकतालिस लाख है। इण्डोचीनी ३,२००, चीनी

२,१८,००० और यूरोपियन ४५,००० हैं। देशमें १४ प्रदेश हैं। साक्षरता ८० प्रतिशत है। प्रारम्भिक पाठशालाएँ २०५६, विद्यालय ७ हैं। प्रारम्भिक पाठशालाओंमे १,७३,२६९ तथा विद्यालयोंमें ३,५५० विद्यार्थी शिक्षा पाते हैं—मुख्य नदी मी कांग (या गंगा) है वह २८०० मील लम्बी है और तिब्बतसे निकलती है। बाढ़के समय ४० या ५० फुट पानी ऊपर उठता है। ८७० मीलतक वह नौकोपयोगी है। शासन व्यवस्था राजतन्त्रीय लोकतन्त्र है। राजधानी फ्नोमपेन्ह (इन्द्रप्रस्थ) है। उसकी जनसख्या २,६०,००० है। मुख्य झील टेनले सेप है, पैदवार चावल, रुई, मिर्च ज्वार, खजूरका गुड़, रबड़ तथा रेशम है। खनिज पदार्थोंमे हीरा रत्न तथा फासफेट है। निर्यातमे मछली, मिर्च, ज्वार, चावल, सुर्ती, मछलीका तेल, चमड़ा, पशु, लकड़ी और आयातमे नमक, मदिरा, वस्त्र, सिगरेट, अफीम, लोहा है।

विदा

इस महान् कम्बुज राज्यसे हम हवाई जहाजसे उड़े। एगकोर पीछे छूटता जा रहा था। हम उसे तबतक देखते रहे जबतक वह दिखाई पड़ रहा था। मैंने उन्हे, उनके निर्माताओंको करबद्ध नमस्कार किया जिनके कारण अपना मुख भी यहाँ लाल था।

थाई

पन्द्रहवीं शताब्दीके जर्मन पर्यटक श्रीस्लोईने अयोध्याको दक्षिण-पूर्वी एशियाका पेरिस कहा है। वह थाई देशकी राजधानी थी। थाई देशने अपनी स्वतन्त्रता गत आठ सौ वर्षोंसे अक्षुण्ण रखी है। जापानका अधिकार कुछ ही दिनोंतक रहा। यह देशके लम्बे जीवनकालमें अपवाद ही कहा जायगा। वह किस प्रकार स्वाधीन रहा; यह हमारे लिए अध्ययनका विषय है; जब कि उसके पड़ोसी राष्ट्र दासतामें प्रत्यक्ष किंवा अप्रत्यक्ष-रूपसे वँधे हुए थे। थाई देशको ही थाईलैण्ड किंवा श्याम कहते हैं।

थाईलैण्डमे भारतीयोकी जनसंख्या १७ से २० हजारतक होगी। लगभग आठ या नौ हजार भारतीयोने श्यामकी नागरिकता स्वीकार कर ली है। नौ हजार व्यक्ति भारतीय नागरिक हैं। थाई नागरिकता लेनेवालोमें उन भारतीयोंकी सख्या अधिक है जो वही पैदा हुए हैं।

श्याम ६ से २१ अंश उत्तरी अक्षाश और ९७ से १०६ अंश रेखांशके मध्य स्थित है। वर्पमे लगभग २२-३५ इंच पानी वरसता है। उत्तरमे शान राज्य तथा लाओस, पूर्वमे कम्बुज, पश्चिममें वर्मा तथा दक्षिणमे श्यामकी खाड़ी और मलाया है।

जनसख्या १,६३,४४,२१४ है। बौद्धधर्मावलम्बी १,५५,८१,२४०, मुसलमान ६,६६,४४०, ईसाई ७८,४३४ तथा अन्य लोग १८,१०० हैं। उन्नीसवीं शताब्दीके एक लेखसे प्रकट होता है कि आवादीमे ४० लाख श्यामी, १० लाख लाओस, १० लाख मलय तथा भारतीय, १० लाख ५० हजार चीनी, ३ लाख ५० हजार कम्बुज तथा ५० हजार पंग्रनन थे। कुल आवादी ८० लाख थी। क्षेत्रफल ५,११,१३७ वर्ग किलोमीटर है। मलाया प्रायद्वीपका थाई भाग ७७,८०० वर्ग किलोमीटर है। राजधानी वकाककी

जनसंख्या ८८,४७९ है, चीनी जनसंख्या देशमें ३० लाख है। ये एक समस्या हो गये हैं। श्यामका व्यापार एवं धन उन्हींके हाथोंमें है।

प्राकृतिक विभाजन—देशका क्षेत्रफल लगभग २ लाख वर्गमील है। सबसे अधिक १,२०० मील लम्बा तथा ५०० मील चौड़ा है। श्याम चार प्राकृतिक भागोंमें बाटा जा सकता है। उत्तर ६०,००० वर्गमील, इसमे शान, करेन तथा कमजालिया हैं। धुर उत्तरमें कुछ लाओ जातिके लोग भी बिखरे हैं। पूर्व—७०,००० वर्गमील है। समुद्र सतहसे २००-३०० फुट ऊँचा है। पहाड़ी १००० से २००० फुट ऊँची है। जन-संख्या २०,००,००० है। श्याम, लाओस एवं कम्बुज जातियाँ रहती हैं। मध्य यह श्यामका हृदय है। ५०,००० वर्गमील क्षेत्रफल है। सबसे अधिक जनाकीर्ण है। नब्बे प्रतिशत देशका धन यहीं केन्द्रित है। सबसे ऊँचा पर्वत ५००० फुट ऊँचा है। दक्षिण-मलय प्रायद्वीप २०,००० वर्गमील है। पर्वत करीब ५००० फुट ऊँचा है। दोनों ओर समुद्र है। शहतीर यहाँकी मुख्य उपज है। अप्रैलसे अक्तूबरतक तापमान ९८-७९ तथा नवम्बरसे मार्चतक ५७ हो जाता है। मईसे अक्तूबरतक दक्षिण-पूर्वी मानसूनके कारण वर्षा होती है। भारतके समान यहाँ भी तीन ऋतुएँ—जाड़ा, गर्मी और बरसात होती हैं।

कृषि एवं वाणिज्य—श्याम कृषिप्रधान देश है। नब्बे प्रतिशत जनता गाँवोंमे रहती है। प्रधान नगर बंकाक है। अन्य नगरोंकी जन-संख्या १० से १५ हजारतक होगी। कृषि ही जीवनोपार्जनका मुख्य आधार है। टीन उत्पादनमें श्यामका स्थान विश्वमें चौथा है। सोना, टीन, रबड़, सागवानकी लकड़ी तथा चावल निर्यात्की मुख्य वस्तुएँ हैं।

जन-जीवन—देशमें १९,१५० बुद्ध मन्दिर हैं। १,६२,११० पुरोहित तथा ६८,३२२ भिक्षु हैं। राजकीय स्कूल ३६४ तथा विद्यार्थी ८३,८५२ है। म्युनिसिपल स्कूल १८,५८९ तथा विद्यार्थी २६,६१,११२ हैं। अध्यापकोंकी सख्या २७,३३६ है। प्राइवेट स्कूल १२८४ हैं। उनमें विद्यार्थियोंकी संख्या २,६७,९४३ है। चूना लोग कर्ण विद्यालयकी स्थापना

सन् १९१७ में हुई थी। उसमें ३३०० विद्यार्थी है। उनमे ४५ प्रतिशत महिलाएँ हैं। जनता ६० प्रतिशत क्षिशित है। विश्वविद्यालय ६ हैं। प्रायः सभी बङ्काकमे हैं। देशमे २०० सिनेमा हाल हैं। उनमे १,१६,४०० दर्शकोंके बैठनेका प्रबन्ध है। रेलवे लाइन लगभग एक हजार मील लम्बी है। लाखो नागरिक नावोंपर रहते है।

थाई ईमानदार, मेहनती, उद्योगी तथा सरल होते हैं। उनका मिजाज साधारणतया बड़ा अच्छा होता है। वे स्नेहसे मिलते हैं। उनमें शिष्टता होती है। स्त्रियॉ शीलवान होती है। किसीको परेशान नहीं करना चाहते हैं। सुखी है, सुखमय जीवन पसन्द करते हैं। चिन्ताहीनता उनके राष्ट्रीय जीवनका आचरण है। आक्रमणकी अवस्थामे ही उनका पारा चढ़ता है।

इन्द्र एवं वृत्र—लाओस, श्याम, कम्बुज, वियतनाम अर्थात् दक्षिणी-पूर्वी एशियाको देखा जाय तो उसका रूप भगवान् परशुरामके परशु (फरसा) सदृश प्रतीत होगा। गाथा है कि इन्द्र एवं वृत्रमे युद्ध हुआ। वृत्र मारा गया। इन्द्रका परशु भूमण्डलपर गिरा। जिस स्थानपर गिरा, वही स्थान इण्डोचाइना है।

इन्द्र-उमा—दूसरी गाथा है। उमाको प्रसन्न करनेके लिए इन्द्रने श्यामको सम्पन्न देश बनाया। उसका नाम स्वर्णभूमि पड़ा। कुलेन तथा सुमेरु पर्वतके बीच भगवान्का परशु गिर गया। प्रसन्नवदना इन्द्राणीके नेत्रसे आनन्दाश्रु निकल पड़े। इन्द्रने आकाश-पथसे नीचे देखा। परशुने देशका रूप धारण कर लिया। इन्द्रने देखा। देश सुन्दर है। वहॉ विहार किया।

इन्द्रने जाति बनायी—तीसरी गाथा है। इन्द्रने बर्मा, भारत मलाया, चीनसे लोगोंको लाकर बसाया। उनकी एक जाति एवं राष्ट्र बनाया। उस जातिका नाम थाई है। थाई जनजीवनमे इन्द्रका प्रमुख स्थान है।

थाईलैंड

श्यामका अर्वाचीन नाम थाईलैण्ड है। थाईका अर्थ होता है स्वाधीन। थाइलैण्डका शाब्दिक अर्थ हुआ स्वाधीनोंका देश। रहनेवालोंकी संज्ञा हुई थाई। मुवांग थाई शब्दका भी प्रयोग होता है। इसका अर्थ है स्वाधीनोंका देश। मुवांग शब्द मलय 'सगुन' शब्दका अपभ्रंश है। अर्थ होता है भूरी जाति।

श्याम—थाईलैण्डका प्राचीन पाली नाम श्याम है। भविष्य पुराणमें श्याम देशका उल्लेख है। स्पष्ट है कि भारतीयोंको श्याम देशका ज्ञान था। लौकिक नाम सियाम है। श्यामका अपभ्रंश ही सियाम है। एगकोर वाटमें श्यामके सैनिकोंके लिए श्याम कूट शब्दका प्रयोग किया गया है। यह भी कहा जाता है कि श्यामके प्रथम राज्य सुखोदयाका ही अपभ्रंश श्याम शब्द है। मध्य थाई देश सियाम तथा पालीमे साम देश कहा गया है। इस क्षेत्रमे रहनेवाले थाईको थाइनोई अर्थात् छोटे थाई और बर्माके शान राज्यके निवासी शान जातिको थाइपे अर्थात् बड़े भाई कहते थे।

श्याम और असम (आसाम)—बंकाकमें कुछ थाई विद्वानोंसे विचार-विनिमय हुआ। थाई भाषामे छपी एक पुस्तक भी मुझे दी गयी। पुस्तकका प्रतिपाद्य विषय था कि आसामके आसामी तथा श्यामी एक ही जातिके हैं, लेखकने मुझे यही समझानेका प्रयास किया। कुछ तर्क भी दिये।

कृष्ण और श्याम—बर्माके शान, भारतके असम तथा श्यामके मूल पुरुष एक ही थे। इसपर कई विद्वानोने जोर दिया। इस सम्बन्धमे लिखे ग्रन्थ थाई लिपि एवं भाषामे हैं। पर्यटनके अल्पकालीन निवासमे लिपि एवं भाषा दोनो सीखना कठिन था। एक मित्रने कहा कि भगवान् कृष्णका दूसरा नाम श्याम भी है। उसी आधारपर देशका नाम श्याम पड़ा। हिन्दू उपनिवेशकोंने ही देशका नाम श्याम रखा। मुझे यह तर्क असंगत मालूम हुआ। श्रीकृष्ण, गीता किवा राधाकृष्ण आदिकी मूर्ति

श्याममें कहीं नहीं मिली है। श्यामकी किसी प्रचलित गाथासे भी इसका सम्बन्ध नहीं जुटता। मथुरा, वृन्दावन एवं कृष्णगाथासे सम्बन्धित कोई चीज मिलती नहीं।

श्याम-शान—जनश्रुति है कि चीन शेनसी प्रदेश श्यामी जातिका मूल निवास-स्थान था। चीनी भाषामे शेनसीका अर्थ 'शेनके पश्चिम' मे है। शेनका अर्थ दर्रा भी होता है। बर्मावाले 'शान' शब्दका प्रयोग उत्तरी बर्माके कार्ट गोत्रीय जातिके लिए करते थे। युन्नान प्रदेशके थाई राज्य नन चाओको चीनी शन सन कहते थे। शान राज्य वर्मा गणतन्त्र संघका एक राज्य है। शान हैट तथा शान झोला प्रसिद्ध है। प्रतीत होता है श्याम शब्द 'शन' का अपभ्रंश है। शान, असम तथा श्याम जातिके मनुष्योका गठन एवं शरीर-रचना मिलती है। शान लोगोंको बर्मामे देखा है। उन्होने हमारे साथ हवाई जहाजमे भी यात्रा की थी। मैंने उनमे तथा बर्मावालोंके शरीरगठनमें अन्तर पाया था। थाईमे जानेके पश्चात् मुझे यह बात अचानक ध्यानमे आयी कि सम्भव है ये तीनो जातियाँ एक ही मूल स्रोतसे आर्योंके समान निकली हो।

थाई जाति—थाई जाति मंगोल गोत्रीय है। वे चीनके निवासी थे। दक्षिणकी ओर बढ़े। बर्मामे सालविन तथा इरावदीकी उत्तरी अन्तर्वेदीमे होते पश्चिमकी ओर चले। दक्षिणमे श्याम तथा कम्बुजकी सीमातक पहुँच गये। चीनके युन्नान प्रदेशमे आबाद हुए। तत्कालीन चीन सीमा युन्नान प्रदेशतक ही थी। वहाँ जातिने छोटे-छोटे औपनिवेशिक राज्य स्थापित किये। चीनसे वे आक्रान्त होते। स्वाधीनता खोते। अवसर मिलते ही पुनः स्वतन्त्र हो जाते थे। थाई देशकी संस्कृति, सभ्यता तथा विकास समझनेके लिए उसके प्राचीन इतिहासपर एक दृष्टि डालना आवश्यक है।

हिन्दुओंका प्रवेश—लगभग २ हजार वर्ष पूर्व हिन्दुओंका प्रवेश श्याममे हो गया था। कुछ लोगोका मत है कि थाई बलखसे आये थे। कुछ कहते हैं तिब्बत उनका मूलस्थान था। निस्सन्देह वर्तमान थाई जातिमें चीन, तिब्बत, लाओस, मोन, हिन्दू, क्मेर, मलय आदि जातियाँ

मिल गयी है।

उनके पूर्व मोन तथा ख्मेर लोग श्याममें आबाद थे। ख्मेर जातिके विषयमें कम्बुजके प्रसंगमें लिखा जा चुका है। मोन जातिके विषयमें कुछ लिखना आवश्यक है।

मोन—मोन एक जाति है। वह दक्षिणी बर्मामें थी। वे धीरे-धीरे मीकांग (मॉ गंगा) की घाटीमें आकर बस गये। उत्तरी श्याम मध्यदेशीय मोन जातिसे उपनिविशित थी। वे लाओस तथा थाई जातिमें मिल गये। कुछ इतिहासकारोंका मत है कि मोन जाति आन्ध्रके रहनेवाले तैलंगी थे। लगभग दो हजार वर्ष दक्षिण बर्मामें उन लोगोंने अपना उपनिवेश बसाया था। नागा पर्वतीय आसामके क्षेत्रमें मोन अब भी एक गाँव कन्येकके समीप है। मोन श्याममें फैले। बीसवीं शताब्दीके खनन कार्योंसे प्रमाणित होता है कि मोन जाति हीन यानी बौद्ध धर्मावलम्बी थी। मोन लिपि भारतीय लिपिपर आधारित थी। उसी लिपि तथा धर्मको थाईने कुछ संशोधनके साथ स्वीकार कर लिया। बौद्ध संवत्का प्रयोग करते थे, जो अबतक प्रचलित है।

२२ सौ वर्ष पूर्व—प्रसिद्ध चीनी राजदूत चंग-केन बेक्ट्रिया गया था। उसके आश्चर्यका ठिकाना न रहा जब उसने देखा कि चीनका रेशमी वस्त्र, बाँसके बने सामान उत्तरी भारत, अफगानिस्तान तथा बेक्ट्रियातकमें मिलते थे। वह सामान दक्षिणी चीन यून्नानसे आता था। तत्कालीन जनपद यून्नान उत्तरी बर्मा, उत्तरी भारत होता अफगानिस्तान लाँघता पश्चिमतक पहुँचता था।

यून्नानके स्थलमार्ग द्वारा चीन-भारतका सम्पर्क स्थापित था। प्रथम शताब्दीमें दो भारतीय बौद्ध भिक्षुओंने भी पर्यटन किया था। वे भी इस बातकी पुष्टि करते है। तीसरी शताब्दीमे आईत्सिंग चीनी पर्यटक लिखता है कि २० बौद्ध चीनी पर्यटक इस मार्गसे भारत गये थे। नवीं शताब्दीका प्रसिद्ध भौगोलिक कियाटोम टानकिनसे यून्नान, उत्तरी बर्मा होते दो स्थलमार्गोंका वर्णन करता है। सन् ९६४ मे चीन सम्राट्ने

३०० बौद्ध भिक्षुओंको इसी मार्गसे भारतसे बौद्ध ग्रन्थ लानेके लिए भेजा था ।

गान्धार राज

थाई जाति दक्षिणी चीनमे आवाद थी । वहाँ उनके कुछ राज्य भी थे । चीनका उनपर पूर्ण आधिपत्य नही था । उनके एक राज्यका नाम गन्धार राज्य था । गाथा है कि गान्धार राज्यके राजा अशोकवंशीय थे । उनकी उपाधि राजाकी थी । उसे पूर्वका राजा कहा जाता था ।

भारतवर्षके पश्चिममे गान्धार (कन्धार) राज्य अफगानिस्तानमे था । पूर्वमे भी श्यामके उत्तर और दक्षिणी चीनमे गन्धार राज्य नामसे एक राज्य था । इतिहासकी यह विचित्र घटना है कि भारतकी दोनो दिशाओ—पश्चिम एव पूर्वमे एक ही नामके दो राज्य स्थापित थे । इस गान्धारको अफगानिस्तानके गान्धार किंवा कन्धारसे नही मिलाना चाहिये ।

गान्धार कौन थे—पर्यटक रैसुद्दीन थाई गान्धार राज्यका वर्णन करता है—वहाँके निवासी भारत एव चीनसे आकर उपनिवेश स्थापित किये हैं । चीनके समीप होनेपर भी उनपर भारतीय सभ्यता एवं संस्कृतिका प्रभाव है । गान्धार राज्य शक्तिशाली एव सघटित है । चीनके साथ उसकी संधि है । दोनो देशोका सम्बन्ध मैत्री एवं शान्तिपूर्ण है । चीनके ताग राजवश कालमे यून्नान प्रदेश कमसे कम ६ थाई राज्योमे विभाजित था । सन् ६५० मे राजा ह्सी-नू-लो सबका राजा बन गया । उसका प्रपौत्र पी-लो को-ने सन् ७४८ मे अपनी राजधानी थाईहो अर्थात् ताली-फू में स्थापित की । उसके राज्यका नाम नानचाओ था । उसका पुत्र को लो-फोग हुआ । सन् ७६६ के चीनी भाषामे खुदे उसके शिलालेख मिले हैं । उनसे प्रकट होता है कि उसने बौद्ध, कन्फूसस एवं ताओ, तीनों धर्मोंके लिए मुक्तद्वारकी उदार नीति अपनायी थी । नानचाओ-राज्यमें बौद्धधर्मका यह पहला उल्लेख मिलता है । तत्कालीन थाई प्रेत पूजक थे । वहाँका राजा कोलोफेग आठवी शताब्दीमे चीन सम्राट्के यहाँ गया था ।

उसने राजधानी नाली फू बनाया था। चीनमें राजाका यथोचित सम्मान नहीं हुआ। अप्रसन्न लौटा। चीनपर आक्रमण किया। चीनके ३२ ग्राम एवं नगर ले लिये। चीनी सेनाको तीन बार परास्त किया। सन् ७५४ में तिब्बतसे सन्धि की। चीनपर पुनः आक्रमण किया। चीनकी अत्यन्त क्षति हुई।

गान्धार साम्राज्य—सन् ७७० में कोलो फंगका पौत्र रमोग्न राजा हुआ। तिब्बतकी सेनाके साथ उसने चीनपर आक्रमण किया। आक्रमण सफल न हुआ। चीनसे सन्धि कर ली। तिब्बतपर आक्रमण किया। १८ ग्रामोंपर अधिकार कर लिया।

सन् ८२० में उसके उत्तराधिकारीने चीनपर आक्रमण किया। बहुतसे कलाकारोंको पकडकर अपने देशमें लाया। सन् ८५० में उसने गान्धार-सम्राट्की उपाधि धारण की। चीनके तांग सम्राट्को बुरा लगा। गान्धार सम्राट्पर कई बार चीनी सेनाने आक्रमण किया। चीनको सफलता न मिली। सन् ८५८ मे गन्धारने चीनके टानकिन प्रदेशपर आक्रमण कर ले लिया। सन् ८६३ मे एनामपर आक्रमण किया। अधिकार स्थापित किया। कुछ समय पश्चात् चीनने उसे पुनः ले लिया।

गान्धार-चीन मैत्री—चीनी इतिहासमे श्याम देशका नाम नानचाओ मिलता है। चीनी गाथाके अनुसार गान्धारके सिंहासनपर राजाफा बैठे। उसने चीनसे सन्धि कर ली। सन् ८८४ में उसके पुत्रने चीन सम्राट्की राजकन्यासे विवाह किया। वैवाहिक सम्बन्ध होनेपर भी चीन अपनी पराजय भूल न सका। प्रथम सुग सम्राट्के सेनापतिने गान्धार-विजयकी योजना बनायी। किन्तु सम्राट्ने गन्धारकी वीरता एवं रणकौशलकी याद दिलाकर आक्रमण रोक दिया। उन दिनो गन्धार इतना शक्तिशाली हो गया था कि सीमान्त देशोंको उसकी ओर आँख उठानेका भी साहस न होता था।

गान्धार साम्राज्यका अन्त—बारहवीं शताब्दीतक साम्राज्य खूब फला-फूला। कुबला खॉका उदय हुआ। उसने चीनपर आक्रमण करने

की योजना दक्षिणसे बनायी। मंगोलियामे निग द्विसा स्थानसे एक लाख सैनिकोंके साथ चला। वह हिमालय एव क्यून लू पर्वतमालाओंको लॉघता यून्नानकी सीमा यागसी क्याग नदीके तटपर पहुँचा। गान्धारको समर्पणके लिए कहा। गान्धार सम्राट्ने अस्वीकार किया। घमासान युद्ध हुआ। सम्राट् परास्त हुआ। गान्धारपर कुबला खॉका कब्जा हो गया। सन् १२५३ मे भारतीय थाई गान्धार साम्राज्यका लोप हो गया। थाई जाति आत्मरक्षार्थ पश्चिम तथा दक्षिणकी ओर बढ़ी। उसमे शक्ति न रह गयी थी कि उत्तरमे चीन तथा पूर्व दक्षिणमे कम्बुज साम्राज्यमे प्रवेश कर नवीन राज्य संघटित करती।

थाई विघटन—थाई जातिकी एक शाखा दक्षिणकी ओर बढ़ी। श्याम देश आबाद किया। दूसरी शाखा पश्चिम बर्मामे प्रवेशकर शान कहलायी। कुछ समूह लाओस, टानकिन एवं मीकागके बीचमे आबाद हुए। लाओस राज्यके पश्चिम तथा श्यामकी उत्तरी सीमापर चियाग सेनमें भी गये। चीग माई नगरकी स्थापना की। चियाग थाईका शाब्दिक अर्थ है नवीन नगर। उत्तरी थाई जातिकी सीमा कम्बुज अधीनस्थ मध्य श्यामतक फैली थी।

मोन तथा क्मेर साम्राज्यमे थाई अल्पसंख्यक थे। वे अनेक छोटे-छोटे राज्योंमे विभक्त थे। भारतीय रियासतोके तुल्य क्मेर तथा मोन राज्योंमे फैले थे। मध्य श्याममे रहनेवाले थाईको थाई नोई अर्थात् छोटे थाई तथा बर्माकी शान जातिको थाई घे, अर्थात् बड़े थाई कहते थे। वास्तवमें थाई नोई तथा थाई घे दोनों ही श्यामके उत्तरीय सीमान्त भागसे आये थे।

भारतीय नाम

विदेह राज्य एवं मिथिला—थाई लोगोंके मूल प्रदेशके एक भागका नाम विदेह राज्य था। उसकी राजधानी मिथिला थी। वहाँ भारतीय लिपि जैसी एक लिपिका प्रयोग होता था। कुछ विद्वान् गान्धार

राज्यको ही विदेह राज्य मानते हैं।

अवलोकितेश्वर—यून्नान प्रदेशमें गाथा प्रचलित है—भारतसे अवलोकितेश्वर स्वयं पधारे थे। उन्होंने जनताको बौद्धधर्मावलम्बी बनाया।

चन्द्रगुप्त—नवीं शताब्दीके मध्यकी गाथा है। मगधमें उत्पन्न हुए हिन्दू सन्त चन्द्रगुप्त भारतसे यून्नानमे आये थे। उनकी प्रसिद्धि मागध नामसे हुई।

पिप्पल गुहा-गृद्धकूट—यून्नानमे पिप्पल गुहा एवं गृद्धकूट नामके पर्वत थे। भगवान् बुद्धकी जीवन-घटनाके साथ उनका सम्बन्ध है। उस स्मृतिमें दोनोंका नामकरण किया गया था। बहुतसे स्थानोका नाम भगवान्के जीवन-घटना सम्बन्धी स्थानोके नामपर रखा गया था।

भारतीयोंका आगमन

शाक्य मुनि—दसवीं शताब्दीके एक चीनी पर्यटकने लिखा है। यून्नानमे जनश्रुति है। शाक्य मुनिने यून्नानके ताली झीलके तटपर बुद्धत्व प्राप्त किया। ग्यारहवीं शताब्दीके दो घण्टे यहाँ मिले है। उसपर संस्कृत एवं चीनी, दोनो भाषाओमे लेख उत्कीर्ण है। अतः स्पष्ट है कि उस कालमे संस्कृत एवं चीनी दोनों भाषाएँ वहाँ प्रचलित थीं।

कोशाम्बी राज्य—चीनी लेखक तात्सीन एक और राज्यका वर्णन करता है। उसका कहना है कि मणिपुर तथा आसाम सीमान्त पर्वत-मालाके पूर्व तथा चिन्दविन नदीके १५० मील और दक्षिण तथा इरावदी और सालविनकी अन्तर्वेदीमे एक सघ राज्य था। उसका नाम कोशाम्बी था। इसका दक्षिणी भाग बर्माका शान राज्य था। इनके अतिरिक्त अलवी राष्ट्र, स्वर्णग्राम, उनमार्ग, शिला, योनक राष्ट्र, हरि पुंजय आदि छोटे-छोटे राज्य थे।

ब्रह्म राज्य—मिकाग (माँ गंगा) नदीके दक्षिणी भागमें ब्रह्म राज्य था। उसके प्रथम राजाका नाम ब्रह्मा (प्रोम) था। उसने नवी शताब्दीमें चिगराईसे जयप्रकार नगरकी स्थापना की थी। यहाँ गुप्तकालीन मूर्तियोके

मिलने तथा पाली लेखकोंके लेखसे प्रकट होता है कि थाई यद्यपि चीनी जातिके थे, परन्तु वे चीनकी अपेक्षा भारतसे अधिक प्रभावित हुए। उनका शरीर चीनका था। आत्मा भारतीय थी। चीनी वंश परम्परा तथा भारतीय संस्कृतिने उन्हे एक नयी थाई जातिमे परिणत कर दिया था।

हिन्दू आगमन—थाई जातिका इतिहास श्याममे तेरहवी शताब्दीके आस-पास आरम्भ होता है। वे कुवलाखॉके आक्रमणसे विघटित होकर समीपवर्ती देशोकी ओर बढ़े। उसके पूर्वका इतिहास शुद्ध हिन्दू औपनिवेशिकताका इतिहास है। थाई भाषा, संस्कृति, सभ्यता एव धर्मका भौतिक ज्ञान होनेके लिए हिन्दुओके बारह सौ वर्षोंके इतिहासपर दृष्टि डालना असगत न होगा!

खनन-कार्योंसे प्रकट होता है कि भारतीय पहली शताब्दीके पूर्व ही श्याममें आ चुके थे।

उन दिनो सुवर्ण द्वीप किंवा भूमिकी संज्ञा समस्त दक्षिण-पूर्व एशियाके निमित्त सम्बोधित होती थी। भारतसे वहॉ जानेके लिए पॉच जलमार्ग मुख्य थे। तीन बन्दरगाह विशेष ख्याति प्राप्त थे। कृष्णा नदीके मुहानेपर अमरावती पहला स्थान था। वहॉसे भारतीय मर्तवान (बर्मा) जाते थे। पहुंचकर दक्षिण. पूर्व तथा उत्तरकी ओर बढ़ते थे। तीन पगोडा दर्रासे श्याममे प्रवेश करते थे।

दूसरा मार्ग ताम्रलिप्त (तामलुक) बन्दरगाह था। बंगालकी खाड़ीको पारकर भारतीय मर्तवान, अकपाव तथा अराकान पहुँचते थे।

पल्लवकालीन तृतीय मार्ग काचीपुरमूसे था। यहॉसे जहाज चलकर मरगुई, तनासरिम, ताकुआ या पकेट द्वीपसमूह तथा त्राग होते हुए भारतीय श्यामके मलाया भागमे पहुॅचते थे। ताकुआमे प्रारम्भिक कालके चीन तथा परसियन मिट्टीके पात्र मिले हैं। भारतीय मन्दिरोका भग्नावशेष भी प्राप्त हुआ है।

चतुर्थ मार्ग बंगालकी खाड़ी पार करता खुले समुद्रसे दक्षिणकी ओर बढ़ता जावा, सुमात्रा एवं बोरनियो पहुँचता था।

पाँचवाँ मार्ग सिंगापुरसे होता बंकांक, कम्बुज, चीन सागर पार कर चम्पा पहुँचता था। उत्तर एवं पूर्वी श्याममे यूनानी तथा रोमके बने कांस्य लैम्प पाम्पे शैलीके प्राप्त हुए हैं। इस प्रकारके लैम्प दौंग-दुआगके खनन-कार्यमें प्राप्त हुए हैं। वे इस बातके साक्षी हैं कि भारतके द्वारा रोम तथा यूनानकी बनी वस्तुएँ श्यामतक पहुँचती थीं।

उस समयकी बुद्धकी प्रतिमाएँ नही मिलतीं। प्रापेथममे धर्मचक्र-प्रवर्तन प्रतीक सारनाथ तुल्य चक्र मिला है। उसमे हरिण भी बने है। साँची आदि स्थापत्य एवं भास्कर्य-कला जिस समयकी है उस समय बुद्धकी मूर्ति बनानेका चलन नहीं था। बुद्धका बोध सांकेतिक पुष्प, हाथी, चक्र आदिसे किया जाता था। बौद्ध जगत्का यह वह काल था जब मूर्तिपूजा-निषेध था। बुद्धकी मूर्ति बनाना तथा उसकी पूजा करना बहुत बादमे आरम्भ हुआ है। अतएव इस तर्कके आधारपर कहा जा सकता है कि श्याममे उस समय भारतीय आये थे जब बुद्धकी मूर्तिपूजा भारतमे आरम्भ नही हुई थी। वह काल ईसाके पूर्वका काल है। अस्तु, भारतीय श्याममे ईसाके पूर्व अथवा उसके आस पास आ गये थे।

पालीमे श्यामका सम्बोधन सुवर्णभूमि एवं दक्षिण देशमे बौद्ध उपनिवेशके नामसे किया गया है। फ्रा पेथमसे २० मील दूर योंग तुकमें खुदाईका कार्य किया गया है। वहाँ मन्दिरोका भग्नावशेष तथा गमनशील बुद्धकी खड़ी मूर्ति मिली है जो पहली शताब्दीकी है। वह प्रमाणित करती है कि जिस समय भारतमे बुद्ध-मूर्तियाँ महायान सम्प्रदायके प्रभावसे बनने लगी उसी समय श्याममे भी प्रतिमाएँ बनीं।

हिन्दूधर्मका प्रचार

योंग तुकमें अमरावती शैलीकी काँसेकी ढली मूर्तियाँ मिली है। गुप्त-शैलीकी भास्कर्य-कला समस्त देशमें फैली मिलेगी। श्रीदेव (श्री तेप)में, पंचपुरी (पचवरी)मे चौथी शताब्दीकी एक यक्षिणीकी मूर्ति मिली है। यक्ष, किन्नर आदि भारतीय मूर्तिकलाकी मुख्य विषय-वस्तु थे। वही

श्याममे इस कालमें मिलती है।

विष्णु एवं शिव—चौथी शताब्दीका संस्कृत शिलालेख मुंग श्री तेप (देव) पंचवरी (पंचपुरी)के समीप मिला है। वहींपर विष्णु एवं शिवकी भी तत्कालीन मूर्तियाँ प्राप्त हुई हैं। गुप्त-शैलीकी यक्षिणी-मूर्ति भी मिली है। स्पष्ट है कि भारतीय हिन्दूधर्मका प्रचार श्याममे बहुत पहले हो चुका था। बौद्धधर्म भी कम्बुजके समान हिन्दूधर्मके साथ ही साथ विकसित हो रहा था। दोनों एक-दूसरेके विरोधी नहीं, पूरक थे।

श्यामका क्रमबद्ध इतिहास पाँचवी शताब्दीसे मिलने लगता है। सन् ४५७-६५७ तक मोन जातिका द्वारावतीमे राज्य था। मोन हिन्दू थे। मोनके पश्चात् क्ष्मेर अर्थात् हिन्दू कम्बुजका शासन श्यामपर ९५७-१२५७ तक रहा। मलय प्रायद्वीप सुमात्राके श्री विजय राज्यके अन्तर्गत ६५७-११५७ तक था। यह वह काल था जब थाई जाति दक्षिणी चीनसे आकर शनैः-शनैः श्याममें आबाद होने लगी थी। अतएव थाई देशका १३वी शताब्दीतकका इतिहास भारत द्वारा प्रभावित इतिहास है।

द्वारावती राज्य—द्वारिका का नाम ही द्वारावती है। यह भारतकी सप्तपुरियोमें एक पुरी है। द्वारावती राज्य मध्यथाईलैण्डमे विकसित हुआ था। यह राज्य एक समय कम्बुजसे बंगालतक फैला हुआ था। इसका काल सन् ४५७ से ६५७ तक था। हुएनत्सागने अपने पर्यटनके सम्बन्धमें हिन्दू मोन राज्य द्वारावतीका वर्णन किया है। राज्यके संस्थापक मोन हिन्दू थे। उत्तरी श्याम मोन हिन्दू उपनिवेश था। राजधानी लवपुरी थी। नक्राण पेथम, श्री देव तथा याग तुककी खोदाई से सिद्ध हुआ है कि चौथी तथा पाँचवीं शताब्दीमे यहाँ भारतीय उपनिवेश था। द्वारावतीका राज्य उत्तरमे हरिपुजप, पश्चिममे रत्नपुरी (रतवरी) और पूर्वमे कम्बुजतक फैला था। लवपुरीमे मोन भाषाके अभिलेख प्राप्त हुए हैं। सन् ६३८ तथा ६४९ मे द्वारावतीका राजदूत चीन सम्राट्के यहाँ गया था।

लवपुरी—लवपुरी बंकाकसे ८० मिल उत्तर स्थित है। वह मोन संस्कृतिका केन्द्र था। अयुध्यामे श्यामकी राजधानी बनी तो उसे ग्रीष्मकालीन

राजधानी बननेका सौभाग्य प्राप्त हुआ था। गाथा है कि लवपुरीकी नींव ५७५ मे पड़ी थी। स्थापना चम्पादेवीने की थी। लवपुरीका स्थापत्य एवं वास्तु-निर्माण-कार्य १०वीं शताब्दीके क्ष्मेर-स्थापत्यसे मिलता है। एगकोर वाट तथा थामकी छाया स्थापत्य एवं वास्तुकलापर पड़ी है। मीनाम नदीके नीचेकी ओर सुखोदया (सुखो थाई) के दक्षिण लवपुरी थी। उसपर पूर्वकालमे कम्बुजका आधिपत्य था। चीनी इतिहास-कारोंने लवपुरीका नाम लो हू दिया है। एगकोरमें कम्बुज सैनिक जहाँ भित्तिपर उत्कीर्ण है वहीं लवकी सेना भी उत्कीर्ण है। दूसरे स्थानोंमें जहाँ श्यामकी सेना उत्कीर्ण है उसका सम्बोधन श्यामकूटसे किया गया है। अतएव दोनों भिन्न राज्य थे।

लवपुरीका महाधातु मन्दिर क्ष्मेर मन्दिर-शैलीसे मिलता है। यह नगरके मध्यमे स्थित है। यदि कहा जाय कि भारतके शिवालय शैलीके मन्दिरसे वह अधिक मिलता है तो अतिशयोक्ति न होगी। गर्भगृहके सम्मुख मण्डप है। भारतीय मन्दिरोंके तुल्य तीन ओर गर्भगृहमे द्वार है। उसके शिखरकी शैली भारतीय पट्टडकल देवालयके अनुरूप है।

यहाँ फ्रा-प्राग पतका दूसरा मन्दिर भी प्रसिद्ध है। तीन शिखराकार मन्दिर एक पंक्तिमें खड़े हैं। सम्भव है कि ब्रह्मा, विष्णु एवं शिवके मन्दिर मूलरूपमे रहे हों। इसकी शैली तथा महाधातुकी शैली पूर्णतया भारतीय मन्दिरोसे मिलती है। इसपर भारतीय शैलोकी ऋषियोकी मूर्तियाँ बनी हैं। मन्दिरोंका जीर्णोद्धार राज्यकी माँग है। लवपुरीकी सड़के अच्छी हैं। सैनिक छावनी है। सड़कके दोनो ओर दूकान तथा इमारतें हैं। बंकाकके पश्चात् सबसे अधिक श्यामी सेना यहीं रहती है।

क्ष्मेर लोगोने इसे अपने राज्यकी राजधानी बनाया था। थाई लोगोंके अयुध्या राज्यकालमे राजा नरायने इसे पुनः ग्रीष्म राजधानी बनाया था। यहाँ राजप्रासाद भी है।

हाथियोंके रहनेके लिए विजयनगर राज्यतुल्य हथसार भी बना था। उसमे आजकल संग्रहालय है। सहस्रों बुद्ध प्रतिमाएँ रखी हैं। वे अधिकतर

यहाँके भग्नावशेषोसे प्राप्त हुई हैं। कुछ अन्य स्थानोंसे भी लाकर संगृहीत की गयी है।

यहाँ तीन पगोडा है। एक हिन्दू मन्दिर भी है। मन्दिरपर अगणित बन्दर एकत्र रहते है। इस मन्दिरको देखकर काशी और अयोध्याकी याद आ आती है। पर्यटकोंके लिए यही यहाँका सबसे बड़ा आकर्षण है। लवपुरी क्ष्मेर साम्राज्यके अन्तर्गत रही। उसके एक प्रदेशकी राजधानी थी। ग्यारहवीं शताब्दी सूर्यवर्मा द्वितीय (कम्बुज) का शिलालेख मिला है। यह नगर मिनाम नदीके पूर्वीय तटपर था।

हरिपुञ्जय—वर्तमान लम्पुनका प्राचीन नाम हरिपुञ्जय था। चिंग-मार्टसे दक्षिण पूर्व १७ मील दूर कुआग नदीपर स्थित है। प्राचीन थाई गाथानुसार क्ष्मेर रानी चम देवीने उसे बसाया था। सातवीं शताब्दीके मध्य वह लवपुरीसे आयी थी। उनके साथ ५०० महापण्डित लोग आये थे। उन्हीके साथ मोन सभ्यता तथा संस्कृति यहाँ आयी। लम्पुन लम्पंग तथा प्री नगरमें जो लम्पगसे ६० मील दूर है, अभीतक मोन परम्परा, प्रचलित है।

राजचिह्न हंस—मोन राजचिह्न हंस था। आजभी देवस्थानोंके झण्डोंके कलशके स्थानपर हस लगाये जाते है। साधु बोधिरमसी (साधु श्रीबोधिराम) चमदेवीकी गाथा 'चमदेवी वश'में कही है। साधु रन्त वन महा विहारने 'जिनकमलिनी' पुस्तकमे चमदेवीकी गाथा लिखी है। इससे पता चलता है कि चमदेवी लवपुरीके राजाकी कन्या थी। उनका विवाह दक्षिणी बर्माके रामनगरके मोन राजाके साथ हुआ था। वह सन् ६५५ मे राज्य एव पतिको त्याग कर धर्म-प्रचारार्थ उत्तरी श्यामकी ओर बढ़ीं। उस समय वे गर्भिणी थीं। लम्पुनमे उन्हे २ पुत्र हुए। एक लम्पुन तथा दूसरा लपग (केलाग) का राजा हुआ। श्यामके दोनों ही सास्कृतिक केन्द्र हुए।

द्वारावती कला—द्वारावती कलाकी अपनी शैली है। कलाका जन्म बुद्ध धर्म द्वारा हुआ। बुद्ध धर्मीय कला लाक्षणिक कला है। कला-

कार महामानवकी कल्पना अपनी कलाकृतमें करता है। पूर्व अर्थात् प्राचीका कलाकार अपने लिए कोई प्रतिमान किंवा माडल नहीं लेता। वह स्वयं कल्पना करता है। उस कल्पनाकी पीठिकामे जीवन आदर्श रहता है। भौतिक पदार्थोंके सहारे उन्हें मूर्त करना चाहता है। पश्चिमका कलाकार किसी प्रतिमान किंवा माडलका अनुकरण करता है। प्राच्य एवं प्रतीच्यके कलाकारोंमें यह सबसे बड़ा अन्तर है। मानव प्राणीका मूल स्रोत एक है। समुद्रका मेघ जल नदियों नालोंमें होता हुआ पुनः समुद्रमें मिल जाता है। वही बात मानव प्राणीके लिए चरितार्थ होती है। मानव अनेक संस्कृति, सभ्यता, शैलियोंमे बढ़ता चलता है। देखनेमे वह मूल जन-स्रोतसे भिन्न प्रकट होता है। वास्तवमे उसका स्थाई भाव एक है। उसी प्रकार भिन्न-भिन्न देशों एवं परिस्थियोंमें अनेक रूपोमें प्रकट हुई है। किन्तु उसके पीछे बैठनेवाला वह मानव एक ही है। वही कलाकी आत्मा है। चीनी कलाकार उत्कृष्ट होते हुए भी जड़ पदार्थोंमें आध्यात्मिकता न भर सके। कारण यह है कि उनके धर्म एवं दर्शनका कोई एक निश्चितरूप विकसित न हो सका। बौद्ध जगत्की कलातुल्य प्रतिमाओंमे आध्यात्मिक सजीवता न आ सकी। ग्रीक और रोमके कलाकार जड़ पदार्थोंमे भौतिक सौन्दर्य एवं शरीर विन्यास दे सके। वे शरीर बना सके। परन्तु उसमें बोलती आत्मा न थी। प्राच्य कलाकारोंने अपनेसे महत्की कल्पना कर उसे साकार एवं मूर्तरूप करना चाहा है। प्रतीच्य कलाकार जड़ पदार्थोंमे जड़ सौन्दर्य उरेहनेमें ही उलझा रहा। द्वारावती एवं क्ष्मेर कलामें कम अन्तर है। कुछ विद्वानोंका मत है कि बौद्ध कलाको क्ष्मेर लोगोंने द्वारावतीसे लिया है। द्वारावती कला प्रारम्भिक कम्बुज कलासे मिलती है। वास्तवमें मोन क्ष्मेर कलाका मूल स्रोत गुप्तकालीन कला थी। बुद्धकी प्रतिमा तथा उनके जीवन सम्बन्धी घटनाओंके मूर्त करनेकी भावनाके आधारपर साहित्य, मूर्ति एवं चित्रकलाका उदय हुआ। उनपर क्ष्मेर प्रभाव है। वे गुप्तकालीन मूर्तिकलाके अनुरूप हैं। स्थापत्यमे चीनका प्रभाव अधिक है। रगीन खपड़ैल और मुलम्मा किये आलंकारिक रूपांकन,

निर्माणमे लकड़ी तथा ईंटोका प्रयोग चीनी प्रभाव परिलक्षित करता है। चीग सेन, चीग भाई, मुअंग कांग, मुअंग साओ आदि उत्तरी-पश्चिमी थाई देशमे थे। वे क्ष्मेर साम्राज्यके अधीन नहीं हुए थे। उनके स्थापत्य एवं भास्कर्य कलापर बर्माका अधिक प्रभाव है। अध्ययन करनेपर मैं इस परिणामपर पहुँचा हूँ कि धार्मिक कला भारतीय धर्म होनेके कारण भारत द्वारा तथा भौतिक स्थापत्य-कला चीनके रहन-सहनसे मिलनेके कारण चीन द्वारा प्रभावित हुई थी।

धार्मिक प्रतिमाओकी मुखाकृति आर्य है। उन्हें गुप्तकालीन कलाका परिणाम कहा जा सकता है। उनपर मगोल शरीर-रचना एवं आकृतिकी छायातक नहीं आने पायी है। समय बीतनेके साथ ही मंगोल मुखाकृतिकी छाया कलाकृतिमे आने लगी थी। समुद्रतटसे दूर घोर जगल एवं पर्वतोंमें भी इसी प्रकारकी प्रतिमाएँ मिली हैं। वे पापाण एव कॉसे, दोनोकी हैं। भारतीय मिशनरी आजकलके ईसाई मिशनरियोसे कम परिश्रमी नहीं थे। उन्होंने केवल धर्म किंवा एक सिद्धान्त प्रचार निमित्त अपना जीवन उत्सर्ग किया था। उनमे भारतीय राजनीतिक प्रचार किंवा राज्यलिप्साकी गन्धतक नहीं आ पायी थी।

दितिराज मन्दिर—मोन राज दितिराजका निर्माण किया हुआ वाटकुकुट लम्पुनमे है। इसका निर्माणकाल ११२०-११५० सन् कहा जाता है। पोलोन्नारवाके सतमहला प्रासादतुल्य है। दोनों ही सात मंजिलके हैं। दोनोकी शैली एक ही है। एक दूसरेकी नकल मालूम पड़ते हैं। प्रत्येक ताखेमे बुद्धमूर्तियाँ प्रतिष्ठित हैं। प्रत्येक खण्डके प्रत्येक दिशामें खड़ी मूर्तियाँ हैं। वर्गाकार रचना है। अधिष्ठानसे उठता शिरोभाग पतला होता गया है। सातवेपर मूर्ति नहीं है। कलशके स्थानपर शिखर-सा चौकोर चैत्य बना है। इसका रचनाकाल बारहवीं शताब्दी है। क्ष्मेर आधिपत्य मोन राज्यपर हो चुका था। दितिराजका पुत्र अदितिराज था। सन् ११५० से ११७० के मध्य उसने लम्पुनका प्रसिद्ध स्तूप निर्माण कराया था। सन् १४४७ मे त्रिलोकराजने उसका जीर्णोद्धार थाई-शैलीपर

कराया था।

फ्रा योतम नगर बंकांकसे ३० मील पश्चिम है। दक्षिण रेलवे लाइनपर महत्त्वपूर्ण स्टेशन है। यहाँका स्तूप ३४७ फुट ऊँचा है। रंगूनके प्रसिद्ध श्वीदिगान पगोडासे भी ५० फुट ऊँचा है। इसकी निर्माण-शैली सिंहली दगोवा है। क्ष्मेर लोगोकी शिखर-शैली सम्भवतः इसीसे अनुप्राणित हुई है। राजा यागकूट तथा चूला लोगकर्णने इसका जीर्णोद्धार कराया है। गाथा है कि दो सहस्र वर्ष पूर्व यही प्राचीन नगर जै श्री अथवा श्री चै था। काशीके शोण तथा उत्तर भिक्षु अशोकके समयमे यहाँ धर्म-प्रचारार्थ आये थे। हो सकता है कि उनकी स्मृतिमें इसकी रचना की गयी हो।

क्ष्मेर साम्राज्यका राजनीतिपर प्रभाव

रमण देश—मोन हिन्दू जातिका एक और दूसरा राजसंघ था। उसका नाम रमण देश था। यह छोटे-छोटे राज्योका संघ था। दक्षिणी वर्माके मोन मीनामकी दक्षिणी उपत्पकामे फैल गये थे। ग्यारहवीं शताब्दी-का एक शिलालेख मिला है। उससे प्रकट होता है कि जातिका नाम 'रमण' और देशका नाम रमण देश था। रमण शब्द मोनका अपभ्रंश है। मोनको कहीं तैलगी भी कहते है। निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि रमण देशका उपनिवेश तेलंगानाके द्वारा उपनिवेशित था।

क्ष्मेर साम्राज्य—मोन जातिका राज्य श्याममे ४ शताब्दीतक अक्षुण्ण बना रहा। वह आठवीं शताब्दीमे कम्बुजकी बढ़ती शक्तिके आगे ठहर न सका। क्ष्मेरके अधीन द्वारावती आ गया। तेरहवीं शताब्दीतक श्याम कम्बुजके अधीन रहा। इस कालमे राजनातिक परिवर्तनके अतिरिक्त सामाजिक जीवनमे विशेष परिवर्तन नहीं हुआ। क्ष्मेर सभ्यता शुद्ध भारतीय सभ्यता थी। मोन सभ्यता भी भारतीय थी। दोनोंकी धर्म एव परम्परा एक ही थी। थाई जीवन एवं कलापर कम्बुज कला एवं जीवनका विशेष प्रभाव पड़ा। इस कालमे लवपुरी फ्रा पाथम एवं पूर्व कोरातमे पाषाण स्थापत्यकलाका विकास हुआ। पाषाण एव कांस्य मूर्तियाँ क्ष्मेर शैलीपर बनीं।

भवन-निर्माण-कला भी चीनकी अपेक्षा कम्बुजकी अनुकरणशील हुई। क्ष्मेर राज्य श्याममे ९५७—१२५७ तक रहा।

सुखोदया—तेरहवीसे पन्द्रहवीं शताब्दी अर्थात् १२५७ से १४३८ तक सुखोथाई (सुखोदया) काल कहा जाता है। उसके पूर्व हिन्दू उपनिवेश, मोन एवं क्ष्मेरकाल श्याममे विकसित हो चुके थे। उक्त तीनो कालोमे थाई जातिकी अपेक्षा श्यामके राजनीतिक जीवनमे मोन एवं क्ष्मेरका भाग अधिक था। सुखोदयाको कतिपय लेखकोने हरिपुजय उत्तरी श्यामसे भी सम्बोधित किया है। कुछ लोग लम्पुनको हरिपुजय भी कहते है।

स्वर्णलोक, सुखोदया, सज्जनालय आदि जनपदोमे क्ष्मेर सभ्यता अपनी चरमसीमापर पहुँच गयी थी। पितृसू लोक (पितृलोक) मे लाओथाईका राज्य ग्यारहवीं शताब्दीमे स्थापित हुआ था। इस समयकी कास्य मूर्तियाँ श्री लंकाकी कलाकी अनुहारी हैं। क्ष्मेर लोगोके समान थाई ईंटोका प्रयोग लकड़ीके मकानोंके स्थानपर करने लगे थे। इसी कालसे थाई कला अपना मौलिक रूप पकड़ने लगी। क्ष्मेर भाषा एवं शब्दोंका मिश्रण थाई भाषामें होने लगा।

कुबलाखाँके आक्रमणसे थाई विघटित हुए। मूल स्थान छोड़कर जैसा पहले वर्णन किया गया है, वे दक्षिण, पश्चिम एवं पूर्वकी ओर बढ़े। यून्नानका गान्धार राज्य विघटित हो गया। भारतीय सभ्यता एव सस्कृतिकी सबसे बड़ी देन है कि उसने किसी विपन्न किवा विदेशी जातिका सर्वदा स्वागत ही किया है। जिस प्रकार थाई लोग आसाम, शान, अराकान आदि स्थानोमे गये उसी प्रकार वे श्याममे भी बढ़े। क्ष्मेर एवं मोन जातिने उनका विरोध नही किया। वे विस्तृत क्षेत्रमे फैलते गये। पूरे श्याममे फैल गये। श्याम उनका हो गया। मोन तथा क्ष्मेर जाति एक ही धर्म एवं विचारधारा होनेके कारण उनमे मिल गयी। इस महान् मिश्रणका परिणाम वर्तमान थाई जाति है।

प्रथम थाई राज—श्याममे प्रथम थाई राज सुखोदया नामसे सम्बोधित होता है। सुखोदया मूल संस्कृत शब्द है। उसीका अपभ्रंश

श्यामी नाम सुखो थाई है। अपने मूल देशसे उद्वासित होकर राज्य स्थापित किया तो उनके सुखका उदय हुआ। कुबलाखाँके दुःखमय कालके पश्चात् सुखमय काल आया। उस स्मृतिमें ही सम्भवतः सुखोदया नाम रखा गया होगा।

सुखोदयाको लगभग दो शताब्दीतक राजधानी होनेका गौरव प्राप्त है। कालान्तरमे वह दूसरे थाई राज्य अयुध्यामे विलीन हो गयी।

इन्द्रादित्य—श्यामके राजनीतिक जीवनकी सबसे महत्त्वपूर्ण घटना सुखोदयामें थाई राज्यकी स्थापना है। इन्द्रादित्यने लगभग तेरहवीं शतीके मध्य (१२५७)में राज्यकी स्थापना की। उन दिनों श्याम कम्बुजके अधीन था। उसने कम्बुजसे विद्रोह किया। एक कम्बुज सेनापति इन्द्रादित्यको दबानेके लिए भेजा गया। वह पराजित हुआ। इन्द्रादित्यने अपना राज्य चारों ओर बढ़ाया। उसके यशस्वी कनिष्ठ पुत्र रामक्षेमगने उसकी बड़ी सहायता की। उसकी मृत्युके पश्चात् उसका दूसरा पुत्र राजा हुआ। कुछ वर्षो पश्चात् राम कम्हेग (क्षेमंग) राजा बना।

राम—रामने अपने राज्यकालका विस्तृत विवरण छोड़ा है। उसने जिन देशोपर विजय प्राप्त की थी उनकी विस्तृत तालिका भी दी है। उसका राजत्वकाल सन् १२८३ से १२९१ तक माना जाता है। उसने लगभग १६ राज्योंको जीतकर थाई राज्य सुखोदयामें मिलाया। उसके विजित देशोंमें दक्षिण बर्मामे हैसावती (पेगू),पश्चिम मोन देश (मर्तवान), मलाया प्रायद्वीपके नकोण श्री समर्थ (नखोम सी थमर्ट)का भी नाम है। वास्तवमे थाईका यह प्रथम राज्य संघटित हुआ था। उसके राजत्वमें समस्त वर्तमान थाई देश था।

चीनसे रामका बड़ा अच्छा सम्बन्ध था। उसने पहली चीनयात्रा कुबलाखाँके जीवित अवस्था सन् १२९४ में किया था। दूसरी यात्रा सन् १३०० में किया था। दूसरे यात्रा-कालमें कहा जाता है कि उसने एक चीनी राजकुमारीसे विवाह भी किया था।

सज्जनालय—उसने देशकी एक दूसरी राजधानी सज्जनालयमें

बनायी। सज्जनालयको कुछ लोग स्वर्णका लोक भी कहते हैं। यह स्थान घने जंगलमें उजाड़ पड़ा है। प्राचीनकालके गौरवपूर्ण कालका बहुत कम अवशेष रह गया है। मीयोम नदीके पश्चिमीय तटपर वर्तमान नगरसे १२ मील उत्तर स्थित है। दो राजधानियोके नामपर राज्यका नाम सज्जनालय सुखोदया भी पड़ गया। राज्य लाओस देशके लंग प्रवंगतक फैला था।

रामराजाका शासन-काल

रामका चरित्र—राम थाई देशका महान् राजा था। न्याय, शासन एवं मानवीय विकासोचित बहुत कार्य किये। देशकी कायापलट की। नवजागरणका मन्त्र फूंका। जहाँगीरके समान उसने एक घण्टा अपने प्रासादके बाहर लगा दिया था। पीड़ित किंवा ताड़ित व्यक्ति उसे बजाकर राजाको तुरत बुला सकते थे।

थाई लिपि—भारतीय लीपि एवं वर्णमालाके आधारपर प्रचलित कम्बुज लिपि ही श्याममे चलती थी। उसने उस लिपिमे थाई आवश्यकतानुसार सशोधन एव परिवर्तन कर एक राष्ट्रलिपि प्रचारित की।

राम बौद्ध धर्मावलम्वी था। उसने सुखोदयाको अनेक बौद्ध मन्दिरों, विहारों एव बुद्धप्रतिमाओंसे अलकृत किया। बुद्धग्रन्थके अध्ययन निमित्त जनताको प्रोत्साहित किया। उनका अध्ययन एवं पठन-पाठन सार्वजनिक कर दिया।

उसने सिहली थेरवादके आचार्य श्री संघराजको, जो उन दिनो श्री समर्थ नेकोणमें धर्मप्रचार कर रहे थे, आमन्त्रित किया। सुखोदयामें निवास करनेकी प्रार्थना की। उनके लिए नगरके पश्चिम प्रसिद्ध वाट अरणिका निर्माण कराया।

श्री सूर्यवंश राम महाधर्म राजाधिराज

रामके पश्चात् उसका पुत्र लोदय (लोथाई) सन् १३४० में सिंहासनपर बैठा। उसके समयमे देशकी क्या अवस्था थी, कहना कठिन है।

तत्पश्चात् उसका पुत्र लिदय (लूथाई) सन् १३४७ मे राजसिंहासनपर आरूढ़ हुआ। उसने अपनी उपाधि श्री सूर्यवंश राम महाधर्म राजाधिराज रखा।

अयोध्यापति भगवान् श्रीराम सूर्यवंशी थे। रामराज्य महात्मा गांधी-का स्वप्न था। भारतीय वाङ्मयमे वह आदर्श राज्य कहा गया है। सूर्यवशी बनकर राजाने अपना सम्बन्ध रामचन्द्रके सूर्यवशसे जोड़ना चाहा। सुखोदयाका राजधर्म बौद्ध धर्म था। यद्यपि हिन्दू धर्मका उसमें अधिक प्रभाव मिलेगा।

उसने विनय, अभिधर्म एवं ज्योतिष ग्रन्थोंका अध्ययन किया था। उसने बौद्ध होते हुए भी विष्णु एवं शिवकी मूर्तियाँ स्थापित कीं। श्री लंकासे सन् १३६१ मे एक बौद्ध भिक्षु बुलाया। बौद्ध धर्मके ग्रन्थोंका शोध करवाया। धार्मिक प्रवृत्तिके कारण राजकाजमे ढिलाई होने लगी। साम्राज्यकी रक्षा एवं व्यवस्थाके लिए उपयुक्त प्रमाणित न हुआ।

सुवनपुरी—आधुनिक उदोंगका सस्कृत प्राचीन नाम सुवनपुरी था। यह एक छोटा-सा राज्य था। उसने लवपुरी जीत ली। शक्ति बढ़ी। सुोखदयाके एक भागपर अधिकार कर लिया।

सुखोदया-कला—गाथा है कि एक राजाने बुद्धकी तीन मूर्तियाँ ढलवायीं। दो ठीक ढलीं। तीसरी मूर्ति ठीक नही उतरी। दूसरी बार पुनः ढाली गयी। सफलता न मिली। एक वृद्ध आये। उन्होंने ढालनेका उत्तरदायित्व लिया। मूर्ति ढाली गयी। साफ होनेपर भ्रूमध्यमे इन्द्रके वज्र-का चिह्न मिला। वृद्धका पता न चला। जनश्रुति है मूर्तिकार स्वयं इन्द्र था।

सुखोदया श्यामकी पुरानी राजधानी अयुध्याके समान महान् भग्नावशेषोका खण्ड़हर है। महाततके विशाल मन्दिरके स्तम्भ उपेक्षित खड़े हैं। मन्दिरके द्वारकी ऊपरी दहलीपर भगवान् बुद्धके परिनिर्वाणका दृश्य सुन्दर पत्थरकी नकाशीमे उत्कीर्ण है। श्री चम मन्दिर भी भग्ना-वस्थामें अपनी करुण कहानी सुनानेके लिए खड़ा है। मन्दिरकी

दीवालोंपर जातक कथाएँ आलेखोंके साथ उत्कीर्ण हैं। यहाँकी उत्कीर्ण अप्सराएँ श्री लंकाके सिगरियाकी अप्सरा तथा सेविकासे मिलती हैं।

बोस्टन संग्रहालयमे बुद्धमस्तक सुखोदया-कालका रखा है। क्ष्मेर शैलीसे शुद्ध श्यामी शैलीके परिवर्तनका काल वह कहा जा सकता है।

इन दिनों बर्माके मुख्य पगान अर्थात् अरिमर्दनपुरमे बुद्ध धर्म, चित्र, स्थापत्य एवं कलाका पुनरुत्थान हो रहा था। पगान राजा तथा कलाकारोंका निकट सम्बन्ध बंगालके पाल राजा एवं कलासे था। पाल-कलाका प्रभाव पगान कलापर पड़ा। पगान-कलाने सुखोदया-कलाको जन्म दिया। गुप्त एवं क्ष्मेर कलासे ही अबतक लोग परिचित थे। अतएव सुखोदया-कालमे श्यामी कलाने एक नवीन दिशाका अनुकरण किया।

अयुद्धा—सुवनपुरीके राजाने शक्तिशाली होनेपर अयुध्यामे अपनी राजधानी स्थापित की। अयुध्या बंकाकसे लगभग ४५ मील दूर है। यह एक द्वीपतुल्य भूखण्डपर बसी थी। उसका क्षेत्रफल १४ वर्गमील था। तीन नदियों अर्थात् पा-साक और मीनाम चाओ-प्याकी दो शाखाओंके संगमपर स्थित है। कहा जाता है कि प्राचीन द्वारावती अयुध्याके समीप थी। अयुध्याके साथ द्वारावतीके नामका भी प्रयोग किया जाता है। एक जर्मन डाक्टरने सन् १६९० मे अयुध्याको देखकर लिखा है—नगरकी नहरोके तटपर सड़कें बनी हैं। सड़कें सीधी हैं। कुछ चौड़ी हैं। सड़कोंके पीछे बगीचे लगे हैं। मन्दिरों तथा वाटोंकी संख्या अत्यधिक है। वे नगरमे चारो ओर फैले हैं। पश्चिमीय देशोंके गिरिजोंकी अपेक्षा बड़े तो नहीं हैं परन्तु उनका वाह्य रूप अत्यन्त भव्य एवं सुन्दर है। स्थान प्राचीन भास्कर, स्थापत्य एवं वास्तुकला देखनेकी दृष्टिसे सर्वश्रेष्ठ है। पुरातत्वविदोके लिए अध्ययनका स्थान है। यहाँ अनेक मन्दिर एवं भग्नावशेष हैं। छोटा बाजार है। एक संग्रहालय है। राजा यूथोंगने अयुध्या नगरकी नींव १४३८ के लगभग डाली थी। सन् १४७५ में चिंगमाईमे मूल पालीग्रन्थोंके संशोधनमे एवं नवीन साधिकारिक संस्करण बौद्ध ग्रंथोंका निकालनेके लिए एक सम्मेलन हुआ था। परिणामस्वरूप 'मंगल दीपनी', 'धम्मद' एवं 'अट्ठकथा' के

शुद्ध पाठका प्रकाशन किया गया। वह सन् १७८२ तक श्यामकी राजधानी बनी रही।

अयुद्धाके उदयमें सुखोदयाका अस्त था। सन् १४३८ में सुखोदया अयुद्धाके अन्तर्गत आ गया। सुखोदयाके राजाका पद-गौरव नगरके राज्यपालतक सीमित रह गया।

ऐरावत

इन्द्रके हाथीका रंग श्वेत है। उसे ऐरावत कहते हैं। भारतीय वाङ्मयमें इन्द्रका अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है। उनमें आदर्श राजाकी कल्पना की गयी है। उनका वाहन हाथी श्वेत ऐरावत है। दक्षिण-पूर्व एशियाके देशोंमे श्वेत हाथीका रखना सौभाग्यका चिह्न समझा जाता है।

सफेद हाथीका महत्त्व—थाई राजाके पास श्वेत हाथी था। अयुध्याके अन्तर्गत सम्पूर्ण श्यामका राज्य गठित हो गया था। राज्यमें कहीं भी हाथी मिलनेपर उसे राजाको देना अनिवार्य था। हाथी राजाको न देना राजद्रोह समझा जाता था। जिस राजाके पास जितने अधिक श्वेत हाथी होते थे वह उतना ही अधिक भाग्यशाली माना जाता था।

हाथीका दाँत, नाखून, आँख एवं रंगादि श्वेत होता है। सूँड़ तथा मस्तकपर कुछ गुलाबी छींटे होते हैं। इस प्रकारके श्वेत छींटे भारतीय हाथियोंके सूड़पर होते हैं। इन हाथियोंसे कोई काम नहीं लिया जाता। इनका पालन-पोषण आदरके साथ किया जाता है। महाचक्रपति राजाके समय एक श्वेत हाथी मिला था। कुछ कालमें उनकी सख्या ७ हो गयी। सातकी सख्या हिन्दू तथा बौद्ध धर्मानुसार शुभ मानी जाती है। किन्तु राजाके लिए यह अशुभ प्रमाणित हुई।. उनके कारण बर्मा तथा श्यामके बीच बीस वर्षीय युद्ध आरम्भ हो गया।

ऐरावत संघर्ष—बर्माके राजा तवंग स्लीवीटके पास एक भी श्वेत हाथी नहीं था। बर्माके राजाने पहले २ पुनः ४ हाथियोंकी माँग की। राजा चक्रपतिने नम्रतापूर्वक अस्वीकार किया। बर्माने श्यामपर आक्रमण

किया। सेना अयुध्याके प्राचीरतक पहुँच गयी। श्याम राजा सेनापतिकी हैसियतसे स्वयं युद्धस्थलमें आया।

रानीका अपूर्व साहस—राजा महाचक्रपतिकी रानी सर्पा थाई भी दूसरे हाथीपर आरूढ पतिके साथ युद्धस्थलमें आयी। राजा बर्मी सेनापतिके साथ एकाएक संघर्षमे फस गया। राजाका जीवन संकटमे पड़ा देख रानी अपने हाथी सहित दोनों योद्धाओके हाथियोंके बीच आ गयी। रानी वीरगतिको प्राप्त हुई। श्यामके इतिहासमें वीरागनाके रूपमें रानीका नाम बड़े आदरके साथ लिया जाता है।

पूर्वका पेरिस—अयुध्या उन दिनों दक्षिण पूर्व एशियाका सबसे समृद्ध एवं शक्तिशाली राज्य था। कम्बुज पतनोन्मुख हो चुका था। एगकोरकी प्रसिद्धि समाप्त हो चुकी थी। पुरानी बातें भूलकर लोग नयी बातोंकी ओर आकर्षित हो रहे थे। अयुध्या संस्कृति, सभ्यता एवं कलाकी केन्द्र हो गयी थी।

विदेशी शक्तियोंका प्रवेश

पाश्चात्योंका आगमन—अल्बुकर्कके गोवामे आनेके ९ वर्ष पश्चात् सन् १५११ से पुर्तगाली सर्वप्रथम श्याममे आये। सन् १५५५ मे राजा फ्रा नरेतने लाओस एवं कम्बुजको परास्त तथा पेगूपर आक्रमण किया। लगभग १५९२ मे जापानने विदेशियोका देशमें व्यापार करना बन्द कर दिया। जापानसे व्यापार करनेवाले पाश्चात्योंका सम्बन्ध अयुध्यासे होने लगा। अयुध्यामे विदेशियोंको हर प्रकारकी सुविधा मिलने लगी। मिशनरियोंने मिशन तथा चर्च खोल दिये। श्यामवाले किसी प्रकार ईसाई हो जायँ इसीका प्रयास २ सौ वर्षोंतक पाश्चात्य देश करते रहे।

बर्मा-श्याम-युद्ध—सन् १५४० से १५६३ तक बर्मासे प्रथम बार युद्ध आरम्भ हुआ। सन् १५५८ में पेगूने चिगमाईपर आक्रमण कर विजय प्राप्त की थी। अठारहवीं शताब्दीके अन्ततक वह बर्माके अधीन रहा। १५६८ मे बर्माने अयुध्या जीती। १५८३ अर्थात् १५ वर्षतक

श्याम वर्माके अधीन था। श्याम विजेता वर्माके सेनापति युएग नौंगके मृत्युके पश्चात् श्यामने पुनः आजादी प्राप्त कर ली। श्यामका राज नर सुवन (नरसिंह ?) ने १५८४-१५९२ के बीच वर्मी आक्रमणोंको पराजित किया। तानसरीन आदि प्रदेश जीत लिया। राजा नर सुवन (नरसिंह) अत्यन्त प्रतिभाशाली राजा था। वर्मा युद्धमें सफल होकर पेगू ले लिया। सन् १६०५ में उसकी मृत्यु हो गयी।

जापानसे ईसाइयोंका निष्कासन—सन् १६०३ में जापानमें पुनरुत्थान आन्दोलन आरम्भ हुआ। विदेशी ईसाई व्यापारियोंके लिए देशका दरवाजा वन्द कर दिया गया। जो जापानी ईसाई वनाये गये थे वे देशत्याग कर भागे। श्याममें आवाद हुए। पश्चिमको जापानी ताँवेकी आवश्यकता थी। परिणाम यह हुआ कि श्याम व्यापारका केन्द्र हो गया। जापानी सामान श्याममें आता, वहाँसे विदेश भेजा जाता।

राजाको ईसाई वनानेका प्रयास—सन् १६५७ से १६८० तक श्यामका इतिहास यूनानी साहसिक कॉंस्टेनटाइन फौल्कनका राजनीतिक इतिहास है। फ्रासके प्रभावके कारण वह रोमन कैथोलिक हो गया। उसने तत्कालीन फ्रासके राजा लुई १४ को विश्वास दिलाया कि राजा नराप-को ईसाई वना लिया जायगा। श्यामके कई शिष्टमण्डल फ्रास भी गये। लुई स्वप्न देख रहा था कि एशियामें प्रथम ईसाई राज्य स्थापित होगा। उस समयका इतिहास पाश्चात्योंके धार्मिक प्रचार की आड़में साम्राज्य वृद्धिका इतिहास है। पाश्चात्य सफल न हुए। राज्यके एक सेनापतिने राज्यपर अधिकार कर लिया और फौल्कनकी हत्या कर दी गयी। फ्रांसके सैनिक श्याम छोड़नेके लिए वाध्य हो गये।

श्री लंकासे सम्वन्ध—श्री लंका भारतके स्थानपर श्यामका धार्मिक प्रकाशका केन्द्र हो गया था। भारतमें बौद्ध धर्मका लोप हो गया था। स्वयं पराधीन था, विपन्न था। उसे मालूम भी नहीं था कि भारतके वाहर भी बौद्ध या हिन्दू हैं या नहीं। विदेशोंसे भी बौद्ध-यात्रियोंका आना देशकी अशान्तिके कारण वन्द हो गया था। १७५२ में श्री लंकासे

पुनः सम्बन्ध स्थापित किया गया।

अयुध्याका नाश—सन् १७५७ में जब पलासीमें अंग्रेज भारतमे अपनी नीव जमा रहे थे उसी समय बर्माने अयुध्यापर आक्रमण किया। सन् १७६७ में अयुध्या पूर्णतया नष्ट कर दी गयी। श्यामी सेनापति कपा तख सिन (तक्ष सिह) ने बची सेना पुनर्गठित कर बंकाकमे नवीन राजधानी स्थापित की। अयुध्यासे उद्वासित होनेपर श्यामके राजा कहीं जंगलमे मर गये। सेनापतिने सन् १७६८ मे स्वय अपनेको राजा घोषित किया। कालान्तरमे उसका मस्तिष्क विकृत हो गया। सन् १७८२ में चाओ फ्या चक्री सेनापतिने राज्यसूत्र ग्रहण किया। बंकाकके उपनगर कोनवरी (स्थानपुरी) मे अयुध्याके स्थानपर नवीन राजधानी स्थापित की गयी। चक्रीवशकी स्थापनाके पश्चात् राजा राम प्रथमने बंकाकमें राजधानी स्थापित की। वह नदीके दूसरे तटपर था। उसे कुगथेप (कुरगद्वीप ?) कहते है। ग्रामीण जनता बंकाकको कुगथेप ही कहती है।

अयुध्या सन् १३५० से १७६७ तक अर्थात् ४१७ वर्षतक श्यामकी राजधानी रही। अयुध्या वशके २८ राजाओने राज्य किया। उत्तरी तथा दक्षिणी श्यामका एकीकरण हुआ। द्वारावती सुखोदया तथा कम्बुजके कुछ भाग अयुध्या राज्यमे विलीन हो गये। बर्माके आक्रमणके भयके कारण राजा नरायने लवपुरीमे ग्रीष्म राजधानी स्थापित की थी।

अयुध्याके भग्नावशेष ४० मीलमे फैले है। वहाँके स्थापत्यकी शैली बर्मा तथा लकासे प्रभावित है। मैने मन्दिरोके शिखरोंको दूरसे देखा तो मुझे अनुभव होने लगा जैसे भारतीय अयोध्याके समीप आता जा रहा हूँ।

अयुध्याकालीन कला

थाई कला अयुध्या-कालमे ही पूर्णता प्राप्त करनेमे सफल हो सकी। अयुध्याकालीन थाई-कलापर उत्तरी तथा पश्चिमी थाई-कलाका प्रभाव पड़ा था। उसने मौलिक थाई-कलाका रूप ग्रहण कर लिया था। वह एक नयी दिशामे विकसित होती हुई समस्त देशमे फैल गयी। वहाँ श्रीपतिके

मन्दिरका विशाल भग्नावशेष पड़ा है। स्तम्भोंके पीछे तीन ऊँचे स्तूप हैं।

विश्वकी विशाल मूर्ति—भगवान् बुद्धकी कांस्य-प्रतिमा ५० फुट ऊँची है। बड़ा ऊँचा मन्दिर है। मन्दिरपर गुम्बद किंवा छत नहीं है। यह विशाल मूर्ति एक अत्यन्त ऊँची वेदीपर स्थित है। इसका नाम मगल पवित्र है। यह कांस्य-मूर्ति विश्वकी सबसे बड़ी कांस्य बुद्धमूर्ति है। जापानके कामकुरा बुद्धप्रतिमासे इसकी तुलना की जा सकती है।

मन्दिर पक्की ईंटका बना है। ईंटकी दीवारपर पलस्तर है। जनश्रुति है कि मन्दिरको पूर्ण करनेकी अनेक बार चेष्टा की गयी, परन्तु मन्दिर अपनी भग्नावस्था जैसी दशामे पुनः हो जाता है। चारों ओर ऊँची दिवारे हैं और ऊपर खुला आकाश है।

सुवर्णमूर्ति—अयुध्यामें ही राम त्रिबोधि द्वितीयने २४ फुट ऊँची वेदीपर ५० फुट ऊची बुद्धमूर्ति बनवायी थी। उसपर दस मन सोना चढ़ा था। सन् १७६७ मे बर्मा-युद्धमें वह नष्ट हो गयी। खण्डित प्रतिमा अपने पूर्वरूपमे न बन सकी तो उसके अवशेष वाट जेतपमे समाधिस्थ कर दिये गये।

यहाँ दो मन्दिर भग्नावस्थामे खड़े हैं। उनकी रचना उत्तर भारतीय शिवालय-शिखरतुल्य है।

अयुध्यामे खड़ी शिवकी मूर्ति मिली है। बुद्धका मस्तक भी मिला है। दोनों ही मूर्तियाँ बकाक संग्रहालयमें रखी हैं। इन मूर्तियोंमें सादगीके स्थानपर अलकारिता अधिक है। अयुध्या संग्रहालय देखने योग्य है। उसने मुझे गणेश तथा अन्य हिन्दू देवताओंकी पाषण एवं कांस्य मूर्तियाँ देखनेको मिली।

संग्रहालय रविवारके कारण बन्द था। हमारे पहुँचनेपर वहाँ काम करनेवाली एक महिलाने अत्यन्त शिष्टताके साथ सग्रहालय खोल दिया! उसने शुद्ध भारतीय ढगसे करबद्ध नमस्कार करते हुए 'नमस्ते' कहा। मैं कुछ चौंका। उसकी ओर देखा। मुझे स्पष्ट प्रतीत होता था कि हमारे भारतीय होनेके कारण उसका हृदय श्रद्धा एव अगणित अतीत घटनाओके

भारसे स्वयं झुक गया था। उसका नमस्कार करनेका ढंग मै आजीवन न भूल सकूँगा। मस्तकमे जुड़े हाथ मिले थे। मस्तक आगे झुका था। नत हृदयसे पैरकी केहुनियोंपर शरीर झुका था।

मेरा मन कह उठा—हमारी भारतीय संस्कृति उस महिलाकी आँखों-में जैसे मूर्त हो उठी हो। उसने बड़े प्रेमसे सग्रहालय दिखाकर एक-एक चीजका स्पष्टीकरण किया। चलते समय वर्षाका एकत्र किया जल पीनेको मिला। हम चले। मूल अयोध्याके देशसे आकर चार सौ वर्षोंकी अयुध्या देखी। श्यामके महान् नागरिक भारतीय संस्कृति एवं सभ्यताको उस समय मूर्तरूप दे रहे थे जब हम अपने देशमे उसे प्रायः खो रहे थे। भारतीय अयोध्यामे शायद कुछ देखनेको न मिलेगा। वहाँ सब कुछ है।

आधुनिक काल

श्यामका आधुनिक इतिहास चक्रीवशकी स्थापना सन् १७८२ से आरम्भ होता है। सेनापति चक्रीने राम उपाधि धारण की। इस वशके प्रत्येक राजाके साथ राम शब्द जुड़ा रहता है। राजा माग कूट (१८५१-१८६८) का दूसरा नाम राम चतुर्थ था। सन् १८५५ मे ब्रिटेनके साथ सन्धि हुई। १८६८ से १९१० तक राजा चूला लोग कर्ण थे। १९१० से १९२५ तक राजा वज्रायुध्य थे। १९२५ मे राजा प्रजाधिपक हुए। उन्होने १९३५ मे राज्य त्याग दिया। सन् १९३५ मे राजा महीदल राज्यसिहासनपर बैठे। १९४२ मे श्यामने जापानी प्रभावमे सयुक्तराष्ट्रसघके राष्ट्रोके विरुद्ध युद्ध-घोषणा की। अबतक ९ राम श्यामके सिंहासनपर बैठ चुके है।

सन् १९३२ तक श्याममे पूर्ण राजतन्त्र था। सन् १९३२ मे कर्नल फ्या-पहोन योन उहाके नेतृत्वमे आंशिक सैनिक क्रान्ति हुई। वह स्वयं सक्रमणकालीन ससदसे प्रधान मन्त्री बने। राजा प्रजाधिपक २७ जून तथा २९ दिसम्बर १९३२ को लोकतन्त्रीय सविधानपर हस्ताक्षर किया। फ्या मनोवकर्ण प्रधान मन्त्री हुए।

भारतीय और चीनी संस्कृतिका समन्वय

जनरल फ्या पहोनको नये प्रधान मन्त्रीकी नीति रुची नहीं। २१ जून सन् १९३३ को दूसरा सैनिक कोप हुआ। जनरल फ्या पहोन प्रधान मन्त्री बने। सन् १९३८ तक प्रधान मन्त्री रहे। उनके प्रधान-मन्त्रित्वकालमे ही १२ अक्तूबर सन् १९३३ को कुछ लोगोंने, जिन्हे लोकतन्त्रीय तथा उदार नीति पसन्द नहीं थी, विद्रोह किया। चार दिनोंतक युद्धके पश्चात् विद्रोही भाग गये। राज्यपरिवर्तन एवं देशमें उथल-पुथलके कारण राजा इंगलैण्ड चले गये। वहाँसे २ मार्च सन् १९३५ को राज्य त्याग दिया।

राजा महीदल बालक थे। स्विट्जरलैण्डके एक स्कूलमें पढ़ते थे। वे राजा घोषित किये गये। रिजेन्सी कौंसिल जनरल फ्या पहोनके नेतृत्वमे प्रधानमन्त्रित्व तथा सेनापतित्व दोनों कार्य सँभालनेके लिए बनायी गयी। सन् १९३८ मे आजकलके प्रधानमन्त्री विपुल संग्राम प्रधान मन्त्री बने।

सन् १९४१ मे जापानी सेनाने श्याममें प्रवेश किया। जापानी आधिपत्यकालमे यह निर्विवाद है कि कब्जा लेनेवाले विजेता जिस प्रकार विजितोंपर अत्याचार करते है, जापानियोंने नहीं किया। १९४१ मे जापान-ने मलाया राज्यके केडाह, परलिस, कोलान्तन, जिगानू लगभग १५ हजार वर्गमील तथा १० लाखकी आबादीका भूखण्ड श्यामको दिया। बर्माके भूभागका केगटग तथा मोगपन भी श्यामके भूखण्डमे मिलाया था।

९ जून सन् १९४६ को राजा महीदलका अवसान हो गया। उनके भाई भूमिबल राज्यसिहानसनपर बैठे। सिंहासनारोहण-संस्कार ५ मई सन् १९५० को सम्पन्न हुआ। सन् १९४७ नवम्बर मासमें पुनः भूमि, जल एव आकाश-सेनाकी सहायतासे एक दस्ता संघटित किया गया। शासकीय भवनोंपर अधिकार कर लिया गया। कहा गया कि देशमे फैले भ्रष्टाचारके विरुद्ध ही कदम उठाया गया है। फरवरी सन् १९४९ मे पुनः

भूमि तथा जलसेनामे संघर्ष हुआ। संघर्ष शीघ्र ही समाप्त हो गया।

सीटो सम्मेलनकी बैठक सन् १९५५ मे बंकाकमे हुई। उसमे एशियाई राष्ट्रोंमें केवल पाकिस्तान तथा श्याम सम्मिलित हुए। फिलीपाइनको हम इसमें इसलिए नहीं जोड़ते कि वह स्वय अमेरिकासे सम्बन्धित है। भारत सम्मेलनके उद्देश्य एवं नीतिसे अन्य एशियाई राष्ट्रोंके समान विरोधी है। १९५६ मे सैनिक प्रदर्शन सीटो राष्ट्रोंका बकाकमे हुआ। इस प्रदर्शनमे दुर्घटना हुई। कुछ लोग हताहत हुए।

थाई-संस्कृति—पूर्व थाई-कालीन श्याम संस्कृति पूर्णतया भारतीय थी। थाई-संस्कृति एशियाकी दो महान्—भारतीय एव चीनी—संस्कृतियोका सुन्दर समन्वय है। चीनी सभ्यता एनामके पश्चिम नही पहुँच सकी थी। थाईमे हिन्दूसभ्यता एवं संस्कृतिका उदय क्ष्मेर अर्थात् कम्बुजके कारण हुआ था। एनामी लोग हिन्देशियाई थे। एनाममें बसकर चीनी संस्कृतिको मान लिया था। वे दक्षिण चम्पाकी ओर बढ़े तो उनका अत्यन्त उच्च कोटिकी हिन्दू सभ्यतासे सम्पर्क हुआ। कम्बुजमे हिन्दू थे। अतएव चीनी सभ्यता एनामसे आगे बढ न सकी। सुदृढ़ भारतीय सभ्यता उसके सम्मुख गम्भीर पर्वततुल्य खड़ी थी।

दक्षिणी चीनसे जो सभ्यता थाई लाये थे, नवीन परिस्थितियोके अनुकूल कुछ उसमेसे समयोपयोगीको लेकर शेष त्याग दिया। पुराने एवं अनुपयोगी सनातनके चक्करमे उन्होने अपना शक्तिक्षय नहीं किया। मुक्त सरितातुल्य उनकी सस्कृति सुन्दर थाई देशमे विकसित होने लगी। उन्होंने हिन्दू धर्म स्वीकार किया। तत्पशचात् बौद्ध धर्म स्वीकार किया। बौद्ध धर्म उनके लिए उपयोगी सिद्ध हुआ। रूढ़िवादी न बने रहकर उन्होने समयानुसार कार्य किया। श्यामके प्रशस्त मैदानमे आकर बसे तो वहाँ फैली क्ष्मेर-कालीन हिन्दू-सभ्यताको भी अपना लिया। बर्मा भारतकी सीमापर है। बर्मा भारतीय किंवा हिन्दू-सभ्यता उतनी नहीं अपना सका जितनी थाईने अपनायी है। भारतीय एवं थाई-सस्कृतियाँ मिलते-मिलते एक हो गयी। बौद्ध तथा हिन्दू धर्म दोनोंका मूल स्रोत भारत था। उन्हे

भारतीय सभ्यतासे चिढ़ न होकर अनुराग उत्पन्न हुआ। दोनों ही एक-दूसरेके पूरक हुए, न कि मारक।

थाई-संस्कृति जिसकी ज्योति थाई जीवनके धर्म, समाज, रीति-रिवाज आदिमे दीखती है वह पड़ोसी देशों बर्मा, कम्बुज, मोन, मलय तथा लाओस आदि देशोंसे मेल खाती है। दक्षिण-पूर्व एशियाके इन देशोंकी सस्कृतिकी भिन्नतामे एकता उसी प्रकार पारदर्शी है जैसे भारतकी भिन्नतामें अभिन्नता।

थाई-संस्कृति एक शब्द 'धर्म' मे पूर्ण हो जाती है। धर्मके चारों ओर ही केन्द्र मानकर साहित्य, संस्कृति एवं जनजीवन विकसित हुआ है। भारतके समान थाई धर्मनिरपेक्ष राज्य रहा है। उसने राजनीतिको धर्म-प्रचार किंवा दूसरे धर्मोंके विकास-प्रचार आदिमे किंचिन्मात्र भी अवरोध नही उत्पन्न होने दिया है। वह धर्मनिरपेक्ष है परन्तु उसका स्थायी भाव अब भी धार्मिक है।

धर्म

थाई जातिका पूर्वधर्म प्रकृतिपूजा तथा पितृपूजा थी। प्रेत-पूजा हिन्दू-धर्मका भी अविभाज्य अंग है। पितृपक्षमे तर्पण, श्राद्ध आदि प्रारम्भिक प्रकृति-पूजाके परिष्कृत रूप है। थाईके पड़ोसी राष्ट्रोमे भी प्रकृति-पूजा प्रचलित थी। थाईके मूल धार्मिक विश्वासका यह मूलाधार है। थाई लोगोमे बौद्ध धर्म तिब्बत तथा चीनसे आया। बौद्ध धर्मका प्रचार होनेपर थाई जातिने उसे ही अपना राष्ट्रीय धर्म मान लिया।

बर्मामे शुद्ध हिन्दू धर्मका उतना प्रभाव नही पड़ा जितना श्याममे। कारण यह था कि श्याम मोन, कम्बुज आदिके शासनमे बहुत दिनोतक रहा। कम्बुज प्रभावके कारण सस्कृत, पाली एवं हिन्दू धर्म देशके दैनिक जीवनका अंग हो गया था। बौद्ध धर्म ग्रहण करनेपर भी हिन्दू धर्मकी अनेक बाते उन्होंने त्यागी नहीं। प्रकृति-पूजाको भी वह त्याग न सके। बौद्ध धर्मके साथ ही साथ प्रकृतिसे आज भी चिपके है। भारतीय प्रेमके

कारण हिन्दू तथा बौद्ध धर्म दोनोकी ही बातें जो वे मानने लगे थे, पूर्णतया छोड़ न सके। उनके यहाँ कहावत है कि बौद्ध एव हिन्दू धर्म एक-दूसरे को ऊपर उठाते है। मध्य थाई देशमे आज भी हिन्दू धर्म एक वर्गविशेपका धर्म है।

हीनयान—तेरहवीं शताब्दीमें हीनयान बौद्धमत थाई देशमे छा गया था। उनके प्रवृत्तिके अनुकूल था। उनकी जीवनके लिए उपयोग सिद्ध हुआ। अतएव उन्होने उसे स्वीकार कर लिया।

समस्त देशमे केवल बुद्धकी ही प्रतिमाएँ मिलेगी। उन्हींकी पूजा होती है। आनन्द, प्रज्ञापारमिता, अवलोकितेश्वर, तारा आदिकी पूजा महायान एवं वज्रयान मतोंके अनुसार श्याममे नही होती। उनके जीवन एवं धर्मका एकमात्र केन्द्र केवल भगवान् बुद्ध है। हिन्दुओके अनुसार बौद्ध वाङ्मयमे वर्णित अनेक देव एव देवताओके पूजक वे नहीं हैं। महायान पन्थ नगण्य है। कम्बुज, श्रीविजय एवं मलयमे कुछ कालके लिए महायान सम्प्रदायका प्रभाव हुआ। पडोसी होनेके कारण श्यामपर भी किंचित् प्रभाव पड़ा। उसका प्रवेश दक्षिणी चीन तथा बर्मामे हुआ है।

ग्रामीण जीवन—थाई धार्मिक जीवनका केन्द्र ग्रामीण वाट है। वाटका अर्थ धार्मिक स्थान होता है। देवालयकी संज्ञा उसे दे सकते हैं। वाट उस स्थानके लिए प्रयुक्त होता है जहाँ बौद्ध मन्दिरके साथ विहार, शाला, चैत्य आदि होता है। वाट प्रत्येक ग्राम, नगर, पर्वत एव जगलोतकमे होते हैं। राजनीतिक संघटनतकका आधार है। पायः सभी ग्राम स्वावलम्बी है। उनमे सामाजिक एवं धार्मिक रिवाज कृपि तथा धर्मपर आधारित है। प्रत्येक ग्राममे बौद्ध वाट एवं साहित्य, कला एवं विचारका भी स्रोत वाट ही ग्रामदेवताके लिए निश्चित स्थान होता है। वाट द्वारा जनतामे आध्यात्मिक ज्ञान एवं शिक्षाका प्रचार होता है। प्रत्येक व्यक्तिका जीवन जन्मसे मृत्युतक वाटसे ही एक प्रकारसे सम्बन्धित रहता है। वाट बौद्ध मन्दिर किंवा विहार है। मुसलमानोंकी मसजिदके समान मनुष्योका मिलन-स्थान है। ग्रामके सभी नृत्य, खेल,

समारोह आदि वाटमें ही होते हैं।

ग्राम-देवताका स्थान अकाल, विपत्ति आदि उत्पन्न होने तथा नव वर्षके प्रथम दिन प्रयुक्त होता है। इस दिन प्रसाद चढ़ाया जाता है। इस पूजाका सम्बन्ध बौद्ध धर्मसे नहीं है। प्राचीन-कालीन परम्परा चली आती है। बौद्ध जगत् इस परम्पराका अपनी उदार भावनाके कारण विरोधी न होकर उसे स्वीकृतकर ग्रामीण जीवनोपयोगी बनाया है।

चाओ थी—थाई देशमें प्रत्येक मकान अथवा वाटिका गृहके एक ओर आदमकद बाँस या बल्लेपर बना मन्दिरकी तरह दिखाई देगा। इसकी रचना मकानके खिलौने जैसी होती है। मैंने पहले इसे कबूतर या चिड़ियोंका दरबा समझा था। भारतमें प्रायः इस प्रकारके चौकोर दरबे बने मिलते है ताकि ऊँचाईके कारण बिल्ली अथवा अन्य जानवर पक्षियोंको क्षति न पहुँचा सकें।

एक दिन मैंने एक स्त्रीको उसके सम्मुख खड़ी देखा। वह बड़ी श्रद्धा-भक्तिके साथ नमस्कार कर रही थी। कुछ सामग्री उसने मकानके सामने बने छोटे चबूतरेपर रख दी। जिज्ञासा बढ़ी। मालूम हुआ, यह पूजास्थान है।

प्रत्येक मकानके बाहर खम्भोंपर लगा लकड़ीके मकानका ढाँचा गृह-देवताके मन्दिरके रूपमे मिलेगा। इसे फ्रा कुम अथवा फ्रा फुम चाओ भी कहते हैं। फ्रा फुम कम्बुज शब्द है। मूल संस्कृतका अपभ्रंश है। चाओ थाई शब्द है। दोनों ही शब्द समानार्थक हैं। उत्तरमे इसे चाओ कहते हैं। चाओ थीकी तुलना चीनी ग्राम एवं क्षेत्रदेवता टो टीसे की जा सकती है। वास्तवमें इसका मूल रूप ग्रामदेवताका ही था।

नवीन निर्माण अथवा किसी भूमिको साफ कर मकान बनवानेके समय पहला काम चाओ थीकी स्थापना करना होता है। स्थापनाके लिए मुहूर्त देखा और निश्चय किया जाता है। देवस्थानका मुख उत्तर रखना अधिक पसन्द किया जाता है। चाओ थीपर मकानकी छाया नहीं पड़नी चाहिये। पश्चिम या पूर्व बनानेमे छाया पड़ना अनिवार्य हो जाता है।

गोल मिट्टीका चबूतरा बनाया जाता है। केन्द्रमे बॉस वा काष्ठस्तम्भ गाड़ा जाता है। उसी स्तम्भपर चाओ थीका मकान बना दिया जाता है। खिलौने जैसे इस मकानमे एक कमरा तथा द्वारपर चबूतरा रहता है। कमरा निवास तथा चबूतरा नैवेद्य रखनेके प्रयोजनमे आता है। फ्रा फुमका एक रूप लकड़ीके छोटेसे टुकडेपर बनाया जाता है। कमरेमे पृष्ठभागका सहारा देकर मूर्ति खड़ी कर दी जाती है। उसके दाहिने हाथमें दोधारी तलवार तथा बायेमे पुस्तक रहती है। चबूतरेपर धूपबत्ती, नैवेद्य आदि रख दिया जाता है। ग्रामदेवताके लिए ग्राममे केवल एक स्थान बनाया जाता है। शहरके प्रत्येक मकानमे वह बनता है।

प्रतिदिन सन्ध्याको उसकी पूजा होती है। गर्भपीड़ाके समय चबूतरेपर धूपबत्ती, पुष्प रखकर पूजा की जाती है कि प्रसव बिना कष्ट हो ज.य। प्रस्थान करनेके पूर्व आशीर्वाद नमस्कार कर प्राप्त किया जाता है। धारणा है कि वह घर एवं ग्रामकी रक्षा संकटोसे करता है। थाई बौद्ध है परन्तु उनके जीवनमे चाओका महत्त्वपूर्ण स्थान है।

फ्रा फुम मकान, विवाह गृह, गोशाला, धानके खेत, बाग-बारी, खलिहान, देवस्थान आदिके होते है। श्री फ्रा फुमको फ्रा फुमवान कहते हैं।

आत्मा—थाई विश्वास करता है कि उसके शरीरमे जीव है। उसका नाम ख्वान है। सम्भव है कि आत्मन्‌का अपभ्रंश ही ख्वान शब्द हो। थाईमे आत्माके लिए पाली शब्द विनयन है। उसका मूल अर्थ चेतन है। विश्वास किया जाता है कि आत्मा मूर्धाके किसी छिद्रसे मानवके शरीरमे प्रवेश करती है। भारतमे योगी वही समझा जाता है जिसका प्राण मूर्धासे निकलता है। स्मशानमे कपाल-क्रिया अथवा मूर्धा इसीलिए शायद तोड़ी जाती है कि यदि जीव मूर्धामे रह गया हो तो वह निकल जाय। ख्वान अनेकार्थक हो गया है। रोमनके भाग्य तथा भारतके लक्ष्मीसे भी तुलना की जा सकती है।

दाह-संस्कार—थाई लोग हिन्दुओकी तरह मृतक शरीरका दाह-

संस्कार करते हैं। मृत्यूपरान्त अमीर लोग बक्समें शरीर रख देते हैं। बक्समे बुरादा भर दिया जाता है। शरीरके विघटित होनेपर जलका अंश जो निकलता है वह बुरादामे सूखता रहता है। जितने अधिक दिन शरीर रखा रहे उतना ही अच्छा समझा जाता है। ईसाइयोंके कफनके समान बक्सको सजाकर किसी वाट या देवस्थानमे रख देते हैं। उसके सम्मुख नाटक, भजन तथा अनेक प्रकारके कृत्य होते हैं। मैं एक स्थानमें घूम रहा था। थिएटर हाल जैसे स्थानमे एक सजा-सजाया ऊँची वेदीपर बक्स रखा था। किसी विदेशीको ज्ञान नहीं हो सकता कि शव रखा है। स्थान मुझे रंगमंच सा सजा-सजाया मिला। गरीब लोग तीन ही दिनतक शव रखते हैं। चिता बनाकर बड़े उत्साहके साथ दाह-संस्कार किया जाता है।

ईसाई धर्मप्रचार—ईसाई मिशनरी थाई देशमे १६वीं शताब्दीमें आ गये थे। पोप तथा फ्रांसके राजा लुईकी कल्पना थी कि श्याम अपने राजाके साथ ईसाई हो जायगा। कुछ लोगोने ईसाई धर्म स्वीकार किया, परन्तु कालान्तरमें वे पुनः अपने पुराने धर्ममे लौट आये। जापान सरकारने अपने देशसे ईसाइयोको निर्वासित किया तो जापानी ईसाई श्याममे आकर बसे। वे श्यामी जीवनके लिए एक समस्या बन गये थे। बौद्ध धर्म इतना उदार, प्रगतिशील एव सहिष्णु है कि दूसरे धर्मप्रचारकोंको कम सफलता मिलती है। जिन देशोमे हिन्दू थे वहाँ ईसाई तथा मुसलमान लोग हुए, परन्तु जहाँ बौद्ध थे वहाँ दोनों ही धर्म लोगोंको अपने धर्ममें लानेमें असमर्थ रहे।

कला

धर्मके नामपर ही कलाका विकास थाई देशमे हुआ। धर्मसे ही कला तथा साहित्य सम्बन्धित था। छठी शताब्दीतककी कला गुप्त-कालीन कलासे प्रभावित है। आधुनिक स्थापत्य, वास्तु एवं ललितकला पाश्चात्य प्रभावसे प्रभावित है। उसने प्रगति की है, परन्तु अपने व्यक्तित्व-की भी साथ ही साथ रक्षा की है। उसने अपनी भौतिक आधुनिक शैलीका

निर्माण किया है। सोना, चाँदी आदिका काम सुन्दर बनता है।

बोधि-सत्व—बंकाकके संग्रहालयमे एक बोधिसत्वकी मूर्ति रखी है। कुछ लोगोंका मत है कि यह मूर्ति श्री विजयकालीन अर्थात् मलायापर जब श्री विजयका राज्य था उस समयकी है। मूर्ति अत्यन्त सुन्दर है। भारतीय मूर्तिके समान रत्नाभूषित है। भ्रूमध्य टीका है। वाम स्कन्धप्रदेशसे कटितक उत्तरीय पड़ी है। नाभि गम्भीर है। मूर्ति खण्डित है। हाथ टूटे हैं। मूर्ति कटिप्रदेशतक ही उपलब्ध हो सकी है। उसे देखकर कोई नहीं कह सकता कि भारतीयके अतिरिक्त वह किसी और कलाविद् द्वारा बनायी गयी होगी।

यह नालन्दाकालीन कांस्यमूर्ति किंवा उत्तर बुद्धकालीन अर्थात् नवी तथा दशवीं शताब्दीके पालवंशीय शैलीतुल्य है। पूर्णावस्थामे मूर्ति किंचित् खम खायी थी जिसे त्रिभंग कहते है। त्रिभग तत्कालीन भारतीय मूर्तिकलाकी आत्मा थी। त्रिभग-निरूपणमे ही कलाकार आध्मात्मिकता भरता था।

सॉचीसे एक बोधिसत्वकी त्रिभंगी मूर्ति मस्तक एवं पद-खण्डित मिली है। वह इस समय लन्दनके भारतीय सग्रहालयमे रखी है। उक्त मूर्तिकी वेशभूषा एवं कलासे श्यामकी मूर्ति पूर्णतया मिलती है, उनमे केवल एक अन्तर है। लन्दन मृतिका दक्षिण स्कन्ध उठा है। दक्षिण ओर झुकी है। श्यामकी मूर्तिका वाम अग उठा है और वाम ओर झुककर किंचित् दाहिनी ओर झुक गयी है।

द्वारावती-कला-कालका इतिहास क्ष्मेर आक्रमणके पश्चात् समाप्त हो जाता है। क्ष्मेर अपने क्षत्रप बकाकसे ९० मील दूर लवपुरीमे स्थापित किये थे। एगकोर-कलाकी छाप लवपुरी-कलामे मिलती है। महाधातु वाट लवपुरीमे प्राप्त बुद्धमूर्ति इस समय बंकाक सग्रहालयमे है। उससे यह परिवर्तन स्पष्ट प्रकट होता है। मूर्ति ठिगनी मालूम पड़ती है। आसन पद्म नहीं है। मुक्तासनतुल्य बायें पदपर दाहिना पद है। इस समयके कम्बुज एवं श्यामके बुद्ध मस्तकमे अन्तर पकड़ना कठिन है। नुकीली नाक,

सीधी भौं, चौड़ा चिबुक लवपुरी शैलीकी विशेषता है।

नवीं शताब्दीके लगभग चीनके यून्नान प्रदेशके निवासी पश्चिमकी ओर बढ़े। इसे उत्तरी श्याम कहा जा सकता है। चीग माई (चीन सेन) मे उन्होने थाई राजकी स्थापना की। क्मेर जातिको हटानेमे समर्थ न हो सके। इस समयकी कलामे श्याम शैली एव कलाकी मौलिक झलक मिलने लगती है। राष्ट्रीय राज्यके साथ थाईने राष्ट्रीय कलाका भी सर्जन किया। बुद्धमूर्तिमे धनुषाकार भौं, बादामी नेत्र, पलकोंके ऊपर हरा वलय, शुकके समान नुकीली नासिका, पतले मिले ओठ, विशेषता है। बकाक सग्रहालय-में इस कालका एक बुद्धमस्तक संगृहीत है।

उत्तरी बर्माके कुछ दूर चिग माईके समीप वाट है। ईंटोंका बना यह पगान बर्माके महाबोधि मन्दिरकी प्रतिकृति है। मालूम होता है कि बर्मा यात्रासे लौटनेपर राजा येग रायने १२९० मे इसे बनवाया था। देवस्थान बोधगया मन्दिरके समान है। बौद्ध जगत्मे बोधिप्राप्तिस्थान बोधगया मन्दिरके समान मन्दिर बनाना पुण्य समझा जाता है। मैने नेपालमे भी इस प्रकारका मन्दिर देखा था।

बुद्ध प्रतिमा—थाई मूर्तियोंका देश है। एक समय था कि श्यामकी जितनी जनसंख्या थी उससे अधिक बुद्ध-मूर्तियाँ थीं। प्रत्येक घरमें बुद्धमूर्ति मिलेगी। राजा मगकोट (मुकुट ?) सग्रहालय खोलकर अनेक शैलीकी बिखरी बुद्धमूर्तियोंको एकत्र किया गया है। गत १३ सौ वर्षोंसे थाई कलाकारोने बुद्धप्रतिमा बनानेमे अपनी कलाका प्रदर्शन किया है।

सबसे प्राचीन द्वारावती कलाशैलीका पता लगा है। छठी तथा सातवी शताब्दीमे विकसित हुई थी। उसके भी सैकड़ों वर्ष पहले वहाँ कलाकी एक शाखा थी। द्वारावती कला १२-१३ शतीतक विकसित होती रही। १३ वीं शतीके सुखोदया राज्यके साथ सुखोदया कला शाखाका उदय हुआ। भारतके स्वयं पराधीन हो जाने और कम्बुजके अवनतिशील होनेके कारण श्यामका लंकासे सम्बन्ध बढता ही गया। हीनयान कलाशैलीका प्रभाव इस कालकी थाई-कलापर पड़ा है। इस

समयकी बुद्धमूर्तियाँ भूमिस्पर्शमुद्रामें अधिकतर बनी हैं। पद्मासन न होकर मुक्तासन अर्थात् एक पदपर दूसरा रखकर मूर्तियाँ गढ़ी अथवा ढाली गयी हैं। चौथी शताब्दीमे सुखोदया कलाका स्थान अयुध्या कलाने ले लिया। युथोग-कला थाई-कलाकी उस शाखाको कहते है जो मध्य थाई देशकी अयुध्या-कलाके पूर्व तथा कुछ बादतक विकसित होती रही।

बोधगया मन्दिरके अनुरूप चिगमाईमे मन्दिर सन् १४५५ मे बनाया गया। वहाँसे ३० कलाकार भारत भेजे गये थे। वे बोधगयामे जाकर मन्दिरका नक्शा तथा अन्य काम सीखकर आये। उस समयकी कलामे पाल-कलाका प्रभाव स्पष्ट प्रतीत होता है। १५वीं तथा १६वीं शताब्दी थाई-कलाका स्वर्णयुग कहा जाता है। लगभग २५ भिक्षु लका भेजे गये। वे पाली ग्रन्थ तथा लकाकी कलाका अध्ययन कर लौटे। भारतीय पाल तथा सेनकालीन कलाकी छाया इस कलाकी थाई-कलामे मिलती है।

प्राचीन श्यामी मूर्तिकला केवल भगवान् बुद्धके मूर्तिनिर्माण करने-तक ही सीमित थी। थाई बुद्धमूर्ति केवल कलाकृति नहीं है। उसके देखनेसे बुद्ध धर्मका जैसे समस्त सिद्धान्त मूर्तरूप हो उठता है। सुखोदया-कालकी बुद्धमूर्ति दक्षिण-पूर्व एशियामे सर्वश्रेष्ठ कही जायगी। अयुध्या कालमे यह कला कला तथा मूर्ति दोनों दृष्टिसे पूर्णता प्राप्त कर लेती है।

साहित्य

थाईके लगभग १३ हजार शब्दोंमे ५ हजार संस्कृत शब्द हैं। नाटकका स्रोत भारतीय है। नाटक धार्मिक प्रयोजन सिद्ध करता है। भारतीय शैलीपर थाईने अपनी एक नवीन शैली चलायी है। पात्रोका अभिनय मन्द तथा लावण्यपूर्ण होता है। थाई भाषामे नाटकको लखोन कहते हैं। पूर्वकालमे वाट तथा मन्दिर नाटकस्थल थे। उनका कथानक धार्मिक होता था। आधुनिक शैलीके भी नाटक खेले जाते थे। महाभारत एवं रामायणके कथानकके आधारपर एकांकी नाटक होते हैं। उनमें

अधिक समय नहीं लगता। बन्दरों, देवी-देवता, किन्नर, यक्ष-यक्षिणी, अप्सरा आदिका अभिनय अत्यन्त उत्तम होता है। वाणी मधुर एवं अकृत्रिम होती है। भारतके नाटकसे थाईके नाटक पीछे नहीं, बल्कि कुछ आगे हैं। यहाँका नाटक देखनेपर मुझपर यही असर पड़ा।

खोन-कथाकाली—नाटक दो प्रकारके होते हैं। खोन तथा लखोन। खोन चेहरा लगाकर अभिनीत होता है। इसका मूल स्रोत भारतीय कथाकाली है। इसके दृश्य रामायणसे लिये जाते हैं। रामका वस्त्र हरा, लक्ष्मणका सुनहला, हनुमानका श्वेत तथा सुग्रीवका लाल होता है। देव, देवियाँ तथा अप्सराएँ अनेक प्रकारके रंगीन वस्त्र पहनती हैं। मुकुट धारण किया जाता है। अभिनय संगीतके साथ होता है। वाद्य यन्त्र बैण्डको पिफट कहते हैं। बाँसुरीको शुषिर, अतत एक ओर मढ़ा ढोल, वितल ढोल आदि वाद्य बहुत प्रचलित हैं।

नवीन धारा—उन्नीसवीं शताब्दीमें नवीन साहित्यका सर्जन आरम्भ हुआ। चीनके ऐतिहासिक रोमांसका अनुवाद खूब लोकप्रिय हुआ। बीसवीं शताब्दीमें अँग्रेजीके माध्यमसे पाश्चात्य साहित्यका प्रचार हुआ। शेक्सपीयर तथा अनेक कहानियोंका अनुवाद किया गया।

महाराज वज्रायुध अर्थात् राजाराम षष्ठके अनेक संस्कृत नाटकोंका अँग्रेजी अनुवादसे थाई भाषामें अनुवाद किया गया। इनके कारण थाई भाषामें एक नयी शैली उदय हुई।

प्राचीन थाई साहित्य पद्यमें अधिक मिलता है। पश्चिमी साहित्यके प्रभावके कारण गद्य साहित्यकी भी रचना प्रारम्भ हुई। राजा वज्रायुधके प्रयाससे साहित्यमें भारतीय प्रभाव अधिक पड़ा है।

छाया नाटक—थाईके छाया नाटकका मूल स्रोत भी भारत है। यह कला थाईमें मृतप्राय हो रही है। थाईमें उसे नेगये कहते हैं। दूसरा कथानक नेग तलुग है। यह जावाके वेयग कुलित-तुल्य होता है।

पात्रोंका चित्र एक बड़े चमड़ेपर बनाया जाता है। उसपर तेज रोशनी पड़ती है। पात्र मूर्तियाँ थामे अभिनय करते हैं। इसका कथानक केवल

रामायण होता है। खोनके संगीत तथा अभिनयसे मिलता है। रामेश्वरके समुद्र तटपर इस प्रकारका नाटक मैंने रात्रिमे देखा था। इसका भी मूल भारतीय है।

नाटकके अभिनयके साथ संगीत होता है। संगीत पात्रकी भावभंगी तथा मुद्राको प्रकट करता है। मुद्रा एवं भावके साथ संगीतका स्वर बदलता रहता है।

चेहरा लगे रहनेके कारण पात्र बोल नही सकते। उस कमीकी पूर्ति संगीतके पद करते हैं।

लखोन—खोनसे मिलता है। लखोन तथा खोनमें अन्तर है। लखोन पात्र एवं पात्री द्वारा ही अभिनीत होता है। उसमे खोन-तुल्य चेहरे आदिका प्रयोग नहीं होता। केवल राक्षस तथा दानवोंके पात्र चेहरोंका प्रयोग करते हैं। खोन केवल रामायणके कथानकपर अभिनीत होता है।

लखोन राजा, दानव, देवता तथा अन्य कहानियोंके कथानकपर आधारित रहता है। पद्यमें अधिक होता है। जातक तथा महाभारतके कथानक अथवा तत्सम्बन्धी अनुप्राणित किसी कहानीके आधारपर अभिनीत होता है। लखोनका अभिनय मधुर होता है। खोनमे शक्ति एवं कृपाशीलताका बाहुल्य होता है।

रामायण--रामायणका तीन पाठ थाई देशमे मिलता है। खोन अभिनयके साथ गाये जाते है। तीन थाई राजाओके कारण उनकी रचना हुई है। थाई रामायणको 'रामकीन' (रामकीर्ति) कहते हैं। बगाली रामायणके चन्द्रावती पाठका एक पात्र काकुआ पूर्णतया थाई रामायणसे मिलता है। थाई लोगोंने अपनी रुचिके अनुसार उसे बना लिया है।

थाई रामायण वाल्मीकि रामायणसे पूर्णतया नहीं मिलती। वह तामिल, बगाली, मलय एव जावाके पाठसे मिलती है। रामायण मध्य तथा दक्षिणी थाईवालोंको खूब याद है। पूर्वोत्तर एव लाओसमे रामायण-का एक और दूसरा पाठ मिलता है। स्थानीय साहित्यमे राम-जीवन

सम्बन्धी अनेक गाथाएँ एवं कहानियाँ हैं। यहाँके साहित्यपर चम्पा तथा हिन्देशियाका अधिक प्रभाव पड़ा था। रामायण थाई साहित्यका सर्वश्रेष्ठ ग्रन्थ है।

अपनी रुचिके अनुसार किस प्रकार रचना की गयी है वह इस कथानकसे स्पष्ट होगा—मेखला एवं सुभद्रा जातकमें वर्णित है। परशुराम तथा वैदिक देवता पर्जन्यसे हम परिचित हैं—वर्षा ऋतुके आरम्भमें मेखला, परशुराम तथा पर्जन्य मिलते हैं। मेखला बिजलीका अभिनय करती है। थाई साहित्यमे परशुरामको रामसुन कहते हैं। कभी-कभी परशु अर्थात् वज्रके देवताके रूपमे भी सम्बोधन करते हैं। पर्जन्यको थाईमे प्रचुन कहते हैं। यह तीनों ही भारतीय देवता चीनी देवों और देवियोंसे मिलते हैं। वे चीनी देवता हैं। नाम उनका भारतीय किया गया है।

भारतीय विद्वान् तथा भारत थाई लाजके प्राण स्वर्गीय श्री सत्यानन्द पुरीने रामायणका अंग्रेजीमे अनुवाद किया है। सन् १९४९ मे उसका द्वितीय संस्करण हुआ है।

लिपि भारतीय वर्णमाला अ, इ, उ, ऋ, ऌ तथा क ख ग आदिके तुल्य है।

थाई साहित्यका स्पष्ट रूप तेरहवीं शताब्दीमें प्रकट होता है। उसी समय वर्तमान वर्णमाला तथा लिपि बनी थी। प्राचीन साहित्य धार्मिक था। बौद्ध तथा हिन्दू साहित्य कथानक-बहुल था। देशकी विपन्नावस्था एवं उथल-पुथलके कारण साहित्यिक ग्रन्थ नष्ट हो गये हैं।

साहित्य पद्य एव गद्य दोनोंमें प्राप्य है। आरम्भमें चीनका प्रभाव था। तत्पश्चात् भारतीय प्रभाव स्पष्ट झलकता है। यह भी मूल रूपमे न रहा। उसपर स्थानीय श्यामी प्रभाव बढ़ने लगा। सस्कृत एवं पाली शब्दोंका साहित्यमें बाहुल्य हो गया।

ललित काव्य—उत्तरी थाई गाथाके आधारपर फ्रा ला कथानक 'ललित' शैलीमे लिखा गया है। पन्द्रहवी शताब्दीकी रचना है। लेखक स्वयं सन् १६४७–१६८८ राजा नराय (नारायण) किंवा राजा बोरोम

त्रैलोक (व्रहत्रैलोक्य) १४६३–१४८८ कहे जाते हैं। इसका सन् १९३६ में 'मैजिक लोटस' नामसे अंगरेजीमें अनुवाद हुआ है।

समुद्रघोष—फ्रा समुथखोट (समुद्रघोष) दूसरा प्रसिद्ध साहित्यिक ग्रन्थ है। रचनाशैली संस्कृत छन्दीय है। कथानक थाईमें प्रचलित पनस जातक पचास कहानियोंमें से लिया गया है! भारतीय कथासरित्सागरसे इसकी तुलना की जा सकती है। विद्याधरी एवं यक्षकी कहानी है। राजा नराय (नारायण) का राजकवि इसका लेखक था। ग्रंथ अधूरा रह गया था। उन्नीसवी शताब्दीमें वह पूर्ण हुआ है। इसमें संस्कृत शब्दोंका बाहुल्य है।

महापती—थाईमें महाछत खप थेट एक ग्रन्थका नाम है। पाली शब्द महाछत है। वसन्तारा जातकके आधारपर इसकी रचना की गयी है। भगवान् बुद्धके जीवनसे सम्बन्धित होनेके कारण अत्यन्त लोकप्रिय है। थाई चित्रकला इसके आधारपर की गयी है।

खुन छंग खुन फएन गाथाएँ है। अयुध्या कालके एक थाई राजा ही इसमें वर्णित राजा कहे जाते है। महाराज राम द्वितीयने इसका नवीन संस्करण किया था। राम द्वितीयका लिखा दूसरा ग्रन्थ इनाओ है। भूका लिखा दूसरा ग्रन्थ अभैमनीशी है। उसीका लिखा एक ग्रन्थ स्वस्ति रक्षा है। राजा वज्रायुधने छा चेन क्रोप लिखा है। 'फ्रा राज' पीठि राजा चुलालोग कर्णका लिखा सुन्दर ग्रन्थ है। इसमें राज्यवंशका वर्ष नियम तथा कर्मकाण्ड वर्णित है।

थाई भाषामें जैसा कहा जा चुका है, सस्कृत, पाली शब्द बहुत है। राजकीय प्रयोगके लिए संस्कृत धातुसे शब्द लिये गये है। संसदके स्पीकरको सभापति, टेलीग्राफको दूरलेखा, टेलीफोनको दूरशब्द, टेलीविजनको दूरदर्शन और हवाई जहाजको आकाशयान कहते हैं।

स्थापत्य

प्राचीन स्थापत्यसे थाई-कला उसके बादमें देखी जा सकती है। उनकी निर्माणशैली चीनसे [illegible] है। मन्दिरोंमें शिखर है। उनपर ख्मेर-

शैलीका प्रभाव है। शिखर भारतीय मन्दिरोंके शिखरसे अधिक मिलते हैं। थाई मन्दिरको वाट कहते हैं।

थाई स्थापत्य शैलीके दो वर्ग है। एक आयताकार बड़ा हाल होता है। दूसरा प्रासाद। वर्गाकार हालके चारों ओर बरामदा होता है। छत एकके ऊपर दूसरी होती है। प्रायः तीन ओलती होती है। खपड़ा लाल रंगका सूर्यमें खूब चमकता है।

फ्रा प्रांग ईटोंका बना शिखराकार मन्दिर होता है। चेदी ही वर्गाकार चैत्य है जिसका मूल प्रयोजन धातु अर्थात् अस्थि रखना है।

विहार और वाट—विहार उस स्थानको कहते हैं जहाँ विशेष प्रयोजनोंपर बुद्ध मूर्ति रखी जाती है। धार्मिक कथा, प्रवचन आदि होता है। वाट और विहार वर्गाकार होते हैं। बरामदाके पश्चात् सहन होता है। सहनके पश्चात् चहारदीवारी रहती है। भारतीय मठका नकशा होता है। बरामदेमें बुद्ध-मूर्तियाँ रख दी जाती हैं। भित्तिपर चित्रकारी प्रायः चित्रित रहती है। चेदीका अर्थ चैत्य है। श्यामके चेदी साँचीके चैत्य द्वारा अनुप्राणित हुए हैं। उसी रचना-शैलीके आधारपर चेदी अर्थात् चैत्योंकी श्याममें रचना हुई है। प्राग शिखर है। दोनों ही वाटके अन्दर होते हैं।

पुस्तकालय, मण्डप, शाला, कुटी, प्रासाद, हा० रं० केग आदि अनेक प्रकारके धार्मिक स्थापत्य होते हैं। श्यामी स्थापत्य हिन्दू उपनिवेशकोंकी देन है। सर्वप्रथम क्ष्मेर, तत्पश्चात् बर्मा द्वारा प्रभावित हुई है।

चैत्य—संस्कृतमें स्तूप, पालीमें थूप, थाईमें स्थुप शब्द प्रचलित है। फ्राका अर्थ थाई 'वरा' अर्थात् महत् किंवा बड़ा होता है। चेदी शब्द चैत्यका अपभ्रंश है। चैत्य मुख्यतया चार प्रकारके होते हैं—१ धातु चैत्य —भगवान्की अस्थि अथवा किसी विशिष्ट व्यक्तिकी अस्थियाँ रखी जाती हैं। २—परियोग चैत्य—भगवान्की वस्तुओं अर्थात् उनके उपयोग वस्तुओंपर चैत्य बनाया जाता है। ३—परवना चैत्य—यह भगवान्के मुख्य चार स्थान कपिलवस्तु, बोधगया, सारनाथ और कुशीनगरमें बनाया

गया है। जैसे धम्मस्तूप। ४—उपदेशिका चैत्य—बुद्धकी मूर्तियाँ जहाँ स्थापित की जाती हैं।

रूपका आरम्भ—गाथा है कि भगवान्के एक शिष्य भिक्षुको एक बैलने मार दिया। उसका दाह-संस्कार हुआ। अस्थियोका क्या किया जाय? पूछनेपर भगवान्ने कहा—भूमिमें रखकर उसपर मिट्टी रख दी जाय। वही पहला स्तूप किंवा चैत्य था। चैत्यका रूप घण्टा जैसा होता है। ऊँची कुर्सीपर घण्टाकार रचना की जाती है। वंकाकके चेदी श्री लंकाके आधारपर साँची रूपके हैं।

दीपदान-दिवाली—लोई कुथंक जल-दीपदान है। लोईका अर्थ होता है प्रवाह करना। कुथंकका अर्थ होता है पत्तोंका बना दोना। पर्णद्रोण। द्रोण वटपत्रका होता है। द्रोणप्रवाह शाब्दिक अर्थ हुआ।

हरद्वार, काशी तथा तीर्थस्थान जो सरोवर अथवा नदीके तटपर है, प्रायः स्त्रियाँ गोधूलिके पश्चात् द्रोणी अथवा मूजके पंखेपर दीप जलाकर धारा किंवा जलमे प्रवाहित कर देती है। बच्चोंकी प्रसन्नता एवं कौतूहलके लिए कुथंग अर्थात् दोना भिन्न-भिन्न पक्षियोके आकारका भी बनाया जाता है। ताम्बूल, पुंगीफल, पैसा, पुष्प, धूप तथा दीप जलाकर द्रोणमे रख दिया जाता है। उत्तर भारतमे पुंगीफल तथा ताम्बूल रखनेकी प्रथा हमने नहीं देखी है। सम्भव है कि दक्षिण भारतमे रखा जाता हो।

श्याममे दीपदान पूर्णिमाकी रात्रिमे नदीके तटपर किया जाता है। द्रोणको जलपर रखनेके पश्चात् धार्मिक कृत्य तुल्य श्रद्धापूर्वक नमस्कार किया जाता है। बच्चे आतिशबाजी तथा फुलझड़ी छोड़ते हैं।

यह प्रथा जलदेवीको प्रसन्न करनेकी भावनासे उदय प्रतीत होती है। एक प्रकारकी श्रद्धा माँ जलदेवी (मै खोंखा) के प्रति प्रकट करना है। खोंखाका वही अर्थ है जो भारतमे गंगाका है। शब्दका भावार्थ माँ गंगा हुआ। थाईमे जलके लिए यही शब्द प्रयुक्त होता है। महाराष्ट्रमें महिलाएँ प्रायः सभी नदियोंके लिए गगा शब्दका ही प्रयोग करती है। गंगाका नाम लेते ही जलका सम्बोधन होता है। भारतके

सगीतपर कोई प्राचीन पुस्तक नहीं थी। केवल श्रुतिके आधारपर वे प्रचलित थे। वृद्ध तथा पुराने गायकोंकी मृत्युके साथ अनेक राग नष्ट हो गये। राजा चुला लोंग कर्णने पाश्चात्य संगीतके उदयके पश्चात् मुख्यतया वैण्ड संगीतके आगमनके साथ थाई तथा पाश्चात्य संगीतका समन्वय किया। पुराने रागोंके जो कुछ गायक बच गये थे उनके द्वारा स्वर लय-बद्ध कराया गया। थाई संगीत मैंने सुना। पाश्चात्य अँग्रेजी तथा फ्रेंच गाना बड़ी कुशलतासे पाश्चात्य वैण्डपर वे गा लेते है। एक थाई स्त्री पाश्चात्य वेशभूषामें गाने लगी तो मुझे भ्रम हुआ कि वह पाश्चात्य है अथवा थाई। पाश्चात्य सभ्यता थाई देशमें जोरसे फैलती जा रही है। पुरानेका स्थान नवीन शैलियाँ ले रही है। फिर भी थाई संगीतमें अपनी मौलिकता है।

बंकाक अन्तराष्ट्रीय नगर है। इसका प्राचीन नाम फंग पेप था। इसकी नीव १७८२ मे पड़ी। सभी देश तथा जातिके लोग यहाँ मिलेंगे। कलकत्ता-बम्बईके समान विशाल अट्टालिकाएँ नहीं हैं। उसकी अपनी सुन्दरता है। चौड़ी सड़कें हैं। उनके किनारेपर पेड़ लगे है। पटरियाँ हैं। नहरे हैं। वेनिसमे एक नावसे सारे नगरमें लोग घूम सकते हैं। उसी प्रकार नावसे प्रायः सारा बकाक घूमा जा सकता है।

हिन्दू चिह्न बहुत मिलेंगे। राजा राम प्रथमने राज्यकार्य संचालन-मे ब्राह्मण संस्कार अपनाया। श्यामके १९५० में हुए राज्यतिलक संस्कार-को देखकर कोई भी कह सकता था कि वह जैसे किसी प्राचीन भारतीय राज्य संस्कारको देख रहा हो।

राज्य सिंहासनपर नवखण्डीय छत्र लगा है। सिहासनमे गरुडारूढ़ भगवान् विष्णुकी मूर्ति है। राजाका छत्र नवखण्डीय, युवराजका सात-खण्डीय तथा अन्य राजवंशियोंका भिन्न-भिन्न खण्डीय होता है।

बुद्धकी प्रतिमा—बंकाककी सबसे अधिक दर्शनीय वस्तु भगवान् बुद्धके पन्नेकी मूर्ति है। वह पारदर्शी और हरी है। ६० सेंटीमीटर ऊँची है। भारतसे लंकामे गयी। लंकासे श्याममे आयी। अनेक नगरोंमे घूमती

वह स्थायीरूपसे बंकाकमे स्थापित है। विश्वकी एक आश्चर्यजनक वस्तु है।

वाट फ्रा कियोमे मूर्ति रखी है। थाई देशमे इस मूर्तिकी सबसे अधिक प्रतिष्ठा है। वाटमे तीन प्रवेशद्वार हैं। दानवरूपी द्वारपाल वाटके बाहर स्थित है। बुद्धमूर्ति लगभग २ फुट ऊँची है। समूची मूर्ति पन्नाके एक ही पारदर्शी पत्थरसे बनी हुई है। यह पत्थर काकेशशका है। गाथा है कि देवराजने इसे भारतीय भिक्षु नागसेनके लिए गढ़ा था। उत्तरी-पश्चिमी भारतीय कला है। शायद किसी यूनानी कलाकारने बनायी थी। वह भारतमे थी। वहाँसे श्री लंका गयी। श्री लंकासे थाईमे आयी। वहाँके अनेक नगरोमे भ्रमण करती अब बंकाकमें स्थापित है। प्रथम चक्री-वंशके राजा इसे थानवरी अर्थात् ध्यानपुरीसे बंकाक लाये। उसके पूर्व यह चिपागराई, उत्तरश्याम, लंपंग, दक्षिणी श्याम तथा १४८८ मे चिपागमाईमे थी। राजाने राजकीय वाट केपो मूर्ति निमित्त निर्माण कराया। ब्रिटेनके सिंहासनके नीचे रखे पत्थर-तुल्य इस मूर्तिका भी सम्बन्ध श्यामके राज-भाग्यसे लगाया जाता है। मूर्ति बड़ी ऊँची वेदीपर रखी है। मूर्ति कीमती वस्त्र तथा सुवर्ण, मणि एवं रत्नजटित मुकुटसे विभूषित है। मूर्तिकी परिक्रमा की जाती है। वाटकी दीवार पर कुछ चित्रकारी है। मूर्तिके सम्मुख बैठकर लोग उपासना करते है।

इस वाटके बाहर, नन्दी, शिवलिंग एवं विष्णुकी मूर्ति है। विस्तृत बरामदेकी भित्तिपर रामायण चित्रित है।

वाट सरखेट—बकाकके स्वर्णशिखरपर नवम्बर मासमे बौद्ध जनता पूजा करने आती है।

सन् १८१८ मे पिपरवा (बिहार) मे बुद्ध भगवान्की धातु अर्थात् अस्थि मिली थी। भारत सरकारने उसे चार बौद्ध देशो—लंका, श्याम, बर्मा और जापानको दिया था। श्याममे बुद्धकी धातु यहीं रखी गयी है।

मूर्तरूप आयुर्वेद—अरुण वाट—बंकाकके दूसरे तटपर दर्शनीय अरुण वाट है। बंकाकमे आनेवाला कोई व्यक्ति इसे देखे बिना नहीं रह सकता। इतना विशाल एवं विचित्र है कि जीवनपर एक छाप छोड़ देता

है। इसका शिखर २५० फुट ऊँचा है। नदीके तटपर स्थित है। स्तूपके ताखोंमें इन्द्र, चन्द्र आदिकी मूर्तियाँ रखी हैं।

यह वाट भारतीय पञ्चरत्न मन्दिर अर्थात् चारों कोनोंपर चार छोटे मन्दिर तथा केन्द्रमें ऊँचा मन्दिर जैसा बनता है। आयुर्वेद शास्त्रीय अनेक सिद्धान्त रेखांकनमें बनाये गये हैं। मनुष्यमें कौन-सी बीमारी होती है। उस बीमारीका रूप, उससे पहुँचानेवाली पीड़ाका रूप, वह पीड़ा किंवा व्याधि कितने दिनोंतक रहेगी—सब विस्तारसे बनाया गया है। यह मानव-शरीर-विज्ञानकी पाठ्यपुस्तक है। अनेक देशोंकी बुद्ध मूर्तियाँ जिनकी संख्या ५२ होगी वहाँ रखी हैं। अन्तिम मूर्ति राजा चूला लोंग कर्णके समय लाकर रखी गयी थी।

वाट बंचेमावफिट—यह बंकाकमें स्थित है। भारतीय राजमहल-के समान मारबुलका बना है। विश्वके श्रेष्ठ निर्माणोंमें यह भी एक निर्माण है। लाल टाइलकी छत चौहरी है। प्रवेशद्वारके दोनों ओर सिंह बने हैं। इसका स्थापत्य अत्यन्त सुन्दर है।

राजप्रासाद—बंकाक राजप्रासाद विश्वके राजप्रासादोंकी भव्यतामें पीछे नहीं है। यह चहारदीवारीसे घिरा नगर है। इसका क्षेत्रफल एक मील है। इसके अन्दर अत्यन्त उत्कृष्ट कलापूर्ण इमारतें तथा मन्दिर हैं। मन्दिरके बरामदोंमे छोटी-छोटी घंटियाँ नेपाली मन्दिर-तुल्य लगी हैं। हवाके सहारे वे मन्दध्वनि करती रहती हैं। सौन्दर्यकी खान है। रंग, निर्माणोंकी अलंकारिता, पादपोंका झूमना एवं घंटियोंका बजना मनमें एक प्रकारकी विचित्र मनोरम किन्तु सात्विक भावना उत्पन्न करता है।

चक्री हालकी इटालियन डिजाइन है। उसका स्थापत्य ब्रिटिश है। राजसिंहासन-भवन अथवा दरबार बहुत भव्य है। तुषित महाप्रासादमें राजा वैदेशिक राजदूतोंसे परिचय-पत्र लेते हैं। थाई राजा तथा उनके वंश सम्बन्धी अनेक संस्कार एवं रीति-रिवाज बड़े ही मनोरंजक हैं।

सर्प-उद्यान—महाराज चूला लोंग कर्णकी रानी श्रीमती समो वथा (सर्वथा ?) के नामपर बंकाकमें सर्पोंका उद्यान है। विष निकालकर
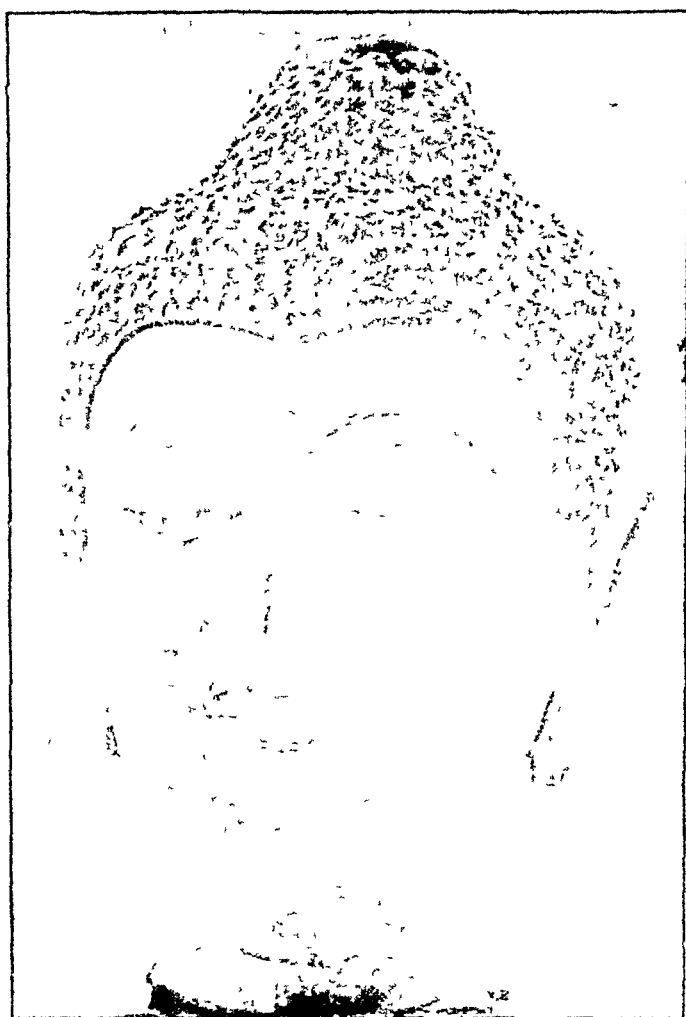
चिगमाई, श्याम (थाईलैण्ड) में प्राप्त बुद्ध-मस्तक (१२ शती)

स्वर्ण द्वीप—
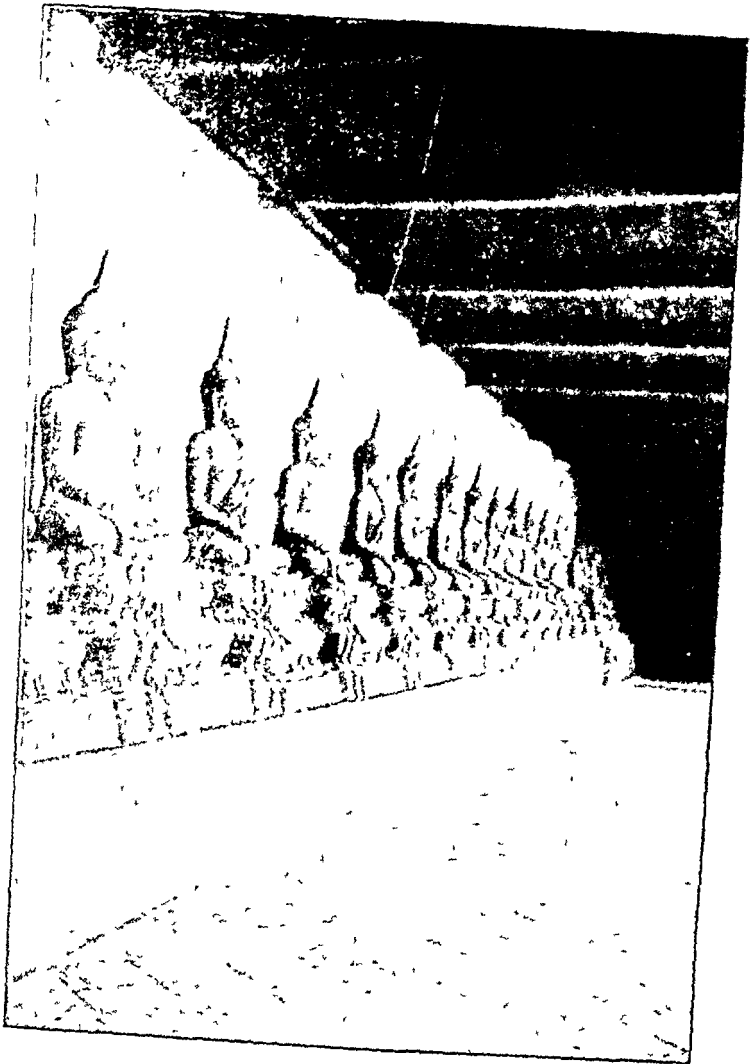
वाट फो—बुद्धकंथ, (वंकाक) थाई लैण्ड

उसका सिरम बनाया जाता है। सर्प उद्यान बड़ा ही भयकर है। उसमें पाले गये सर्पोंको देखकर भय मालूम होता है। सर्प मुख्यतया तीन प्रकारके होते हैं—करैत, कोबरा, किंग कोबरा। तीनों विषधर अलग-अलग रखे जाते हैं। बिना विषके सैकड़ों सर्प किंग कोबराके भोजन निमित्त काम आते हैं। सर्पका भक्ष्य सर्प ही देखकर कुछ कौतूहल अवश्य मालूम पड़ता है। एक ही जातिके जन्तु प्रायः अपनी जातिको नही खाते। यही बात पशु-पक्षी तथा मनुष्योंमे पायी जाती है। इसमे कुछ अपवाद भी हो सकता है। यह एक जातिचेतना है, जो सबमे पायी जाती है।

सर्प काटनेके कारण मनुष्य ३ घण्टेसे लेकर ६ घण्टेके अन्दर मर जाता है। सर्पसे विप निकाला जाता है। जिस समय विप निकालनेवाला आता है उस समय सर्प डर जाते है। हमला नहीं करते। विष निकालने-वाला अत्यन्त पटु होता है। सर्पका विष काला नही होता। उसका रंग पीला तथा तरल होता है। यहाँ घोड़े भी पाले गये हैं। सिरम तैयार किया जाता है। जिस प्रकारके सर्पने काटा हो उसीके सिरमका प्रयोग करना चाहिये अन्यथा लाभ नहीं होता। श्याममे ६०० औपधालय हैं। उनके द्वारा सर्पदंशका उपचार तथा सिरमका वितरण किया जाता है।

वाट सुथर—विहार बड़ा भव्य है। इसमे १४वीं किंवा १५वीं शताब्दीकी सुखोदयामे भगवान् बुद्धकी ढाली मूर्ति है। १९वीं शताब्दीमे यहाँ लाकर रखी गयी है। विहार अत्यन्त सुन्दर चित्रकलासे चित्रित है। उसके पीछे एक वाट है। इसमे बंकाकमे ढाली बुद्धमूर्ति रखी है। वाट सुथर चक्री-वंशके प्रथमसे तृतीय राजाके राज्यकाल सन् १७८२ से १८५१ के बीच बना है।

फ्रा पाथम चेदी—फ्राका अर्थ उच्च होता है। यह महा शब्दका अपभ्रंश है। यह चैत्य ३७५ फुट ऊँचा है। सन् ५०० ईसवीमे बना था। इसका मूलरूप अरुण वाटसे मिलता था। अरुण वाटका मूल भाग चौखूटा था। इसका वृत्ताकार है। शिखर अरुण वाटके सदृश ही है। कटोरेके ऊपर जैसे शिखर खड़ा किया गया है। राजा कांगकूटने इसका

जीर्णोद्धार कराया था। इस समय यह शुद्ध बौद्ध चैत्य तुल्य गोलाकार है। थाई देशका बहुत बड़ा स्मारक है। देशका अत्यन्त पवित्र एवं एक पूजनीय स्थान है। भगवान् बुद्धकी चार भिन्न मुद्राओंमें मूर्तियाँ यहाँ मिलेंगी। राजा वज्रायुधके इच्छानुसार उनकी मूर्ति यहीं रखी गयी है। पचास फुट लम्बी महाशाई बुद्धकी मूर्ति यहाँ है।

नकरोन भवन—इस स्थानकी जनसंख्या तीन लाख है। मुख्य पैदावार लकड़ी और चावल है। लकड़ी नदीके प्रवाहमें बहाकर लायी जाती है। पर्वतपर भगवान् बुद्धकी मूर्ति बनी है। वह २५० फुट ऊँची होगी। सारे स्थानपर जैसे भगवान्की करुण दृष्टि पड़ती रहती है। यहाँके भिक्षु पीत चीवरमें मिलेंगे। स्त्रियाँ श्वेत चीवर धारण करती हैं। भिक्षुणियाँ पंक्तिबद्ध बैठी भगवान्का गुणगान तथा धार्मिक स्तवन करती रहती हैं। लकड़ीका घण्टा बजानेकी चाल है। शेल, काल्टेक्स तथा मोबाइल गैसके पेट्रोल टैंक मार्ग तथा नगरमें खूब मिलेंगे।

वपुञ्जरी (पेचवरी)—बंकाकसे १५० मील दक्षिण-पश्चिम है। श्यामके नगरोंमें यह तीसरा बड़ा नगर है। महत्त्वकी दृष्टिसे इसका स्थान दूसरा है।

कलश चैत्य—चियाग माईमें वाटकू ताओ चैत्य है। कमल पंखड़ी-तुल्य ऊँचे अधिष्ठानपर सात कलश पद उत्तुंग चैत्य हैं। एकके ऊपर दूसरा कम्प जैसे रखा गया है। पहले घड़ा बड़ा और सबसे ऊपरवाला छोटा हो गया है। सप्तसागर, सप्तकलशीय चैत्य है।

स्वर्णलोक तथा साँची—स्वर्णलोक (सवनका लोक)में साँची तुल्य स्तूप बना है। साँची देखकर आये हुए कलाकारने साँचीका जैसे रूपांकन 'सवनका लोक'में किया है।

थाई भारत लाज—रात्रि ७॥ बजे १७-२-५६ को हम रंगूनसे उड़े। ठीक ९॥ बजे रात बंकाकके डानमांग हवाई अड्डेपर उतरे। हवाई अड्डा नगरसे लगभग २० मील दूर होगा। वहाँ श्री रघुनाथ शर्मा, मुनिराज सिंह, आर्यसमाजके सभापति सिख सज्जन मिले। भारतीयोंको देखकर

उल्लास हुआ। रात्रिमे भारत-थाई लाज पहुँचे। भोजनका प्रबन्ध श्री नारायण सिंह नामधारीने किया था।

भारत थाई लाज श्याममे भारतीय प्रगति, संस्कृतिका केन्द्र है, स्कूल है, पुस्तकालय है। भारतीयोंके ठहरनेके लिए बंकाकमें सर्वश्रेष्ठ स्थान है। नगरके सब स्थानोंके करीब है। बर्माके भारतीयोंको उदास देखा। यहाँ वे प्रसन्न मिले। स्वर्गीय स्वामी सत्यानन्द जिन्होंने थाई रामायणका अँग्रेजीमें अनुवाद किया है, इसके प्राण और संस्थापक थे। उनकी अकाल मृत्युसे थाई-भारत-सांस्कृतिक-प्रगतिको ठेस लगी है।

स्वतन्त्रता दिवस—प्रातःकाल होते ही थाई भारत लाजके प्रांगणमे अपूर्व उत्साह था। मैं बरामदेमे टहलने लगा। भारतीय बालक और बालिकाओसे प्रांगण भर गया। उनमे सिख, मुसलमान, पारसी, हिन्दू, सभी थे।

मैं उन समवेत भारतीयोंकी मुखमुद्रा देखने लगा। प्रत्येक बालक, वृद्ध, युवा, युवतीके हृदयमे पैठकर उनकी उमंग, उनके उत्साहका रहस्य जानना चाहता था। उन्हे देखता-देखता भूल गया। उनकी उमंगमय कल्लालेमें मै जैसे उठ चला। मैं इस जगत्, इस भूमिसे, उन पवित्र ऊर्जस्वित् ध्वनिमें जैसे ऊपर उठने लगा।

मेरे सम्मुख एक वाट था। उसमें भगवान् बुद्धकी मूर्ति थी। कुछ भिक्षु भिक्षापात्र लिये पिण्डपात पश्चात् लौट रहे थे। दाहिनी ओर जेलखाना था। दोनो सम्बद्ध थे मुक्तिसे। एकमे बैठकर जीवन-मुक्तिकी कल्पना लोग कर रहे है और दूसरेमे बैठकर भारतीयोने भारत मुक्तिकी कल्पना की थी। वह कल्पना आज साकार थी। भारत मुक्त था। भारतीय मुक्त थे। कितना आकर्षण इस मुक्तिमे है, इसकी कल्पना कोई भारतीय अपने देशसे हजारों मील दूर ही रहकर कर सकता है। माना कि गोदमे स्नेहका अनुभव नहीं होता, स्नेह उमड़ता है माताके ओट होनेपर।

ऑखें उमड़ने लगी। मनमे आया, कहीं अकेले बैठकर रोऊँ। क्यो रोऊँ, यह भी समझमे न आया। एकत्रित, उल्लसित कण्ठसे भारतीय

राष्ट्रगान उद्भूत हुआ। अनन्तर श्यामका राष्ट्रीय गान गाया गया। थाई भारत दोनों ही गान एकही कण्ठसे निकलकर बहा रहे थे। स्रोत एक ही था। एक कहता रहा, दूसरा फिर तरल हुआ है, हजारों वर्षोंके पश्चात् गान समाप्त होते हैं। वृद्धकी आँखें भरी देखीं। प्रौढ़ गम्भीर थे। युवक मुस्कराये। बालक-बालिकाएँ उल्लसित हो उठीं। मैंने अपनी रूमालसे नेत्र पोंछ लिया। आजादोंके देशमें अपनी आजादीके गौरवका दर्शन किया।

दूतावासमें स्वतन्त्रता-दिवस—सायंकाल भारतीय दूतावासमें स्वतन्त्रता-दिवस था। थाई बैंड बज रहा था। यहाँ भी दोनों देशोंके राष्ट्रगान गाये गये। श्री मेनन तथा श्रीमती मेनन उपस्थित थे। अनेक भारतीय व्यवसायी तथा विदेशी दूतावासके लोग उपस्थित थे। समारोह सुन्दर तथा सादा था।

संसद्—थाई संसदके सभापतिसे संसद भवनमें भेंट हुई। भारतमें लोकसभाके सभापतिको अध्यक्ष कहा जाता है। श्याममें उन्हें सभापति कहते हैं। संस्कृत शब्दोंका श्याम भण्डार है। राजकीय कार्योंमें उनका प्रयोग होता है। हमें उनसे बहुत कुछ सीखना है।

विरोधी दल—विरोधी दलके नेताओंसे भेंट हुई। सीटोंपर खुलकर विचार-विमर्श हुआ। कई समाचारपत्रोंके कार्यालयोंमें भी हम लोग गये। सभी जगह स्नेह और आदर मिला।

हिन्दू, आर्यसमाज, गुरुसिंह सभा—यहाँ आर्यसमाज तथा हिन्दू मन्दिर दोनों ही सटे हुए हैं। दोनोंमें हमारा स्वागत तथा भाषण हुआ। गुरुसिंह सभामें भी हम गये। वहाँ जलपानका आयोजन था। भाषण भी हुए। हमें भारतके बाहर धर्मके नामपर संगठन देखकर विशेष उत्साह न हुआ। भारत थाई लाज जैसी संस्थाओंकी ही विदेशमें आवश्यकता है।

हम बंकाकसे अयुध्या जा रहे थे। मार्गमें एक स्थानपर कार रुकी। बगलमें चीनी बाट था। कार रुकते ही कुछ लड़कियाँ सामान बेचने आ

गयी। उनमें एक लड़की लज्जित होकर पीछे हट गयी। बात ही बातमे मालूम हुआ, वह एक भारतीयकी कन्या है। उसने यहाँ आकर कभी कुछ काम किया था। फिर भारत लौट गया। उसके पश्चात् कुछ पता न चला। मैं उसके पास गया। उसकी आँखे भर आयीं। मैं कुछ बोल न सका। लज्जित हुआ। उसे वाटकी छायामें भगवान् बुद्धके सम्मुख बैठे देख चीनी भिक्षुओंके सम्मुख मुझे लज्जा मालूम पड़ने लगी। मैंने उसे थाई रुपया दिया। उसने हिचकते हुए ले लिया। भगवान्‌की ओर देखा। करुणामयकी करुण दृष्टि जैसे कन्याको आशीर्वाद दे रही थी। मेरी कार चली। मेरी ऑखोके सम्मुख उसकी भरी निर्मल ऑखे थी। मैंने सोचा, यदि भारतीय कही चीन तथा बौद्धोंकी तरह समयकी गतिके अनुसार अपनेको ढाल सके होते तो शायद हमारी विपन्नावस्था न हुई होती। मेरे विचार मोटरके पीछे उड़ते धूलिजालकी तरह उठने लगे और सामने उठने लगे अयुध्याके मन्दिरके शिखर।
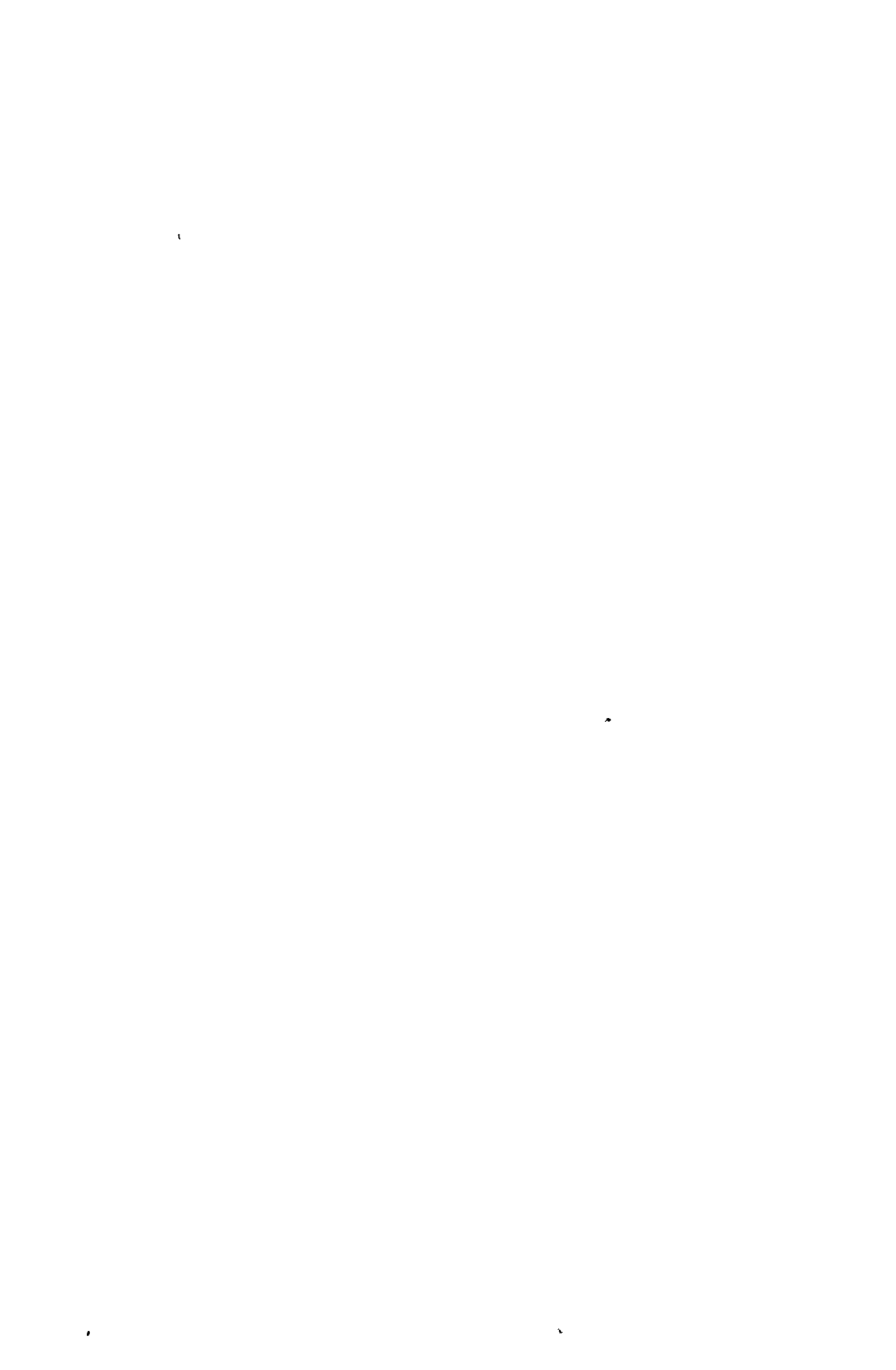
बर्मा

काशीका हूँ। काशीका नाम सुनता हूँ। आकर्षण होता है। जातक-कथाएँ पढ़ी है। प्रत्येक कथा वाराणसीके नामसे प्रारम्भ होती है। जातक मुझे प्रिय लगा। अपनत्वका अनुभव हुआ।

आजसे कोई दो सहस्र वर्षपूर्व पाटलीपुत्रमे तृतीय बौद्ध परिषद् संगायन अथवा संगीती हुई थी। देश-विदेशके भिक्षु समवेत थे। प्रिय-दर्शी अशोकके निर्देशनमे हो रही थी। थेर तिस्स मौग्गलिपुत्तने सम्राट्को बुद्धधर्ममें दीक्षित किया था। एक सहस्र भिक्षु त्रिपिटककी पाठ-शुद्धिमे लगे थे। तिस्सने आजसे २२१० वर्ष पूर्व धर्म-प्रचारकी बात उठायी। बौद्धधर्मने मिशनरी रूप लिया। इस समय (१९५६) रंगूनमें भी छठी बौद्ध परिषद् किवा संगायन हो रही थी। बाइस सौ वर्ष पूर्वके दृश्यकी शायद एक झाँकी मिल जाय, यह लोभ था। लोभ बुरी बात है। परन्तु यह लोभ मुझे अच्छा लगा।

बर्मा जानेवाला हूँ। दक्षिण-पूर्व एशियाका सबसे बड़ा देश है। शोण एवं उत्तरकी याद आयी। वे काशीके थे। युवक थे। उनमें लगन थी। अशोकने राजपुत्र महेन्द्र तथा राजकन्या संघमित्राका त्याग किया था। शोण एवं उत्तरने भी काशीको नमस्कार किया। प्रियदर्शी अशोक सहायक हुए। उनके पवित्र चरण-कमल ताम्रलिप्तकी ओर उठे। जहाजने लंगर उठाया। भारतभूमि क्षितिजमे लोप होने लगी। उनके लोचन सजल हो चले। समुद्रकी उत्ताल तरंगे लज्जित हो गयीं, लहरोंमें छिपने लगे। पाल हवा भरता सुवर्ण भूमिकी ओर बढ़ चला।

जहाजने सुवर्ण भूमिका स्पर्श किया। सुवर्णमें सुगन्धि जैसे फैल गयी। कोलाहल हुआ। व्यापारी दौड़े। श्रमिक दौड़े। लोग दौड़े। भौतिक

सम्पदाकी लालसामें। उनकी आँखोंने देखा। स्तम्भित हो गयीं। कोलाहल स्थिर हुआ।

वर्मावासियोंने देखा दो चीवरधारी मानव। उनके हाथोमें भौतिक प्रसाधन न थे। केवल थे त्रिपिटक। उनमें क्या होगा ? सबके हृदयोंने पूछा। अमूल्य रत्न होगा। वे चले। लोग पीछे हटे। उन्होंने नमस्कार किया। पवित्र सुवर्ण भूमिको नमस्कार किया। नमस्कार किया पवित्र लोगों को। उनको—जिनकी सन्तति पचीस सौ वर्षों बाद त्रिपिटकका पाठ शुद्ध कर रही थी। जिनका दर्शन प्रथम बार शोण एवं उत्तरके हाथोंमें वर्मावासियोंने किया था।

उनकी मुद्रा गम्भीर थी। वे आये थे अनजाने देशमें। गंगासागरके बादके वर्णित शायद किरात देश मे। किन्तु इस आशामें—मानव सर्वत्र समान है। वर्माके मानवने भारतीय मानवके लिए हृदय खोल दिया। वे उतरे जलयान से। महार्णव पार करनेके पश्चात्। भगवान् बुद्धकी वाणीके साथ।

महावंश उनकी कहानी कहता है। हमने पढ़ी है। गौरव का अनुभव किया है। वर्माको उन्होंने धर्म दिया। उनकी स्मृतिके साथ चला। तेईस शताब्दियाँ अपने लपेटेमें बहुत कुछ लपेट गयीं। उस लपेटेमें बहुत लोग लोप हो चुके हैं। सुगन्धि लोप नहीं होती। उसे कोई बाँध नहीं रख सकता। उनकी सुगन्धि ताजी थी। प्रत्येक वर्मी उनकी स्मृतिमें मस्तक झुका देता है। उन्हें कोई भूल गया है। वे भूलनेवाले हैं—उनके देशवासी।

हवाई जहाज कलकत्तेसे उड़ा। रंगून पहुँचा। जहाज शिडागोन पगोडापर मंड़राया। दृश्य अद्भुत था। पगोड़ा देखते शोण एवं उत्तरसे भी दो शताब्दी पुरानी बात याद आ गयी।

बात बहुत अच्छी है। भगवान् बोधिवृक्षकी छायामें थे। भगवान् समाधिसे उठे। मुचलिंदसे राजपतन वृक्षके समीप आये। वृक्षके नीचे भगवान् एक सप्ताह तक एकासीन रहे।

उत्कल देशके दो वणिक् थे। उनका नाम था तपस्सु और भल्लुक। उत्कलवासी थे। उनमें प्रेरणा हुई। भगवान् बुद्धत्व प्राप्त कर चुके हैं। राजपतनके नीचे विहारशील है। वे मन्थ अर्थात् मट्ठा और मधुपिण्ड अर्थात् लड्डू सहित भगवान्के समीप गये। बोले—भन्ते! ग्रहण करें।

भगवान्के पास पात्र नहीं था। वे पत्थरके पात्र ढूँढ़ लाये। पुनः बोले—भन्ते! पात्र द्वारा ग्रहण करें। भगवान्ने ग्रहण किया। वे बोले—बुद्धं शरणं गच्छामि, धर्मं शरणं गच्छामि। विश्वमे वे द्विवचनीय प्रथम उपासक हुए। उस समयतक संघकी स्थापना नहीं हुई थी। संघके शरण जानेका प्रश्न उत्पन्न नहीं होता था।

भगवान् उन्हे भूले नहीं। श्रावस्तीमे विहार कर रहे थे। भगवान् बोले—भिक्षुओ! मेरे उपासक श्रावकोमे तपस्सु और भल्लुक वणिक् अग्र हैं।

गाथा है। भगवान्ने उन्हे अपने केशके चार बाल दिये थे। उन चारों केशोंके साथ वे बर्मा आये। उन्ही चारो केशोंके ऊपर विश्वका प्रख्यात, बर्माका हृदय-स्थल, स्थापत्यका उत्कृष्ट नमूना, सुवर्णकलश-के साथ शियोडगोन पगोडा सूर्यप्रभामे मुस्करा रहा था। बर्मा गर्व कर सकता है भगवान्के प्रथम उपासकोके लिए। बर्मा गर्व कर सकता है भगवान्के उन चार केशोके लिए, जिसे उन्होंने दिया था धर्म-चक्र-प्रवर्तनके पूर्व।

वे उत्कलके वणिक् थे। रंगूनका प्राचीन नाम ओक्काला था। उत्कल शब्दका ओक्काला अपभ्रंश है। वणिकोके कारण ही रंगूनका नाम उत्कल रख दिया गया होगा। ग्यारहवीं शताब्दीमे उसे औक्कलके स्थानपर दगोन कहा जाने लगा। इसका एक प्राचीन नाम असितनगर भी था। फोक्करवती (पुष्करवती) भी कहा जाता है। सुन्दर विस्तृत पुष्कर-झील तुल्य झीलोंके कारण सम्भव है कि भारतीयोंको इसे पुष्कर नाम दे दिया हो। स्वेजिगान दगोनके नामपर ही 'दगोन' अथवा 'दगुन' रंगूनका नाम पड़ा था। राजा अलौडप्पाने सन् १७५५ मे दक्षिणी बर्मापर विजय प्राप्त

की। उस समय वहाँ थोड़े लोग आवाद थे। स्थानका नाम 'यंगोन' अर्थात् शान्तिनगर रखा गया। अंग्रेजी कालमें 'यंगोन'का अपभ्रंश 'रंगून' हो गया।

सन् १७५६ में वर्माके प्रसिद्ध बन्दरगाह सैरियमको अलोटप्याने नष्ट किया तो रंगून बहुत शीघ्र बन्दरगाह और व्यापारका केन्द्र हो गया। रंगून समुद्रसे २१ मील दूर रंगून नदी अथवा ह्लेगं नदीके किनारेपर आवाद है। यह सन् १८५२ में ब्रिटिश विजित वर्मा भूखण्डकी राजधानी बना। सन् १८८५ में ब्रिटिश वर्माकी राजधानी हो गया। ४ जनवरी सन् १९४८, आजादीके पश्चात् यह वर्मासंघकी राजधानी बना। वर्माका ८५ प्रतिशत आयात-निर्यात केवल रंगून बन्दरगाहसे होता है। बन्दरगाहमें १५ हजार टनके जहाज आ सकते हैं। वर्षमें लगभग २ हजार जहाज बन्दरगाहमें आते हैं, प्रत्येक जहाजमें कमसे कम ५ हजार टन सामान रहता है।

वर्मा नगरकी आधुनिकतम रचना की गयी है। उसकी सड़कें सीधी तथा चौराहे समकोण हैं। नगरमें अनेक झीलें, पगोडा आदि उसे अत्यन्त दर्शनीय, सुरम्य बना देते हैं। वर्मा वासियोंकी वेशभूषा बड़ी आकर्षक होती है। वे सरंग अर्थात् लुङ्गी पहनते हैं। स्त्रियाँ एंजी अपर शरीरको ढकनेके लिए बड़े ही सुन्दर ढगसे धारण करती हैं। पाउडरके स्थानपर एक प्रकार लकड़ी घिसकर मुखपर लगाती हैं। पाउडरसे अच्छा लगता है। पाउडर और मुखपर चूना लगानेमें बहुत कम भेद मालूम पड़ता है। महिलाओंके केश लम्बे होते हैं। लम्बा केश होना स्त्रीका गुण समझा जाता है। सर्वश्रेष्ठ केशवाली स्त्रियाँ अपना लम्बा केश काटकर किसी पगोडा अथवा मन्दिरमें चढ़ा देती हैं। उन्हें अच्छे स्थानपर लटका दिया जाता है। झूठे केश लगानेकी भी प्रथा है। लम्बा चमकता केश होना भारतके समान सुन्दरता माना जाता है।

वर्मी गाथा कहती है कि दोनों उत्कलीय वणिक् पुत्रोंको भगवान्ने अपने हाथसे अपने आठ वाल बोधिवृक्षके समीप दिये थे। उन्होंने

'अक्काला' अर्थात् रंगूनकी ओर प्रस्थान किया। मार्गमें अजेता बन्दरगाहमे ठहर गये। अजेताके राजाने उनका बड़ा स्वागत किया। उन्हे २ बाल देनेके लिए बाध्य कर दिया। जहाज अजेतासे चला। मार्गमें नागराजने मानव रूप धारण किया। जहाजपर चुपकेसे आकर दो बाल चुराकर भाग गया। शेष चारो बालोकी रक्षा जहाजपर की जाने लगी। जहाज ओक्काला (रंगून) बन्दरगाहपर आकर लगा। राजा ओक्कालाने बड़ा स्वागत किया। हर्ष मनाया गया। मेला लगा।

भगवान्‌के बाल कहाँ रखे जायँ? लोगोने स्थान ढूंढ़ना आरम्भ किया। इन्द्रलोकसे शक्र अर्थात् इन्द्र स्थान-चयन निमित्त ओक्काला (रंगून) मे आये। इन्द्रने देवात्मा, सुल, अमित, पन्हनी तथा दक्षिणकी सहायता ली। पूर्व तीन बुद्धोके दण्ड, कमण्डलु तथा स्नानवस्त्र जो पहले गाड़कर रखे गये थे, सिंगुत्तरा पहाड़ीसे खोदकर निकाले गये। पहाड़ीपर जहाँसे वे संस्मारक मिले थे, वहीं केशोके साथ पुनः गाड़ दिये गये। गाथा कहती है। राजा ओक्कालाने केश-मजूषा खोली। चार केशोके स्थानपर आठ केश थे। मंजूषा खुलते ही केश सात ताड़ वृक्षकी ऊँचाईतक उड़ गये। उनके ६ रंग हो गये। इन्द्रने सोनेसे सिंगुत्तरा पहाड़ीपर खुदा गड्ढा ढक दिया। उसपर सुवर्ण पगोडा बनाया गया। (पगोडा शब्द सिंहली दगोवाका अपभ्रंश है। पगोडा वास्तवमे चैत्य है। बर्मामे चैत्यको चेती अथवा चेदी कहते हैं। पगोडाका अर्थ स्तूप होता है।) सुवर्णके ऊपर चाँदीका पगोडा बनाया गया। उसपर टिनका पगोडा बनाया गया। टिनपर शीशेका पगोडा बनाया गया। शीशेपर संगमरमरका पगोडा बनाया गया। संगमरमरके ऊपर ईंटोंका पगोडा बना।

सिंगुत्तरा पहाड़ीकी भी कहानी है। पूर्वकालमे समुद्र प्रोमतक था। सागरमे केवल दो भूखण्ड दिखाई पड़ते थे। एक तो सिंगुत्तरा पहाड़ी थी और दूसरा हिन्थागोन। इसीपर पेगू नगर स्थित था। समुद्र पीछे हटने लगा। पहाड़ीके चारों ओर भूखण्ड निकल आया। उसके दक्षिणी भागपर 'अक्काला' नगर आबाद हुआ। ओक्काला राजा शासन करने लगा।

पगोडा पहले ६० फुट ऊँचा था। कालान्तरमें राजा बिन्न्याझाने उसके भाई तथा रानी शिनशनाबूने ३०२ फुट ऊँचा (१४५३-७२) बनवाया। पूर्व बर्मी राजाओंने उसकी मरम्मत आदि करायी थी। वर्तमान रूप रानी शिनशनाबूने ही दिया है।

रानीने पगोडाके चारों ओर चढ़नेके निमित्त सीढ़ियाँ बनवायीं। फर्श लगवाया। अपने वजनके इतना स्वर्ण अर्थात् स्वर्ण तुला-दानकर पूरे पगोडाको सुवर्णसे मुलम्मा करवा दिया। रानीने राज सन् १४७२ में धम्यजेदी (धर्मचेति अर्थात् धर्मचैत्य) को दे दिया। पगोडामें आकर सन्त-जीवन व्यतीत करने लगी। अन्तिम अवस्थामें शय्या पगोडाके समीप लगवा ली। पगोडाका पवित्र दर्शन करती रानीने अन्तिम श्वास लिया।

राजा धम्यजेदी (१४७२-१४९२) ने पगोडा सम्बन्धी गाथा लेख-बद्ध करायी। राजाने अपनी रानीके साथ चार सुवर्ण तुलादानोंके सुवर्णसे पगोडाको सुसज्जित किया। उसने प्रसिद्ध घण्टा 'अविंग जौका' ढलवाया। उसका वजन २९ टन था। यह घण्टा रंगून नदीमें सन १६०८ में डूब गया। पुर्तगाली राजा डी ब्रेटो उसे रंगूनसे सेरियम तोप ढलवानेके लिए ले जाना चाहता था। सन् १७७४ में आवा (रतनपुर)के सिन ब्यूशिन राजाने पगोडाकी वर्तमान ऊँचाई ३२६ फुट ऊँची की। सन् १७७८ में राजाके पुत्र दावा सिंगूने २५ टनका 'महा गण्ड घण्टा' ढलवाया। यह सात फुट ऊँचा पगोडाके उत्तरी-पश्चिमी कोनेपर लगा है। सन् १८२४ मे 'महा गण्ड घण्टा'को विजय-प्रतीकस्वरूप अंग्रेज इंग्लैण्ड ले जाना चाहते थे। जहाजपर चढ़ाते समय घण्टा नदीमे गिर गया। अंग्रेजोंने घण्टा निकालनेका बहुत प्रयास किया पर असफल रहे। जनताने अंग्रेजोंसे घण्टा माँग लिया। जनताके प्रयाससे घण्टा नदीसे निकाला गया। वह पुनः पगोडामे पूर्ववत् लगा दिया गया। बर्मामें कहावत चारितार्थ हो गयी—'नदीने अंग्रेजोंको जो नहीं दिया वही बर्मावालोंको दिया'।

सन् १८४१ मे राजा थरावदीने 'तिस्सद गण्ड घण्टा' ४२ टनका ढलवाया। यह ८½ फुट ऊँचा है। पगोडाके उत्तरी-पूर्वी कोणपर लगा

है। सन् १८७१ मे राजा मिनदोमिनने पगोडापर नवीन क्षत्र लगाया। उसमें रत्न लगे हैं। कहा जाता है कि लगभग ७० लाख रुपया लगा था।

पगोडा १४२० फुटके घेरे, वृत्तमे बना है। चारों ओर ६४ पगोडा छोटे छोटे बने हैं। चारों दिशाओमें चार कुछ बड़े बने हैं। इन चारोंके सम्मुख ४ सिर बने हैं। पगोडाके चारों ओर तजौङ् देवस्थान जयत अर्थात् शालाएँ बनी हैं। पगोडाका फर्श सगमरमरका है। पगोडातक पहुँचनेके लिए चारों दिशाओमें सीढ़ियाँ धरातलसे उठती ऊपरतक गयी हैं। सीढियोंके दोनों तरफ फूल, सुगन्ध, दीपक, पूजन-सामग्री, मूर्तियाँ आदि बेचनेवालोंकी दूकाने हैं। सभी दूकानोंपर सामान बेचनेवाली स्त्रियाँ थीं। हमारे यहाँ मालिन फटे-मैले कपड़ेमे पुष्प बेचती मिलेगी। यहाँ उलटा है। प्रत्येक दूकान तथा दूकानदारिन स्वच्छ तथा उत्तम वस्त्र पहने शुद्धताके साथ मिलेगी। पवित्र स्थानपर पवित्र वस्तु बेचनेके कारण उनमे पवित्रताकी झलक मिलेगी। मुख्य सीढ़ी दक्षिण ओर है। प्रवेशद्वारपर ही दो शेर दोनों ओर लगभग ३० फुट ऊँचे बने मिलते हैं। वे सजीव-से हैं।

पगोडा बर्माके आध्यात्मिक जीवनकी आत्मा है। विश्वमे बौद्ध-जगत्-का प्रमुख स्थान है। धर्म उपयोगिताकी सामग्री है। उसका जनजीवनके दैनिक जीवनसे सम्बन्ध है। उसका अन्त केवल कुछ पुष्प, अच्छत तथा जल छिड़क देनेसे ही नहीं हो जाता। पगोडाके चारों ओरके विस्तृत फर्श-पर कितने ही गृहस्थ चटाई अथवा कालीन बिछाकर कुटुम्बके साथ बैठे रहते हैं। भगवान्का स्मरण करते है। वहीं दिन गुजार देते है। मैंने एक भी स्त्री तथा पुरुषको मैले वस्त्रोमे नहीं देखा। मुसलमान जैसे शुक्रवार (जुमा) के दिन वस्त्र धुला और स्नान कर मस्जिदमे जाते हैं वही यहाँ मैंने देखा। प्रत्येक दर्शक सुन्दरसे सुन्दर वस्त्र तथा स्वच्छताके साथ उसी प्रकार आता है जैसे राजदरबारमें जानेवाले कर्मचारी अथवा सामन्त सुन्दरसे सुन्दर वस्त्र धारणकर और सफाईके साथ जाते है।

काशी विश्वनाथ मन्दिर अथवा ज्यादातर मन्दिरोमे सफाईका नाम नहीं मिलेगा। फूलपत्ती अच्छत-पानीसे सड़ जायगा। यहाँ आते ही मन

प्रसन्न हो जाता है। जनजीवनका दर्शन होता है। जनताकी धार्मिक भावनाओंकी झाँकी मिलती है। एक स्थानपर भगवान् बुद्धकी एक मूर्ति मण्डपमें रखी थी। बड़ी सुन्दरता और सफाईसे प्रसाद तथा चढ़ावेकी सामग्री यथास्थान रखी थी। कोई पैसा न माँगेगा। फूल लेकर चढ़ानेके लिए हाथ न बढ़ायेगा। जिसकी इच्छामें जो आये, चढ़ाये। चाहे न चढ़ाये। कोई पूछनेवाला नहीं है।

पगोडाके एक तरफ एक पन्द्रह सेरका गोल पत्थर रखा है। सामने सिंहासनपर बुद्धमूर्ति है। यहाँ शकुन विचारा जाता है। काम होगा या नहीं, मनमें धारणकर व्यक्ति आसन लगाकर बैठ जाता है। पत्थर उठाता है। यदि काम हो जायगा तो पत्थर हलका लगता है। असफलता होनेपर पत्थर भारी मालूम होता है। मैंने भी इसी कामनासे पत्थर उठाया था। वह हलका लगा। लगभग दो वर्ष बाद मेरा वह कार्य पूर्ण हो गया। वहीं मैंने एक दूसरी कामनासे पत्थर उठाया। वह भारी मालूम हुआ। काममें असफलता रही। यह चित्तकी वृत्ति भी हो सकती है। मेरा मानसिक कुसंस्कार तथा मूढ़ता भी हो सकती है।

एक स्थानपर मेरा हृदय भर आया। पगोडाके एक ओर मण्डप बना था। उसमें बहुत-सी वस्तुएँ जिन्हें पगोडापर चढ़ाया गया था, रखी थीं। उन वस्तुओंमें मैंने कामिनियोंके केश अत्यन्त लम्बे रेशम जैसे मुलायम झूलते देखे। पूछनेपर मालूम हुआ। रमणियोंको केश प्रिय है। केशविहीन रमणियाँ भिक्षुणी समझी जाती हैं। भारतमें तो विधवा ही केशविहीन होती है। रमणियाँ अपने सुन्दर केशोंको वर्षोंसे बढ़ाती रहती हैं। उनकी सेवा करती हैं। वे जब पूर्णतया बढ़ जाते हैं तो पगोडामें आती हैं। केश काटकर भगवान्को अर्पित कर देती हैं।

स्वेजिगान महास्तूप किंवा पगोडा विश्वके महान् महाकाय तथा भव्य धर्मस्थानोंमें है। इतना सुन्दर है कि देखते ही बनता है। झीलमें उसकी छाया अत्यन्त सुन्दर झलकती है। रंगून नगरपर उसकी छाया पड़ती है। भगवान्की छायामें रंगून नगर तथा जनता रहती है। कितनी सुन्दर

उसमें केश रखा गया। पूर्वकालमें पगोडाका नाम थुराजेदी अर्थात् सुरचेती अर्थात् सुरचैत्य था। सुर शब्दका अपभ्रंश थुर शब्द है। पगोडाकी ऊँचाई १५७ फुट है। सियोजगोन पगोडासे ९२७५ फुट तथा वोतातौङ् पगोडा-से ५१०२ फुट दूर स्थित है। सात व्यक्तियोंके बोर्ड आफ ट्रस्टीसे इसकी व्यवस्था होती है। डलहौजी स्ट्रीट तथा मुले पगोटा रोडके चौराहेपर स्थित है।

एक तीसरा विशाल और पगोडा दिखाई पड़ा। मित्रराष्ट्रोंके बमोंसे यह ध्वस्त हो गया था। पुनः बन गया है। आजसे लगभग २२ सौ वर्ष पूर्व शिनपथ भारतसे धर्मप्रचार निमित्त बर्मा आये। उनके साथ भगवान्के आठ केश तथा ३२ भगवान्की धातु थी। थातोनके राजाको उन्होंने पवित्र वस्तुएँ दीं। राजाने ६ बाल तथा १० धातु रंगून नगरसे ५ मील दूर थिन गाङ् युङ् में कैकसन पगोडा बनवाकर रखी। शेष स्मारक (पुण्य वस्तुएँ) अपने मन्त्रियोंमें बाँट दिया।

उसके मन्त्रियोंने सियोदगोन पगोडाके चारों ओर पगोडा बनाकर धातुओंको रख दिया। एक मन्त्रीने एक केश तथा दो धातुओंको नदीके तट पहाड़ीपर सियोदगोनसे लगभग ७००० क्यूबिट दूर पगोडा बनाकर उनमें रखा। इसी पगोडाका नाम वोता तौङ् पगोडा पड़ा। ८ नवम्बर सन् १९४३ को मित्रराष्ट्रोंकी बमबारीसे पगोडा नष्ट हो गया। ध्वंसावशेषों-में एक मंजूषा मिली। साथ ही भगवान् बुद्धकी चाँदी, काँस्य तथा प्रस्तर-मूर्तियाँ और खजाना मिला। सबसे आश्चर्यजनक वस्तु पगोडानुमा मजूषामें रखा भगवान्का एक पवित्र केश तथा २ धातुएँ मिलीं। यह इस बातके प्रमाण हैं कि प्रचलित गाथा सत्य थी। पवित्र धातु तथा केश अन्य प्राप्त वस्तुओंके साथ जनताके दर्शनार्थ रख दी गयीं। पगोडा बन गया। लोगोंने माना कि भगवान्के जीवन तथा बुद्धधर्मकी प्रचार सम्बन्धी प्रचलित गाथाएँ और भारतीयोंका जाकर धर्मप्रचार करना सत्य है।

एक चौथे चमकते पगोडाका और दर्शन हवाई जहाजसे मिलेगा। सन् १९५२ में बनकर तैयार हुआ है। बर्माके प्रधानमन्त्रीने इसका

निर्माण कराया है। नाम विश्वशान्ति अर्थात् कव-ए-पगोडा है। देशमें शान्तिकी आवश्यकता है। भगवान् देशमे शान्ति स्थापित करें। यह पगोडा शान्तिस्थापनार्थ भगवान्को अर्पित किया गया है। पगोडाके अन्दर भगवान्की चॉदीकी ठोस मूर्ति है। वर्मामें चॉदीकी खान है। युद्धोपरान्त खानमे कार्य आरम्भ हुआ। उसकी प्राप्त चाँदीसे वर्माने सर्वप्रथम भगवान्की विशाल रजत मूर्ति ढलवायी। वह वर्मावासियोंकी धार्मिक निष्ठा दर्शित करती है। पगोडा रंगून नगरसे सात मील दूर कोकाइन झीलके समीप येगूमें स्थित है। इसकी नींव ११८ फुट वृत्ताकार है। ऊँचाई ११२ फुट है। लगभग चार या पॉच सौ नागरिक प्रतिदिन पगोडामे दर्शनार्थ जाते हैं। पगोडामे प्राचीन तथा पुरातत्त्व सम्बन्धी अनेक धार्मिक सस्मारकादि प्रदर्शनार्थ रखे हुए हैं। बीचमे पगोडाका शिखर है। चारों ओर वृत्ताकार इमारत वनी है। यह स्थापत्यकी नवीन शैली है। पगोडा तथा भवन दोनों ही मिश्रित हैं।

एक और पगोडाकी झॉकी मिल जाती है। इसे 'अतुल दीप्ति महामुनि शाक्य पगोडा' कहते है। कोरात्की पगोडा लौकिक नाम है। इसमे भगवान् बुद्धकी ६५ फुट ऊँची मूर्ति है। इसका निर्माण ८ अगस्त सन् १९०५ मे आरम्भ हुआ। लगभग २ फरलाग दूर सियोजगोन पगोडाके पश्चिम ओर सनचौडके वगया सड़कपर स्थित है। मूर्तिके निचले भागमे स्वर्णातप रत्नजटित मंजूषामे भगवान् तथा अन्य अरहतोकी धातु रखी है। वहॉ सुवर्ण, चॉदी, मोती, मूगा तथा अन्य रत्नोकी बहुत-सी बुद्धमूर्तियॉ वनी रखी हैं।

हवाई जहाज भारतीय था। कलकत्तासे ८-३५ पर प्रातःकाल हम उड़े थे। ठीक ११-५५ मिनटपर रंगूनके मिगला डोन हवाई अड्डेपर उतरे। जहाज ९५०० फुटकी ऊँचाईसे उड़ रहा था। गति २५८ मील प्रति घंटा थी। वंगालकी खाड़ीसे गुजरे थे। जहाजसे उड़ते ही गंगासागर तथा गंगाके मुहानेपर अनेक टापुओके दर्शन हुए। संगमका जल नीला नही

है। ब्रह्मपुत्र तथा गंगाके जलके कारण बीसों मीलतकका जल गँदला दिखाई पड़ता है। भूमिसे जितनी ही दूर हटते गये, जल नीला होता गया। वायुयानकी मेरी वह पहली यात्रा थी। नीचे देखनेपर किंचित् भय मालूम होता था। यह कल्पना उठते ही कि वायुयान यदि समुद्रमें गिर जाय तो क्या होगा—मन न जाने कैसा हो उठता था। त्रिशंकु तुल्य अधरमें रहनेपर भी प्रकृतिकी शोभा इस स्वाभाविक खतरेकी विपद कल्पनासे दूर ही रखती है।

जहाज बर्मा तटके समीप चलने लगा। वास्तवमें सुवर्णभूमि सूर्य-प्रभामें सुवर्ण मालूम पड़ती थी। आकाशसे समुद्रतट पतली सुवर्णरेखा-तुल्य प्रतीत होता था। तटकी पादपादिविहीन भूमि सचमुच हल्के सुवर्ण-रंगकी मालूम होती थी। भारतीयोंने भूमिका यह रंग देखकर ही बर्माका नाम सुवर्णभूमि रखा हो तो क्या आश्चर्य ?

हवाई अड्डेपर श्री टी० पी० भट्टर तथा अन्य बर्माके मित्र मिले। भारतीय दूतावासमें रंगूनकी श्रीमती सुतम्मा गाड़ी लिये मिलीं। भारतीय दूतावासका प्रबन्ध अच्छा था। सीधे बर्माके प्रसिद्ध स्ट्रैण्ड होटल पहुँचे। राजदूत श्री सक्सेनाके यहाँ गये थे। श्री सक्सेनाने यह सबक दिया कि बर्मामें किस प्रकार व्यवहार करना चाहिये। राजनीतिक स्थिति, दलगत स्थिति, बर्मामें भारतीयोंकी स्थिति आदिपर ब्योरेके साथ प्रकाश डाला। उन्होंने हमारा कार्यक्रम भी बना दिया। बर्माके भारतीय दूतावासमें वे सभी साधन उपलब्ध थे जिनकी हमें आवश्यकता हो सकती थी। उनके दूतावासके अन्य सज्जनोंका भी व्यवहार अच्छा था। भारतीयोंसे परिचय तथा सामाजिक कार्यकर्ताओंसे मिलनेका प्रबन्ध करा दिया था। जन-जीवन देखने तथा लोगोंसे मिलनेका सुन्दर अवसर मिला। कार्यक्रम बहुत ही आकर्षक तथा सन्तोषप्रद बना था।

होटलमें ठहरनेके लिए प्रति दिन प्रति व्यक्ति ७० रुपया देना पड़ता था। स्ट्रैण्ड होटल रंगून नदीपर स्थित है। वातावरण अच्छा है। सफाई थी। विदेशियों तथा कुलीनोंके ठहरनेका एकमात्र स्थान था। पश्चिमी

अमीर पर्यटकोंके लिए ठीक है। हमारे लिए महँगा पड़ रहा था। विदेशी मुद्राकी भी कमी थी। इसी समय श्री राधारमणको ज्वर आ गया। एक हिन्दुस्तानी डाक्टर महोदय बड़ी सहानुभूति बटोरे देखने आये। विना बुलाये आते रहे। अन्तिम दिन प्रत्येक विजिटका जोड़कर लम्बा विल उपस्थित किया। उन्हे क्षणमात्रके लिए भी शायद अनुभव नहीं हुआ कि हम विदेशमे हैं। अतिथि है। उन्हींकी सहायताके निमित्त आये हैं। उनका पूरा विल चुका दिया गया।

विदेशी मुद्राकी कमी थी। होटल त्यागना आवश्यक हो गया। रंगूनमें पचासों हजार भारतीय हैं। अमीर हैं। मकान और वगीचेवाले है। किसीने भूलसे भी अपने यहाँ ठहरनेके लिए नहीं कहा। साथी श्री नवाससिहजीके मित्र श्री डी० पी० भट्टरजी थे। एक फ्लैट ले रखा था। प्रेमसे आमन्त्रित किया। तुरन्त उनके फ्लैटमे चले आये। एक ही कमरा था। उसीमें सब लोग घुसकर रहने लगे। उनकी धर्मपत्नी तथा परिचारिकाने इतने स्नेहसे खाना खिलाया कि हम खाते-खाते थक गये। पूँजीपतिवर्ग यदि किसी स्वार्थपूर्तिकी आशा देखता है तो सब कुछ करनेके लिए तैयार हो जाता है, अन्यथा उलटकर देखता भी नहीं। ईसाई और मुसलमानोंका व्यवहार इसके सर्वथा विपरीत होता है। वे अपने अतिथियोका खूब स्वागत और खातिर करते हैं। मध्यमवर्गके भारतीयोंसे हमे सर्वत्र सहायता एवं सहानुभूति प्राप्त हुई। उनसे ज्यादा मिली गरीब श्रमिक भारतीयोसे। उन्होने अपने परिमित साधनों द्वारा सभी कुछ किया।

रंगून नगर सन् १८५२ मे अंग्रेजी तोपोंके गोलोसे ध्वस्त हुआ। पुनः १९४२ मे जापानियोकी बमबारीका शिकार हुआ। सन् १९४४–४५ में पुनः अंग्रेजोके बममारोने उसपर हमला किया। पीछे हटते समय सब कुछ नष्ट कर देनेकी मित्रराष्ट्रोंकी नीतिने वर्माके सभी तेल-कूपो और कारखानोंको नष्ट कर दिया। उद्देश्य था कि शत्रु अर्थात् जापानी उनसे लाभ न उठा सके। सन् १८५२ की बमबाजीमे पुराने 'यगोन'का कुछ

भी शेष न रह गया था। सोलहवीं शताब्दीके अन्तमें बर्माके मुख्य बन्दरगाह पेगूका स्थान सैरियमने ले लिया था। सैरियममें विदेशी प्रभाव देखकर राजा अलौङ्‌प्याने बन्दरगाह नष्ट कर दिया। उसने नवीन नगर यंगोन बसाया। नगर छोटा था। वह सुले पगोडा, रंगून नदी जुडाएजबील तथा ३०वीं सड़कके बीच था। उसके चारों ओर सागवानकी लकड़ीका घेरा और मिट्टीकी दीवार थी। सन् १८४१ में रंगूनमें आग लग गयी। सब कुछ नष्ट हो गया। राजा थारवादी नगरमें आया। उसने दूसरा नगर, जहाँ आजकल कैण्टोनमेण्ट है, बसाया। सन् १८५२ में वह अंग्रेजोंके हाथ आ गया।

ब्रिटिश बर्माकी राजधानी होनेपर लेफ्टिनेंट ए० फ्रेजर तथा डाक्टर विलियम मॉण्टगोमरीने नवीन नगरकी योजना बनायी। फ्रेजरके नामसे रंगूनकी मुख्य सड़कका नाम फ्रेजर स्ट्रीट है। लार्ड डलहौजी तत्कालीन गवर्नर जनरल थे अतएव उनके नामसे दूसरी सड़क डलहौजी स्ट्रीट बनायी गयी। रंगून नदी तथा रेलवे स्टेशनके मध्य स्ट्रैण्डरोड मर्चेन्ट, डलहौजी तथा फ्रेजर तथा बोगयोक (पुरानी मॉण्टगोमरी रोड) समानान्तर सीधी सड़कें हैं। इन्हींसे अन्य सड़कें निकलती तथा मिलती हैं। चारों सड़कें रेलवे लाइनोंके बीच पड़ती हैं। वही रंगूनका हृदय है। रेलवे लाइनके पश्चात् नगर फैल रहा है। आधुनिक रंगून शतरंज फलक-के समान मालूम पड़ता है।

सोलहवीं शताब्दीके अन्तमें सैरियमने पेगू बन्दरगाहका स्थान ले लिया था।

जिस समय हम लोग रंगून पहुँचे वहाँ संगायन हो रहा था। समस्त जनताका ध्यान उसी तरफ था। संगायनका उद्घाटन श्यामके राजाने किया था। बुद्ध शासन परिषद् बर्मी संसद्के कानूनसे स्थापित हुई है। इसका पूर्व नाम बुद्ध शासननुग्गह संघटन था। इसका केन्द्रीय कार्यालय लगभग १ एकड़ भूमिमें है। उसे श्री थाडोथिरी, सुद्धम्मा सर उ ख्विनने दान दिया था। सर्वप्रिय नाम इसका सासन ऐक्था है। यहाँ अन्तर-

राष्ट्रीय बौद्ध पुस्तकालय, गुफा उद्यान ध्यान एवं साधनाके निमित्त स्थान बने हैं। विपासन अभ्यास निमित्त शिक्षा तथा स्थान दिया जाता है। छट्० (छठी) संगायनका प्रबन्ध इसी परिषद्के तत्त्वावधानमें था।

संगीतिका हाल विशाल था। छठी संगीति थी। गुफाका रूप था। उसमें ६ खम्भे थे। फाटक ६ थे। ५०० भिक्षु बैठ सकते थे। इसमे लगभग २ करोड़ रुपया लगा था। समीप ही पाली विश्वविद्यालयकी भी योजना थी। खेद है कि भारतने अपनी भूमिमें विकसित पाली भाषाकी ओर ध्यान नहीं दिया, जितना कि भारतसे बाहर दिया जा रहा है। एक दिन यह विश्वविद्यालय समस्त एशियाके बौद्ध जगत्की प्रेरणाका केन्द्र हो जायगा।

विश्वशान्ति पगोडाके समीप श्री मंगला पठारपर षष्ठ संगायन-का आयोजन था। सहस्रों भिक्षु विश्वके कोने-कानेसे यहाँ एकत्र थे। वह मई १९५४ में आरम्भ तथा मई १९५६ मे समाप्त हुआ। बर्मा सरकार तथा बुद्धशासन दोनोंने मिलकर अर्थव्यवस्था की थी। एक विशाल हालमे संगायन एकत्र था। हालके प्रवेशद्वारके ठीक सामने मंच-पर भगवान्की मूर्ति रखी थी। तीनो ओर सीढ़ीनुमा कक्ष था। उनपर भिक्षु बैठे थे। जिस समय मैं गया, लगभग ५०० भिक्षु रहे होंगे। फर्शपर जनता आकर बैठती थी। बाहरसे देखनेमे हालमे एक पहाड़ी मालूम होता था। अजन्ता शैलीपर बनाया गया था। वातावरण इतना शुद्ध तथा शान्त था कि वह अनायास हृदयपर प्रभाव डालता था। पाठ पालीमें होता था। विदेशी कण्ठोसे शुद्ध भारतीय उच्चारण सुनकर मुग्ध हो गया। भिक्षुओके भोजन तथा ठहरनेका पूरा प्रबन्ध सरकारकी तरफसे हुआ था।

दूसरा धार्मिक विपासन स्थान मिंगुन त्वा है। यह सुवर्णघाटीमें नगर-सीमान्त सड़कके बाहर २३ एकड़ भूमिमे स्थित है। यहाँ कोई भी सप्ताह अथवा एक पक्ष आकर शान्तिपूर्वक निवास कर सकता है। इसके १० स्थान अभ्यासके लिए बने है। कोठरियाँ है। अभ्यासीको एक कोठरी दी जाती है। चाहे अमीर हो या गरीब,

सबको साधारण भोजन एक समान दिया जाता है। भोजनका प्रबन्ध पति-पत्नी सासनानुग्गह समाजकी ओरसे किया जाता है।

रंगून विश्वविद्यालय सन् १९२० में स्थापित हुआ था। इसके ६ विभाग हैं। सात हजार विद्यार्थी हैं। इयन झीलके पश्चिमी-दक्षिणी तट-पर स्थित है। रंगून शहरसे ५ मील दूर ४०० एकड़ भूमिमें फैला है। यह विश्वविद्यालय रंगून कॉलेजका वृहत् रूप उसी प्रकार है जैसे काशी विश्वविद्यालय पुराने हिन्दू कालेज और अलीगढ़ मुसलिम ओरियण्टल कॉलेजोंका है। यह पहले कलकत्ता विश्वविद्यालयसे सम्बन्धित था। सन् १९२० मे विद्यार्थियोंकी हड़ताल हुई। उसे विश्वविद्यालयका रूप दे दिया गया। सन् १९२७ में नवीन इमारतें बनने लगीं। गत महायुद्धके समय विश्वविद्यालयका काम बन्द हो गया था। सन् १९४६ मे पुनः खुला। माडले इन्टरमिडिएट कॉलेजको डिग्री कालेज बना दिया गया। अन्य प्रसिद्ध नगरोंमें भी कॉलेज खोलकर उन्हें विश्वविद्यालयसे सम्बन्धित कर दिया गया है। विश्वविद्यालयमें ७ फुटबाल फील्ड हैं। तैरनेका सरोवर, पोस्ट आफिस आदि सभी कुछ बने हैं। बारह होस्टलोंमें ३ होस्टल महिलाओंके लिए हैं। लगभग ८० प्रतिशत विद्यार्थी होस्टल अथवा छात्रावासमें रहते हैं।

बहुत-से ताड़पत्रकी पोथियाँ, लेख, आलेख आदि बमबारीमें बरबाद हो गये। युद्धोपरान्त पुस्तकालयका संघटन नये ढंगसे किया गया है। ब्रिटिश संग्रहालय तथा अमेरिकाके पुस्तकालयोंसे प्राचीन पोथियों आदिकी प्रतिलिपि लेनेका प्रयास किया जा रहा है।

सन् १९४८ की आजादीके पश्चात् बर्मा संस्कृतिके विकासमें हाथ लगाया गया। राष्ट्रीय संग्रहालय, राष्ट्रीय पुस्तकालय, कला, नाटक, नृत्य तथा संगीतमें नवीन स्फूर्ति तथा जागर्ति लानेके सार्वदेशिक प्रयास किये गये हैं।

बर्मामें सार्वजनिक शिक्षण परिषद्की स्थापना की गयी है। सन् १९४८ में इस सम्बन्धमे एक कानून भी बनाया गया है। वयस्कोंके

लिए शिक्षण केन्द्र खोले गये हैं। लगभग ५०० शिक्षित इस कार्यमे दत्तचित्त लगे हैं। करीब २०० शिक्षण केन्द्र ६ मासके लिए ग्रामोंमे खोले गये है। परिषद् ग्रामोंमे अनेक विषयोंके व्याख्यान, प्रवचन आदिका आयोजन करती है।

वर्मा अनुवाद सोसाइटी स्तुत्य कार्य कर रही है। हमने इसके मुद्रण, चित्रण, तथा अनुवादके कार्योंको देखा है। इसका केन्द्रीय कार्यालय २६१, प्रोम रोडपर स्थित है। वर्मामे पाठ्य-पुस्तके तैयार की जाती है। वर्मामें कोश तथा विश्वकोश तैयार किया गया है। इसके पुस्तकालयमे लगभग १० हजार पुस्तके होगी। सदस्यसख्या भी दो हजारसे ऊपर होगी। २६ जुलाई सन् १९५३ मे प्रधानमन्त्रीने इसके भवनका शिलान्यास ३७वीं तथा मर्चेण्ट स्ट्रीटके नुक्कड़पर किया है।

आग साव म्यो पुनर्निवास ब्रिगेडकी स्थापना रंगूनसे १४ मील उत्तर सिगूमें की गयी है। इनसीन क्षेत्रमे है। ब्रिग्रेड मई सन् १९५० में वर्मा सरकार द्वारा स्थापित की गयी थी। इसमे बेकार युवक, बेकार शरणार्थी तथा आत्मसमर्पण करनेवाले विद्रोही रखे गये हैं। उनकी रुचिके अनुसार शिक्षा दी जाती है। अपनी स्त्रियोंके साथ भी रह सकते हैं। प्रत्येक व्यक्तिको मुफ्त भोजन, स्थान, दवा तथा मासिक वेतन उसकी स्थितिके अनुसार दिया जाता है। दो वर्षकी प्राविधिक शिक्षाके पश्चात् चाहे वह कहीं नौकरी अथवा कार्य कर सकता है अथवा वही कार्य कर जीविकोपार्जन कर सकता है। स्थान आधुनिक नगर जैसा है। इसमे लगभग ७ हजार व्यक्ति इस समय कार्य करते होंगे।

रंगूनका प्रबन्ध रंगून कारपोरेशन द्वारा होता है। हम लोगोंके सम्मान-में कारपोरेशनके मेयरने दावत दी थी। कारपोरेशनकी इमारत सुन्दर है। उसीमें टाउनहाल भी है। सन् १८५२ से १८७४ तक रगूनका प्रबन्ध टाउन मजिस्ट्रेट द्वारा होता था। सन् १८७४ मे म्युनिस्पल ऐक्ट पास किया गया। पहला चुनाव २३ जून सन् १८८२ को हुआ। निर्वाचित म्युनिसिपलिटीने २० जुलाई सन् १८८२ को कार्यभार लिया। सन् १८८४

में बर्मा म्युनिसिपल ऐक्ट पास किया गया। कार्यालय रिपन हालमें, जो कालान्तरमें टाउनहाल हो गया, लाया गया।

सन् १९२६ में पुराने भवनके स्थानपर नवीन भवन बनने लगा। सन् १९३६ मे पूर्ण हुआ। सन् १९३४ तक कारपोरेशनका अध्यक्ष होता था। सन् १९३४ के पश्चात् लार्ड मेयरका पद कायम किया गया। नगरका हाल नगरका सबसे बड़ा हाल है। वहाँ लोग अपने विवाहकी पार्टी भी देते हैं। जिस समय हम पहुँचे थे एक चीनी शादीकी पार्टी हो रही थी। बैण्ड बज रहा था। एशियाई समाजवादी सम्मेलन इसी हालमें सन् १९५३ मे हुआ था।

टाउनहालमे लार्ड मेयर रंगूनने १४-१-५६ को हम लोगोंका जलपान निमित्त स्वागत आयोजन किया था। छोटा-सा किन्तु सुन्दर आयोजन था। हमने वहाँ अँग्रेजीमे स्वागतका उत्तर दिया। अँग्रेजी प्रायः पढ़े-लिखे बर्मी समझ लेते हैं। सायंकाल वहाँका संसद्-भवन देखा तथा स्पीकर चेम्बर आफ डेपुटीज और चेयरमैन चैम्बर आफ नेशनेलिटीजसे भेंट की। संसद्-भवन बहुत ही छोटा है। जिन्होंने दिल्ली देखा है उन्हे उसका वह एक कोनामात्र प्रतीत होगा।

लगभग ७ बजे सायंकाल भारतीय बर्मा कांग्रेसके पदाधिकारियोंने एक स्वागतका आयोजन धर्मशालामे किया था। कांग्रेसका अपना कार्यालय है। लोगोंसे बात-चीत तथा विचार-विनिमय हुआ। जलपानका भी प्रबन्ध था। भारतीय बन्धुओंसे मिलकर बड़ी प्रसन्नता हुई। उनमें बहुतसे अत्यन्त पुराने सामाजिक एवं राजनीतिक कार्यकर्ता थे। बहुतसे लोग आजाद हिन्द फौजके सहयोगमें रह चुके थे। उनकी कहानी रोचक तथा ऐतिहासिक महत्त्व रखती है।

रंगून डेवलपमेंट ट्रस्ट सन् १९२० में बना और सन् १९२१ में कार्य करने लगा। उसका मुख्य काम सरकारी अथवा गैरसरकारी भूभागोंका विकास करना है। विकासके पश्चात् भूमि कारपोरेशनको दे दी जाती है। सन् १९२५ से यह कार्य सुचारु रूपसे चलने लगा। उसने बहुत-सी

सड़कोका निर्माण किया है।

राष्ट्रपति भवन सादा बॅगला है। प्रत्येक विदेशी यात्री यदि चाहे तो राष्ट्रपति भवनमें रखी पुस्तिकामे अपना हस्ताक्षर तथा पता लिख सकता है। इस प्रकार आनेवाला राष्ट्रपतिके प्रति सम्मान प्रकट करता है। काश्मीरमे सदरे रियासतके यहाँ भी यही नियम है। यदि राष्ट्रपति चाहे तो बुला सकते है।

४ जनवरी सन् १९४८ मे बर्माके ब्रिटिश राज्यपालका राजभवन राष्ट्रपति भवनके रूपमे परिणत कर दिया गया। वह इमारत पुरानी है। सन् १८९२ मे बनने लगी और सन् १९०५ मे बनकर पूरी हुई थी। इसके बननेमे लगभग साढ़े सात लाख रुपया खर्च हुआ था। राष्ट्रपतिके भवनमे ७६½ एकड़ भूमि है। निवासयोग्य १३० मकान हैं।

सरकार द्वारा परिचालित एक बिनने तथा सूत कातनेकी सूती मिल है। यह नगरसे बाहर है। जिन दिनो हम वहाॅ थे मिल बन्द थी। सुले-पगोडाके पास बर्मा रेलवे कार्यालय सन् १८७७ मे खुला था। रगूनका केन्द्रीय स्टेशन सन् १९११ मे खुला था। गत महायुद्धमे जापानी तथा मित्र-राष्ट्रोके बमोसे रेलवेका यातायात ठप हो गया। पहली रेलवे लाइन सन् १८७९ में रगूनसे प्रोमतक खुली थी। उसका नाम इरावदी वैली स्टेट रेलवे था। सन् १८९६ मे रेलवेका पट्टा बर्मा रेलवे कम्पनी, लन्दनको दे दिया गया। अर्थात् राष्ट्रीयकरणसे अराष्ट्रीयकरण ब्रिटिश पूँजीपतियोका पेट भरनेके लिए किया गया। सन् १९२८ मे बर्मा सरकारने पुनः लेकर राष्ट्रीयकरण किया। नयी दिल्लीके रेलवे बोर्ड द्वारा इसका संचालन होने लगा। सन् १९३७ मे रेलवे बोर्डने बर्मा रेलवेको बर्मा सरकारको विभाजनके पश्चात् हस्तान्तारित कर दिया।

बर्मामे हवाई जहाजका यातायात बहुत संघटित तथा कुछ सस्ता है। विद्रोहात्मक तथा ध्वंसात्मक काररवाइयोके कारण रेल तथा सड़कोसे यात्रा करना आसान नही है। प्रत्येक नगरसे सम्पर्क प्रायः हवाई जहाजोसे ही कायम रखा गया है। अन्तर्देशीय सेवाके अतिरिक्त

सिंगापुर, कलकत्ता, बंकाक तथा चटगाँवतक यू० पी० ए० यूनियन आफ वर्मा एयरवेजकी सेवा कार्य करती है।

गत युद्धकी भयंकर बमबाजीका चिह्न वर्मामे सर्वत्र मिला। रंगून-मे बहुत-सी इमारते अभीतक टूटी पड़ी थीं। माण्डलेमें भी गोलोंसे उड़े अथवा क्षत मकान दिखाई पड़ते थे। सम्भव है अब बन गये हों।

वर्माके जन-जीवनमे अब भी भारतीय नागरिकों अथवा भारतीयोंका महान् योगदान है। सुभाष दिवसके सभापतित्व निमित्त मुझे बुलाया गया था। रंगूनके विशिष्ट हालमें सभा हुई थी। सुभाष बाबूके बहुतसे सहयोगी तथा आजाद हिन्दमे काम करनेवाले लोग उपस्थित थे। विगत घटनाओंपर प्रकाश पड़ा। आजाद हिन्द फौजके संघटनमें भारतीयोंने रुपए-पैसे तथा सब प्रकारसे योगदान दिया था। उनके योगके कारण आजाद हिन्द फौजको कभी भी रुपएकी कमी न हुई। आजाद हिन्द फौजके विषयमे वर्मामें मैंने सर्वत्र पूछा। सभी प्रशसा करते थे। किसी सैनिकने किसी भी स्त्री पुरुषकी ओर ऑख उठाना तो दूर रहा, एक बीड़ा पान भी अपनी स्थितिका लाभ उठाकर न मॉगा होगा। उनके चरित्र-बलके कारण वर्मामे उनका सर्वत्र स्वागत हुआ था। वर्माकी स्वतन्त्र सेनाने जापानियोंके विरुद्ध हथियार उठाया, विद्रोह किया परन्तु जापानकी सहायक होनेपर भी आजाद हिन्द फौजको वर्मा राष्ट्रीय सेनासे कभी सामना नहीं करना पड़ा। दोनोका व्यवहार परस्पर सहयोगका था।

जापानी सैनिकोंने सुभाषचन्द्र बोस तथा आजाद हिन्द फौजके कारण किसी भारतीय नारीपर ऑख उठानेका प्रयास नहीं किया। उनसे कह दिया गया था। भारतीय लोग स्त्रीकी बेइज्जती न तो करते हैं और न करना सहन कर सकते है। जापानियोने कभी भारतीय स्त्रीको ओर न देखा। उन्हे पहचान साड़ी बतायी गयी थी। फल यह हुआ कि बहुत-सी वर्मा स्त्रियॉ साड़ी पहनने लगी थीं। जापानी जहॉ किसी नारीको साड़ी पहने देखते थे, नमस्कार कर दूर हट जाते थे। युद्धकालमे यही पहचान रखी गयी थी।

जापानके अत्याचारकी बहुत कहानी गढ़ी गयी है। परन्तु वहाँ जानेपर मालूम हुआ कि विजेता जितना कुछ करता है उतना जापानियोने नहीं किया। यदि कुछ किया भी तो सैनिक एवंकी सुरक्षा दृष्टिसे किया था। उस परिस्थितिमे अवश्यम्भावी था। जापानी भारतीयोको सम्मानकी निगाहसे देखते थे। उनकी सम्पत्ति अथवा घरोंको छोड़ देते थे।

जापानियोंके वीरत्वकी बहुत कहानी सुनी गयी है। वे लड़ते-लड़ते मर गये। हटे नहीं। चार या दो जापानियोने ही बड़ी फौजको अपनी चातुरी तथा बुद्धिसे रोक रखा। उनके पैर पानीमें खड़े-खड़े सड़ गये परन्तु वे मोर्चा छोडकर भागे नही।

रामकृष्ण मिशन अस्पताल रगून-बर्माका सर्वश्रेष्ठ अस्पताल है। अस्पताल १६ जनवरी प्रातःकाल १० बजे देखने गये। अस्पतालका प्रबन्ध अत्यन्त सुन्दर था। सभी नर-नारी इसकी सराहना करते हैं। वर्गविहीन दृष्टिसे मानव-सेवा यहॉ की जाती है। बर्माकी अभूतपूर्व सेवा कर रहा है। उसकी सेवाके कारण भारतीयोका मस्तक ऊँचा है। रामकृष्ण मिशनका हॉल भी है। पुस्तकालय है। हॉलमे भारतीयोकी ओरसे हमारा स्वागत किया गया था। उपस्थित भारतीयोको देखकर हृदय भर आता था। रंगूनके जो कभी नेता थे उनका उसी शहरमें कोई स्थान नही था। यहीं हमारे स्वागतमे सायकाल ६ बजे सार्वजनिक सभा हुई। हमारे व्याख्यान हुए। भारतीय बन्धुओकी हमने बाते सुनी। ऑसूने ऑसूका उत्तर दिया। विपत्तिकथा सुनी। अपनी समस्याएँ रखी। हमने ऑसू पोछनेका विफल प्रयास किया। सायकाल युगनामे श्री केडियाके यहॉ भोजन किया। श्री रामराज सिंह तथा श्री भारतीयजीके यहॉ गये। रगूनमे दूधका व्यापार पूर्वी उत्तरप्रदेशवालोके हाथमे है। उन्होने अपने निवासस्थानपर हमारे स्वागतका प्रबन्ध किया। सभा एक गॉवमे हुई थी। हमे २३ जनवरी ३ बजेका समय याद रहेगा। जानेपर लगा जैसे बनारसके किसी कसबेमे बैठा हूॅ। बोली अपनी, जैसे भोजपुरी बोलते थे। स्त्रियॉ अपने गॉवों जैसी वेशभूषामे काम करती थी। लड़के भारतीय स्काउट

जैसे काम करते थे। उन्होंने गाना गाया बनारस जैसा। उन्हें अपने देशसे हजारों मील दूर इस प्रकार अपने घर जैसे वातावरणमें देखकर आश्चर्य होता था। साथ ही इसका भी उत्तर मिल जाता है कि कैसे दो हजार वर्ष पूर्व भारतीय इसी प्रकार यहाँ आकर आबाद हुए थे। उन बच्चोंको देखकर, उनका प्रसन्न मुख देखकर मेरा मन रो उठा। उनका वर्मामें क्या भविष्य होगा। उनके मुखपर क्या वही प्रसन्नता कायम रहेगी? राजनीति करवटें बदलती है तो प्रसन्नता आँसुओंमे बदल जाती है।

वर्माके प्रधान मन्त्री ऊ नूने हमें २३ जनवरी सोमवारको चायके लिए बुलाया। उनसे मिलकर बड़ी प्रसन्नता हुई। स्पष्टवक्ता, सरलचित्त तथा साधु प्रकृतिके हैं। उनके जैसा प्रधान मन्त्री पाकर वर्मा गर्व कर सकता है। पण्डित जवाहरलाल और भारतके लिए उनके उदार हृदयमे स्थान है। श्री रशीद इलाहाबादके निवासी हैं जो वर्माके उद्योगमन्त्री हैं। उन्होंने भी खानेके लिए बुलाया। बहुत ही सज्जन हैं। भारतीय वर्मा कॉग्रेस कार्यालयमे भी हम गये। लोगोंसे मिले। वर्मा स्वय व्यस्त है। अतएव हम समस्या हल करनेमें समर्थ न हो सके। प्रातःकाल १०॥ बजे संसद् सदस्योंके सम्मुख भाषण किया। भाषण हिन्दीमे किया। उसका अनुवाद भारतीजीने किया। सायंकाल ६ बजे धर्मशालामे सुभाष-दिवसका आयोजन था। मेरे सभापतित्वमें सभा हुई। सुभाष बाबूके साथियों तथा उनके साथ आजाद हिन्द फौजमे काम करनेवालोसे बात करने और उस समयकी स्थिति समझनेका मौका मिला। सभामे जान थी। भाषण भी ओजस्वी हुए।

प्रातःकाल २४ जनवरीको हम एक स्कूल देखने गये। स्कूल रंगूनसे दूर ग्रामीण क्षेत्रमे था। बेसिक स्कूलके आधारपर शिक्षा दी जा रही थी। एक महिला अध्यापिका थी। लौटनेपर प्राची प्रकाश कार्यालयमे पुनः गया। लगभग ४ बजे खचैहा ग्राममे भारतीय ग्रामीण बन्धुओने एक सभा रखी थी। जब कभी मैं गरीब भारतीय बन्धुओंसे मिलता या उनकी सभा-

मे जाता तो मन उदास हो जाता था। बेबसीका अनुभव करता था। मन रोता था। सायकाल रामकृष्ण हॉलमे चायपार्टी भारतीय बन्धुओंने दी। उसमे लगभग २५० व्यक्ति सम्मिलित हुए थे।

आखिरी दिन हम रंगूनमे २५-१-५६ बुधवारको रहे। रोटरी क्लबमें दावत हुई। भारतीय दूत सक्सेनाजीसे भेट की।

आज श्री सूरजप्रसाद खन्नाके यहाँ खाना खाया। सायंकाल ७॥ बजे श्यामके लिए रवाना हो गये। सर्वश्री रामराज सिह वट्टा, श्रीमती वट्टा, व्यवस्थापक प्राची प्रकाश प्रसिद्धनारायण, चन्द्रमौलि शुक्ल, ताराचन्द्र केडिया, श्यामलाल भारती आदि मित्रोंसे विदाई ली।

रगूनसे 'प्राची प्रकाश' हिन्दी दैनिक समाचारपत्र निकलता है। २३ जनवरी सोमवारको उसका कार्यालय भी देखा। व्यवस्थापक प्रसिद्ध-नारायण पाठक तथा सहसम्पादक श्रीचन्द्रमौलि बड़े ही सहृदय व्यक्ति है। रगूनकी मुगल स्ट्रीट भारतीयोके कारबारका मुख्य स्थान है। उसे बर्माकी वाल स्ट्रीट कहते है। श्री केडिया ने हमे भोजनपर बुलाया। वे समृद्धिशाली समय देख चुके है। भारतीयोकी प्रवृत्ति मैने देखी। उनमे स्थिरता नही थी। बर्मा सरकार सम्पत्तियोके विषयमे क्या करेगी। सभी चिन्तित थे, सबके घरोके लोग भारतमे थे। भारत रुपया भेजनेपर अवरोध लगा दिया गया है। यदि कानूनी रकम भेजनेका प्रयास भी होता है तो कभी सरकार विदेशी मुद्राकी कमीके कारण उन्हे भेजनेमे असमर्थता प्रकट कर देती है। सभी भारतीय जैसे बर्मामे अपना कारबार बन्द करना चाहते है। परमिट कोटा नही मिलता। बर्मी नागरिक होनेपर भी उन्हे पूर्ण सुविधा प्राप्त नही होती। प्रत्येक कुटुम्बमे कुछ भारतीय तथा कुछ बर्मी नागरिक हो गये थे। कुछ लोगोने बर्मी नाम भी रख लिया था। परन्तु समस्या हल न हो सकी।

रगून रगीन शहर है। सायंकाल कही न-कही नाटक होता है। झीलोके किनारो तथा उद्यानोमे खुला नाटक होता है। हजारो व्यक्ति खड़े सुनते है। आनन्द लेते है। नगरमे एक ही समय अनेक स्थानोपर

नाटनोंका आयोजन देखा। एक नाटकस्थलमें दस हजार व्यक्तियोंको बैठनेका प्रबन्ध रहता है। नाटक साधारण दृश्य तथा प्वी होते हैं। ये मन्दिरों तथा पगोडाके मेलोंमें होते हैं। वे भी दो तरहके होते हैं। एक जट होता है। उसका आधार जातक-कथाएँ होती हैं। दूसरा रोमाण्टिक गाथाओंपर खेले जाते हैं। जोथे अर्थात् कटपुतलीका भी खेल होता है। जनता सबमें खूब भाग लेती है। कम्पनी बाग सुन्दर है। अच्छा प्रबन्ध है। यहाँ भारतीय नर-नारी टहलने आते हैं।

बहादुर शाहकी मजार रंगून नगरमें ही है। मुख्य नगरसे कुछ दूर खुलेमें है। एक बगीचा है। उसमें एक चौकोर हाल टीनसे छाया है। अगल-बगल दो-चार कोठरियाँ बनी हैं। मुन्तजिम और मुअज्जिन रहते हैं। कब्र अत्यन्त साधारण है। प्रवेशस्थानपर लिखा है कि बहादुरशाह दिल्लीके अन्तिम बादशाह तथा बेगम जीनतमहलकी मजारें हैं। बादशाह तथा बेगमकी कब्रें साथ ही अगल-बगल बनी हैं। उनपर चादर पड़ी थी। कुछ फूल भी चढ़े थे। हुमायूँका मकबरा, सिकन्दरामें अकबरका मकबरा, लाहौरमें जहाँगीर नूरजहाँ, आगरेमें शाहजहाँका मकबरा ताजमहल तथा खुलदाबादमें औरगजेबका मकबरा देख चुका हूँ। इन मकबरोंमें नौकरोंके लिए भी स्थान बहादुर शाहके मकबरेसे अच्छा बना है। हाँ, एक बात याद आ गयी। प्रथम मुगल सम्राट् बाबर तथा अन्तिम मुगल सम्राट् बाहदुरशाह, दोनोंका मकबरा हिन्दुस्तानके बाहर है। अत्यन्त साधारण है। उपेक्षित है। मरनेके बाद अपेक्षा ही कौन करता है। मुगल बाहरसे आये थे। अतएव उनका आखिरी मकबरा भी भारतसे बाहर ही जाकर बना।

गाथाओंके अतिरिक्त वर्माका प्राचीनतम प्रयोग पश्चिममें २०० वर्ष ई०पू० में मिलता है। इसका सम्बन्ध वर्माके उत्तरगामी मार्गसे था। चीनके युन्नान प्रदेशसे वस्तुएँ वर्मा, आसाम, मणिपुर, उत्तरभारत होते हुए बलख (वाह्लीक) तक पहुँचती थी। अर्थात् प्राचीन मार्ग तानकिन उत्तरी वर्मा, उत्तरीभारत, कपिसा, बामियान होता बलखतक पहुँचता था।

इस मार्गका प्रथम ऐतिहासिक वर्णन १३८ वर्ष ई० पू० मे मिलता है। बलखमे चीनके प्रदेश स्जेचवॉका बना सामान प्रयुक्त होता पाया गया है। मार्गको चालू रखनेके लिए सर्वदा प्रयास किया जाता रहा है। इस मार्गके निकट रहनेवाले बर्मी हिन्दुओके समान कान तथा नाक छिदवाते थे। नकबेसर तथा कुण्डल धारण करते थे। रोमन साम्राज्य कालमे नील नदीके पूर्वी भूखण्ड शान अथवा तानके राजदूत युग चागमें इसी उत्तरी मार्गसे आये थे। पश्चिमके अन्य देशोने उत्तरी मार्गका प्रयोग करना त्याग दिया। उन्हे समुद्री मार्गोंसे आनेमे सुविधा होती थी।

बुद्धकालसे पूर्व भी बर्मा तथा भारतका सम्बन्ध अवश्य रहा होगा। सीमान्त देशोसे सम्बन्ध न होना आश्चर्यकी बात थी। इतिहासके इस अध्यायपर अभीतक प्रकाश नहीं पडा है।

भारत और बर्माके सम्बन्धका क्रमबद्ध इतिहास बौद्धयुग तथा मुख्यतया अशोककालसे आरम्भ होता है। भारतीयोको बर्मा देशका ज्ञान था तथा आना जाना होता था।

बर्मामें हिन्दू

गाथा है कि कपिलवस्तुके शाक्यवंशीय राजा अभिराजने उत्तरी बर्मामे अपनी सेनाके साथ प्रवेश किया। उसने सकिसा (तगौंग) नगरकी स्थापना की। उसने वहॉ राज किया। उसकी मृत्यु हुई। उसे दो पुत्र थे। ज्येष्ठने अराकानमे राज्य किया। कनिष्ठ पुत्र तगौंग (सकिसा) का राजा हुआ। इकतीस पीढीतक सकिसामे उसके वंशधरोने शासन किया। पूर्वसे आक्रामक आये। राज समाप्त हो गया। इस समय भगवान् गौतम बुद्ध जीवित थे।

गगाकी उपत्यकासे क्षत्रियोका एक दल उत्तरी बर्मामे आया। उनका राजा दास था। उसने संकिसा राजधानीपर अधिकार किया। अन्तिम राजाकी विधवासे विवाह किया। इस वशका राज सोलह पीढ़ीतक चलता रहा। विदेशी आक्रमणोके कारण राजका लोप हो गया।

अन्तिम राजाका ज्येष्ठ पुत्र बचकर निकल गया। उसने आधुनिक प्रोमके समीप नवीन राज्य स्थापित किया। उसके पुत्र दुतवंगने श्रीक्षेत्र नगरकी स्थापना की। उसके वंशमे अठारह पीढ़ीतक राज रहा। सन् ८४८ मे गृहयुद्ध छिड़ गया। प्यू कनरन तथा मर्म्म जातियॉ परस्पर सघर्षशील हुई। प्यू तथा कनरन जातिमे ग्यारह वर्षतक सघर्ष होता रहा। प्यू जीत गये। प्यू तलैङ तुल्यमान क्मेर जातिके थे। कनरन अराकान चले गये। कुछ समय पश्चात् प्यू जाति भी मोन अर्थात् तलैङसे हार गयी। प्यू लोगोने दगान नगरकी स्थापना की। वही आबाद हो गये। म्रम्म जाति ही आगे चलकर बर्मा जाति हो गयी।

सुधम्मावती

पेगूकी जनश्रुतिके अनुसार कृष्णा तथा गोदावरीके निपात क्षेत्रसे तलैङ्ने बगालकी खाड़ी पार की। इरावदी (अचिरवती) नदीके पुलिनमे आकर आबाद हुए। कहा जाता है कि प्रथम उपनिवेश राजा तिस्सके दो पुत्रो द्वारा बसाया गया था। राजा करनक तथा थुविन्नामे राज करता था। दोनो राजकुमार तपस्वीकी तरह समुद्रके तटपर रहते थे। उन्हे समुद्रतटपर दानवसे उत्पन्न एक पुत्र मिला। बड़ा होनेपर उसका नाम सिंहराज हुआ। उसने सुधम्मावती थातोन (थाटन) नगरको अपनी राजधानी बनाया। इस वंशके ५९ राजाओने सुधम्मावतीमे राज किया।

हंसावती

सुधम्मावतीके राजाके दो पुत्र श्यामल तथा विमल थे। उन्हे राज्यके उत्तराधिकारसे वंचित कर दिया गया था। वे कुछ लोगोंके साथ उत्तर-पश्चिम बढ़े। एक नवीन नगरी हंसावती स्थापित की। हंसावती वर्तमान पेगू अथवा बोगो है। श्यामलने विमलको अपना युवराज अर्थात् उत्तराधिकारी बनाया।

विमल तक्षशिला अध्ययन करने चला गया। श्यामलको एक पुत्र हुआ। विमल लौटकर आया। भाई अपनी प्रतिज्ञा भूल गया। विमल

भाईको मारकर राज्यसिहासनपर बैठा। लगभग १६ वर्ष पश्चात् हिन्दू लोग जहाजोमे भारतसे आये। पेगूको घेर लिया। श्यामलका पुत्र छिपा था। बाहर निकला। भारतीयोसे युद्ध हुआ। उसने विजय प्राप्त की। सात जहाज तथा ३५ सौ भारतीय उसे मिले। वह विमलका उत्तराधिकारी हुआ। उसके वशमे १७ राजा हुए। अन्तिम राजा तिस्स था। वह सन् ७६१ मे राजा हुआ। एक महिलाने उसकी अत्यन्त श्रद्धापूर्वक सेवा की। महिलाकी भक्तिसे प्रभावित होकर उसने बौद्धधर्म स्वीकार कर लिया। वर्मामे एक सुन्दर गाथा है। नगरमे एक अत्यन्त रूपवती वणिक् तरुण कन्या थी। उसका नाम था भद्रादेवी। वह भगवान् बुद्धकी भक्त थी। एक दिन वह सरोवरमे स्नान करने गयी। जलमे उसके पैरोसे एक मूर्तिका स्पर्श हो गया। भद्राने उस मूर्तिको बाहर निकाला। वह बुद्धकी धातुमूर्ति थी। उसने उस मूर्तिको विहारमे स्थापित किया। राजा तिस्स भद्राकी दृढ़ भक्तिसे प्रभावित हुआ और उसे अपनी राजमहिषी बनाया।

वर्मामे कबसे भारतीय आबाद होने लगे है, निश्चय करना कठिन है। बुद्धघोषके पॉचवी शताब्दीके लेखोसे पता चलता है कि अशोकके धर्म-प्रचारक बर्मा गये थे। द्वितीय शताब्दीके पूर्व भी बर्मामे भारतीय फैल गये थे। ब्राह्मी लिपिके प्राप्त बर्माके शिलालेख इसके ज्वलन्त प्रमाण हैं। चीनी गाथाकार कहते है तृतीय शताब्दीमे मध्य बर्मामे लिनपाग राज्य था। उसमे एक लाख बौद्धधर्मावलम्बी सकुटुम्ब निवास करते थे। अनेक सहस्र भिक्षु भी रहते थे। प्राचीनकालके भस्म-कलशोपर सस्कृत, पाली, मोन तथा प्यू भाषाओमे भारतीय लिपि तथा उससे निकली लिपिमे लेख मिले हैं। उत्तरी तथा दक्षिणी भारत दोनो स्थानोकी लिपियॉ मिली है। वे प्रमाण है। बर्मामे उत्तरी तथा दक्षिणी भारत दोनोके लोग जाते रहे है। बर्माके निवासी हिन्दू तथा बौद्ध दोनों धर्मोको मानते थे। शैव तथा वैष्णव-मत भी प्रचलित था। हीनयान, महायान, तान्त्रिक धर्म भी प्रचलित था। बुद्धमूर्तिके आसनपर प्रायः 'ये धम्मा हेतुप्पभवा' उत्कीर्ण मिलता है।

रमणदेश

कल्याणी शिलालेख (सन् १४७६) से मालूम होता है कि अशोकके धर्मप्रचारक गोलनत्ति कंगारा अथवा गोलगर समुद्र-तटपर गये थे। यह स्थान थाटनसे २० मील उत्तर आधुनिक ऐत्थेमामे था। इसमे गौड देशके मकानोंसे मिलते मिट्टीके मकान बने थे। वह गोला लोगोंसे मिलते थे। गोला ही गौड है। बंगाल अर्थात् गौड और बर्मामे आवागमन सरल था। गौड उपनिवेश होना आश्चर्य नहीं था। दक्षिणी बर्मामे अनेक नगरोंका नाम भारतीय ढगका था। रंगूनका प्राचीन नाम ओक्कल अर्थात् उत्कल था। सम्भव है कि यह नाम उत्कलके वणिक तपस्सु और मल्लुकके कारण पड़ गया है। रामावती तथा असितोजन नगर रगूनके समीप थे। वसीन प्राचीन कुसिमनगर अथवा मण्डल है। रामपुर मोलमीन है। मुत्तिम मण्डलका नाम मर्तवान है। दक्षिण बर्माका नाम रमण देश था। कथासरित्सागरमे कलसपुर राज्यका वर्णन मिलता है। यह राज्य प्रोमके दक्षिण-पूर्व सिटियाग नदीके मुहानेपर था। दक्षिणी बर्मामे मोन अर्थात् तैलगी या तलैङ जाति रहती थी। अरब लेखकोने दक्षिणी बर्माको रमण देशकी सज्ञा दी है। रमण शब्द प्राचीन मोन शब्द रमेनका अपभ्रंश है। कालान्तरमे बर्मावाले उन्हे तैलंग कहने लगे। वे तैलगाना अर्थात् आन्ध्र प्रदेशसे आये थे। मोन इतिहासकार मोन देशकी राजधानी हंसावती अर्थात् आधुनिक पेगूको मानते हैं। उसकी स्थापना सन् ८२५ मे हुई थी। बर्मी लोग हसावतीकी स्थापनाका काल द्वितीय शताब्दी मानते है।

श्रीक्षेत्र (थरे क्षेत्रा)

मोन राज्यके उत्तरमे प्यूमे हिन्दुओने श्रीक्षेत्रका राज्य स्थापित किया था। नागार्जुनी कोंडापर्वतको श्रीपर्वत कहते हैं। इसका एक प्राचीन नाम श्रीक्षेत्र भी है। यह आन्ध्रमे है। तैलङ प्रदेश आन्ध्रमे ही है। तैलङ ही मोन थे। यह आधुनिक प्रोमके निकट है। प्रोमसे दक्षिण पॉच मील

ह्मावजामे श्रीक्षेत्रके ध्वंसावशेष वर्तमान हैं। तुंगू वशके लोगोने यह राज्य स्थापित किया था। भगवान् बुद्धकी मूर्तिकी वेदीपर संस्कृत श्लोक सातवी शताब्दीका खुदा मिला है। उसे जयचन्द्रवर्माने गुरुके आदेशपर अपने तथा अपने कनिष्ठभ्राता हरिविक्रमके बीच शान्ति निमित्त स्थापित किया था। पाँच धातु अर्थात् अस्थिपात्रोंपर सात लेख मिले हैं। उनपर राजा हरिविक्रम, सिंहविक्रम, सूर्यविक्रमका नाम लिखा है। वे ६७३-७१८ के बीचके है। लेख प्यू भाषामे है। दक्षिण भारतीय लिपि है। प्यू लेखसे मालूम होता है कि स्तूपका निर्माता श्रीप्रभुवर्मा तथा श्रीप्रभुदेवी थी। वर्मन वंशके राज होनेका पता चलता है। सूर्यविक्रमकी मृत्यु ६४ वर्षकी आयुमे सन् ६८८ मे हुई थी। हरिविक्रमकी मृत्यु ४१ वर्षकी अवस्थामे सन् ६७५ मे हुई। शिवविक्रमकी मृत्यु ४४ वर्षकी आयुमे सन् ७१८ मे हुई थी।

चीनके ताग-वशीय इतिहाससे पता चलता है कि (सन् ६०६-६०८) बर्मामे १८ राज्य थे। प्राचीरसे घिरे ९ नगर थे। वह सभी श्रीक्षेत्र अर्थात् प्यूपर आश्रित थे। प्रोमका वर्णन करते हुए लिखा गया है— श्रीक्षेत्रका राजा सुवर्ण-शिविकापर बाहर निकलता है। दूर जानेके लिए हाथीकी सवारी करता है। सैकड़ों परिचारिकाएँ उसकी सेवाके लिए नियुक्त रहती है। उसके नगरका प्राचीर १६ लीकी परिधिमे होगा।

चीनी लेखसे पता चलता है राजाका नाम महाराज है। मुख्यमन्त्री 'महासेना' कहा जाता था। नगर २७ मीलके घेरेमे था। नगरका प्राचीर चमकती ईटोका बना था। परिखाका किनारा भी ईटोसे बँधा था। सैकड़ोसे ऊपर बौद्ध विहार थे। उनके प्रागणो तथा कमरोमें चाँदी तथा सोना लगा था। जीवसे प्रेम तथा हत्यासे घृणा करते थे। उनके कानूनमे दण्ड देने तथा जजीरोमे जकड़नेकी प्रथा नही थी। सात वर्षकी आयुमे पुत्र एवं कन्या दोनोंका मुण्डनसस्कार होता था। विहारमें निवास करते संघमे सम्मिलित हो जाते थे। बीस वर्षकी आयुमे यदि उनके ज्ञानचक्षु नही खुलते तो पुनः गृहस्थ-जीवनमे लौट जाते थे। सिल्कका वस्त्र नहीं

धारण करते थे। कहते थे, सिल्कके वस्त्रके कारण रेशमके कीड़ोंकी हत्या होती है।

चीनी लेखोंके आधारपर नगरका वर्णन मिलता है। नगरमें बारह तोरणद्वार है। चारों कोनोपर पगोडा है। लोग नगरके अन्दर रहते है। शीशे तथा टिनका खपड़ा बनाते हैं। उन्हें ज्योतिषका ज्ञान है। बौद्ध संयम तथा शीलका बड़ा आदर करते हैं। राज्यप्रसादके राजद्वारके सम्मुख श्वेत हाथीकी १०० फीट ऊँची प्रतिमा है। अर्द्धचन्द्राकार सुवर्ण तथा रजत-मुद्राएँ होती हैं। विवाहित स्त्रियाँ सिरपर जूडा चाँदी किंवा मोतीकी लड़ीसे बाँधती हैं। बाहर पंखी लेकर निकलती है। कुलीनके साथ पाँच या सात सेवक किवा सेविकाएँ रहती हैं। सबके हाथोमे पंखा होता है।

पल्लव प्रभाव होना स्वाभाविक मालूम होता है। श्रीक्षेत्रमे प्यू स्थानमे खनन-कार्य हुआ है। नगरके विशाल ध्वंसावशेषोंका पता लगा है। नगर वर्तमान माण्डले तथा दगानसे भी बड़ा था। नगरका प्राचीर सुदृढ़ था। वह बाहरी तथा भीतरी दोनो नगरियोंको घेरे था। नागरी लिपि तथा संस्कृत भाषामे भी लेख मिले हैं। मालूम होता है कि वह १०४४ से ११११ तक राजधानी थी। समीप ही ३ स्तूप लगभग १५० फुट ऊँचे वर्तमान हैं। गुप्त शैलीके पत्थरपर किये कार्य बहुत मिलेगे। छोटी-छोटी चाँदीकी मूर्तियाँ मिली हैं। उनपर सूर्य, चन्द्रमा तथा नक्षत्रोंकी आकृतियाँ उत्कीर्ण हैं। संस्कृत भाषा तथा नागरी लिपिमे उनपर उत्कीर्ण लेख प्राप्त हुए है। विष्णु अवलोकितेश्वर तथा अल्प महायानी देवताओंकी भी मूर्तियाँ मिली है। बुद्ध अभिलेख भी मिले है। मालूम होता है कि हीनयानके साथ महायान सम्प्रदाय बर्मामे प्रचलित था। मृतकोंका दाह-सस्कार होता था। अस्थियाँ कलशोमे रखकर किसी पगोडा अथवा ईंटोंके चबूतरोपर मिट्टीसे दबा दी जाती थी। सातवीं शताब्दीतक क्रमबद्ध इतिहास बहुत कम मिलता है। ह्वान्चाग तथा इत्सिगके लेखोंसे किंचित् प्रकाश इस कालपर पड़ता है। अभिलेखोमे कदम्ब लिपि एवं पाली भाषाका

प्रयोग किया गया है। गनह्यावजाके समीप मौङ्गनमें दो स्वर्ण-पत्र मिले हैं। कदम्ब लिपि है। पाली भाषा है—ये धम्मा हेतुप्पभवा तेसं हेतुं तथागतो आह—वहींके दूसरे शिलालेखका आरम्भ 'सिद्ध' शब्दसे होता है। वह भारतीय प्राचीन संस्कृत लेखन-शैली थी।

पेगूके लिए हम लोग प्रातःकाल ९ बजे रंगूनसे रवाना हुए। पेगू कभी बर्माका गौरव था। बन्दरगाह था। आज वह केवल छोटा-सा नगर है। रंगूनसे ५० मील दूर है। सड़क जाती है। कहा जाता है कि पेगूमें दस लाख पगोडा थे। सड़कके किनारोके तार टूटे थे। युद्धके समयके टैंकोंके टूटे-फूटे भाग अभीतक खेतोमे पड़े थे। युद्धकालकी जीपे, ट्रक आदि मरम्मत करके चलायी जा रही थीं। पेगूसे आठ मीलपर पुराना पगोडा प्याजी था। परन्तु वहाँ जाना असम्भव था। वह क्षेत्र विद्रोहियोके अधिकारमे था।

पेगूका प्रसिद्ध पगोडा है। उसका शिखर पूर्ण स्वर्णका था। मई सन् १९३० मे भयंकर भूकम्प रंगून तथा पेगू जिलेमे आया। लगभग ८॥ रात्रिमें पगोडा हिला। लड़खड़ाता गिर गया। ईंटो और पत्थरोका ढेरमात्र रह गया था। कहा जाता है कि पगोडा ५ बार भूकम्पसे ध्वस्त हो चुका है। इस पगोडाके जीर्णोद्धारका कार्य बर्माकी स्वतन्त्रता-प्राप्तिके पश्चात् आरम्भ हुआ। प्रथम बर्मी राष्ट्रपति १२ जनवरी सन् १९४८ को पेगू आये। प्रधानमन्त्रीने अप्रैल सन् १९५१ मे पगोडाके पुनर्निर्माण निमित्त कार्यारम्भ किया। सन् १९५३ मे कार्य पूर्ण हुआ। मार्च सन् १९५४ मे बड़े धूमधामसे 'राजकीय सम्मानके साथ पगोडापर छत्र लगाया गया। प्वीका मेला लगा। नाच-गाना सब कुछ हुआ।

भगवान् बुद्धकी निर्वाण-मुद्राकी मूर्ति १८१ फीट लम्बी सोयी है। मूर्ति महाकाय है। टिनका छाजन है। पेगूमे यहीं सबसे अधिक पूजा होती है। मूर्तिमे सुवर्णका असली रंग किया गया है। कुछ रत्न भी जड़े है। दाहिनी हथेलीपर भगवान्का मस्तक है। मूर्ति दाहिने करवट सोयी है। स्थान सुन्दर है। धार्मिक भावना जाग्रत् होती है। फसल एक होती

है। विद्रोहियोंके डरसे सड़कोंके किनारेके पेड़ काट डाले गये थे।

वैशाली

काशीके राजाके एक पुत्रने रामावतीमें अपनी राजधानी स्थापित की। दूसरा राजवंश एक ब्राह्मणने स्थापित किया था। उसने पहलेके राजवंशकी एक कन्यासे विवाह किया था। इस वंशकी एक महिलाने तृतीय राजवंशको जन्म दिया। उसके वंशके लोग ध्यानावतीमें राज्य करते थे। उत्तरी बर्माके क्षत्रियवंशीय राजा तगौंगको अपने कनिष्ठ भाईको देकर इस वंशकी एक राजकन्यासे विवाह किया। उसने चौथा राजवंश स्थापित किया और पहले पर्वतशिखरीय क्युक पन्दुङ् तत्पश्चात् ध्यानावतीमें राज किया। इस समय ध्यानावतीको रखैगम्यु कहते हैं। सन् १४६ में राजा चन्द्रसूर्यके समयमें महामुनि भगवान् बुद्धकी मूर्ति ढाली गयी थी।

महातेनचन्द्रने वैशाली नगरकी स्थापना सन् ७८९ में की थी। उसके पिता सूर्यकेतुके समयमें कुछ विद्रोह ध्यानावतीमें हुआ था अतएव ध्यानावती त्यागकर उसने वैशालीमें नवीन राजधानी स्थापित की। सूर्यकेतु तगौंग वंशकी ५३ वीं पीढ़ीमें था। अराकानमें क्षेत्रमें उसने चौथे राजवंशकी स्थापना की थी। वैशाली ध्वंसावशेषमात्र रह गया है। उसके नामका वैशाली ग्राम आज भी मौजूद है। म्रोहाङ्से आठ मीलकी दूरीपर स्थित है। नगरका प्राचीर तथा परिखा (खाई) का पता लग गया है। आसपासके जंगलोंमें बहुत-सी मूर्तियाँ तथा पत्थर पड़े मिलते हैं। एक काँसेका घण्टा सातवीं शताब्दीके संस्कृत लेखके साथ मिला है। उसकी लिपि गुप्तकालकी है। राजा चूला तेनचन्द्र सुयोग्य नहीं था। वह अपने पारषदोंके साथ सन् ९५७ में राज्य-भ्रमण निमित्त निकला। लौटकर नहीं आया। कुछ समय पश्चात् म्रोन जातिके सरदारने जो अराकानकी पहाड़ियोंमें रहता था, वैशालीपर आक्रमण किया। वैशालीकी विधवा रानी चन्द्रावतीसे विवाह कर राजा बन गया। म्रोन सरदारके आचरणसे

प्यूका राजा अत्यन्त रुष्ट हुआ। अराकानपर ९० हजारकी सेनाके साथ सन् ९६४ मे आक्रमण किया। किन्तु प्यू सेनाका पराजय हुआ। अस्सी हजार प्यू सैनिक मारे गये। राजा भाग गया। पलायित राजाका जहाँ सामान आदि गाड़ा गया वहीं आज श्वेदड् बना है।

श्रीधर्मराजानुज-वंश

वैशालीके चन्द्रवंशकी बहुत मुद्राएँ अराकानमे प्राप्त हुईं। धर्मचन्द्र, प्रीतिच्चन्द्र, धर्मविजय, नीतिच्चन्द्र, वीरच्चन्द्र आदिने आठवी तथा नवीं शताब्दीमे राज्य किया था। अराकानके म्रोहाङ्के शिथौङ् मन्दिरके एक स्तम्भके आलेखसे प्रकट होता है कि श्रीधर्मरामानुज वंशके १९ राजाओंने राज्य किया था। उनका राज्यकाल भी स्तम्भपर दिया है। उनके नाम शुद्ध हिन्दू है—बालचन्द्र, देवचन्द्र, यज्ञचन्द्र, दीपचन्द्र, प्रीतिच्चन्द्र, नीतिच्चन्द्र, महावीर, धर्मासुर श्री धर्मविजय, नरेन्द्रविजय, नरेन्द्रच्चन्द्र तथा आनन्दच्चन्द्र। यह स्तम्भ आनन्दच्चन्द्रने बनवाया था।

आर्यसंघ

आनन्दच्चन्द्रने अनेक विहारोंका निर्माण कराया था। अनेक बुद्ध-मन्दिर बनवाये थे। उसने आर्यसंघके लिए राज्यके अनेक स्थानोपर शालाएँ बनवायी थीं। पचास ब्राह्मणोको भूमिदान किया था। स्पष्ट है कि बर्मामे बौद्धसंघके साथ-ही-साथ आर्यसंघ भी कायम था। हिन्दू तथा बौद्ध, दोनो ही धर्म लोग मानते थे। बौद्धमूर्तियाँ ही अधिकतर वैशालीके आस-पास मिली है।

ताम्रपत्तन

आनन्दच्चन्द्रको ताम्रपत्तनका राजा कहा गया है। यह सम्भवतः अराकानका नाम रहा होगा। राजधानी वैशाली थी। आनन्दच्चन्द्रकी मुद्राओंपर शिव तथा विष्णुकी मूर्तियाँ उत्कीर्ण हैं। उन्हीं दिनो दक्षिण-पूर्व बंगालमे एक चन्द्रवंशका राजा था। सम्भव है कि इसका सम्बन्ध उनसे रहा हो। यह गवेषणाका विषय है।

नानचाओ

आठवीं तथा नवीं शताब्दीमें थाई देश स्थित नानचाओ राजका उत्तरी तथा दक्षिणी बर्मांके कुछ भूखण्डोंपर अधिकार था। उसके राजा कोलोफोंगने ७४८–७९ के मध्य उत्तरी इरावदी भूखण्डको नियन्त्रित करनेके लिए दुर्गादिका निर्माण कराया था। स्थानीय लोगोंको सेनामें भर्ती किया था। नानचाओने हनोईपर सन् ८३३ में आधिपत्य स्थापित किया था। उसने बर्मांके सैनिकोंको अपनी सेनामें स्थान दिया। उसके अभियानोंके कारण भारत-बर्मांके बीचका उत्तरी मार्ग पुनः चलने लगा था। एक मार्ग प्यू राजकी राजधानी, जो सम्भवतः हालिन थी, चिण्डविन होते मणिपुर जाता था। कोलोफोंगके पौत्र तथा उत्तराधिकारी-ने प्यू गायकोंको सन् ८०० में चीनके तागवशीय राजाके दरबारमें भेजा था। सन् ८०१–८०२ के बीच प्यूके राजाने ३५ गायकोंका शिष्टमण्डल नानचाओके राजाके द्वारा चीन भेजा था। चीनी इतिहासकारोंने प्यूकी राजधानीका वर्णन किया है। वे ही बताते हैं कि ८३२ में प्यूकी राजधानीको नानचाओने नष्ट किया था। तीन हजार बन्दियोंको युनानफू भेजा था। उनकी भाषा तिब्बत-बर्मा भाषासे मिलती थी। मैंजेदीके लेखसे प्रकट होता है कि सन् १११३ तक इस भाषाके बोलनेवाले थे। इस जातिका सर्वथा लोप हो गया है। बर्मी जातिमें सर्वथा विलीन हो गयी है।

प्यूके अधीन लगभग १८ राज्य थे। वे प्रायः बर्मांमें थे। एक राज्य मीचेन था। चीन सम्राट्ने उसे पूर्ण प्रभु-सत्तासम्पन्न राजकी मान्यता दी थी। इस राजका नानचाओने सन् ८३५ मे नाश किया था। एक कूनलन् राज्य भी था। वह मो-ती-पो बन्दरगाहके समीप स्थित था। मेनामबाटीमें द्वारावतीका राज्य मोन राज्यशक्तिका केन्द्र था। सातवीं शताब्दीमें वे तेनासरीमके एक भागपर नियन्त्रण रखते थे। सबसे प्राचीन मोन शिलालेख आठवीं शताब्दीका लेखबरी अर्थात् लवपुरीमे पाया गया

है। श्याम तथा बर्मा दोनों ही देशोंमें मोन राज थे। उनमें विचारोंका आदान-प्रदान होता था। उन्होंने उच्चकोटिकी भारतीय सभ्यताका विकास किया था। वे दक्षिणी भारतके तैलंगी थे। अपने साथ ही साथ भारतीय सभ्यता तथा सस्कृति विदेशोंमें ले गये और उनका विकास किया।

अरिमर्दनपुर

पगानका प्राचीन नाम अरिमर्दनपुर है। इसकी स्थापना सन् ८५९ मे राजा प्यनप्याने की थी। राज्यका नाम ताम्रदीप था। मण्डल ततदेश था। नास्तिक अरि यहाँ रहते थे। राजा अनवर्थके पूर्व राजा सा-रहनका ही वर्णन शिलालेखोमें मिलता है। पगानसे आठ मील दूर उसने बुद्ध सीमाका निर्माण कराया था। वर्मी गाथा है। पगानका एक सिह राजा था। वह अरण्यमे भ्रमण कर रहा था। उसे भूख लगी। एक कृपकके खेतसे कर्कटी तोड़कर खा लिया। कृपकने उसकी हत्या की। राजाकी विधवा रानीकी कृपासे स्वयं राजा बन गया। राजा सा-रहनको राजत्वसे हटा दिया। किन्तु सा-रहनके दो पुत्रोके कारण उसको बाध्य होकर गृह-त्यागी होना पड़ा। वह अपने पुत्र अनवर्थके साथ वनमे चला आया। कनिष्ठ पुत्रको अनवर्थने मल्लयुद्धके लिए ललकारा। पुत्र मारा गया। अनवर्थ राजा हुआ। अनवर्थका नाम अनिरुद्ध था। उसने सन् १०१० मे राज्यारोहण किया। कुछ विद्वान् यह समय सन् १०४० बताते हैं। आधुनिक पगान प्राचीनसे ५ मील दूर स्थित है। सैकड़ों वर्गमील भूमिमे पुराना पगान जंगलोंमें बिखरे वृक्षों, पगोडाओं आदिमे फैला पड़ा है। हजारो पगोडा होंगे। हजारो वर्षोंके इतिहासोको लपेटे उजड़ा पड़ा है। महाबोधि पगोडा देखकर कोई भी अनायास कह उठेगा कि बोधि-गयाका मन्दिर यहाँ लाकर रख दिया गया है। आनन्द पगोडा श्वेत है। दर्शनीय है। ताजमहलकी तरह चमकता है। मन्दिरमें भगवान् बुद्धकी खड़ी मूर्ति है। सियोदगोन पगोडा घण्टाकार है। सुवर्णमण्डित है।

आरि सम्प्रदाय

आरि सम्प्रदाय महायान बौद्ध नाममात्रके लिए थे। उनका चरित्र भ्रष्ट तान्त्रिक सम्प्रदायपर आधारित था। उन्होंने अपने सम्प्रदायमें बुद्ध और शक्तिको भी हिन्दुओंके शिव एवं शक्तिके समान सम्मिलित कर लिया था। वे लम्बा जटा-जूट रखते थे। काला वस्त्र पहनते थे। खूब मदिरा पीते थे। घोड़ेपर चढ़ते थे। युद्ध करते थे। पगानसे कुछ दक्षिण-पूर्व लगभग ३० आरि-सरदारोंका स्थान था। उनके ६० हजार शिष्य थे। उनका प्रभाव जनता तथा राजा, दोनोंपर था।

राजा अनिरुद्धको एक ब्राह्मण भिक्षु धर्मदर्शीने जिन्हे अरहन अथवा शिन् अर्हन भी कहते थे, बौद्ध बनाया था। अनिरुद्ध तथा धर्मदर्शीने मिलकर आरि-शक्ति छिन्न-भिन्न कर दी। कुछ शान प्रदेशमें चले गये और कुछ शान्तिपूर्वक रहने लगे।

अनिरुद्ध

अनिरुद्ध बर्माका महान् राजा हुआ है। उसे पाश्चात्य लेखकोंने अनवरहत लिखा है। उसने बर्मा देशका एकीकरण किया। बर्मामें शुद्ध बौद्ध धर्म फैलाया। पगान नगरको बर्माका विशाल नगर बनाया। उसने बर्मा, अराकान, दक्षिणी बर्मा तथा मोन राज्यपर विजय प्राप्त की। उन्हें बर्मा देशका अंग बनाया। उसने बर्मा और शान प्रदेशकी सीमापर ४३ सैनिक चौकियाँ स्थापित कीं। बर्मी गाथाकार कहते है कि उसने कम्बुजपर भी आक्रमण किया था। उसका नक्रोन पेथम्समें हीनयान बौद्ध सम्प्रदायसे सम्पर्क हुआ। उसने पगानका राजधर्म हीनयान बौद्ध सम्प्रदाय स्वीकार किया।

शिन् अर्हन्ने उसे त्रिपिटकका शुद्ध पाठ प्राप्त करनेके लिए कहा। राजाने थातोकके राजा मनुहा अर्थात् मनोहरके पास दूत भेजा। राजाने उत्तर दिया—सिंहकी मज्जा सुवर्णपात्रमें रखी जाती है न कि मिट्टीके। मिथ्या-दृष्टिवालेके पास त्रिपिटक तथा धातुएं नहीं भेजी जा सकतीं। राजा

अनिरुद्ध क्रोधित हुआ। उसने थातोन (थाटन) पर आक्रमण किया। तीन मासतक नगरका घेरा डाले रहा। थाटनका पतन हुआ। बन्दी राजा मनुहाका सुवर्ण चखला, तथा अनेक कलाविदों और भिक्षुओंके साथ पगानमे प्रवेश हुआ। बत्तीस ऐरावत हाथियोपर त्रिपिटक तथा बौद्ध धर्मके अनेक संस्मारक आदि रखकर पगान लाये गये। मार्गमे उसने प्यूकी राजधानी श्रीक्षेत्रके प्राचीरको गिरवा दिया। पगोडामें शताब्दियोसे रखी पवित्र वस्तुओंको निकालकर पगान भेज दिया। मनोहर श्वेजिगोन पगोडामे सकुटुम्ब रख दिया गया।

उत्तरी आराकानपर अभियान किया। वहाँका राजा पराजित हुआ। शान-सरदारोंपर आक्रमण किया। उन्होने उसकी प्रभुता स्वीकार कर ली। उसकी सेना जनश्रुतिके अनुसार चटगॉवतक पहुँची थी। भारत-भूमिका कोई भाग अपने राज्यमे नही मिलाया। उसके राज्यकी सीमा (त्रिपुरा) जिलाके पट्टिकरातक थी। उसने नानचाओ-थाईपर भी आक्रमण किया था। वहॉ सन्धि हो गयी। नानचाओकी राजधानी तालीसे लौटते समय उसने शान राजाकी एक कन्यासे विवाह किया। उत्तरी श्यामके चिगमाईके राजाने जब पेगूपर आक्रमण किया तो अनिरुद्धने भारतीयोकी सेना भेजी। सेनाने आक्रामकोको पीछे खदेड दिया।

उसने भारतीय वैशाली राजाकी कन्या पंचकल्याणीसे विवाह किया। बर्मी गाथाकार कन्याकी बर्मा-यात्राका बड़ा सुन्दर वर्णन करते है।

राजाने अनेक पगोडा तथा विहारोंका निर्माण कराया। उसे अनिरुद्धदेव कहा जाने लगा था। उसके प्राप्त संस्कृत अभिलेखसे स्पष्ट हो जाता है—'तेषां च यो निरोध एवंवादी श्रीअनिरुद्धदेवः। ओं देयधर्मोयं सच्चदानपति महार श्रीअनिरुद्धदेवस्य।' भारतमे अशोकने जो कुछ बुद्धधर्मके लिए किया वही अनिरुद्धने बर्मामे किया। मोनराजकी उसने समाप्ति की। मोनजातिने सास्कृतिक विजय की। यूनान विजयके पश्चात् रोम उतने प्रभावित नही हुए जितना कि थाटन विजयके पश्चात्

पगान हुआ। मोनकला, मोन रहन-सहन, मोन धर्म तथा मोन भाषा अपना ली गयी। वर्माकी पवित्र भाषा पाली हो गयी। मोनलिपि वर्माकी लिपि बनी। मोन भारतीय तिलगू अथवा तैलङ्ग् थे। उनके कारण भारतीयता वर्माके सब ओर अविच्छिन्न रूपसे फैल गयी। उस समयके लेख पाली अथवा मोनभाषामें मिलते हैं। अनिरुद्धने संस्कृतके स्थानपर पाली भाषाको प्राथमिकता दी। कुछ लोगोंका कहना है कि सन् ४०३ में श्रीलंकासे बुद्धघोष बौद्धधर्म थाटनमें लाये। दूसरा मत है कि थाटनमें बौद्धधर्म कांजीवरम्‌से धर्मपाल द्वारा पाँचवीं शताब्दीमें लाया गया था। प्राचीनतम मोनलेख पल्लव लिपिमें ही प्राप्त हुए हैं। कालान्तरमें कांजीवरम्‌का स्थान श्रीलंकाने ले लिया। कांजीवरम्‌से बौद्धधर्मका लोप हो गया।

श्रीलंकापर चोलराजने आक्रमण किया। राजा विजयबाहुने अनिरुद्धसे सहायता-याचना की। सेनाके लिए जहाज भेजा। बिना वर्माकी सहायताके ही श्रीलंका चोलोंपर सफल हुआ। विजयबाहुने राजा अनिरुद्धसे भिक्षु तथा धर्मग्रन्थ माँगा। राजाने तुरन्त भेज दिया। एक श्वेत हाथी भी भेजा। बदलेमें अनिरुद्धने भगवान् बुद्धका दाँत जो लंकामें था, माँगा। कुछ काल पूर्व थेरकित्तरासे भगवान्‌की कुछ अस्थियाँ अनिरुद्धने प्राप्त की थीं। राजाने असली दाँत न देकर दूसरा दाँत भेज दिया। जिस समय यह दाँत पगानमें जहाजसे पहुँचा, राजा स्वयं कण्ठ-पर्यन्त नदीमें उतरकर दन्तमञ्जूषा अपने मस्तकपर रखकर विशाल शोभा-यात्राके साथ चला। इसके लिए प्रसिद्ध सियोदगोन महास्तूप बनवाया। उसमें पवित्र धातु रख दी गयी। स्तूपके चारों ओर बुद्ध-देवताके मन्दिर हैं। अनिरुद्धकी मृत्यु सन् १०७७ में हो गयी।

स्वलु अथवा सल्य अपने पिताकी मृत्युके पश्चात् सिंहासनपर बैठा। पेगूमें मोन लोगोंने विद्रोह किया। पगानको घेर लिया। राजा बन्दी हो गया। आक्रामकोंने सन् १०८४ में उसकी हत्या कर दी।

श्री त्रिभुवनादित्य धर्मराज

अनिरुद्धका दूसरा पुत्र केनजित्था उत्तर बर्माकी ओर भाग गया था। वह लौटा। विद्रोहियोंको पराजित किया। सन् १०८४ में उसने राजमुकुट धारण किया। अपना नाम श्री त्रिभुवनादित्य धर्मराज रखा। भारतीय राजकन्या वैशाली पंचकल्याणीका पुत्र था। राज्याभिषेक हिन्दू रीतिके अनुसार किया गया। उसने नवीन राजप्रासाद तथा बहुतसे पगोडा बनवाये। उसके अनेक अभिलेखादि मोन भाषामें प्राप्त हुए हैं। बर्माका स्तर उसने बहुत उठाया।

वह अपनी कन्याका विवाह पट्टीकेराके राजकुमारके साथ करना चाहता था। उसके मन्त्रियोंने विवाहका विरोध किया। राजकुमार राजकन्यासे इतना अधिक प्रेम करता था कि उसने आत्म-हत्या कर ली। बर्मी साहित्यमें इस आख्यायिकाके आधारपर अनेक नाटक तथा गाथाएँ लिखी गयी हैं। इस गाथापर आज भी बर्मामें नाटक खेले जाते हैं।

भारतसे निकट सम्बन्ध स्थापित किया गया। बहुतसे बौद्ध एवं वैष्णव भारतसे बर्मामें आबाद हो गये। गाथा है कि राजा आठ भारतीय साधुओंको अपने हाथसे तीन मासतक भोजन कराता रहा। उनसे भारतीय मन्दिरोंका वर्णन सुनता था। उसके मनमें महान् मन्दिर बनानेकी कल्पना उदय हुई। इसीका साकार रूप पगानका आनन्द पगोडा है। आनन्द विहार विश्वकी अद्भुत कलाकृति है। प्रथम परिक्रमा-में अस्सी गवाक्ष हैं। बुद्ध भगवान्की जीवनगाथा जन्मसे परिनिर्वाणतक अंकित है। इस मन्दिरके मूर्ति अंकनकी संख्या लगभग १४७२ है।

बुद्ध गयाका जीर्णोद्धार

राजाने ११०३–११०६ के बीच चीनमें शिष्टमण्डल भेजा। बोधगयाके मन्दिरका जीर्णोद्धार कराया। बोधगयाके मन्दिरके जीर्णोद्धारका वर्णन मोन भाषामे श्वेहसनदा पगोडामे उल्लिखित है। राजाने अनेक प्रकारके रत्नोंको एकत्र कर जहाजसे भारत भेजा। उसने मन्दिरका जीर्णोद्धार किया। मन्दिरमे अखण्ड ज्योति जलती रहनेके लिए प्रबन्ध किया। उसने सम्राट् अशोकके निर्मित भवनोंको उससे भी अधिक अच्छा बनवाया। सम्राट्का निर्माण अत्यन्त पुराना होनेके कारण गिर गया था। इस समय भारतमे बुद्धधर्मका लोप हो गया था। अतएव स्वाभाविक प्रतीत होता है कि बौद्धस्थान उपेक्षित तथा बिना मरम्मत पड़े हुए हो।

उसने भारतीय चोलराजको बुद्धधर्म स्वीकार करनेके लिए समझाया। चोलराजने अपनी कन्याकी शादी राजासे कर दी। चोलराजने सन् १०२५ मे श्री विजयपर आक्रमण किया था। उन्होंने केदाहको सन् १०६८ मे पराजित किया। इस सघर्षका उद्देश्य दक्षिण-पूर्व एशियासे व्यापारिक सम्बन्ध स्थापित करना था। चोलोंका व्यापार उन दिनों खूब बढ़ा-चढ़ा था।

राजर्षि नृपतिसिन्धु

राजाने दक्षिणी अराकानपर भी आक्रमण किया। उसने चीन, भारत तथा सीमान्त सभी देशोसे सम्पर्क स्थापित किया। चीनपर जोर दिया कि चोलराजकी अपेक्षा उसे अधिक मान्यता मिलनी चाहिये। चीनने राजाकी बात मान ली। सन् १११२ मे इस महान् राजाकी मृत्यु हो गयी। शिन् अर्हनकी भी मृत्यु सन् १११५ मे हो गयी उसका नाती (पुत्री-पुत्र) अलौङ्ग सित्थू राजा हुआ। उसे नृपतिसिन्धु भी कहते है। उसने ५५ वर्षोंतक राज किया।

उसके समयमे दक्षिणी अराकानके राजाने उसके प्रदेशपर हमला किया। वह पराजित हुआ। शिरोच्छेद कर दिया गया। तसरीमके

विद्रोहको दबाया। उसकी अराकानके राजाने उससे सहायता माँगी। उसने जल तथा स्थल दोनों ही सेनाएँ भेजीं। वास्तविक उत्तराधिकारीको अराकानकी गद्दीपर बैठाया। अराकानके राजाने अहसानका बदला चुकाना चाहा। राजाने कहला भेजा कि बोधगयाके मन्दिरकी मरम्मत करवा दी जाय। अराकानके राजाने बोधगयाके जीर्णोद्धारके लिए धन एवं व्यक्ति भेजा। उसने मलाया, अराकान तथा बर्माकी यात्राएँ कीं।

मयाजेदी पगोडा पेगूके दक्षिणमें है। सन् ११९३ का शिलालेख सन् १९११ में मिला है। उसमें स्पष्ट वर्णन है कि राजर्षि नृपतिसिन्धुने उसकी रचना करवायी थी। उसमें चारों तरफ बर्मा, पाली, मू तथा मोन भाषामें लेख हैं। वह आध्यात्मिक प्रवृत्तिका व्यक्ति था। धार्मिक मनोवृत्ति थी। उसने देशका भी खूब पर्यटन किया। अनेक निर्माणकार्य कराये। अनेक स्थानोंपर शिलालेख खुदवाये। लेखोंकी भाषा उच्चकोटिकी साहित्यिक है।

उसने मणिपुर राज्यान्तर्गत पट्टीकेराकी राजकन्यासे विवाह किया। पगानका प्रसिद्ध थतब्यिन् मन्दिरका निर्माण कराया। वह सन् ११४४ में बनकर पूर्ण हुआ था। उसकी शैली आनन्द-मन्दिरतुल्य है। उसकी प्रार्थना पाली भाषामें श्वेगू पगोडामें उल्लिखित है। भाषा उच्चकोटिकी साहित्यिक एवं परिमार्जित है। उसकी हत्या उसके कनिष्ठ पुत्र नरत्थूने सन् ११६७ में कर दी।

नरत्थू

नरत्थू हत्यारा राजा था। उसने राज्यके वास्तविक उत्तराधिकारी अपने ज्येष्ठ भ्राता मिन-शिन-सानकी हत्या की। वंशके अनेक लोगोंके खूनसे हाथ रँगा। जनता तथा भिक्षु दोनोंको तंग किया। अन्तमें अपनी विमाता पट्टीकेराकी राजकुमारीकी स्वयं अपने हाथों हत्या की। राजकुमारीके पिताने निश्चय किया कि पुत्रीकी हत्याका बदला लिया जाय। उसके आठ अंगरक्षकोंने राजाकी प्रतिज्ञा पूरी करनेका बीड़ा उठाया। वे पुरोहितका रूप बनाकर राजप्रासादमें पहुँचे। राजा उनका आशीर्वाद

प्राप्त करनेके लिए बाहर आया। वस्त्रोंमे छिपे छूरोंसे उन्होंने राजाकी हत्या सन् ११७० मे कर डाली।

नरत्थूका पुत्र नरसिह राजा हुआ। वह असफल राजा सिद्ध हुआ। राज-कार्यमे शिथिल था। तीन वर्ष राज करनेके पश्चात् सन् ११७३ मे अपने कनिष्ठ भाई नरपतिसिन्धु द्वारा मार डाला गया। नरपतिसिन्धु सन् ११७३ मे सिहासनपर बैठा। सन् ११६७ से ११७३ का काल बर्माका संक्रमणकाल कहा जायगा। मोन भाषाका स्थान अचानक बर्मी भापाने ले लिया। प्रतीत होता है कि बर्मी राष्ट्रीयताकी वृद्धि तथा मोनोके प्रति उठती प्रतिक्रियाके कारण उन तीनों ही राजाओकी हत्याएँ हुई थीं।

नरपतिसिन्धुका राजकाल लम्बा था। उसके समयमे धार्मिक विपयोंमें श्रीलंकाका प्रभाव बढ़ गया। सन् ११९२ मे सिहली बौद्धका प्रवेश पगानमे हुआ। सन् १०५६ से मोन देशसे जिस बौद्ध सम्प्रदायका प्रवेश बर्मामे अनिरुद्ध राजा द्वारा हुआ था उसका स्थान सिहली बौद्ध सम्प्रदायने ले लिया। उसने गद्व पालिन तथा सूलमणि अत्यन्त सुन्दर मन्दिरोंका निर्माण कराया। उसने देशमे अनेक पगोडा बनवाये। स्थान-स्थानपर सिचाईका प्रबन्ध किया गया। सार्वजनिक जीवनस्तरको उठानेवाली अनेक लोककल्याणकारी कार्य किये गये।

नरत्थूके राजत्वकालमे शिन् अर्हनका उत्तराधिकारी पथंगू श्री लंकामे चला गया था। नरपतिसिन्धुके राज्यारोहणके पश्चात् बर्मा लौटा। अधिक दिनतक जीवित न रह सका। उसका उत्तराधिकारी मोन सन्त उत्तरजीव भी श्रीलंकामे सन् ११८० मे गया। वहाँसे लौटनेपर लकाके प्रथम तीर्थयात्रीकी उसे उपाधि दी गयी। उसका एक साथी चपटा उसके पीछे लंकामे दस वर्षतक रहा। वह सन् ११९० मे लौटा। उसे लंकाके द्वितीय तीर्थयात्रीकी उपाधि दी गयी। वह अपने साथ चार विदेशी भिक्षुओंको भी लाया। उसके साथ एगकोरके निर्माता जयवर्मा सप्तमका पुत्र तमलिन्द भी था।

नरपतिसिन्धुके राजत्वकालमे पगोडाकी एक नवीन शैलीका

बर्मामे प्रवेश हुआ। थाटन शैलीपर ही गत दो शताब्दियोसे पगोडा बनते रहे। बहुतसे भिक्षु श्रीलंकाकी यात्रा करने लगे। भारतमे विदेशी अर्थात् इस्लामके आक्रमणके कारण व्यवस्था अस्त-व्यस्त हो गयी थी। हिन्दू-धर्म स्वयं खतरेमे हो गया था। अतएव श्रीलंका ही एक ऐसा स्थान रह गया था जहाँसे बौद्ध धर्मावलम्बियोंको प्रेरणा मिलती थी। इस्लामका प्रभाव दक्षिण-पूर्व एशियामे पड़ने लगा था। बौद्ध सन्तोने भारतीय भक्तिपरम्पराके संतोतुल्य धर्म-रक्षा करनेका बीड़ा उठाया। बिना राज्यादेशके भी बौद्धधर्म कम्बुज, थाई, तथा बर्मामे फैलने लगा। भारतमें हिन्दू-मुसलमान होने लगे। दक्षिण-पूर्व एशियाके हिन्दुओने बौद्ध धर्म ग्रहण कर लिया। हिन्दू धर्मका अचानक लोप होने लगा। केवल इण्डो-नेशिया, मलाया तथा भारतमे इसलाम फैल सका। शेष स्थानोमे इसलाम-को सफलता न मिली। इसका श्रेय उन महान् बौद्ध सुधारवादी आन्दो-लकोंको है जो श्रीलकासे अनुप्राणित होकर समस्त दक्षिण-पूर्व एशियामे फैल गये थे। उन्होने अपने धर्मके लिए लोगोमे अभिरुचि उत्पन्न की। धर्मका वास्तविक अर्थ समझाया। लोगोको बुद्धवादी बनाया। शैव तथा वैष्णव धर्म किंवा संस्कृति केवल राजप्रासाद तथा कुछ विशिष्ट लोगो-तक ही सीमित रह गयी। वे अपनी रूढ़ि एवं जड़ताके कारण लोकप्रिय न हो सके। बौद्धोके संघोने लोगोंमे समष्टिवादी भावना भरकर समष्टिवादी नेतृत्वके आदर्शको सम्मुख रखा जब कि भारतमे यह धारा उलटी अर्थात् व्यष्टिवादी हुई। नरपतिसिन्धुकी मृत्यु सन् १२१० मे हो गई। उसने अपने कनिष्ठ पुत्र जयसिहको उत्तराधिकारी बनाया।

जयसिंहने सन् १२३४ तक राज्य किया। वह अत्यन्त धार्मिक प्रवृत्तिका था। उसने बहुतसे मन्दिर तथा पगोडा बनवाये। उसने महाबोधि मन्दिर बौद्धगयाके अनुरूप बनवाया। उसकी दूसरी कृति हितलो-मिनलो है। वह अन्तिम महान् मन्दिर निर्माता राजा हुआ है। वह इतना धार्मिक हो गया था कि अपने चार भाइयोंके ऊपर राजका कार्य-भार सौंप दिया था। वे मिलकर शासन करते थे। उसके समयमें

बौद्ध विहारोंका जीवन सुसंस्कृत हुआ। पाली ग्रन्थोंपर भाष्य लिखे गये।

जयसिंहके पश्चात् उसका पुत्र क्यासवा (केशव ?) सन् १२३४ में राजा हुआ। वह अपने पितासे भी अधिक धार्मिक था। वह बौद्ध धर्मग्रन्थ पढ़ता रहता था। अनेक धार्मिक ग्रन्थ भी लिखे हैं। उसने त्रिपिटक तथा अट्ठकथाओंका नौ बार पारायण किया था। अन्तःपुरीय महिलाओंके लिए 'परमत्थविंदु' पुस्तक लिखी। 'सद्दविन्दु' नामक व्याकरण ग्रन्थ भी लिखा। उसकी कन्याने भी 'विभत्यत्थ' पाली व्याकरण लिखा था। उसने मिनवू जिलामें प्रसिद्ध 'एमरल्ड' झीलका निर्माण कराया था।

सन् १२५० में क्यासवा की मृत्युके पश्चात् उसका पुत्र उदयन राजा हुआ। वह शराबी तथा शिकारी था। सन् १२५४ में हाथीके पैरों-तले कुचल कर उसकी हत्या कर दी गयी। वह अपने पिता तथा पितामहका ठीक उलटा था। वे जितने ही धार्मिक तथा साधु प्रकृतिके थे वह उतना ही विलासी तथा अधार्मिक था।

नरसिंहपति (नरथिपति) सन् १२५४ में राजा हुआ। उसने मिंगला जेदी पगोडाका निर्माण कराया। उसका एक शिलालेख प्राप्त हुआ है, उसमें लिखा है—सेनामें ३ करोड़ ६० लाख सैनिक हैं। तीन हजार रखेली स्त्रियाँ हैं। दहीकी ३०० कटोरियाँ खा जाता था। उसने ६ वर्षमें पगोडा बनवाया। देशकी सम्पत्ति तथा श्रम दोनों उसमें लगा दिया। कहावत है कि पगोडा तो बना किन्तु देशका सत्यानाश हो गया ? उसे 'चीनसे पराजित राजा'की पदवी बर्माने दी है।

सन् १२५३ में मंगोल कुबलाखाँने सीमान्त चीन प्रदेश युन्नानपर अधिकार कर लिया। सन् १२७१ में उसने बर्माको अपनी प्रभुसत्ता स्वीकार करानेके लिए बर्मामें राजदूत भेजा। बर्माने प्रभुसत्ता स्वीकार नहीं की। सन् १२७३ में सम्राट्ने पुनः राजदूत भेजा। बर्मा दरबारमें जूता उतार कर प्रवेश किया जाता था। चीनी राजदूतने बार-बार कहने-पर भी पदत्राण उतारना स्वीकार नहीं किया। राजा बिगड़ गया। उसने राजदूत तथा उसके साथियोंकी हत्या करवा दी।

भामोसे उत्तर ७० मीलपर कनगाई एक राज था। वह तोपेग नदीपर स्थित था। वहाँके राजाने कुबलाखाँका प्रभुत्व स्वीकार कर लिया। बर्माके राजाने सन् १२७७ मे कनगाईपर आक्रमण कर दिया। युन्नानके राज्यपालसे बर्माकी सेना पराजित हो गयी। सन् १२८३ मे मार्कोपोलो इस युद्धमे उपस्थित था। युद्धका वर्णन करता है। न्यसौंग्याके युद्धके नामसे इसकी प्रसिद्धि है। सन् १२८३ मे वर्माने चीनके सीमान्तपर पुनः आक्रमण किया। पुनः बुरी तरह कौङसिन स्थानपर पराजित हुए। चीनी सेना भाओतक पहुँच गयी। ऋतुकी विपमताके कारण लौट गयी। पराजयका हाल सुनते ही राजा वसीन भाग गया। परन्तु चीनी सेनाने बर्मामे प्रवेश नही किया। राजाने एक भिक्षु आत्म-समर्पण निमित्त भेजा तो कुबलाखाँसे उसने सहानुभूतिपूर्ण उत्तर पाया। राजा सन् १२८७ मे जब पगान जा रहा था तो उसके पुत्रने मार्गमे उसे मार डाला।

नृपतिसिन्धुके पगानसे हटनेके कारण केन्द्रीय शासनसूत्र शिथिल हो गया। अराकान स्वतन्त्र हो गया। दक्षिणमे मोन लोगोने भी विद्रोह किया। शान वास्यू सुखो थार्ट (सुखोदया) से भागकर बर्मा आ गया था। उसने भी विद्रोहका झण्डा बुलन्द कर दिया। प्रोमपर बर्माका अधिकार अभीतक था।

राजाकी मृत्युका समाचार सुनकर मगोलोंमे उत्साह उत्पन्न हुआ। उन्होने बर्मापर आक्रमण कर दिया। कुबलाखाँके प्रपौत्र तैमूरने पगान ले लिया। पगान खून और आगमे नहाकर भुन उठा। दो सौ पचास वर्षोंके गौरवमय इतिहासका पटाक्षेप हो गया।

मंगोल चाहते थे कि नामके लिए राजवंशके किसी राजाको राजा बना दिया जाय। क्यास्या पगान आया। पगान नाममात्रके लिए प्रदेशीय राजधानी रह गया। इस समय तीन शान-सरदारोके हाथोमें राजका वास्तविक शासनसूत्र था। उन्होने सन् १२९९ मे पगानके राजाकी हत्या कर नगरमे आग लगा दी। पगान जल गया।

पगान अर्थात् अरिमर्दनपुरके साथ भारतीय सस्कृति, सभ्यता एव

धर्मका नाम सम्बन्धित है। वर्मामें भगवान बुद्धके चरणारविन्दका जैसे अनुकरण करके नवीन भारत बनानेकी कल्पना की गयी थी। भगवान् बुद्धके जीवनसे सम्बन्धित नगरों तथा पुरियोंको वर्मामें बसाया गया था। अपरान्त, असिताजना, अवन्ती, वाराणसी, चम्पा नगरी, ध्यानावती, द्वारावती, गान्धार, कम्बोज, कैलाश, कुसुमपुर, मिथिला, पुष्कर, पुष्करावती, राजगृह, संकाश्य, उत्कल, वैशाली आदि नगर बसाये गये थे। जातक-कथाओंके आधारपर भी नगर तथा वर्मा गाथाओंकी कल्पना की गयी थी। पाली साहित्यका प्रचार हुआ था। आज भी वर्मामें पाली विश्वविद्यालय कायम किया गया है।

वर्मामें हिन्दू धर्मशास्त्र, मनु, नारद, याज्ञवल्क्य स्मृतियोंके आधारपर देशकालानुसार धर्मशास्त्र बनाये गये थे। दक्षिणी वर्माके राजा वगरूने धर्मशास्त्रका संग्रह किया था। पाली-पुस्तक 'मनुसार' मनुस्मृतिका सार है। भारतमें बनी मूर्तियाँ गंगामें स्नान करायी जाती थीं। तत्पश्चात् वे विक्रीके लिए वर्मा भेजी जाती थी। भारतमें बनी गुप्त-शैलीकी अगणित मूर्तियाँ वर्मामें मिलेगी। पगानके समीप ही केवल आठ सौ अथवा एक हजार मन्दिरोंके अवशेष मिलेंगे। इरावदीके तटपर आठ मीलतक मन्दिरोंकी यह शृङ्खला तटसे चार मील समानान्तर दौड़ती चलती है। इन सबकी रचना पगानके पतनके पूर्व हुई थी। इसलामके आक्रमणके कारण भारत त्रस्त हो गया था। वर्माके साथ उसका सम्बन्ध छिन्न हो गया।

मंगोल विजय

मंगोल विजयके पश्चात् शान जातिने वर्माके इतिहासमें महत्त्वपूर्ण अध्याय खोला है। मंगोलोंसे उनका सीधा संघर्ष आरम्भ हुआ। उत्तरी वर्मामें शान जातिका प्रवेश कब हुआ, कहना कठिन है। परन्तु शान उपनिवेश सन् १२६० में मैनसैंग जिला क्योकिस से पूर्व स्थापित हो चुका था। इस क्षेत्रमें वर्मा राजा सैनिक सेवाके पुरस्कारस्वरूप सैनिकोंको जागीर दिया करते थे। सन् १२६० में एक शान सामन्तने मैनसैंगमें

शरण ली। अपने दो पुत्रोंको नरपतिके दरबारमे शिक्षा निमित्त भेजा था। सन् १२८० के निकट सितियाग नदीके तटपर तौङूपर किलेबन्दी भी करने लगे। पगान पतनके पश्चात् बहुतसे लोग भागकर वहाँ आबाद हो गये थे।

सन् १३४७ मे तौङू राजा थिनकबू के नेतृत्वमें स्वतन्त्र राज्य (१३४७-५८) बन गया। उसके पुत्र प्याचीके समय (१३५८-७०) तक सेजियाङ तथा विजयपुर के राज्य समाप्त हो चुके थे। इस समय बहुतसे बर्मी तौगूमे आकर आबाद हो गये। राजाने पगानकी यात्रा की। उसके शिलालेखोसे स्पष्ट प्रतीत होता है कि उसने अत्याचारसे पीड़ित लोगोको शरण दी।

मंगोलोंने लूट-पाट कर बर्मा त्याग नहीं दिया। उन्होने उत्तरीय तथा मध्य बर्माको संघटित करना आरम्भ किया। सन् १२८७ मे तौङू लिया तो प्रदेशकी राजधानी चेग बनाया। इसी प्रकार १३८७ मे पगान-के पराभवके पश्चात् मध्य बर्माको मेनचेग प्रदेशके रूपमे संघटित किया। किन्तु तीन शान बन्धुओने केऔकस् क्षेत्रोंमे तीन राज्य स्थापित कर लिये। राजा एथिनकयाने मेनचेग राजा यगथिनक्या तथा कनिष्ठ राजा थिहाथूने पाइनलेका राज्य स्थापित किया। कयास्वाने मंगोल सम्राट्का प्रभुत्व स्वीकार कर लिया था। उन्होने अपने राजमे सन् १२८९ में एक पगोडा-का भी निर्माण कराया। शान लोगोंके हाथोमे सिचाईका नियन्त्रण था। पानीके कारण गौण रूपसे पगानपर उनका प्रभाव पड़ गया। पगानके अधीन राजाने विदेशी सहायता प्राप्त करनेका प्रयास किया किन्तु उलटे उसका ही पतन हो गया। सन् १२९९ मे शानोने उसे बन्दी कर लिया। पगान नगरमे आग लगा दी गयी। नगरमे उपस्थित चीनी मार डाले गये। गाथा है—पगानकी रानी स्वा तीनों पगान राजाके षड्यन्त्रोमे सम्मिलित थी। सत्य केवल गवेषणाका विषय है।

साहित राजा क्यास्वाका पुत्र था। उसने १२९९ से १३२५ई० तक शासन किया। सन् १३२५ से १३६९ तक व्यनने राज किया। पगान राजधानीके लिए अनुपयुक्त समझा जाने लगा। शान-राजाओके आधिपत्यमे

अत्यन्त उपजाऊ भूखण्ड आ गये थे।

शान-राजाओंको दण्ड देनेकी योजना मंगोल सम्राट्ने बनायी। सन् १३०० मे युन्नान प्रदेशसे बर्मापर आक्रमण किया गया। मंगोलोंको कठिन सामना करना पड़ा। शानोंने मंगोल सेनाको घेर लिया। मंगोल काफी धन देकर चीन लौट सके। सन् १३०३ में चेगमेन प्रदेश मंगोल किंवा चीनी सेनाओंने खाली कर दिया। शानोंकी शानदार विजय हुई। शानोंकी राजधानी मेनसैड इरावदीसे बहुत दूर थी। उत्तरी बर्माके लिए अनुपयुक्त राजधानी थी।

आवा (रतनपुर) को राजधानी बनानेकी योजना शानोंने की। ब्राह्मणोंने स्थान अशुभ घोषित किया। अन्तमे सन् १३१२ मे राजा थिहाथुरा (महासुर) ने पिन्या (विजयपुर) में राजधानी स्थापित की। उसके एक पुत्रने झगड़ कर एक दूसरी राजधानी सन् १३१५ मे सगियाङ् मे स्थापित की।

बर्मामे अराजकता थी। शानोंने समयका लाभ उठाकर चेलनमे राजधानी बनायी। (विजयपुर) पिन्या तथा सगियाङ्के राजा आपसमें झगडने लगे। पिन्याके राजा नरत्थूने सन् १३६४ मे मवूशानको सगियाङ्पर आक्रमण करनेके लिए आमन्त्रित किया। जनता जंगलोंमे भाग गयी। मवूशानने पिन्याके पश्चात् आतिथेय राजा सगियाङ्पर भी आक्रमण कर दिया।

राजा सगियाङ्के एक राजकुमार थदओमिनने आवामे एक नवीन राजधानी सन् १३६४-६५ मे स्थापित की। आवाको सन् १६३४ तक समस्त बर्माकी राजधानी बननेका सौभाग्य प्राप्त हो गया। आवा राज्यका सम्बोधन उत्तरी अर्थात् अपर बर्माके लिए होने लगा। माण्डले (अमरपुर) कालान्तरमे उत्तरी बर्माकी राजधानी हुई तो आवा राजवंशके नामसे ही माण्डले राजाकी ख्याति हुई।

आवाका राजप्रासाद पगान शैलीके स्थानपर बर्मी शैलीपर बनानेकी योजना बनायी गयी। राजाने अपनी वंश-परम्परा तगौङ्से सम्बन्धित

की। उसने पूर्णतया बर्मा होनेका दावा किया। यहाँके शिलालेख बर्मी भाषामें मिले हैं। राजाने दक्षिण बर्मामे भी अपने राज्य-विस्तारका प्रयास किया। उसे शान प्रदेशमें उलझकर शक्ति बर्बाद करना पसन्द न आया। सन् १३६८ में जब सागूपर आक्रमण कर रहा था तो उसे माता निकली। उसका देहान्त हो गया। उसका उत्तराधिकारी स्वास्वाकेने अपनी वंश-परम्परा पगान राजवंशसे सम्बन्धित करनेका प्रयास किया। मिनगेइने बर्माकी सनातन नीतिको जारी रखा। यह नीति दक्षिणी बर्मामे मोनराजो-पर आधिपत्य स्थापित करने की थी। प्याचितुंग मोन लोगोसे सहानुभूति रखता था। उसने सन् १३७१ मे पेगूके राजा विनय फूसे मन्त्रणा की। वर्मा तथा मोन राजका परिसीमन किया गया।

सन् १३७४ में उसने अपने एक चाचाको अराकानके राजसिहासन-पर बिठाया। सन् १३८१ मे चाचाकी मृत्यु हुई तो उसने अपने पुत्रको वहाँका राजा बननेके लिए भेजा, परन्तु लोगोने उसे राजा स्वीकार नहीं किया।

सन् १३८३ मे मिनगेइने दक्षिणी बर्माकी ओर आँख उठायी। इरावदी उपत्यका अपने राज्यमे मिलाना चाहता था। सन् १३७७ मे उसने मोन-समर्थक राजा फेन्चकी हत्या करवा दी। सन् १३८५ मे विनयमूके स्थानपर रजारित (राजेन्द्रादित्य १) पेगूका राजा हुआ। मिनगिनने मोन प्रभाव समाप्त करनेका बड़ा अच्छा मौका देखा। उसने प्रोम ले लिया। पेगू लेनेमे असमर्थ रहा। यह सघर्प बर्मा तथा मोन जातिके शक्ति-सन्तुलनका था।

चीनमे मंगोलोके स्थानपर मिग राजवंशकी स्थापना हो गयी थी। बर्मामे मगोलोंका निर्मूल पहले ही हो चुका था। आवाके राजाने सहायताके निमित्त चीन सम्राट्के पास दूत भेजा। चीनके सम्राट्ने राजाको राजपालकी उपाधि दी। सन् १३९३ मे शान जातिका इतना पराभव हुआ कि वे बहुत दिनोतक सर न उठा सके।

मिंगके उत्तराधिकारी मिन् कौन्ने सन् १४०१ से १४२२ तक शासन

किया। उसने संघर्षको यथाशक्ति सफल बनानेका प्रयत्न किया। पेगूका राजा राजादेयित चतुर व्यक्ति था। उसने शान तथा आवा राजमें मनमुटाव पैदा कर दिया। उसे अराकानसे सहायता मिल गयी। सन् १४०४ में अराकानी राजाने पकोक्कू जिलेपर आक्रमण करनेके लिए सेना भेजी। राजा वगाल तथा राजपुत्र मोन-देश भाग गया। मिनगिनने अपने दौहित्रको राजसिंहासनपर बिठाया। परन्तु आराकानी राजाने मोन सहायतासे पुनः राज प्राप्त कर लिया। वर्मा तथा मोन लोगोंका संघर्ष सन् १४३० तक जारी था। सन् १४३० में निर्वासित राजा नरमोवलाने बंगालकी सहायतासे अराकानका राज प्राप्त कर लिया। राज्य पेगू तथा मर्तवानके अतिरिक्त सब कुछ निकल गया। दो वर्षोंके मोन संघर्षकालमें ही राजाकी मृत्यु हो गयी।

ह् सिनव्युशिन थिनहाथू अपने पिताके स्थानपर आवाके राजसिंहासन-पर सन् १४२२ में बैठा। उसकी धर्मपत्नी मा शान राजकुमारी थी। उसने शानपर आक्रमण किया। उसकी स्त्री शान राजकुमारीने विश्वासघात किया। सावाके द्वारा सन् १४२६ में उसकी हत्या हो गयी। उसने अपने विश्वासपात्रको गद्दीपर बिठाया। वर्मी सरदार मोहन्यिन थादो स्वयं राज अपहरण कर राजा बन गया। उसने सन् १४२७ से १४४० तक राज किया। वह आन्तरिक मामलोंमें बुरी तरह फँस गया था। सन् १४३० में अराकानके राजा म्रोहाङ्ने नवीन राजधानी बनाना आरम्भ किया। उसमें हस्तक्षेप करनेतककी कल्पना न रह गयी थी।

उसकी मृत्युके पश्चात् उसके पुत्र मिह्‌चेंस्यवत्ताने सन् १४४० से १४४३ तक राज किया। नरपतिने सन् १४४३ से १४६९ तक राज किया। इसी समय चीनने आक्रमण किया। कारण बताया गया कि अत्यन्य प्राचीनकालसे उत्तरी मार्ग युन्नान-बलख पुनः जारी किया जाय। संघर्ष सन् १४३८ से १४६५ तक चलता रहा। सन् १४४१ में वाङ्‌चीने, जो चीनकी सेनाका प्रधान था, आक्रमण किया। शान लोगोंने सामना किया। लुनछुअनने चीनियोंको निकाल बाहर किया। इस सेना

स्वर्ण द्वीप—
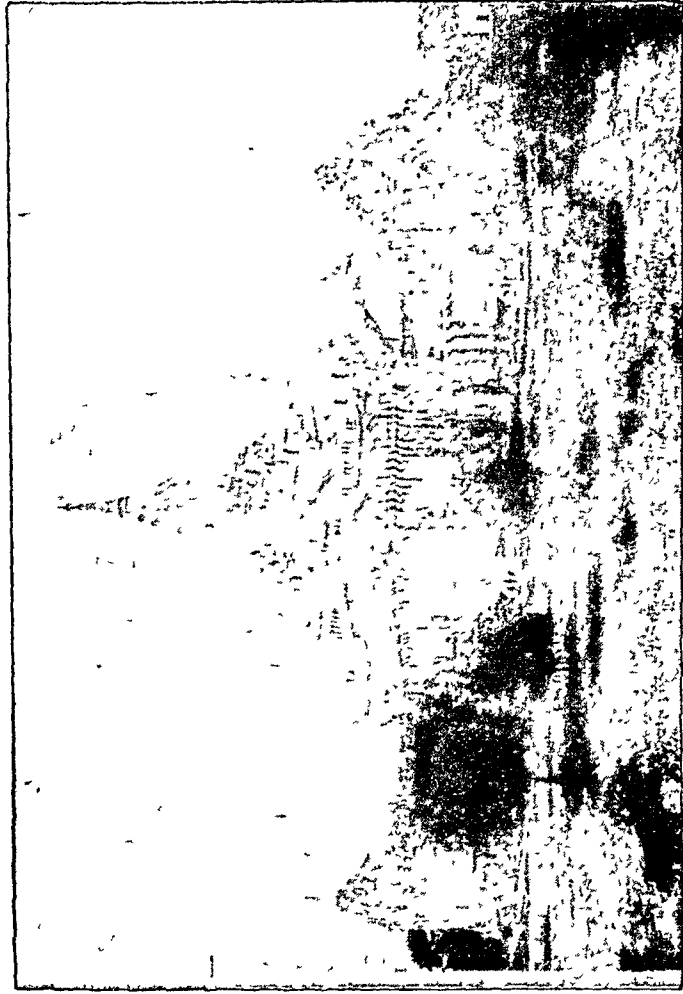
पगान आनन्द मन्दिर (१०८२–१०९० ई०), बर्मा

पगान मिगंलाजेदी पगोडा (१२७४ ई०), वर्मा

ने मोहन्यिन प्रदेशपर भी विजय की। बहुतसे लोग भागकर नरपति राजाकी सीमामे चले आये। नरपतिने शरणार्थियोंको लौटानेसे इनकार कर दिया। चीनने बर्मापर आक्रमण कर दिया। तगौङके समीप सन् १४४५ मे भयङ्कर युद्ध हुआ। चीनी सेनापति युद्धमे मारा गया। चीनी हार गये। दूसरे वर्ष चीनने बहुत बड़ी सेना एकत्र की। बर्मापर आक्रमण किया। आवा नगरके प्राचीरके पासतक पहुँच गये थे। नरपति-ने चीनकी माँग स्वीकार कर ली। थोंगनवाने आत्महत्या कर ली। उसका मृत शरीर चीनको दे दिया गया।

महासुर अर्थात् थिहाथुराने सन् १४६९–१४८१ तक राज किया। थेरवादी बुद्ध सम्प्रदाय श्रीलंकासे उसने सम्बन्ध स्थापित किया। सन् १५५६ मे श्रीलंकामे वर्मी भिक्षुओंके विहार निमित्त राजा नरपतिने कैण्डीमे भूमि खरीदी। सन् १४७४ में राजा तथा रानीने अपने सुन्दर केशोंका 'ब्राउन' बनाकर कैण्डी भेजा। राजा थिहाथुराकी मृत्यु सन् १४८१ में हो गयी। उसके पश्चात् मिनखौङ् सन् १४८१-१५०२ तथा शानक्याशिनने सन् १५०२-१५२७ तक राज किया। सन् १५२० मे चीनने पुनः शानवीन क्षेत्रमे अभियान किया। सन् १५२७ मे मोहेन सामन्त (सावा) ने आवापर आक्रमण किया। वर्माके बहुतसे सरदार तथा सामन्त उसकी सेनामें आ गये। वह बर्माका शक्तिशाली राजा हो गया।

सन् १४८६-१५३१ मे उसने दृढ़ संघटन किया। और मोन राज-धानी पेगूपर आक्रमण कर दिया। वह अपनी योजना पूर्ण करनेके प्रयासमे ही था कि सन् १५३१ मे उसकी मृत्यु हो गयी। उसका पुत्र तबिन-स्वेह् ति अपने पितासे अधिक बुद्धिमान् तथा दूरदर्शी था। सन् १५३५ मे उसने इरावदी डेल्टापर आधिपत्य स्थापित कर लिया। प्रसिद्ध नगर बसीन उसे मिल गया। पेगूकी सुरक्षाकी शक्तिशाली व्यवस्था थी। सन् १५३९ मे चार वर्षोंके संघर्षोंके पश्चात् चालाकीके कारण नगरका पतन हो गया। मोन राजा तक्युन्पी भागकर प्रोम चला गया। वहाँ उसका देहान्त हो गया। अनेक मोन सरदारोने नवीन शासनके प्रति राजभक्तिकी

शपथ ली। उसने भी मोन लोगोंके साथ वर्मावालों जैसा व्यवहार कर समवेदना उत्पन्न करा ली।

सन् १५४१ में उसने पुर्तगाली तथा मोन सैनिकोंकी सहायतासे मर्तबानपर आक्रमण किया। मौलवीनपर उसका झण्डा फहरा उठा। श्याम राजकी सीमा तवोयतक वर्मा राजकी सीमा पहुँच गयी। इस विजयके फलस्वरूप रंगूनके श्वेदगोन पगोडापर १८½ सेर सोना चढ़ाया। प्रोम भी उसके अधीन आ गया। इसी समय आवाके शान राजा तथा अन्य सरदारोंने उसके विरुद्ध विद्रोह किया। पुर्तगाली तोपचियोंके कारण उसने शान राजाओं तथा सरदारोंपर विजय प्राप्त की। उसने मिनबू मैनग्यनतक अपने राजमें मिला लिया।

पगानकी सनातन परम्पराके अनुसार उसका राज्याभिषेक किया गया। उसने सन् १५४६ मे पेगूमे पुनः वर्मा तथा मोन दोनों ही सरदारों द्वारा राज्याभिषेक कराया।

उसने एक विशाल राजप्रसाद निर्माण कराया। सन् १५५३ में एक सेनाको इरावदी नदीतक भेजा। सन् १५५४ में आवापर तुंगू तथा पगानकी ओरसे आक्रमण किया। मार्च सन् १५५५ में नगरका पतन हुआ। सन् १५५६ में शान ह्सिपा तथा मोन लोगोंको दबाया। वह बड़ा महत्त्वाकांक्षी था। चक्रवर्ती राजा बनना चाहता था। उसने मोन शैलीपर केश भी रख लिया। वह मोन लोगोंके साथ वही नीति वर्तना चाहता था जो अकबरने भारतवर्षमें वर्ती थी।

थाई-वर्मा-संघर्ष

तुंगू वंशीय राजा तनिनस्वेचीने सन् १५३१-१५५० तक वर्माके एकीकरणका प्रयास किया। सन् १५५६ में चिगमाईपर हमला किया। वहाँ एक शान राजा मेकुटी राज कर रहा था। वह स्यामके राजा सत्तरियत्के लवंग-प्रवंगका राज स्वीकार किया। चिगमाईके राजाने उनका प्रभुत्व स्वीकार कर लिया। सभी शान सरदारोंने धीरे-धीरे शान-

राजके इस पराभवके पश्चात् स्यामकी लवग-प्रवंगकी प्रभुसत्ता स्वीकार कर ली।

लवंग-प्रवंगकी सेना सन् १५५८ मे चिगमाईमें आयी। परन्तु वर्माका नेपोलियन बयिन्नोङ् अपनी सेनाके साथ आया। श्यामी सेनाको पीछे हटा दिया। उसने सत्तरियत्‌को राज-सिंहासनसे उतारनेकी घोषणा कर दी। शान राजा संघटित हुए। चिगमाईपर आक्रमण कर दिया। उसने शानोंपर १५५९ मे आक्रमण किया। उनका संघटन छिन्न-भिन्न हो गया।

उसने श्यामकी राजधानी अयुध्यामे विद्रोहका समाचार मिला। सन् १५५८में श्यामपर आक्रमण कर दिया। अयुध्याका पतन न हो सका। दुःखी होकर लौटा। श्यामी सेना उसका पीछा करती रही। मोन लोगोंने विद्रोह कर दिया।

सन् १५६० को वह पेगू लौट आया। अवसरका लाभ उठाकर सत्तरियत्‌ने सन् १५६३ में श्यामके राजा चक्रपतिके साथ सन्धि कर ली। उसने अपनी राजधानी लवंग-प्रवंगसे हटाकर वीनचंगमे स्थापित कर ली। वहाँ बुद्धका प्रसिद्ध तीर्थस्थान पीकियो निर्माण कराया। बुद्धकी प्रतिमा वह चिगमाईसे उठा ले गया था।

शान लोगोंने वर्मापर सन् १२८७ से ही सत्ता स्थापित करनेकी कल्पना की थी। परन्तु वे सफल नहीं हो पाये थे। राजा बनौङ्‌ने श्यामके राजा चक्रपतिसे ऐरावत अर्थात् श्वेत हाथी माँगा। राजाने अस्वीकार कर दिया। सन् १५६३ मे वर्माने श्यामपर आक्रमण कर दिया। वर्माकी सेना सिटियाग उपत्यका होती चिगमाई पहुँची। सुखोथाई (सुखोदया) होते अयुध्याकी ओर प्रयाण किया। सन् १५६४ फरवरीमे सुखोथाईने आत्म-समर्पण कर दिया। चक्रपतिके एक पुत्रको अपनी सत्ता स्वीकार कराकर राजा लौट आया। उसके लौटते ही चिगमाई स्वतन्त्र होनेकी कल्पना करने लगा। वह पुनः अपनी सेनाके साथ विद्रोह दबाने आया। इसी समय वर्मामें मोन विद्रोह आरम्भ हो गया। अपने पुत्रको सेनाका

भार देकर वर्मा लौट आया।

लौटकर उसने विचित्र अवस्था देखी। युद्धके श्यामी तथा शान बन्दी पेगूमें आबाद हो गये थे। उन्होंने पेगू तथा राजप्रासादतकमें आग लगाकर सब कुछ भस्म कर दिया था। विद्रोह दबाया। सहस्रों बन्दियोंको बाँसके पिंजड़ेमें बन्द कर जलानेकी योजना बनायायी। किन्तु बौद्ध भिक्षुओंकी प्रार्थनापर उन्हें दण्ड न दिया। उसने पुनः राजप्रासाद निर्माण कराया, उसकी छत सोनेकी थी।

बर्माके युवराजका विरोध चिगमाईमें होने लगा। वहाँका राजा मेकुटीने वीनचेंगमें शरण ली थी। बर्माने वीनचेंगपर आक्रमण किया। राजा भाग गया। नगरपर अधिकार हो गया। राजा मेकुटी, रानी तथा युवराज पकड़ लिये गये। अक्तूबर सन् १९६५ में वर्मी सेना वापस चली आयी।

राजा मेकुटी पेगूमें अच्छी तरह रखे गये। रानी महादेवी चिगमाईकी रीजेण्ट नियुक्त की गयी। एक वर्मी सेना भी वहाँ रख दी गयी। पिशुन लोकमें राजा महिनको बर्माने रीजेण्ट नियुक्त किया। श्यामके राजाने पिशुन लोकपर सन् १५६६ में आक्रमण कर दिया। समयपर वर्माकी सेनाने आक्रामकको पीछे हटाया। श्यामका राजा चक्रपति बर्मामे भिक्षु हो गया था। वह श्याम तीर्थयात्रा निमित्त आया। उसने चीवर उतार दिया। गृहस्थधर्ममें प्रवेश किया। पिशुन लोकपर आक्रमणकी तैयारी करने लगा।

सन् १५६८ में वर्माकी सेना मर्तबानसे लेकर पिशुन लोकतक आक्रमण करनेकी योजना बनायी। अयुध्यापर आक्रमण किया गया। नगरका पतन हो गया। राजा चक्रपतिकी नगरके घेरेके समय मृत्यु हो गयी। महिन बन्दी बनाया गया। पेगूके मार्गमें ही उसकी मृत्यु हो गयी। महातम्मराज वर्माका समर्थक था। राजा बनाया गया। वर्माकी सेना वीनचेंगपर आक्रमण करनेके लिए बढ़ी। सन् १५७० में मानसून आ जानेके कारण वर्मी सेना लौट आयी। श्यामने वर्मी संवत् अपना लिया। यह सन् ६३८ से आरम्भ होता है। यह चूला सकरत कहलाया।

पहले महासरकत श्याममें चलता था। सन् ७८ से आरम्भ होता था। बर्मी संवत् सन् १८८७ तक चलता रहा। चूल लंग कर्णने उसके स्थानपर ईसाई सन् चालू किया।

राजा बयिनौङ्का शासन अभियानों, संघर्षों तथा युद्धोका काल रहा है। उसके समयमें बर्माकी अभूतपूर्व उन्नति हुई। आदर्श बौद्ध राजा होना चाहता था। जहाँ गया वहाँ पगोडा तथा विहार बनाया। भिक्षुओंको दान दिया। त्रिपिटकोंका वितरण किया। उसने बकरीदपर होनेवाली हलालीके साथ ही साथ पर्वत योपापर महागिरके लिए होनेवाले श्वेत हाथीकी बलिको भी रोक दिया। शानोंकी उस प्रथाको भी रोक दिया जिसमे शान (सामन्त) सावाके शवके साथ दास, अश्व तथा हाथियोंकी बलि दी जाती थी। उसने बौद्धतीर्थोंमे दीपक जलानेके लिए सम्पत्ति तथा भू-दान किया। श्रीलंकाके राजवंशमें विवाह करनेकी इच्छा प्रकट की। राजाके कन्या नही थी। उसने एक सामन्तकी कन्याको विवाहके निमित्त भेज दिया।

सन् १५७१ मे वीनचेंगके सत्तरियत्की मृत्यु हो गयी। उसके स्थानपर राजाने अपने मित्र और दिवंगत राजाके भाई औपहतको राजा बनाना चाहा। लोगोंने उसे अस्वीकार कर दिया। उसने मोन सेनापति विनय-दलके साथ सेना रवाना की। सेनाका पराभव हुआ। वह सन् १५७४–१५७५ में सेना लेकर चला। सिंहासनपर औपहतको बिठाया। लौटते ही अराजकता फैलने लगी। सन् १५७९ मे उसने पुनः सेना भेजी। बर्मा-पक्षीयको सिंहासनपर बिठाया। सन् १५८१ में इस महान् राजाकी मृत्यु हो गयी।

उसके पश्चात् उसका पुत्र नन्द बैनने राज्यारोहण किया। प्रा नरेतके नेतृत्वमे श्याममें बर्माके प्रति विरोधभावना उग्र होने लगी। सन् १५९२ में राजा नोकियो कौमरेने लवंग-प्रवंगका राज्य हस्तगत किया। जनताने उसे अपना राजा स्वीकार किया। उसने अपने राज्यको प्रभुतासम्पन्न राज घोषित कर दिया।

श्यामका विजित भूभाग स्वतन्त्र हो गया होता, परन्तु कम्बुजने श्यामके लिए खतरा उत्पन्न कर दिया था। राजा नन्दको गृह-विद्रोहका सामना करना पड़ा। उसने षड्यन्त्रके अपराधमें कितने ही मन्त्री तथा उनके कुटुम्बियोंको जलवा दिया। सन् १५८४ में उसने अपने चाचाके विरुद्ध युद्ध किया। चाचा-भतीजेने एक-दूसरेके साथ हाथियोंपर चढ़कर गजयुद्ध किया।

सन् १५८४ में उसने श्यामपर आक्रमण किया। किन्तु प्रा नरेतने उसे पराजित किया। १५८६ में वर्माकी सेना पुनः अयुध्यापर आक्रमण करने चली। जून सन् १५८७ में वर्माकी सेनाने अयुध्याको घेर लिया। वर्मी सेनाको सफलता न मिली। इसी समय श्यामपर कम्बुजने आक्रमण कर दिया। प्रा नरेत कम्बुज सेनाका सामना करनेमें लिपट गया। सन् १५९० में तम्मराजकी मृत्यु हो गयी। प्रा नरेत राजा हुआ। उसे नरसेन अथवा नरसिंह भी कहते हैं। सन् १५९३ तक नन्दने तीन बार आक्रमण करनेका प्रयास किया। प्रयास असफल रहा। सन् १५९२ में वर्माका युवराज नोड्सराय अयुध्या पहुँचनेके पहले ही हार गया। उसने युद्धमें वीरगति प्राप्त की। गाथा है कि श्यामके नरसेनसे उसका एकाकी युद्ध हुआ था। जहाँ उसने वीरगति प्राप्त की थी वहीं एक पगोडा बना है। इसके पश्चात् वर्माने पुनः श्यामपर आक्रमण नहीं किया। वर्माने सन् १५९५ में चिगमाई खो दिया। श्यामकी सेना पेगूतक चली आयी। इसी समय उत्तरसे वर्मी सेना आ गयी। श्यामको पीछे हटना पड़ा। प्रोम, तुंगू तथा आवामें नन्दके भ्रातागण राज्यपाल थे।

तौंगूका राज्यपाल नरसेनके आक्रमणके समय पेगू सहायता निमित्त गया। उसका भाई प्यो मिनने (प्रोमके राज्यपाल) तौंगूपर आक्रमण किया। राजा स्थितिका सामना करनेमें असमर्थ था। अराकानियोंको पेगूपर आक्रमण करनेके लिए आमन्त्रित किया। सन् १५९९ में अराकानकी नवशक्तिने सीरीम बन्दरगाहपर अधिकार कर लिया। एक सेना तौंगूकी सहायता निमित्त पेगू रवाना की गयी।

नरसिह अथवा नरसेनने अवसरका लाभ उठाकर पेगूपर आक्रमण करनेकी योजना बनायी। उसे विलम्ब हुआ। बर्माका राजा नन्द तौंगूके मार्गमे ही बन्दी हो गया। पेगू फूंक दिया गया। तौगू सेनाने बुद्धका दान तथा बन्दी राजाको साथ लिया। अराकानियोने राजकुमारी तथा स्वेत हाथियोंको प्राप्त किया। अराकानियोंने लौटते समय पेगूको फूंक दिया। हजारों मोन कुटुम्ब निर्वासित कर दिये गये। सीरीम उनके हाथोंमे रहा।

नरसेन नन्दको प्राप्त करनेके लिए उत्तरकी ओर बढ़ा। तौगूपर आक्रमण करना चाहता था। पराजित हुआ। तौगू पहुँचनेपर नन्दकी हत्या कर दी गयी। पेगूके नाशके पश्चात् बर्माकी केन्द्रीय शक्ति क्षीण हो गयी। शक्तिका विघटन हो गया। स्यामने दक्षिणी बर्माके मर्तबान-तकका क्षेत्र अधीनस्थ कर लिया।

विदेशियोंका प्रवेश

बर्मामे पुर्तगालका प्रवेश हुआ। डी ब्रेतोने सीरीमपर अधिकार कर लिया। एक दुर्ग बनाया। अराकानके राज्यपालको निकाल बाहर किया। मोन सामन्त उसे अपना राजा स्वीकार करनेके लिए तैयार हो गये। अराकानने सन् १६०४ मे आक्रमण किया। असफल हुआ।

शक्तिशाली मोन सरदार विनयपटल स्यामकी ओरसे मर्तबानका राज्यपाल था। अपनी कन्याकी शादी ब्रेतोके पुत्रके साथ कर दी। ब्रेतोने बहुत समयतक मोनोके अधिक भूखण्डपर शासन किया। वसीन तथा पश्चिमी डेल्टाका भूभाग स्वतन्त्र रहा।

ब्रेतोने भयंकर गलती की। उसके सरपर ईसाईधर्म प्रचार करनेका भूत सवार हो गया। पगोडाओंको नष्ट करने लगा। सन् १६०८ मे महाधम्मराजने आवापर अधिकार कर लिया। सन् १६१० मे अपने चचेरे भाईको तुंगूके राजाको प्रभुसत्ता स्वीकार करनेके लिए बाध्य किया। मर्तबानके विनय दल तथा ब्रेतोने तौगूंपर आक्रमण किया। सन् १६१३ में महाधम्मराजने सीरीमपर घेरा डाल दिया। एक मास घेरा पड़ा रहा।

एक दिन एक मोन सरदारने द्वार खोल दिया। वर्मा सेनाने दुर्गमे प्रवेश किया। ब्रेतो दुर्गपर कैद कर दिया गया। अन्य लोग कत्ल कर दिये गये। पुर्तगाली उत्तरी वर्मामें चिण्डविन क्षेत्रमे भेज दिये गये। ग्रामोंमें आवाद हो गये। कैथोलिक गिरजे स्थापित किये। राजाकी सेनामें भर्ती हो गये। सन् १३१५ मे उसने चिगमाईपर आक्रमण किया। उसे वर्माका प्रदेश वना लिया। १६२८ मे आवा त्यागकर पेगूको राजधानी बना लिया।

अयुध्यापर आक्रमण करनेकी योजना वनायी। सन् १६२९ मे उसकी हत्या हो गयी। सन् १६३५ मे पेगूसे राजधानी बदलकर पुनः आवामें लायी गयी। मोन शरणार्थी बहुत वड़ी संख्यामें श्याम भाग गये। उसके मन्त्री कैङ्साने 'मनुसार श्वेदिन' नियम-पुस्तककी रचना की। सन् १६३८ में माल विभागका संघटन तथा राज्यका सर्वेक्षण किया गया।

सन् १६३५ में पहली डच फैक्टरी सीरीममे बनायी गयी। अंग्रेजोंकी पहली फैक्टरी सन् १६४७ में सीरीममे खड़ी हुई। राजा थालुमकी मृत्यु सन् १६४८ में हो गयी। उसके पुत्र पिण्डलेने १६४८-१६६१ तक राज्य किया।

चीनमे मिंग वशका अन्त हो गया। मंचू वशने स्थान लिया। अन्तिम मिंगराज युंगली भागकर सन् १६४४ मे युन्नान आया। सन् १५५८ मे युंगली युन्नानसे निकाला गया। वह ७०० साथियोके साथ बर्माके भामो नगरमें आया। उसे निरस्त्र कर सेगैङ्में आवाद होने दिया गया। मिंग-समर्थकोंने अपने नेताको भामोंसे निकालना चाहा। वर्माकी सेना वेतवनि-योनके समीप परास्त हुई। लगभग तीन वर्षोंतक उत्तरी बर्माके आवा, पगान आदि नगरोंतक हमले होते रहे। मर्तबानमे इसी समय विद्रोह हुआ। भयभीत होकर बर्मासे सहस्रों मोन श्याम चले गये। वर्माकी सेना पीछा करती श्याममें कानवरीके समीपतक पहुँच गयी। श्यामकी सेनासे परास्त हुई। श्यामी सेनाने दक्षिणी वर्मामे प्रवेश किया। सन् १६६१ मे

पिण्डलेने सिंहासन त्याग दिया। उसका भाई पाई राजा बना। श्यामने चिगमाई पुनः ले लिया। वर्मा कुछ बिगाड़ न सका। सन् १६६२ मे युन्नानके मंचू राज्यपालने युंगलीकी प्राप्ति निमित्त वर्मापर आक्रमण किया। राजा पाईने उसे चीनी राज्यपालको दे दिया। चीनियोंने युंगलीका सार्वजनिक स्थानमे गला घोंटकर वध कर दिया। राजा पाईकी भी सन् १६७२ मे मृत्यु हो गयी। उसका पुत्र नरवर राजा हुआ। एक वर्षके अन्दर ही मर गया। सामन्तोने प्रोमके एक राजकुमारको राजा बनाया। राजप्रासादके अनेक षड्यन्त्रोंको क्रूरतापूर्वक दबा दिया गया। श्री यवरा महाधम्मराजने सन् १६७३-१६९८ तक राज किया। सन् १६७९ मे डचोंने अपने कारखाने बन्द कर दिये। भामोमे व्यापार-केन्द्र स्थापित करना चाहा। उनका विचार चीनसे व्यापार करनेका था। वर्माने यह योजना स्वीकार न की। डचोंने कारबार पूर्णतया बन्द कर दिया। डचोंके हटनेसे अंग्रेजोको कुछ उत्साह उत्पन्न हुआ। अंग्रेजोंने मद्रासखे सन् १६८० मे आवा-दरबारमे शिष्टमण्डल भेजा।

सन् १६८० मे फ्रासने श्यामके अयुध्यामे एक कारखाना खोला था। अंग्रेजोने सीरीमसे टीनका व्यापार आरम्भ किया। सन् १७२० मे सीरीममें फ्रासने डाकयार्ड खोला। साने १६९८-१७१४ तनिंगान्वेने सन् १७१४-१७३३ और महाधम्माजाधिपतिने सन् १७३३-१७५२ तक राज्य किया।

मणिपुरके गरीबनवाजने सन् १७१४-१७५४ तक उत्तरी वर्मामे आतंक पैदा कर दिया था। उसने पगोडा, गॉवो आदिका नाश किया। सम्पत्ति लूटकर भाग जाता था। वर्मापर मणिपुरकी ओरसे आक्रमण होने लगे। आवा-शासक आक्रमण रोकनेमे असमर्थ थे। वर्मा सेनाको हार खानी पड़ी। मणिपुरके लोग बौद्धधर्म त्याग कर हिन्दू हुए थे। ब्राह्मणोंने कहा कि अचिरवती अर्थात् इरावदीके सेगियाङ्पर स्नान करनेसे अक्षय पुण्य प्राप्ति होगी। सन् १७३६ के लगभग मणिपुरकी सेनाने सेगियाङ्के समीप छावनी डाली। आवा नगरतक आक्रमण करने लगी। उस

समग्र वर्मामें कोई ऐसी शक्ति नहीं रह गयी थी जो उन्हें रोकती। मणिपुरका आक्रमण सन् १७४९ तक होता रहा।

सन् १७४० में ग्वेसांके उपनिवेश ओकपेपर मध्य वर्मामें विद्रोह हुआ। उनका नेता गोन्नाएन था। उन्होंने मोन-निर्वासितोंकी सहायतासे वर्मियोंको जिलेसे निकाल बाहर किया। उसी समय दक्षिणी वर्मामें विद्रोह उठ खड़ा हुआ। पेगूके वर्मा राज्यपालने सेना लेकर सीरीमपर आक्रमण किया। सेनामें विद्रोह व्याप्त हो गया। मार डाला गया। राजाने शान्ति स्थापनार्थ सेना भेजी। मोन विरुद्ध उठ खड़े हुए सीरीम तथा मर्तवानके वर्मा मार डाले गये। उन्होंने अपना राजा सिमहा वुद्धकेतीको पेगूमें बनाया। वह पगानके राजपालका पुत्र था। सन् १७१४ में आवा लेना चाहता था। असफल रहा। भागकर पेगूके दक्षिण पर्वतोंपर चला गया। भिक्षु हो गया। शक्तिशाली नहीं था। परन्तु आवा राज स्वतः इतना शक्तिहीन हो गया था कि उसमें प्रतिरोधकी शक्ति न थी। उसने दक्षिणी वर्मा, प्रोम तथा तौंगूतक अपने राजमें मिला लिया। इरावदीतक पहुँचकर आवा नगरके लिए भय उत्पन्न कर दिया।

वुद्धकेती सर्वप्रिय था। सन् १७४७ में मोनने आवापर आक्रमण किया। आक्रमण सफल न हुआ। राजाने पेगू त्याग दिया। सित्तियांगमें रहने लगा। उसने राज करनेसे अनिच्छा प्रकट की। कुछ संरक्षकोंके साथ चिगमाई चला गया। उसके स्थानपर विनयदल सेनापति राजा चुना गया। उसने वर्मा राजको पुनः वर्मामें स्थापित करना चाहा। तलवानको सेनापति नियुक्त किया। सन् १७५१ में तलवानने विदेशी सहायतासे विशाल सेना एकत्र की। आवापर आक्रमण हुआ। अप्रैल सन् १७५२ में आवाके तौंङ राजवंशका लोप हो गया।

कोन बाङ् वंश १७५६--१७८२

तलवनको आवा छोड़कर राजकुमार पेगूकी ओर लौटा। तलवनके पास बहुत कम सेना रह गयी थी। उसकी इतनी शक्ति नहीं थी कि

बड़े विद्रोहका सामना कर सकता। मोक्षो वोम्यो विद्रोहियोंका नेता बन गया। थोड़े ही समयमें काफी शक्ति एकत्रित कर ली। उसे औङ्ज़ेय अर्थात् अजेय कहते थे। सन् १७५२ मे तलवनने उसके सुदृढ़ स्थानपर आक्रमण किया। हार गया।

राजा अपनेको अलौङ-पया अर्थात् वुद्ध कहने लगा। उसने अपनी वंशावली मोहिन्येन्थडोसे, जिसने आवामे १४२७–१४४० तक राज किया था, जोड़ा। जहाँ वह जाता, लोगोंसे राजभक्तिकी शपथ लेता था। उसने मोक्षो वोम्यो शिकारी सरदारके नगर-स्थानपर श्विवो अर्थात् सोनेके नेताका नगर बनाया। राजप्रासाद बनाना आरम्भ किया। दिसम्बर सन् १७५३ मे उसने आवाको घेर लिया। मोन पेगूसे सहायता मिलती न देखकर हतोत्साह हो गये। रातों-रात नगर त्यागकर चले गये।

पेगूके राजा विनयदलने आवापर आक्रमण किया। सेनाका संचालन युवराजके हाथोंमे था। वह सफल नेता नहीं था। उसने वर्मा फौजको तलोकम्यो (त्रैलोक्य ?) नगरके समीप परास्त किया। श्वेवो नगर तक पहुँचा गया। किन्तु सन् १७५४ मे अलोङ-पयाने इतना भीषण आक्रमण किया कि मोन सेना पीछे हटती, प्रोमतक चली गयी थी। उसने उत्तरी तथा मध्य वर्मातक राजविस्तार कर लिया। पेगू स्वाधीन न रहा। परन्तु शेष वर्मासे मोन सत्ताका लोप हो गया। मोनके पास रंगून था। मोन सैन्य संचालन फ्रासीसी शैलीपर हो रहा था।

अलोङ-पयाके उद्भवके कारण मोन तथा फ्रासीसी दोनों ही राजनीतियोंने पलटा खाया। फ्रासीसियोंने अलोङ-पयाको शस्त्रास्त्र भेट किया। मोन निराश होकर ईस्ट इण्डिया कम्पनीसे वात करने लगे। सन् १७५५ मे अलोडपया रंगूनतक पहुँच गया। इसी समय उत्तरमे मणिपुर तथा शानमे संघर्षके वादल उठने लगे। वह उत्तरकी ओर लौटा।

उसने मणिपुरपर आक्रमण किया। सहस्रो व्यक्ति निर्वासित किये गये। अमरपुर अर्थात् माण्डले और सेजियाङ्मे बसाये गये। मणिपुरके ज्योतिषी आवा राजके ज्योतिषी हो गये। मणिपुरकी अश्वारोही सेना

बर्मा सेनाकी जय हो गयी।

चीनके सम्राट्ने उसकी सत्ता स्वीकार की। वह पुनः सेनाके साथ दक्षिणी बर्मामे आया। रंगूनमे अंग्रेजोंकी ओरसे इनसाइन जान डायर तथा डा० विलियम एण्डरसन उससे मिले। दोनोंके मध्य सन्धि हुई। सन्धिपत्र स्वर्णपत्रपर लिखा गया। बसीनमें कारखाना बनानेकी इजाजत दे दी गयी। इंग्लैण्डके राजाके नामपर सन्धि हुई। राज्यने अंग्रेज गवर्नरोंसे सन्धि करना अपनी प्रतिष्ठा समझा।

सन् १७५६ मे अलौडपयाने सीरीमपर अचानक आक्रमण कर विजय प्राप्त कर लिया। सन् १७५७ मे पेगूपर आक्रमणकी तैयारी की। पेगू ले लिया।

अप्रेम सन् १७६० मे उसने श्यामपर आक्रमण किया। अयुध्या घेर लिया। किन्तु घेरा शीघ्र ही उठा लिया गया। बर्मी सेना घरकी ओर लौटी। सालवीन पहुँचनेके पूर्व ही तेक्कलामे उसकी मृत्यु हो गयी। उसका शव श्वेबो लाया गया। बर्मा जातिका महान् नेता था। मणिपुर, शान तथा मोनोसे बर्माकी रक्षा कर देशको बहुत ऊपर उठाया।

उसका पुत्र नवडडगई स्वल्प समयतक ही शासन किया। उसके पश्चात् उसका भाई हसिन ब्युशिनने सन् १७६३ से १७७६ तक शासन किया। श्वेबोसे राजधानी हटाकर पुनः आवा (रतनपुर)में स्थापित किया। सन् १७६४ में श्यामके चिगमाईपर आक्रमण किया। सन् १७६६ मे अयुध्या घेर लिया। मार्च सन् १७६७ में अयुध्याका पतन हुआ। किन्तु बर्मी श्याममें ठहर न सके। सन् १७६६–१७६९ के मध्य बर्मापर चीनी आक्रमण होने लगे। सन् १६६७ में बर्मा सेनाने चीनमें प्रवेश किया। चीनने पूरी शक्ति एकत्र कर आक्रमण किया। फरवरी सन् १७६८ तक चीनी सेना आवासे केवल ४० मील दूर रह गयी थी। चीनी सेनापति मिङ्गुइका पराभव हुआ। चीन सम्राट्के पास लौटनेकी अपेक्षा सेनापतिने आत्महत्या कर लेना अच्छा समझा। अपना 'पिगटेल' (चोटी) सम्राट्के पास भेज दिया।

सन् १७६९ मे बर्माने भामोके मार्ग द्वारा चीनपर आक्रमण किया। सफलता न मिली। सन् १७७० में दोनों देशोंमें सन्धि हो गयी। लौटते समय बर्मी सेनाने मणिपुरपर आक्रमण किया। मणिपुरका राजा आसाम भाग गया। मणिपुरके सिंहासनपर बर्मी-समर्थक राजा बिठाया गया। हजारों बन्दियोंको बर्मा निर्वासित कर दिया गया।

सन् १७७३ मे मोनने पुनः विद्रोह किया। रगून जला दिया गया। फ्रांसीसियोके बनते हुए जहाज भी जला दिये गये। बर्मियोने विद्रोह दबाया। सहस्रो मोन श्याम चले गये। सन् १७७४ मे मोन राजा बिनयदल, जो १७५७ में पेगू पतनके पश्चात् बन्दी बना लिया गया था, मार डाला गया।

श्याम-बर्मा-संघर्ष सन् १७७६ मे एक अध्याय बन्द करता है। पयाटकने श्यामसे बर्माको निकालकर श्यामी संघटन किया। सन् १७७६ मे राजा हसिन ब्युशिनके दिवंगत होते ही महाथिहाथुरा श्यामसे पराजित हुआ। उसने राजा होते ही श्यामकी बर्मी सेनाको वापस बुला लिया। धार्मिक प्रवृत्तिका व्यक्ति था। पगोडाओंकी तीर्थयात्रा किया करता था। सन् १७८२ मे जब वह तीर्थयात्रा कर रहा था, राजप्रासादमे विद्रोह हुआ। उसका छोटा भाई बोदाबूपया राजा बना।

बोद्वपया या बोदाबूपया अपने पिता अलौङप्याका त्रितीय पुत्र था। सिंहासनपर बैठते ही राजके सम्मानित उत्तराधिकारियोंको मारकर साफ कर दिया। एक भाई बचकर भाग गया। लाभ उठाकर शेष सम्बन्धित जन भी तलवारके घाट उतार दिये गये। सन् १७८२ मे तौङ्वङ्गके कथित उत्तराधिकारी नगम्यतपोनने २०० साथियोंके साथ राजप्रासाद घेर लिया। प्रासाद संरक्षकोंके द्वारा साथियों सहित मारा गया। पाङ्गया स्थान जहॉ षड्यन्त्र किया गया था, वहॉके सभी प्राणी पशु-पक्षी-पादपतक नष्ट कर दिये गये।

में नवीन राजप्रासाद तथा दरबार सन् १७८३ में बनाया गया। बसीनपर नवम्बर मासमें मोन आक्रमण रंगूनपर हो गया। मोनोंने संकल्प किया था कि प्राचीन मोन-गौरव पुनः स्थापित किया जाय। शीघ्र ही योजना विफल हो गयी। रंगूनपर पुनः सत्ता स्थापित हो गयी।

उसने देशके माल विभाग तथा खेतोंका सर्वेक्षण १७८४ तथा १८०३ में कराया। उन्हें ताड़पत्रपर लिखा गया। वे आज भी देशके तत्कालीन सामाजिक एवं आर्थिक जीवनके जीवित एवं सर्वश्रेष्ठ प्रमाण हैं। सन् १७८४ अक्टूबर मासमें अराकानपर आक्रमण किया। दिसम्बरतक आक्रमण पूर्ण सफल हो गया। राजा थमदा जंगलमे भाग गया। फरवरी सन् १७८५ में पकड़ा गया। अपने कुटुम्ब तथा २० सहस्र व्यक्तियोंके साथ निर्वासित कर दिया गया।

महामुनिकी प्रसिद्ध मूर्ति भी प्राप्त की। मूर्ति माण्डले पगोडामें स्थापित की गयी। अराकान वर्मा देशका प्रदेश हो गया। वर्माकी सीमा ब्रिटिश भारतकी सीमातक आ गयी। अंग्रेजों तथा वर्माका दैनिक सम्पर्क बढ़ने लगा। सन् १७८६ में श्यामपर आक्रमण किया। पराजित हुआ। श्यामने वर्माके केदाह केलन्तन तथा तौङ्गा ले लिया।

केदाहके सुल्तानने डरकर अंग्रेजोंसे सहायता माँगी। पेनांगका द्वीप अंग्रेजोको दे दिया। चिंगमाईपर वर्मी सेनाने १७८५ तथा १७९७ में आक्रमण किया। आक्रमण असफल रहा। सन् १८०२ मे श्यामने चिंग-माईको वर्मी-विहीन कर दिया। श्यामने वर्माके अन्य भूखण्डोंपर कब्जा करनेका प्रयास किया। परन्तु असफल रहा। उनका सामरिक अभियान सन् १८२४ मे समाप्त होता है। तेनासरीम अंग्रेजोंके हाथोंमे चला गया।

उसने मिङ्गुनमें दर्जनों पगोडा बनवाये। इरावदीके पश्चिमी तटपर माण्डलेसे कुछ मील दूर ५०० फुट ऊँचा पगोडा बनवानेमे हाथ लगाया। सात वर्षोंतक हजारो व्यक्ति इसमें काम करते रहे।

अराकान प्रदेशमे सन् १७९४ मे विद्रोहकी अग्नि पुनः सुलग उठी। चटगाँवसे विद्रोहियोंको सहायता मिल रही थी। विद्रोह दबा दिया गया।

विद्रोहियोंका पीछा भारतभूमितक किया गया। नाक नाफा नदी पारकर भारतीय सीमामें सैनिक चौकी बैठा दी गयी। अंग्रेजी सेना आयी। उसकी शक्ति कम थी। तीन भगोड़ोंको वापस लेनेके बाद बर्मी सेना बर्मा सीमामें लौट आयी। सन् १७९५ मे आवा-दरबारमें माइकेल साइम्स अराकान सीमाके सम्बन्धमें समझौता करने अंग्रेजोंकी तरफसे आया। सन् १७९६ में पगानमें हेरियम कोक्स रंगूनमें अंग्रेजी दूत बनकर आये। सन् १७९८ में कोक्स कलकत्ता लौट गये। सन् १७९९ मे लार्ड वेलेसलीने बर्मा-अराकान समस्या हल करनेके लिए कैप्टन टामस हिलको भेजा। बर्मासे भागे शरणार्थी जिस स्थानपर आबाद हुए उसका नाम कोक्स बाजार पड़ा। भारतीय गवर्नर जनरलने मेजर विलियम फ्रैंकलिनको बर्मा समस्या-पर अध्ययन करनेके लिए भेजा। सन् १८०१ जुलाईमे फ्रैंकलिनने प्रति-वेदन दिया। सन् १८०२ में वेलेसली कानपुर जा रहे थे। उन्हे एक पत्र मिला। बर्मा सरकार जोर दे रही थी। चटगॉवसे अराकानी भगोड़े निकाल दिये जायॅ। वेलेसलीने सीमान्त सेनाकी सख्या बढाकर मोर्चेबन्दी सुदृढ़ कर ली।

मई सन् १८०२ मे साइमूस शक्तिशाली सुरक्षक दलके साथ बर्मा आया। उसके पास भारतमें लागूकी जानेवाली सहायक सन्धि प्रथाका मसौदा भी था। सन् १८०३ में रंगूनमें रेजीडेन्सी स्थापित करनेकी बात निश्चित हुई। लेफ्टिनेण्ट कैनिग दूत नियुक्त हुए। मईके अन्ततक रगून आ गये।

चिन ब्यानने भारतभूमिपर विद्रोही सेना संघटित कर ली। उसने म्रोहाङ्पर आकस्मिक आक्रमण कर अधिकार कर लिया। कलकत्ता पत्र लिखकर भेज दिया कि वह अंग्रेजोंकी ओरसे म्रोहाङ्पर अधिकार स्थापित किये हुए है।

लेफ्टिनेण्टि कैनिग सतम्बर १८११ मे पुनः बर्मा भेजा गया। आवा-दरबारको उसने विश्वास दिलाना चाहा। विद्रोहमें अंग्रेजोंका कोई हाथ नहीं था। बर्मी सेनाने विद्रोहियोंपर आक्रमण किया। विद्रोहियोंका पीछा

करते-करते भारतीय सीमामें आयी। बीस हजार सैनिकोंके साथ बर्माने चटगॉवपर आक्रमण करनेकी धमकी दी। विद्रोही नेता जंगलोंमें भाग गया। मानसून आरम्भ होनेके कारण वर्मी सेना १८१२ में लौट आयी।

वर्मी सेनाके लौटते ही चिन ब्यानने पुनः वर्माके माड्दापर आक्रमण किया। वर्माने उत्तर दिया। विद्रोह समाप्त हो गया। चिनब्यान पुनः साथियों सहित भारतीय सीमामें भाग गया। विद्रोही अभियान भारतीय सीमासे वर्मापर १८१३–१८१४ में होते रहे। सन् १८१५ में चिन ब्यानकी मृत्यु हो गयी। विद्रोह समाप्त हो गया।

चिन ब्यानसे खाली होनेपर वर्माका ध्यान आसामकी ओर गया। आसाममें विचित्र स्थिति उत्पन्न हो गयी थी। आसामके अहोमवंशीय राजा पतनोन्मुख थे। वरफूकन कलकत्तामें अंग्रेजी सहायता निमित्त आया। वह वरहा गोहेनके विरुद्ध था। सन् १८१७ में वर्माकी सेनाने आसाममे प्रवेश किया। जोरहाटतक सेना पहुँच गयी। वर्माने अपने समर्थकको सिंहासनपर वैठाया। वर्मी सेनाके वापस लौटते ही राजा गद्दीसे उतार दिया गया। सन् १८१९ मे वर्मी सेनाने पुनः भारतमें प्रवेश किया। मणिपुर जीता। राजा चन्द्रकान्तको गद्दीपर विठाया। सेना वापस लौटते ही व्यवस्था बिगड़ गयी। चन्द्रकान्तसिंह ब्रिटिश क्षेत्रमे भाग गया। बोदावूपयाकी मृत्युके पश्चात् उसका पौत्र बोगिपदा (श्रीत्रिभुनादित्य प्रवर मण्डित) सन् १७१९ में गद्दीपर बैठा। महाबुन्देला उसका सेनापति था। आसामके अग्रगामी नीतिका समर्थक था। आसासमे वर्मी सेना आकर बन्दूलामें रुक गयी। चन्द्रकान्तसिंह तथा पुरन्दर दोनों ही आसामका राज्य चाहते थे। दोनों ब्रिटिश सीमामें थे। दोनों ही अंग्रेजोंकी मदद चाहते थे। रंगपुरके ब्रिटिश मजिस्ट्रेटने भारत सरकारसे किसी एककी मदद देनेके लिए जोर दिया था। भारतमें दोनों ही वर्मासे लड़नेके लिए सेना एकत्र करने लगे। दोनोंका प्रयास विफल हुआ। वर्माकी सेनाने दोनोंको परास्त किया। वे भागकर ब्रिटिश भारतमे चले गये।

जुलाई सन् १८२२ मे महाबुन्देलाने कलकत्तेमे दूत भेजा। विद्रोही बर्माके हवाले किये जायँ। ब्रिटिश भारतमे स्थान न दिया जाय। मणिपुरका राजा बर्मा राजाके राज्याभिषेकमे सम्मिलित नही हो सका। बर्मा नाराज हुआ। मणिपुरपर आक्रमण हुआ। राजाने भागकर कछारके राजाके यहाँ शरण ली। कछारका राजा भी बर्माके भयसे राज छोड़कर भाग गया। अग्रेजोसे सहायता माँगी। अग्रेजोने कछार तथा जयन्तीको सुरक्षित रियासत घोषित कर दिया। सन् १८२३ मे बर्माने शाहपुरी द्वीप ले लिया। अग्रेजोने पुनः उसे वापस ले लिया।

कछारमे युद्ध सन् १८२४ फरवरीमे आरम्भ हो गया। महाबुन्देलाने राजसेनाकी कमान सम्हाली। चटगाँवपर आक्रमण करनेकी योजना बनाने लगा। पाँचवीं मार्च सन् १८२४ को प्रथम बर्मा युद्धकी घोषणा अंग्रेजोने की। बर्माने भारतीय भूभागपर आक्रमण किया। लार्ड एमहर्स्ट गवर्नर जनरल थे। अग्रेजोने आसाममे रोकथामके लिए कुछ सेनाएँ भेज दीं।

बर्माके पास जल-शक्ति न थी। बर्माका समुद्री तट अरक्षित था। अंग्रेजोने स्थल-आक्रमणका विचार त्याग दिया। बर्मा उसके लिए तैयार था। जलयुद्ध अथवा समुद्रसे बर्माके भूभागपर सेना उतरकर आक्रमण कर सकती थी इसकी कल्पना बर्माने नही की थी। बर्मा विदेशोमे जाते नही थे। उन्हे आधुनिकतम युद्ध-प्रणालीका ज्ञान नहीं था। फ्रासीसी तथा पुर्तगालवालोसे केवल स्थल-युद्धकी कुछ शिक्षा पा सके थे। बर्माकी बढ़ती शक्ति तथा आसामतक पहुँचना अग्रेजोको खलता था। भारतीय साम्राज्यकी सुरक्षाके लिए आवश्यक था कि बर्माकी शक्ति कम की जाय।

महाबुन्देलाने जिस समय पूर्वी बगालमे प्रवेश कर कुछ स्थान प्राप्त कर लिया उसी समय अग्रेजोने रगूनपर आक्रमण किया। सेना अण्डमान द्वीपसे चली थी। मई १० को रगूनमे सेनाने प्रवेश किया। अंग्रेजोने सोचा था, बर्माके परम्परागत शत्रु मोन उनकी सहायता करेगे। परन्तु मोन जातिने देशके साथ गद्दारी नही की। अग्रेजी सेना ६ मासतक

रंगूनमें रही। बरसात आ गयी। कुल ११ हजार सेना उनके साथ थी। उनमें कुछ ही ऐसे रह गये थे जो युद्ध योग्य थे। बर्मी सेना ६० हजार थी। कहा जाता है कि अंग्रेजोंके पास ४ हजार ही सैनिक थे।

पहली दिसम्बर सन् १८२४ को अराकान सीमासे आकर महाबुन्देलाने अंग्रेजोंपर आक्रमण किया। उसे पीछे हटना पड़ा। सात हजार चुने सैनिकोंके साथ रंगूनसे हट आया। ब्रिटिश जनरल सर आर्चिबाल्ड कैम्पबेलके पास मद्रास तथा कलकत्तासे सहायता आ रही थी। पहली अप्रैल सन् १८२५ को महाबुन्देलाने वीरगति प्राप्त की। बर्मी पीछे हट गये। अंग्रेजोंने प्रोमपर अधिकार कर लिया। अंग्रेजी सेना मर्तबान, ये. (५-६) तवोय तथा मरगुइ ले लिया। सन् १८२५ में ही अराकानकी राजधानी म्रोहोंगपर भी अधिकार हो गया। आसाम बर्मी सैनिकोंसे खाली हो गया। बर्माने प्रोमपर आकस्मिक आक्रमण करना चाहा। असफल रहा। अन्तमें याण्डबोमें सन्धिका विचार होने लगा। सन्धिके अनुसार अराकान, तनासरीम, आसाम तथा मणिपुर अंग्रेजोंको मिले। फरवरी २४ सन् १८२६ को यान्डाबोकी सन्धि स्वीकार की गयी। यह भी निश्चय हुआ कि बर्माका राजदूत कलकत्ता तथा अंग्रेजोंका राजदूत आवामें रहेगा। कभी पराधीन न हुए बर्माने पराधीनता किंवा दासताका मनहूस रूप देखा। बर्माको धक्का लगा। बर्माके युद्धमें ४० हजार सैनिक अंग्रेजोंने उतारे थे। उनमें १५ हजार युद्धमें काम आये। बर्मा युद्धमें अंग्रेजोंका ५०,००,००० पौंड उन दिनों व्यय हुआ था। कुल सन्धिपत्रमें ११ धाराएँ थीं। किन्तु २४ नवम्बर सन् १८२६ को जो सन्धि हुई उसमें केवल ४ धाराएँ रखी गयीं।

सीमान्त झगड़ा चलता रहा। बर्मी चिण्डविन तथा मणिपुरके बीच कबा घाटीको अपना मानते थे। एंग्लो-बर्मा सीमान्त कमीशन नियुक्त किया गया। समस्याका हल न हो सका। सन् १८२९ में भारत सरकारने मेजर बर्नीको आवामें रेजीडेन्ट नियुक्त किया। बर्नीके कारण बर्मा तथा अंग्रेज सरकारका सम्बन्ध सुधर गया। सन् १८३१ में बर्नीको बर्माके

राजाने उनङुककी उपाधिसे विभूषित किया। सन् १८३२ मे बर्माका मिशन कलकत्ता आया। सन् १८३३ मे कब्वा घाटी वर्माको लौटा दी गयी। इस घाटीपर मणिपुरने अधिकार स्थापित कर लिया था। सन् १८३८ तथा १८४० मे दक्षिणी बर्मा तथा शान प्रदेशमे विद्रोह हुआ। राजाको अवसर मिला। अंग्रेजोंके हिमायतियोकी हत्या इसी बहाने की गयी। पूर्व राजमाताको हाथीके पैरो-तले कुचलवा दिया गया। उसके भाई मिनथाग्यीकी हत्या कर दी गयी। जनरव उठा। बर्मा भारतपर आक्रमण करना चाहता है। तनासरीम तथा अराकानकी अंग्रेजी सेना और शक्तिशाली कर दी गयी। राजा थ्रावादी कुछ पागल हो गया था। उसके पुत्रने सन् १८४५ मे उसे बन्दी कर लिया। राजप्राप्तिके निमित्त पारस्परिक द्वन्द्व आरम्भ हो गया। पगनमिनने अपने भाई, सम्बन्धियों तथा जिनके कारण उत्तराधिकारके लिए खतरा था, मरवा डाला। सन् १८४६ मे थ्रावादी मर गया। पगनमिन राजा बना।

अंग्रेजोकी नीति अग्रगामी थी। सन् १८५२ मे अग्रेजोने रगून और मर्तबान ले लिया। नवम्बरमें जनरल गोडविनने प्रोम लिया। पेगू भी किंचित् प्रतिरोधके पश्चात् अग्रेजोंने हस्तगत कर लिया। १० दिसम्बर सन् १८५२ को मेजर आर्थर परवेजको लार्ड डलहौजीने प्रथम कमिश्नर नियुक्त किया। बर्माके पास समुद्रका किनारा समाप्तप्राय हो गया। वह प्राकृतिक घेरेमे आ गया।

मिन-दान-मिन राजकुमार माण्डले दरबारमे युद्ध-विरोधी था। वह राजाका भाई था। अग्रेज प्रोमकी ओर अग्रसर हो रहे है, समाचार मिला। वह एक दलका नेता बन गया। दिसम्बर १७ को अपने भाई कनौग श्वेबो (सामन्त) के साथ भाग गया। १८ फरवरी सन् १८५३ को मग्वे मेनगिजी पगानका मुख्यमन्त्री था। अमरपुरमे प्रवेश कर राजाको सिंहासनसे उतारकर मिन-दान-मिनको राजा घोपित किया।

मिन-दान-मिन धार्मिक प्रवृत्तिका राजा था। रक्तपातसे घृणा करता था। पगानमिनकी हत्या नही की। पगानमिन सन् १८८१ तक जीवित

रहा। मिन-दान-मिनकी ५३ रानियाँ थी। पुत्र ४८ तथा ६२ कन्याएँ थीं। उसकी मृत्युके बादतक ५९ जीवित थी। उसके दरबारमे राजसिंह एक ब्राह्मण ज्योतिषी था।

अंग्रेज पेगूमे जम गये। मिन-दान-मिनको विश्वास नहीं था कि अंग्रेज पेगूमे अनन्त कालतक जमे रहेंगे। अंग्रेजोंके पास सन्धिके निमित्त दूत भेजा। परन्तु मई सन् १८५३ मे स्पष्ट कह दिया गया कि अधीनस्थ कोई भी भूभाग लौटाया नहीं जायगा। दोनों ओरसे फिर भी बातें चलती रहीं। संघर्षकी नौबत नही आयी। सन् १८६१ मे बर्मा भूखण्डके विषयमे समझौता हुआ। सन् १८६२ मे बर्मा ब्रिटिश भारतका एक सूबा बन गया। रंगून उसकी राजधानी हुई।

सन् १८५७ मे राजा अमरपुरसे देशकी राजधानी माण्डले लाया। माण्डलेको बर्मी संस्कृति एवं सभ्यताका केन्द्र बनाया। कुथोदा पगोडाका निर्माण कराया। उसके समीप ७३३ छोटे-छोटे पगोडा बनाये गये। उनपर त्रिपिटक पाली भाषामे अंकित करवाया, माण्डलेका पाली नाम 'यदन वन' था। राजप्रासाद बनाया गया। उसका प्राचीर ३६ फीट ऊँचा था। स्थान-स्थानपर बुर्जियोपर 'टावर' खड़े किये गये।

अंग्रेज उत्तरी बर्माको भी लेना चाहते थे। मानचेस्टरके सूती वस्त्रोंके लिए दक्षिणी चीन लाभप्रद बाजार माना जाता था। पुराने चीन-मार्गको पुनः चालू करनेकी बात उठायी गयी। बर्मामे यह धारणा फैलती जा रही थी कि अंग्रेजोंसे मुक्ति प्राप्त करनी चाहिये। राजा मिन-दान-मिन स्वयं परेशान था। उसे कोई मार्ग सूझ नहीं रहा था। माण्डले दरबार तथा प्रदेशमे अंग्रेजोंका प्रवेश हो चुका था। वे अपनी योजना शनैः-शनैः पूर्ण करना चाहते थे। सन् १८६६ मे विद्रोहकी चिनगारी झलकी। २ अगस्त सन् १८६६ को वह माण्डलेसे कुछ दूर ग्रीष्मकालीन राजप्रासादमे था। राजप्रासादमे घुसकर युवराजकी हत्या कर दी गयी।

राजा पैदल भागकर माण्डले आया। रात्रिपर्यन्त राजप्रासाद विद्रोहियोसे घिरा रहा। राजाके अंगरक्षकोने प्रातःकाल राजाकी रक्षाका

प्रबन्ध कर लिया। राजाने अंग्रेजोंको आदेश दिया कि वे तुरन्त रंगून चले जायँ। सन् १८६७ मे अंग्रेजोने बर्मासे दूसरी सन्धिके द्वारा बर्माके विदेशी व्यापारका अधिकार प्राप्त कर लिया। सन् १८६९ मे स्वेज नहर खुल गयी। उस नहरने चाहे किसीका उपकार किया हो परन्तु बर्माकी पराधीनताको वह और समीप ले आयी। चीन तथा समस्त बर्माके व्यापारके लोभसे अंग्रेजोने पूर्ण बर्मा प्राप्त करनेका निश्चय कर लिया।

सन् १८७१ मे राजा मिन-दान-मिनने माण्डलेमे पाँचवीं बुद्ध संगीति अर्थात् सगायन किया। त्रिपिटकके शुद्ध उच्चारणका निश्चय किया गया। त्रिपिटकके नवीन सस्करणको ७२९ पट्टियोंपर आलेखित कराया। माण्डलेके कुथो-दाच् विहारमे वे लगी हैं। सन् १८७२ मे मिन-दान-मिनने अपनी स्वतन्त्रता दिखानेके लिए इटलीसे व्यापारिक सन्धि की। अंग्रेजोने बाहरसे शस्त्र-अस्त्र आनेपर अवरोध लगा दिया था। उसने माण्डले राजप्रासादमे २६० फुट लम्बा दरबार हाल निर्माण कराया। भमिडमे ब्रिटिश एजेण्ट रखनेकी बात मान ली गयी। सन् १८७८ मे राजा मिन-दान-मिनकी मृत्यु हो गयी। मिन-दान मिनने समाधि लेनेकी इच्छा प्रकट की थी। एक श्वेत पगोडा बनाया गया था। उसी पगोडामे उसका शरीर समाधिस्थ किया गया।

मिन दान-मिनके पश्चात् राजा थिवो (शिव) गद्दीपर बैठा। सन् १८८२ में उसने विदेशोमे एक मिशन भेजा। पेरिसमे मिशन आया तो अंग्रेजोको मालूम हुआ कि बर्मामे हथियारोकी बात पुनः उठायी गयी है। अगस्त सन् १८८५ मे व्यापारिक बातचीत सुविधानुसार न होनेपर अंग्रेजी फौज माण्डलेपर आक्रमण करनेके लिए रवाना कर दी गयी। नवम्बर १४ को आक्रमण आरम्भ हुआ। राजा थिवोने आत्मसमर्पण कर दिया। माण्डलेका पतन हो गया। पहली जनवरी सन् १८८६ को सम्पूर्ण बर्मा भारतका एक सूबा तथा ब्रिटिश साम्राज्यका एक अंग हो गया। सर चार्ल्स बर्नार्ड चीफ कमिश्नर नियुक्त किये गये। इस प्रकार बर्मा धीरे-धीरे १८२६, १८५२ तथा १८८५ के युद्धोंके लपेटमे ब्रिटिश साम्राज्यके पेटमे चला गया।

माण्डले अथवा आवा राज्यदरबारकी कहानी इस प्रकार समाप्त

होती है और उसके साथ बन्द होता है राजतन्त्रका इतिहास।

माण्डलेके लिए हम १८ जनवरीको प्रातःकाल ७-३० बजे रंगूनसे रवाना हुए। हवाई जहाज पुराना था। मार्गमें २ घण्टे लगे। ठीक साढ़े नौ बजे माण्डले हवाई अड्डेपर पहुँच गये। रंगूनसे जहाज सीधा माण्डले जाता है। प्पिन मना, पयेथिन पड़ते हैं। आकाशमार्गमें बादलों तथा नीचे पर्वतीय दृश्य सुन्दर था। हरित भूमिपर उज्ज्वल पगोडा वायुयानसे नक्षत्र तुल्य सूर्यप्रभामें चमकते थे। माण्डलेके समीप पहुँचते ही अजीब दृश्य दिखाई पड़ा। पगोडाओंकी शृंखला जैसे किसीने भूरी भूमिपर बिछा दी थी। हृदयपर जनताकी धार्मिक मनोवृत्ति एवं भावनाका विचित्र प्रभाव पड़ता है। माण्डले क्षेत्र वास्तवमें पगोडाका क्षेत्र है।

माण्डले हवाई अड्डेपर श्री नरेन्द्रनाथ गुलाटी तथा अन्य भारतीय मित्र मिले। पूनाके श्री एम० एल० ओगले यहाँ बर्मा सरकारके इंजीनियर हैं। उन्होंने डाक बँगला अथवा सरकारी आतिथ्य-भवनमें हम लोगोंके ठहरनेका प्रबन्ध कर दिया था। हम वहीं गये। प्रबन्ध बहुत ही सुन्दर था। माण्डलेमें सर्वश्री शादीलाल, डा० श्री देवीचन्द्र आदिकी सदा स्मृति बनी रहेगी।

माण्डलेमें महामुनि पगोडा सर्वश्रेष्ठ एवं जनप्रिय स्थान है। इसकी तुलना भारतके रामेश्वर मन्दिरसे की जा सकती है। रामेश्वरमें जैसे सारा नगर या बाजार ही मन्दिरमें है उसी प्रकार महामुनि पगोडा है। पगोडामें बाजार है। सब कुछ है। यह उतना साफ नहीं है जितना पगोडा है। गाथा है कि महामुनि अर्थात् भगवान् बुद्धकी मूर्ति इन्द्रने ढलवायी थी। मूर्ति पीतलकी ढली है। विशाल मूर्ति है। सुवर्णरंजित है। गर्भगृहमें प्रवेश कर मूर्तिकी परिक्रमा की जाती है। भगवान्‌का सिंहासन ही कमसे कम ७ फुट ऊँचा होगा। मूर्ति १२ फुट ऊँची है। गर्भगृहके बाहर रेलिंग अर्थात् वेदिका है। वेदिकाके सम्मुख मण्डपमें लोग बैठकर पूजा करते है। वेदिका-पर धूपबत्ती तथा मोमबत्ती जलायी जाती है। मन्दिरमें किसी भी जातिका या कोई भी धर्म माननेवाला व्यक्ति आ सकता है। सुवर्णका तबक या

या पत्तर खूब बिकता है। उसे लोग मूर्तिपर तथा सिंहासनपर लगाते हैं। मन्दिरके प्रांगणमे अयुध्याके घेरेमे प्राप्त बुद्ध मूर्तियाँ उन ३२ मूर्तियोमेसे बची रखी है जो विजयस्वरूप यहाँ लायी गयी थीं।

माण्डलेमे कुष्ठ स्थान है। बर्मामे लगभग ४२ हजार कुष्ठ रोगी हैं। माण्डलेके कुष्ठ स्थानकी देखरेख पाश्चात्य बहने करती है।

माण्डले दुर्गकी लाल दीवारे खड़ी है। दुर्गमेंके प्राचीरके पहले चौड़ी खाई है। खाई उथले ताल-सी प्रतीत होगी। सन् १८५८ मे दीवारकी नींव डाली गयी थी। ब्राह्मण ज्योतिषियोंके अनुसार नरमेध भी करनेकी बात कही गयी। लगभग ५२ व्यक्ति दीवारो तथा दुर्गके अन्य स्थानोमे मारकर गाडे गये थे। कहा जाता है कि उनमे एक गर्भिणी स्त्री भी थी। चार व्यक्ति राजसिंहासन स्थानके नीचे मारकर गाड़ दिये गये थे। दीवार ६ मीलके घेरेमे होगी। सूर्यास्तके समय दीवारो और परिखाका दृश्य सुन्दर लगता है।

दुर्गमे जानेके लिए ठोस सड़क है। सड़क फाटकसे जाती है। फाटकपर सामरिक रचना मिली। फाटकके अन्दर वर्मी राजाओंके महलके ध्वंसावशेष मिलेगे। चारो ओर ईंटे मिलेंगी। चबूतरे मिलेंगे। महल लकड़ीके बने थे। बमोसे सब कुछ नष्ट हो गया है। राजप्रासाद तथा ऐरावत अर्थात् श्वेत हाथी जहाँ रहते थे उनका चिह्न मिलता है। मई सन् १९४५ के ब्रिटिश बमोंके कारण पुरातन नगरकी दीवारे मात्र शेष रह गयी है। बमबाजोंने माण्डले हिल पगोडाको ध्वस्त नही किया। बमकी अग्निसे जो कुछ बच गया है वही शेष है। एक शीशेके घरमे पुराने राजप्रासादका माडल रखा है। सन् १८८५ मे माण्डलेके पतनके पश्चात् इस दुर्गका नाम तत्कालीन वाइसरायके नामपर फोर्ट डफरिन रख दिया गया था। डफरिनकी उपाधि भी आवा-दरबारके नामपर मार्क्विस आफ आवा दी गयी थी।

प्राचीरवेष्ठित प्राचीन नगरके एक कोनेपर प्रसिद्ध माण्डले जेल है। जेल भारतीय जेलोंके सम्मुख अत्यन्त भव्य नही है। साधारण प्रथम

श्रेणीके डिस्ट्रिक्ट जेल तुल्य है। भारतीय जेलोंके तुल्य मध्यमे सीखचेदार फाटक हैं। फाटकके अन्दर दोनो ओर जेल कार्यालयोके कमरे बने हैं, तत्पश्चात् बन्द फाटक है जहाँसे भीतरके दृश्यका पता नहीं चलता।

इस जेलमे लाला लाजपतराय, लोकमान्य तिलक, सुभापचन्द्र बोस तथा वर्तमान बर्माके प्रधानमन्त्री ऊ नू रह चुके हैं। हमारे लिए यह तीर्थ-स्थान था। अधिकारियोंने जेल देखनेकी सुविधा दे दी थी। जेलरने बड़े प्रेमसे सब कुछ दिखाया, बहुतसे विद्रोही भी कैद थे। उनसे भी बात करनेका मौका मिला। एक विद्रोही हत्याके अपराधमें कैद था। वह इस समय पूर्ण धार्मिक हो गया था। फाँसीघरमे था। माला उसके हाथमें थी। मानव जब निराश हो जाता है अथवा उसे शान्तिकी आवश्यकता होती है तो माला बड़ी उपयोगी सिद्ध होती है। जेल-जीवनमें मैंने प्रायः इसका अनुभव किया है।

लोकमान्य तिलक, लालाजी, सुभाप बाबू तथा ऊ नू एक ही स्थानमें थे। जेलके अन्दरका यह एक चक्कर था। छोटा-सा हाता था। बीचमें चौकोर बैरक थी। बैरकके पिछले हिस्सेके बायीं ओर कोनेमे पाखाना तथा पेशाबखाना था। एक ओर खाना बनानेका स्थान था। बैरकके बाहर छोटे मैदानमें फूल तथा घास आज भी लगी थी। मैंने कुछ दूब तोड़कर रख ली। इसी प्रकार मैंने निजामुद्दीन औलियामें शाहजहाँकी बड़ी कन्या जहाँनाराके मजारपर जमी हरी दूबोंको भी तोड़कर रखा था। दोनों दूबमे कितना अन्तर था। एक थी क्रान्तिवादियोकी भावनाओंमे उगती जनता-की हरीभरी आशाओंका प्रतीक और दूसरी साम्राज्यवादकी छायामें पली एक नारीके हृदयकी मार्मिक भावना। खुलदाबादमे मैंने दो दूबोंको और लिया था। वह औरंगजेबकी कब्रपर उगी थी। वह थी साम्राज्यवाद, असहिष्णुता एव मदलिप्सामे लिप्त औरंगजेबकी याद, जिसने मराठों, राज-पूतों, सिखोंकी राष्ट्रीय भावनाओको कुचलनेका अथक प्रयास किया था। जिसने काशी विश्वनाथ आदि मन्दिरोको नष्ट कर अपनी असहिष्णुताकी मुहर लोगोंपर लगायी थी। उन भग्नावशेषोंकी दूब भी लोग लेते है। मेरा

मन इस स्थानपर आकर विचित्र अनुभव करने लगा था। तिलकने यहाँ गीतारहस्य लिखा था। दर्शनकी उन्मुक्त लहरियाँ उनके मानसमे उठी थीं। लालाजीने भारतीय पराधीनताकी कल्पना की थी। सुभाष बोसने शायद सशस्त्र क्रान्तिकी बात सोची थी। और ऊ नूने वर्माके इस स्थानमे बैठकर ही वर्माके भविष्यपर विचार किया होगा। इस स्थानमे आते ही भावातिरेकमे श्री ओंकारनाथने भूमिका रजकण मस्तकमे लगा लिया। राधारमणने मस्तक टेक दिया। मै वहाँ फूले फूलोको देख रहा था। वे फूले थे और आज फूले थे बर्मा और भारत दोनो।

इस जेलके सामने ही दो-मंजिला मुख्यतया लकड़ीका बना स्त्रियोका भी जेल है। जेलकी दीवारे उत्तरप्रदेशीय जेलोंके समान मिट्टीसे लिपी थीं। जमीन कच्ची थी। सोनेके लिए मिट्टीके ओटे बने थे। लोकमान्य तिलक आदि जिस बैरकमें थे वह चोरदरी थी। उसके चारो ओर जॅगले लगे है। लम्बी ज्यादा तथा चौड़ी कम है। स्थान मुझे संकुचित लगा। आकाशकी उड़ती चिड़ियो अथवा आते-जाते सन्तरियोंके अतिरिक्त और किसीका दर्शन नहीं हो सकता।

नेशनल हाउसिंग बोर्डमे हम लोगोने चाय पीयी। सैण्डर्स वीविंग इन्स्टीट्यूट देखने गये। स्त्रियाँ यहाँपर अधिक काम करती मिली। स्त्रियाँ ही हैण्डलूमपर कपड़ा बीन रही थी। वे ही बाबिन भर रही थी। वहाँकी संचालिका भी एक वर्मी मुसलिम स्त्री थी। वह भारतमे शिक्षा प्राप्त कर चुकी है। मैने वहाँकी बनी एक लुंगी खरीदी।

माण्डलेके समीप ही सजियाग तथा अमरपुर है। सजियाग कभी राजधानी था। इस समय वह एक छोटा-सा कस्बामात्र रह गया है। पुरानी गाथाके साथ वह पगोडाओंके बीच जैसे साँस ले रहा है। अमरपुरका महत्त्व केवल पुरातत्त्व-अन्वेषकोंके लिए रह गया है।

प्रातःकाल ५ बजे १९ जनवरीको हम उठे। श्री गुलाटीजीके यहाँ चाय पिये। कारसे मेम्पोके लिए प्रस्थान किया। मेम्पो ग्रीष्मकालीन राजधानी था। मार्ग पर्वतीय है। माण्डलेसे ४५ मील दूर स्थित है। मार्गमे

हमे स्थान-स्थानपर ट्रकोंमें भरे सैनिक मिले। विद्रोहियोंका भय था। हमपर भी हमला हो सकता था। एक भारतीयको विद्रोही उठा ले गये थे। बहुत कुछ लेनेपर उन्हे मुक्त किया था। यह पर्वतीय नगर तुल्य है। चीड़के वृक्षोके बीच अंग्रेजी शैलीमें आधा लकड़ी और ईटके बने बगीचोमें कुटी अथवा मकान मिलेंगे। सड़के अच्छी है।

बाजारमे भारतीय तथा चीनी लोग मिलेंगे। सड़कोके किनारे पटरियॉ पत्थरोंकी हैं। बाजार अच्छा है। वहाँ सभी कुछ मिल सकता है। एक भारतीय मुसलमान मिले। उनकी बर्मी स्त्री दूकानपर सामान बेच रही थी। वह बड़े प्रेमसे अपनी दूकानपर ले गये। पूर्वीय उत्तरप्रदेश-के काफी श्रमिक तथा छोटे कारबारी मिले।

यहॉपर सरकारकी ओरसे रेशम-उद्योगकी शिक्षाके लिए एक केन्द्र भी खुला है। जापानी लोग शिक्षा दे रहे है। शिक्षा प्राप्त करनेवाली सभी बालिकाएँ थी। रेशमके कीड़ोके लिए यहॉका जलवायु बहुत ही उपयुक्त है। शिक्षण-केन्द्रस्थानके बाहर शहतूतकी खेती थी। नरम पत्तोंपर कीड़ोंको पालनेसे रेशम उत्तम तथा महीन निकलता है। कश्मीरमे श्रीनगरके रेशम उत्पादनस्थानके सामने वह बच्चा मालूम होगा। शहरमे सिनेमा-घर है। छोटा श्वेत पगोडा है। तिब्बती देवस्थान है। ऊँचे बॉसपर प्रार्थनापत्र लगे हवामे फरफरा रहे थे। मेम्पोका जलवायु भारतीयोंको पसन्द आयगा। हम लगभग १—३० बजे दोपहरतक लौट आये।

भोजनके पश्चात् इरावदी नदीके पार मिगुन जानेकी बात थी। माण्डलेमे भारतीय व्यापारी बहुत हैं। उनका मुख्य कारबार सागवानकी लकड़ीका है। इरावदीके तटपर ही माण्डले बसा है। शहर बहुत बड़ा नहीं है। चौराहेपर अमेरिकन पुस्तकालय है। चायकी दूकाने हैं। इरावदीके तटपर ही लकड़ी चीरनेके कारखाने है। लट्ठे नदियोमे पानीके सहारे बहकर आते है। एक-एक लट्ठेके समूहमे २०० से ३०० लट्ठे बॉध दिये जाते है। उनपर झोपड़ी लगाकर रखवाली करनेवाला रहता है। इरावदी नदीसे सैकड़ों मीलकी यात्रा करता लट्ठा माण्डले पहुँचता है।

नदीके किनारे लट्ठे लगा दिये जाते है। भैसेकी जोड़ी एक-एक लट्ठेको ऊपर मशीनतक खीचकर ले जाती है। तटका दृश्य बिलकुल भारतीय नदीतटसे मिलता है। स्त्रियाँ लट्ठोंपर-कपड़ा कचारती है। कहीं मॉझी भात पकाते हैं। तटपर ही हमे एक दल भी मिला। बर्मी कोई पूजा करने जा रहे थे। शायद विवाहसे सम्बन्धित यह कोई पर्व होता है। बॉसको बीचसे फाड़कर एक प्रकारका बाजा बना लिया जाता है। उसे बजाते-गाते लोग आते है।

भारतीय व्यवसायियोके आयोजनपर एक भारतीय व्यवसायीका लाच आया था। मिगुनमे बौद्ध इन्फर्मेरी है। वृद्ध लोग रखे जाते है। उसके संचालक एक बर्मी पुराने कार्यकर्ता थे। वे स्वय वृद्ध थे। भारतीय राष्ट्रीय काग्रेसके माण्डलेके सघटक थे। भारत-बर्मा-विभाजनके विरोधी थे। भारतीय उनकी इस संस्थाकी बड़ी मदद करते थे।

स्टीमरपर भारतीय महिलाऍ थी। हमारो नदीकी यात्रा लाचसे आरम्भ हुई। हम उलटी धारापरसे चले। तटवर्ती दृश्य अत्यन्त हृदय-ग्राही था। मनुष्य इस भूखण्डपर किस तरह कोने-कोनेमे फैलकर जीवन-यापन करता है इसका अध्ययन करनेमे ही एक प्रकारका रस मिलता है। उत्तरीय बर्माके ग्रामीण जीवनका बड़ा अच्छा दृश्य मिलता है। महानदी इरावदीमे हजारों लट्ठोके समूहका दृश्य सुन्दर लगता है। नदीका जल गगाकी तरह निर्मल था।

इन्फर्मेरीके तटपर हमारा लाच लगा। हम खेतोंमे उतरे। सायकाल था। कृषक स्त्रियॉ सरपर बोझ रखे अपने घरोंको लौट रही थीं। मैने किसी भी श्रमिक स्त्रीको मैला वस्त्र पहने नही देखा। साधारणसे साधारण रमणी भी अत्यन्त साफ-सुथरे वस्त्रोंमे दिखाई पड़ेगी। वे स्नान भी कमसे कम दो बार करती हैं। लम्बे केशोंके जूडेमे फूल लगाती है, पाउडर न लगानेके कारण उनके मुखपर लावण्य रहता है। वे थन्का (एक लकड़ी) का चन्दन मुखपर लगाती है। इन्फर्मेरीका स्थान सुन्दर है। एक ओर इरावदी नदीका विशाल तट है तो दूसरी ओर पगोडाओकी शृङ्खला है।

सन् १७९० मे राजा बोदप्पाने एक पगोडामे हाथ लगाया था। वह शायद विश्वकी सबसे बड़ी ईंटोंकी रचना थी। तेरह वर्षतक बनता रहा। उतने दिनोंमे दो भीमकाय सिंह बन सके थे। सिहोंकी ऊँचाई ९० फुट थी। उनके दॉतोंकी लम्बाई साढ़े तीन फुट थी। आखोंकी पुतलियॉ श्वेत सगमरमरकी साढ़े तीन फुट वृत्ताकार थी। पगोडाकी बाहरी दीवार ६७७ वर्गफुट थी। पगोडोंका अधिष्ठान २५६ वर्गफुट था। सन् १८३८ में भूकम्प आया। सिंह टूट गये और पगोडा क्षत-विक्षत हो गया। मिंगुनका यह पगोडा अपनी भव्यताकी छाप दर्शकोंपर छोड़ता है। इस पगोडासे चलनेपर श्वेत विचित्र पगोडा मिलता है। इसे म्यिन-मो पर्वत कहते हैं। ऊपर जानेके लिए सीढ़ियॉ बनी हैं। सीढ़ी खड़ी है। चढ़नेमे कष्ट होगा। ऊपर जानेपर चारों ओरका सुन्दर दृश्य मिलता है।

मिगुनका प्रसिद्ध घण्टा इस पगोडासे कुछ आगे बढ़नेपर मिलता है। इस घण्टेके कारण मिगुनकी ख्याति है। सन् १७९५ मे यह ढाला गया था। विश्वका यह सबसे बड़ा घण्टा है। घण्टा लटकता है। हम खड़े-खड़े उसके अन्दर चले गये। उसका वजन ९० टन होगा। एक छायाके नीचे लटकाया गया है। लकड़ीसे इसे ठोका जाता है। ध्वनि गम्भीर उठती है।

यहीपर एक स्कूल था। छोटे-छोटे बच्चे दिखाई पड़े। कौतूहलवश मैं चला गया। शिक्षक एक फुंगी (भिक्षु) थे। वे पढ़ा रहे थे। बच्चे फर्शपर बैठे थे। बर्मामे प्रारम्भिक शिक्षा फुगियोंके हाथमे है। भारतीय संन्यासी तुल्य वे समाजके लिए निरर्थक साबित नही होते। बौद्ध जगत्मे भिक्षुका सामाजिक जीवनमे बड़ा हाथ होता है। प्रारम्भिक शिक्षाका भार उनपर होता है। वे बच्चोंको संगीत, नृत्य, शिष्टाचार आदि सब कुछ सिखाते है। राजनीतिक उत्थानमे बर्माके भिक्षु लोगोका महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है।

इन्फर्मेरीमे दो-तीन हाल बने हैं। सघन वृक्षोकी छाया है। अत्यन्त

वृद्धोंको यहाँ देखा। महात्मा गान्धीके कार्यों एवं उपदेशोंका यहाँके कार्यकर्ताओंपर बड़ा प्रभाव पड़ा है। जिन्हे कही स्थान नही मिलता वे यहाँ चले आते हैं। सबकी सेवा होने तथा सबके भोजनकी समभावसे व्यवस्था है। जाति, वर्ग आदि का भेद नहीं है। इनका कार्य स्तुत्य है। हम लॉचसे ही पुनः लौटे। सूर्यप्रभा समाप्तप्राय थी। इरावदीका जल सन्ध्याके रगमे जैसे मिलता जा रहा था। यहाँ आकर हमने अपने जीवनका एक दिन सार्थक समझा।

आज फरवरी २० शुक्रवार था। माण्डलेके पर्वतीय पगोडाको देखना था। प्रातःकाल सवा आठ बजे पर्वतके मूलमे पहुँच गये। ऊँची पहाड़ी है। ऊपर जानेके लिए सीढियाँ बनी है। पर्वत-मूलमे छोटे पगोडाओकी बहुत श्रेणियाँ हैं। चायकी दूकाने है। सीढ़ियोसे चढ़ते समय बड़ा सुन्दर दृश्य प्रकृतिका मिलता है। मार्गमे कई स्थानपर बुद्धकी मूर्तियाँ मन्दिरमे रखी है। एक कॉस्य मूर्ति अधूरी थी। चोटीतक पहुँचनेके पहले मार्गमे दो-तीन स्थानपर बहुत ही सुन्दर मन्दिर पगोडा तथा बैठनेका स्थान बना है। चोटीपर पगोडा अत्यन्त सुन्दर है। बहुत बड़ा खुलता हाल बना है। उसमे लगभग ५ हजार आदमी बैठ सकते हैं। लोग अपने कुटुम्बके साथ आते है। दिनभर खाते-पीते तथा आराम करते और शामको चले जाते है। बर्मामे पगोडा केवल माथा टेकने अथवा पूजाका स्थान नही होता। वह सार्वजनिक तथा सामाजिक जीवनका एक अंग होता है। उसकी एक उपयोगिता होती है।

पगोडासे लौटकर माण्डलेके आर्यसमाज-भवनमे १०—३० बजे पहुँचे। माण्डलेमे आर्यसमाजकी इमारत सुन्दर है। अच्छी है। भारतीयोंके सामाजिक जीवनका केन्द्र है। माण्डलेके प्रायः सभी विशिष्ट भारतीय एकत्र थे। अपनी बाते कही, उनकी सुनी। बर्मामे भारतीयोकी करुण स्थिति देखकर बड़ा कष्ट होता था। हम इतने असमर्थ थे कि चाहकर भी उनकी विशेप सहायता नही कर पाते थे।

माण्डलेमे एक ध्यान-केन्द्र है। स्थान अत्यन्त रम्य है। भिक्षु रहते

हैं। नहर है। उसमें पानी रहता है। प्रत्येक कुटीमें जानेके लिए नहरपर लकड़ीके सेतु बने हैं। कुटिया प्रायः लकड़ियोंकी सुन्दर आधुनिक ढंगकी बनी है।

मध्याह्नकाल १२-३० बजे माण्डले हवाई अड्डेके लिए रवाना हो गये। वहाँ २-३० पर हवाई जहाज मिला। माण्डलेके भारतीय बन्धुओंने हेहो, त्योजी आदि स्थानोंपर समाचार भेज दिया था। ३-१५ पर हेहो पहुँचे। छोटा हवाई अड्डा है। यहाँसे त्योजी जाया जाता है। त्योजी वर्माका सर्वश्रेष्ठ हिल स्टेशन है। एयरोड्रोमपर भारतीय वर्मा कांग्रेस तथा त्योजीके अनेक भारतीय मिले। यहाँ उन्होंने जलपानका प्रबन्ध किया था। दो-तीन कारें भी आयी थीं। हम लोग जलपानके पश्चात् त्योजीके लिए रवाना हो गये। हेहोसे त्योजी २४ मील था। त्योजी शान राजकी राजधानी है।

त्योजी वास्तवमें सुन्दर स्थान है। शान-प्रदेशका गौरव है। भारतीय वर्मा कांग्रेसके लोग मिले। हम लोगोंके ठहरनेका प्रबन्ध गवर्नमेण्ट हाउसमें था। यहाँपर कुछ दिन पूर्व बुलगानिन, ख्रुश्चेव तथा श्रीमती डा० सनयातसेन ठहरी भी थीं।

त्योजीमें भारतीयों तथा चीनियोंकी दूकानें सड़कोंके दोनों किनारोंपर हैं। भारतीय अधिकतर कपड़ेके व्यापारी हैं। अखिल वर्मा भारतीय कांग्रेसका यहाँ बड़ा अच्छा संघटन है। उनका सम्पर्क सभी प्रकारके लोगोंसे है। श्री एन. सी. राय कांग्रेसके सभापति हैं। सर्वश्री एस. बी. कुमारप्पन, जे. एल. कपूर, मोहनलाल शर्मा, हरिश्चन्द्र जै, हरगूलाल जै, ए. बी. रमन, एम. एल. कुटवल, ए. एस. आर. अय्यर, कुमारी भगवान कुँअर, मोहनलाल टेकचन्द, सरदार सुन्दर सिंह आदिसे मिलकर बड़ी प्रसन्नता हुई।

सायंकाल श्रीरायने जलपानका आयोजन किया था। लगभग २०० नागरिकोंने भाग लिया था। उनमें विदेशी लोग भी थे। खुलकर बातें हुईं। यहाँका समागम अत्यन्त स्नेहास्पद तथा उत्तम था। रात्रिमें डिनरका भी प्रबन्ध था। बहुत लोग थे। यहाँके भारतीयोंका संघटन

सभी दृष्टियोंसे पूर्ण था। सायकाल सार्वजनिक सभा हुई। हम सभी लोगोने भाषण किया। श्रीराय सभापति थे। भाषण हिन्दीमें भी हुए। प्रातःकाल भारतीय मित्रोंके साथ जलपानकर ९।। बजे यागव्हेके लिए मोटरसे प्रस्थान किया। ठीक १०।। बजे यागव्हे पहुँच गये। छोटा-सा शहर है। भारतीय व्यापारी है। एक भारतीय स्कूल भी है। उसमे हिन्दी पढ़ायी जाती थी।

भारतीय बन्धुओंने यहाँ भी बहुत ही सुन्दर प्रबन्ध किया था। कुछ समय ठहरकर दो मोटर बोट ठीक किया गया। साथके भारतीय बन्धु अपने कुटुम्बके साथ चले। भोजन-सामग्री ले ली गयी थी। बर्मामें आकर जिसने इनले लेक नहीं देखा उसने कुछ नही देखा। कश्मीरमे उल्हर तथा डल लेक इसके सम्मुख नगण्य है। बर्मामे आनेवाला प्रत्येक पर्यटक तथा विशिष्ट व्यक्ति इन्हे देखता है। मार्शल बुलगानिने तथा खुश्चेव कुछ ही दिन पूर्व इसे देख गये थे। उनके आनेके समय यहाँ बड़ा ही अद्भुत समारोह हुआ था।

लगभग तीन मील पतले चैनलके बाद विशाल लेकका दर्शन होता है। चैनलके दोनो ओर नरकुलके झुरमुट मिलते हैं। पानीमें बॉस गाड़कर लोगोके बने मकान मिलते हैं। लोग छोटी-छोटी नौका रखते है। उन्हीसे आते-जाते है।

मुख्य लेकमे प्रवेश करते ही भव्य दृश्यका दर्शन होता है। चारों ओर पर्वतमाला है। बीचमे झील है। झील २२ मील लम्बी ६ मील चौड़ी है। झीलका पानी अत्यन्त निर्मल है। मछलियॉ तैरती दिखाई पड़ती थीं। विशाल झीलमे तैरते हुए खेत बहुत मिलेगे। पानीकी घास मिलकर इतनी गुथ जाती है कि वे ही बहुत मोटी हो जाती हैं। उनपर आदमी खड़ा हो सकता है। आदमीका भार अच्छी तरह सह लेती है।

झीलके बीचमे एक बॅगला पानीमे लट्ठा गाड़कर बनाया गया है। यहॉसे मार्शल बुलगानिन तथा खुश्चेवने जलके बर्मी नाविकोंका प्रदर्शन तथा खेल देखा था। बॅगलेके चारों ओर तैरते खेतोकी रविश बनायी गयी

थी। बँगलेसे चारों ओरका दृश्य बहुत ही भला लगता है। भोजनादि कर हम लोग रवाना हुए। बँगलेके पीछे झीलपर ही बसा एक गॉव दिखाई पड़ा। गॉवका नाम शायद लिकें ग्राम था।

हमारी नाव पहुँचते ही अनेक बालक-बालिकाएँ एकत्रित हो गयीं। सबकी उम्र तीन बरससे कम ही थी। बीचमे बहुत बड़ा हाल बना था। उसमे बुद्ध-प्रतिमा थी। दो-चार फुंगी बैठे पुस्तक पढ़ रहे थे। बालकोंको वे ही शिक्षा देते थे। उन बालकोकी प्रसन्नता हम कभी भूल नही सकते। वे पक्तिबद्ध नाचने लगे। नाचनेके साथ-ही-साथ गाने लगे। उनकी दैवी पवित्र प्रसन्नतामें हमने वास्तवमे पवित्रताका दर्शन किया। वे शिशु हमे अजनबी जानकर न तो भागे और न उन्हे कुछ विस्मय हुआ। वे जैसे अपनी भोली कला दिखानेमे विभोर थे। भगवान् बुद्धने मानवके जीवनको किस प्रकार एक रूपमे ढाल दिया है इसे यहाँ शहरी जीवनसे अत्यन्त दूर स्थानमे अनुभव किया। बौद्ध फुगियोने जब सुना कि सारनाथ मेरे निर्वाचन-क्षेत्रमे है और मै वहाँ प्रायः जाता हूँ तो उनकी श्रद्धाभक्तिमे ऑखे भर आयी। हम यहाँसे लौटे। जैसे स्वर्गका दर्शनकर। न्याहगवे हम लौट आये। भारतीयोने भोजनका प्रबन्ध किया था। भारतीय मित्र सर्वश्री शेरसिंह, डा० डी. डो. घे आदिने यात्राका पूर्ण प्रबन्ध किया था। चाय-पार्टी भी हुई। हम यहाँसे लौटे। श्रीरायके यहाँ भोजन किया। कुछ मित्र एकत्र थे। त्योजीके निकट कला स्वास्थ्यकी दृष्टिसे उत्तम स्थान है। पिदयामे बहुत-सी गुफाएँ हैं। उनमे बुद्ध-मूर्तियाँ अनेक मुद्राओंमे स्थापित हैं।

प्रातःकाल रविवार २२ जनवरीको त्योजीसे हेहोके लिए प्रस्थान किया। भारतीय बन्धु साथ थे। हेहोपर बर्मा सेनाकी एक टुकडी थी। पूछनेपर मालूम हुआ कि एक विदेशी महिला हवाई जहाजसे जानेवाली है। विद्रोही विदेशियोंको उठा ले जाते हैं। उन्हे काफी कीमत लेकर लौटाते हैं। हेहोसे हम माण्डले पहुँचे। माण्डलेसे इसी जहाजसे हम रंगून जानेवाले थे। माण्डलेके मित्र हवाई अड्डेपर मौजूद थे। भोजन कर रंगूनके

लिए प्रस्थान किया। रंगूनमे भारतीय दूतावासमे चाय-पार्टी थी जो अपने सम्मानमें भारतीय राजदूत श्री सक्सेनाने दी थी। उद्योगमन्त्री श्री रशीद-के यहाँ भोजन किया। श्री राजाराम तथा श्री भारतीयसे मिले।

बर्मामें सुधार तथा शासन-व्यवस्थाका किंचित् विश्लेषण अच्छा होगा। सन् १८७४ में भारत सरकारके आदेशसे बर्माके कतिपय नगरोंमे म्युनिस्पलिटी अर्थात् नगरपालिकाएँ कायम की गयी। यही बर्मामे जन-प्रतिनिधित्वके आधारपर शासनकार्यका प्रथम प्रयास था। सन् १८८२ मे नगरपालिकाओंमे निर्वाचन-प्रथा आरम्भ की गयी। सन् १८८४ में ग्रामीण (रूरल) जिला कमेटियाँ भारत सरकारके आदेशसे बनी परन्तु वे असफल रहीं।

सन् १८९७ तक बर्मा भारतके अन्तर्गत चीफ कमिश्नरका प्रदेश रहा। भारतका एक सूबामात्र था। सन् १८९७ मे चीफ कमिश्नरका पद तोड़ दिया गया। लेफ्टिनेण्ट गवर्नर कायम किये गये। उनकी सहा-यताके निमित्त भारत तुल्य एक विधानपरिषद बनायी गयी। नौ सदस्योंके परिषदमे चार अधिकारी तथा पाँच गैरसरकारी व्यक्ति थे। सन् १९०० मे दक्षिणी बर्मामे चीफकोर्ट स्थापित की गयी। सन् १९०७ में न्याय सेवा विभाग कायम किया गया। उत्तरी बर्मामे डिविजनल कमिश्नर ही सेशन जजके रूपमे बैठता था। दिवानीके मुकदमोंका फैसला डिप्टी कमिश्नर करता था। सन् १८९९मे इन्सपेक्टर जनरल सिविल अस्पतालसे जेल विभाग अलग किया गया। सन् १९०० में मालके कार्यके लिए सेटलमेण्ट कमिश्नर तथा लैण्ड रिकार्ड विभाग स्थापित किया गया। इसी समय शिक्षाकी व्यवस्थामे भी हाथ लगाया गया।

सन् १९०४में कोआपरेटिव क्रेडिट विभाग खोला गया। सन् १९०५ मे चीफ कंजर्वेटर फारेस्ट तथा सन् १९०६ में कृषि संचालक नियुक्त किये गये। सन् १९०८ मे सार्वजनिक स्वास्थ्य विभाग तथा सिनेटरी कमिश्नर नियुक्त किये गये।

सन् १९०९ में मिण्टो मार्ले सुधारके कारण भारतीय सूबेके विधान-

परिषदोंके सदस्योंकी संख्या बढ़ा दी गयी। सन् १९१५ में बर्मामें ९ के स्थानपर १७ सदस्य हुए। उनमें एक चुना होता था। वह एक भी वर्मा चेम्बर आफ कामर्ससे चुना जाता था। यह शुद्ध यूरोपियन संघटन था। यूरोपियनोंका विश्वासपात्र ही चुना जा सकता था। सन् १९१५ में संख्या ३० की गयी। तो उसमें केवल दो निर्वाचित सदस्य होते थे। दूसरा रंगून ट्रेड एसोसिएशनसे चुना जाता था। वर्माकी जनताका कोई भी प्रतिनिधित्व करनेवाला सरकारी शासनव्यवस्थामें न था।

सन् १९१७में भारतमें उत्तरदायी स्वायत्त शासनकी बाते कही गयीं। माण्टेगू-चेम्सफोर्ड सुधार आया। सन् १९१९ का भारतीय विधान पास हुआ। कहा गया कि वर्माकी अपनी विशेष परिस्थिति है। अतएव वर्मामे सुधार लागू नहीं किया जायगा। यहींसे भारत तथा वर्माके विभाजन और दोनोंको दो दिशाओंमे ले जानेका प्रयास आरम्भ होता है। भारतका सूबा होते हुए भी वर्मा सुधारोंसे वंचित रखा गया। अजीब प्रवचना थी। कहा गया—उसकी परिस्थिति विशेष है। यह विशेष ही वर्माको भारतसे अलग करानेके लिए जिम्मेदार है।

वर्मामे सुधारवादी आन्दोलन उठ खड़ा हुआ। वहिष्कार संघटित किया गया। स्वायत्तशासनके लिए माँगें पेश की गयीं। वाध्य होकर सन् १९२१ मे ब्रिटिश पार्लमेण्टने निश्चय किया कि भारत एक्ट सन् १९१९ वर्मापर भी लागू किया जाय। यह वर्मा भारत विभाजन विरोधी भावनाकी प्रथम विजय थी।

सन् १९२० में सुधार लागू न किये जानेके कारण वर्मामे क्षोभ उत्पन्न हो गया। रंगून विश्वविद्यालयका ड्राफ्ट बना। उसमे अधिकारियों-की प्रधानता थी। वर्माकी राष्ट्रीय भावना विरोधमे उठी। सरकारी शिक्षा संस्थाओंका वहिष्कार किया गया। सभी लड़के स्कूल छोड़ दिये। भारतमे विद्यापीठों तथा राष्ट्रीय स्कूलोके समान देशमें राष्ट्रीय स्कूलोंकी स्थापना की गयी। सन् १९२०–१९२१ मे आन्दोलन जमता गया। सन् १९२३ में वर्माने वह सब कुछ प्राप्त कर लिया जो भारतके अन्य

सूत्रोंने किया था।

बुद्ध भिक्षुओंने जापानकी यात्रा की। जापान पर्यटनसे प्रभावित हुए। बर्मामे राष्ट्रीय आन्दोलनकी नींव डाली। भारतमे भी नवचेतना, ब्रह्मसमाज, आर्यसमाज, रामकृष्ण मिशन, प्रार्थना समाज, गणेशोत्सव, जमेयतुल उलेमा आदि धार्मिक संस्थाओ तथा उनके कार्यकर्ताओके महान् त्यागसे हुआ था। बर्मा भी भारतका अंग था। वहाँ भी चेतना धार्मिक सुधारकी छायामें उठने लगी। राजनीतिक बातें उठाकर सीधे सरकारके संघर्षमें आना ठीक नहीं समझा गया। भारत बर्मा दोनो मे ही एक ही शैलीपर कार्य आरम्भ हुआ। अपनी बर्माकी यात्रामे हमने आर्यसमाज, रामकृष्ण मिशन आदि अनेक संस्थाओको देखा। बर्मामे बौद्धभिक्षुओ द्वारा प्रचारित कार्य जड़ पकड़ने लगा। बर्मी समझने लगे कि बिना अंग्रेजोंको देशसे निकाले काम नहीं चल सकता।

जापानी-रूस युद्ध सन् १९०५ ने एशियाई अथवा रंगीन जातियोमे अन्धविश्वास उत्पन्न कर दिया। लोग समझ बैठे थे कि पश्चिमी देशोंको हराना असम्भव है। रूसकी हारने एशियाई देशोंकी आँखे खोल दीं। मैंने एक जगह पढ़ा है। किसी जहाजपर टर्कीके एक सज्जन जा रहे थे। टर्की यूरोपमे है। परन्तु वह कभी यूरोपियन राष्ट्र नहीं माना जाता। जापान विजयका हाल सुनकर पर्यटक जहाजपर ही नाच उठा। उसने कहा हम भी दुनियामे है। जापान एशियाई जागर्तिका जैसे नेता बन गया।

दक्षिण-पूर्व एशिया तथा चीन ऊँघता जाग उठा। नवीन उदार विचारोंसे प्रभावित शिक्षित वर्गमे देशोन्नतिकी भावना उत्पन्न हुई। 'यंग मेन बुद्धिस्ट एसोसियेशन'की स्थापना सन् १९०२ मे हो चुकी थी। सन् १९२१ मे यंग मेन बुद्धिस्ट एसोसियेशनका उत्तराधिकारी जनरल कौन्सिल आफ बर्मीज एसोसियेशन हुई। सघटनसे बुद्धिस्ट शब्द निकालकर धर्म-निरपेक्षका रूप दे दिया गया। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसकी शाखा

जिलोंमें भी उसकी शाखाएँ खोली गयीं। बर्माके संघटनोंका उद्देश्य साम्राज्यके अन्तर्गत सुधार एवं स्वायत्त शासन प्राप्त करना था। परन्तु नवीन संघटनमें साम्राज्य शब्द निकाल दिया गया। स्वायत्त शासन अर्थात् होम रूल प्राप्त करनेकी बात दुहरायी गयी। बर्मामें इस प्रकार सर्वप्रथम स्वाधीनताकी भावना उठी।

बर्मामें ब्रिटिश राज स्थापित हुआ। परन्तु जनता जैसे विरत थी। बर्माने सबसे बड़ी गलती की थी। उसका सम्बन्ध शेष विश्वसे न रहा था। लोकतन्त्रके प्रवाहका लाभ उठाकर बर्मामें यदि उन्नीसवीं शताब्दीमें ही जनताका शासनमें सहयोग लिया गया होता तो शायद वह पराधीन न होता। भारतमें कांग्रेस स्थापनाके केवल चार वर्ष पूर्व ही बर्मा पराधीन हुआ था। भारतमें जब आजादीके लिए प्रयास आरम्भ हुआ तो बर्माने अपनी गुलामीका अध्याय खोला। श्यामने विश्वकी उदार धारा तथा विचारोंका लाभ उठाया। वहाँ विदेशियोंकी साम्राज्यवादी नीति सफल न हो सकी। बर्माका राजा अपने पारस्परिक गृहकलह तथा झगड़ोंमें इतना फँस गया कि बर्मा जनताकी अपार शक्तिका लाभ उठाकर विदेशी सत्ताको निर्मूल करनेमें असमर्थ हो गया।

अंग्रेजी शासनने जनताके जन-जीवनमें कोई परिवर्तन नहीं किया। जनताका आर्थिक स्तर शोषणोंके कारण गिरता ही गया। असन्तोष कभी-कभी विद्रोहात्मक घटनाओंमें प्रकट हो जाता था। परन्तु वह अपवाद ही कहा जायगा।

सन् १९२३ में सर फेडरिक व्हाइटकी अध्यक्षतामें एक सुधार समिति ब्योरेसे बातें निश्चय करनेके लिए नियुक्त की गयी। भारतने द्वैध शासन अर्थात् डायर्कीका विरोध किया। बर्मामें बहिष्कार आन्दोलन आरम्भ हुआ। सन् १९२३ में बर्माको गवर्नर सूबा बना दिया गया। हारकोर्ट बटलर प्रथम गवर्नर हुए। नौकरशाहीमें द्वैध शासन आरम्भ किया गया। शान, करेन तथा ट्राइबल क्षेत्रोंको सुधारोंसे वंचित रखकर बर्माको जैसे विषपान कराया गया। साम्राज्यवादियोंने बर्मा खण्डित करनेका

वीजारोपण पहले कर दिया था, उसे अव सींचने लगे थे।

करेन आदि पर्वतीय जातियोंके विद्रोहका विचित्र रहस्य है। उनमें विघटनकी प्रवृत्ति उत्पन्न करायी गयी। वर्मामे वही वात की गयी जो नागा क्षेत्रके सम्बन्धमें भारतमे किया गया। करेन तथा नागा दोनों क्षेत्रोंमे इसाई मिशनरियोंका उपयोग राजनीतिक दृष्टिसे किया गया। नागाकी तरह करेन लोगोने भी स्वतन्त्र देशकी मॉग की है। भारत तथा वर्मा दोनों ही अपने एक पर्वतीय क्षेत्रके लोगोंके विद्रोहका शिकार हो रहे हैं।

माण्टेगू-चेम्सफोर्डके सुधारके आधारपर विधान परिषदके सदस्योकी संख्या ३० के स्थानपर १०३ कर दी गयी। निर्वाचन द्वारा ७९ सदस्य निर्वाचित हुए। दो सदस्य एक्स आफिसियो तथा २२ राज्यपाल द्वारा नियुक्त होते थे। राज्यपालकी कार्यकारिणीके दो मन्त्री सुरक्षित तथा दो मन्त्री हस्तान्तरित विषयोंके लिए होते थे। हस्तान्तरित विषयोंके मन्त्री विधान परिषदके सम्मुख उत्तरदायी होते थे। सुरक्षित विषयोमें सुरक्षा, विधि, प्रशासन, वित्त तथा माल था। हस्तान्तरित विषयोंमें शिक्षा, स्वास्थ, जंगल तथा आवकारी था। भारतीय प्रदेशोमे वम्बईके अतिरिक्त वर्माका जंगल विभाग सवसे अच्छा था।

भारतीय केन्द्रीय असेम्वलीके लिए वर्मासे पॉच सदस्य चुने जाते थे। दक्षिणी वर्माके चीफ कोर्टको हाइकोर्टका पद दे दिया गया। माण्डलेमे जुडिशियल कमिश्नर नियुक्त किया गया। अलग न्याय सेवा विभाग स्थापित किया गया। विधान परिषदमे पीपुल्स दलके २१ सदस्य थे। ऊ वा० पी० दलके नेता थे। ऊ वा० पी० 'सन' समाचारपत्रके सम्पादक थे। सन् १९२३ मे विधान सभाके सदस्य हुए थे। व्रिटेनकी तीन वार राजनीतिक मिशनके साथ यात्रा की थी। सन् १९३०–३२, १९३४–३६ तथा १९३९–४० में वर्माके मन्त्री थे। १९४६ मे कौन्सिल के सदस्य थे। भ्रष्टाचारके अप्रमाणित दोषके कारण वरखास्त किये गये। १९५४ में विद्रोही कार्योके कारण गिरफ्तार किये गये। स्वतन्त्र दल सर मॉगजीके नेतृत्वमे गठित था। उग्रतम राष्ट्र-

वादी दलका नाम ग्राण्ड कौन्सिल बुद्धिस्ट एसोसिएशन अर्थात् जी० बी० बी० ए० था। ऊ चितके नेतृत्वमें कौंसिलोंका बहिष्कार भी किया गया।

राष्ट्रवादी पार्टीके नामसे ऊ बा० पी० के नेतृत्वमें दलने कौंसिलमें प्रवेश किया। इन्हीं दिनों भारतमें भी कांग्रेसमें कौंसिलोंके बहिष्कारकी बातें उठी थीं। महात्माजी बहिष्कारके पक्षमें थे। महात्माजीके जेलमें रहनेके कारण गयामें कांग्रेसमें दो दल हो गये। एकका नाम परिवर्तनवादी तथा दूसरेका अपरिवर्तनवादी था। श्री राजगोपालाचारी उन दिनों अपरिवर्तनवादियोंके नेता थे। कांग्रेससे अलग श्री चितरंजनदास तथा पण्डित मोतीलाल नेहरूने स्वराज्य पार्टी बनायी थी। स्वराज्य पार्टीके ही नामपर कांग्रेसजनोंने कौन्सिलोंमें प्रवेश किया था। ठीक यही बर्माकी नेशनलिस्ट अर्थात् राष्ट्रवादी दलने अदा किया। स्वराज्य पार्टी तुल्य इस दलमें भी प्रारम्भमें विरोधी दलका काम किया। मन्त्रिपद मिलनेपर यह दल जनता अर्थात् पीपुल्स पार्टीमें मिल गया। नेता ऊ बा० पी० ही रहे।

सुधारके पश्चात् जैसे भारतमें सन् १९२३ के बाद हिन्दू मुसलमानोंमें वैमनस्य उत्पन्न किया जाने लगा वही बात साम्राज्यवादी शक्तियोंने भारतीय तथा बर्मा प्रश्न बर्मामें उत्पन्न कर दिया। इसके पूर्व लगभग २५०० वर्षोंतक भारतीय तथा बर्मीके नामसे इस प्रश्नपर विचार ही नहीं किया गया था।

सुधारोंसे बर्माकी कोई खास प्रगति नहीं हुई। यूरोपियन, चीनी तथा भारतीयोंका देश में औद्योगिक एवं व्यवसायी जीवनमें आधिपत्य था। बर्माके रहनेवाले बर्मी थे परन्तु धन यूरोपियनोंका था। ब्रिटिश व्यापारी बर्माके बेताजके बादशाह थे। विधान परिषदें उनके आह लेने तथा कठिनाइयोंको कहनेके लिए साधनमात्र रह गयी थीं।

विधानमें निर्धारित कर दिया गया था कि भारतके समान दस वर्षोंके पश्चात् एक कमीशन नियुक्त किया जायगा। इसी निश्चयके अनुसार साइमन कमीशन आया था।

सुधारोंका स्वाभाविक परिणाम नौकरियोंका बर्मीकरण किया गया।
सरकारी नौकरियोंमें पर्याप्त भारतीय थे। बर्मी शिक्षितवर्गकी भावना भारतके विरुद्ध उभाड़ी गयी। 'नौकरीका बर्मीकरण हो' नारा बुलन्द किया गया। बर्माके वास्तविक शोषक भारतीय हैं। बर्माकी सम्पत्ति भारतमें भेजते हैं। बर्माका धन इस प्रकार बर्मासे बाहर जाना अन्याय एवं जनताके स्वार्थके विरुद्ध है। प्रचार किया गया। बर्माके कन्धोंपर बैठकर भारत समृद्धिशाली हो रहा है। बर्मी केवल भारतके मुखापेक्षी हैं। बर्मी खाने बिना मर रहे हैं। भारतीय लाल होते जा रहे हैं। विदेशियोंके इन प्रचारोंका विरोधी प्रचार भारतीयोंने नहीं किया। विष धीरे-धीरे प्रभाव जमा रहा था।

भारतकी राजनीतिक चेतनाका प्रभाव बर्मापर पड़ा। जागर्ति होने लगी। चेतना बढ़ गई। एकताकी भावाना सुदृढ़ होने लगी। बर्मामें निवास करनेवाले लाखों भारतीयों द्वारा महात्मा गान्धीका सन्देश बर्माके गाँवोंमें कोने-कोनेमें पहुँचने लगा। बर्माकी राष्ट्रीय चेतनाको बल मिला।

अंग्रेज सतर्क हो गये। भारतके आन्दोलनसे परेशान थे। सोचने लगे, भारतके साथ बर्मा भी निकल जायगा। बर्माका तेल तथा उद्योग अनायास भारतीयोंके हाथोंमें जा सकता था।

किसी भी गुलाम देशमें गद्दारोंकी कमी नहीं होती। चाटुकारों की कमी नहीं होती। प्रत्येक युगमें, प्रत्येक देशमें इस प्रकारके चाटुकार मिल जायँगे। शासक वर्ग गद्दारों द्वारा उनके भाइयोंपर अत्याचार करता है। वे उसके साम्राज्य किंवा उपनिवेशवादको सुदृढ़ करनेवाले पुर्जे हो जाते हैं। इन्हीं गद्दारोंके कारण शासनकी बदनामी होती है। असन्तोष बढ़ता है। क्रान्ति होती है। विद्रोहाग्नि भड़क उठती है। बर्मामें भी गद्दार मिले। वे साम्राज्यवादके समर्थक थे। गुलामीके कायल थे। अंग्रेजोंके हाथों बिके थे। कठपुतली थे। 'बर्मामें क्रान्ति हुई। गद्दार सबसे पहले अंग्रेजोंका साथ छोड़कर दूर हो गये।

सन् १९२८ में साइमन कमीशन आया। उसने सिफारिशकी बर्मा

भारतसे अलग कर दिया जाय। बर्मा नेता श्री डा० बा० मा० ने विभाजन-के संकल्पका विरोध किया। कहा जाता है कि इनके पिता अरमीनियन थे। ईसाई कुटुम्बमें पैदा हुए थे। केम्ब्रिजसे डाक्टरेट किया। बैरिस्टर थे। गोलन विद्रोहियोंकी सफाईके वकीलकी हैसियतसे प्रसिद्धि प्राप्त की। सन् १९३४ में मिनिस्टर हुए। बर्माके प्रथम प्रधान मन्त्री हुए। दल संघटित किया। सन् १९४० में नजरबन्द किये गये थे। जापानी सरकारमें बर्माके १९४२ में अदनशिन हुए। सन १९४३-१९४५ तक बर्माके अधिपति थे। सरकार तथा विदेशी व्यापारी तथा उनसे प्रभावित लोगोंने विभाजनका समर्थन किया।

जनता विभाजनके समर्थनसे शंकित हो उठी। विभाजनवादियोंका प्रचार था राजस्वका एक भाग भारतीय केन्द्रीय सरकार ले लेती है। विभाजन होनेपर वह धन विदेशमें न जा सकेगा। आयकर तथा कस्टम करसे बर्माको विशेष आय हो सकती है। प्रदेशीय राजस्वकी अपेक्षा उनके अधिक बढ़नेकी सम्भावना है। इतना ही अलम् होगा किसी देश-को इतनी लचर दलीलके आधारपर खण्डित करना साम्राज्यवादी शोषण-पिपासाका एक ज्वलन्त उदाहरण है। बन्दरबाँटका एक नमूना है।

सन् १८८६ के पश्चात् सबसे बड़ा विद्रोह सन् १९३० में हुआ। उसका नाम 'गैलन' विद्रोह है। सशस्त्र सैनिक संघटनके आधारपर आधारित विद्रोह था। ब्रिटिश सरकारको बाध्य होकर १ ब्रिटिश तथा ५ भारतीय बटालियन हिन्दुस्तानसे विद्रोहको दबानेके लिए बुलाना पड़ा। विद्रोही नेता सन् १९३१ में पकडे गये किन्तु विद्रोह सन् १९३२ तक शान्त नहीं हुआ।

इसे सया विद्रोह भी कहते हैं। सया शान सरदार था। अपनी पाँच रानियोंके साथ राजा घोषित किया गया। राज्याभिषेक हुआ। अनुयायियों-ने गुदना गुदवाया, एक कवच पहनाया गया। कहा गया कि गोलीका उसपर प्रभाव नहीं पड़ेगा। गोली चली तो सब कुछ बेकार साबित हुआ।

सन् १९३० मे भारतीय सत्याग्रह आन्दोलन बड़े पैमानेपर भारतमे आरम्भ हुआ। उसे नमक सत्याग्रह कहते हैं। उन दिनों अंग्रेजोंने हिन्दू मुसलमानोंमे भेद उत्पन्न किया। मुसलमानोको जन आन्दोलनसे अलग रखनेका प्रयास किया गया। उन्हें अनेक सुविधाओंका लोभ दिया गया। बर्मामे भी वही हुआ। बर्मामें कभी साम्प्रदायिक दंगा नहीं हुआ था। बर्मी और भारतीयोंमे भेदनीति बरती गयी। दोनों जातियोंमे दगे होने लगे। चीनवालोंको बर्मी अपना ही हाड़-मास समझते थे। परन्तु १९३० मे उनके भी विरुद्ध हो गये। इस समय बर्मी और गैर बर्मी-का प्रश्न साम्राज्यवादियोने खड़ा कर दिया। नीति यह थी। बर्मी जनता-का ध्यान बॅट जाय और भारतीय आन्दोलन तुल्य बर्मामे भी सत्याग्रह आरम्भ न हो सके।

नाजी जर्मनी फासिस्ट इटली तथा सोवियटके उत्थानके कारण बर्मी युवकोकी दृष्टि उक्त देशोकी ओर उठी। लोकतन्त्रसे जैसे अनास्था होने लगी। बर्माकी छाया विधान परिषद तथा सभाएँ किसी ठोस समस्याका हल न कर सकी थीं। सन् १९३५ मे बर्मा जापान एसोसिएशनका संघटन किया गया। उद्देश्य सांस्कृतिक सम्पर्क बढ़ाना था। श्री यू० सा तथा अन्य प्रसिद्ध बर्मी नेता जापानकी यात्रा करने लगे।

सन् १९३० मे बर्मा सरकारने एक स्मृति-पत्र दिया। सन् १९३१ के नवम्बर तथा जनवरी १९३२ मे लन्दनमे राउण्ड टेबुल कान्फरेन्स हुई। उसमे भारतसे अलग बर्मा-विभाजनकी योजना बनायी गयी। बर्मामे विभाजन विरोधी आन्दोलन प्रबल हो उठा। विभाजन विरोधी लीगकी स्थापना हुई। उसने समस्त बर्मामे विभाजनके विरुद्ध आन्दोलन छेड़ दिया। भारतीय कांग्रेसने भी विभाजन विरोधी प्रस्ताव पास किया।

साम्राज्यवादियोंने मुँहकी खायी

सन् १९३२ में बर्मामें आम चुनाव हुआ। निर्वाचन घोषणामे विभाजनके विरुद्ध बातें दुहरायी गयी थीं। लीगने विभाजनके प्रश्नको निर्वाचनका

आधार बनाया। देशमें निर्वाचन हुआ। बर्मा जातिने अत्यधिक बहुमतसे निश्चय किया कि विभाजन न किया जाय। सिद्धान्त यह रखा गया था कि बर्मा भारतके साथ रहेगा। वह भारतीय संघका सदस्य होगा। इच्छानुसार संघ त्याग भी सकता था।

विभाजनके समर्थकों तथा साम्राज्यवादियोंको धक्का लगा। लोकतन्त्रकी हामी भरनेवाले अंग्रेजोंको जनताके मतकी उपेक्षा करते किंचिन्मात्र भी लज्जा न मालूम हुई। श्री एस० एन० हाजी बर्मा एसेम्बलीके सदस्य थे। राउण्ड टेबुल कान्फरेन्समें भी सदस्यकी हैसियतसे गये थे। उनसे तत्कालीन बहुत-सी बातें मालूम हुईं। उन्होंने आर्थिक शोषक वर्ग तथा साम्राज्य-वादियोंका जो नग्न चित्र हमारे सम्मुख खींचा है उसे सुनकर लोकतन्त्रके हिमायती अंग्रेजोंके प्रति अनायास घृणा उत्पन्न हो जाती है। बर्माका विभाजन केवल अंग्रेजोंकी शोषक नीतिको और अधिक मजबूत बनानेके लिए किया जा रहा था। भारतवासी व्यापारमें सफल थे। बर्मावाले व्यापारसे दूर थे। अतएव भारतसे अलग कर और भारतीयोंको बर्मासे निकालकर दूधका मक्खन और क्रीम स्वयं अंग्रेज खा जाना चाहते थे।

बर्माके विभाजनका रहस्य ब्रिटिश व्यवसायियोंकी जेबमें छिपा था। वे चाहते थे बर्माको मनमाना अकेले चूसना। जनमत तथा देशकी समृद्धिका उन्हें क्षणमात्रके लिए भी ध्यान न रहा। उन्हें भारतीयोंसे ही खतरा था। बर्मावालोंको सरल तथा आलसी समझते थे। उनका निश्चय था कि बर्मावासियोंको वे नियन्त्रित कर सकेंगे।

भारतमें जैसे हिन्दू-मुस्लिम वैमनस्यका बीजारोपण किया गया उसी प्रकार भारत-विरोधी भावना बर्मामें उभाड़ी जाने लगी। अंग्रेजोंने बर्माके जनमतकी उपेक्षा की। भारत और बर्मापर विभाजन लाद दिया गया।

भारतीय विधान १९३५ के भाग १४ तथा अनुसूची १० तथा १५ में विभाजनकी बातें हैं। वही गवर्नमेण्ट आफ बर्मा एक्ट हो गया। परिणाम हुआ कि भारतका शासन भारतीय वायसरायके अन्तर्गत न होकर सीधे पार्लमेण्टसे सम्बन्धित हो गया। भारत मन्त्रीका नया नामकरण

अर्थात् मन्त्री भारत तथा बर्मा हो गया। एकके अन्तर्गत नवीन बर्मा मन्त्रणालय कायम किया गया। गवर्नर अन्तर्देशिक, देशिक, सुरक्षा, मुद्रासम्बन्धित नीति तथा टकसाल शानराज, करेन तथा पहाड़ी कोषोंके लिए स्वयं उत्तरदायी हुआ। अन्य विषयोंपर मन्त्रिमण्डलके सुझावपर कार्य करनेके लिए जिम्मेदार ठहराया गया। साधारण प्रशासनके लिए प्रधान मन्त्री तथा उसके मन्त्रिमण्डलके दस सदस्योंके उत्तरदायी हुए। बर्माका विधान भारतीय संविधान सन् १९३५ की अपेक्षा अधिक पूर्ण स्वराज्यकी ओर कदम उठाता है।

विधान परिषद्को सीनेट तथा प्रतिनिधि सभा अर्थात् हाउस रिप्रजेण्टेटिवका रूप दिया गया। सीनेटके ३६ सदस्य होते थे। उनमे १८ को राज्यपाल नामजद करता था तथा शेष १८ निर्वाचित होते थे। हाउस आफ रिप्रजेण्टेटिव के १३२ सदस्योंमे ९२ का निर्वाचन होता था। शेष विशेष वर्गों एवं तत्त्वोंके प्रतिनिधि होते थे। साक्षर २१ वर्षके प्रत्येक स्त्री अथवा पुरुपको मत देनेका अधिकार था। सुरक्षित विषयोपर भी मन्त्रिमण्डल राज्यपालको सुझाव दे सकता था। मन्त्रिमण्डल आन्तरिक विषयोंमे दोनों सदनोंके सम्मुख उत्तरदायी था ।

विभाजनदल विरोधी नेता डा० वा० माने ब्रिटिश सरकारके विभा-जन स्वीकार कर लेनेपर सिन्येथा दल बनाया। शाब्दिक अर्थ गरीबोंका दल होता है। डा० वा० माके पिता यूरोपियन तथा माँ बर्मी महिला थी। वे बौद्ध है, आज भी जीवित हैं।

प्रथम साधारण निर्वाचन खूब जमकर हुआ। डा०वा०मा० विभाजित बर्माके प्रथम प्रधानमन्त्री हुए। डा० वा० मा० विभाजन विरोधी दलके नेता थे। उनकी प्रसिद्धि १९३० के विद्रोहियोंके सफाई वकीलके रूपमे हुई थी। वह राष्ट्रीय दलके नेता थे।

प्रथम सत्रमे उ०वा०पी० जनतापार्टीके नेता थे। उनके दलमे ६४ सदस्य थे। डा० वा० मा० के व्यक्तिगत समर्थक केवल १५ सदस्य थे। उन्होंने अन्य दलोंसे समझौता कर अपना दल संघटित कर लिया।

देशमे साम्प्रदायिक दंगा हो गया। डा० बा० मा० की सरकारका पतन हुआ। नयी सरकार बनी। उसमें ऊ बा पी तथा एक नवीन अत्यन्त महत्त्वाकांक्षी व्यक्ति ऊ साने प्रवेश किया। वे भी मन्त्रिमण्डलमें लिये गये। वह ऊ बा पीके अनुयायी थे। उनके दलके समाचार पत्रमे काम करते थे। ऊ सा बहुत चतुर तथा उच्चकोटिका चरित्रवान् व्यक्ति नहीं था। जापानी धनकी सहायतासे ऊ बा पीके पत्र 'सन' पर अधिकार कर लिया। उसने एक नया देशभक्त दल म्योचित बनाया। हिंसक आन्दोलन तथा हिंसात्मक कार्यवाही-में विश्वास करता था। वैधानिक आन्दोलनका पूर्ण पक्षपाती नहीं था। अपनेको गैलन ऊ सा कहता था। देशके सम्मुख गैलन-नेताके रूपमे अपनेको पेश करता था। डा० बा० मा० की सरकारने साम्प्रदायिक दंगेके अपराधके कारण उसे सन् १९३८ मे जेलमे बन्द कर दिया। उसपर अभियोग था कि वह विद्रोह उभाड़ता है। स्वयं अधिनायक बनना चाहता है। ऊ सा इतना चतुर था कि अपने पुराने नेता तथा सहयोगी ऊ बा पीको उखाड़ फेंका। कालान्तरमें यूरोपियनोंकी सहायतासे प्रधानमन्त्री बन गया। सन् १९४० में डा० बा० मा० को जेल भेजकर उसने १९३८ की कैदका बदला लिया। सन् १९४०-४२ तक बर्माका प्रधानमन्त्री रहा। १९४१ के अन्तमें ब्रिटेन तथा अमेरिकाकी यात्रा की। लिसबनमें जापानी राजदूतसे सम्बन्ध स्थापित किया। यूगाण्डामे १९४२-४५ तक निर्वासित रहे। सन् १९४६ मे म्योचित दल संघठित किया। ऊ साके साथ जनवरी १९४७ मे लण्डनपर वार किया। ब्रिटिश मन्त्रित्व-का विरोध किया। मन्त्रिमण्डल हत्याकाण्डमें गिरफ्तार हुए। मई सन् १९४८ मे फाँसी दे दी गयी।

बर्मामे भारतीय सर्वत्र मिलेंगे। बर्मामे आकर कोई यह अनुभव नहीं कर सकता कि भारतसे दूर हैं। तीस वर्ष पहले बर्मा भारतका एक प्रदेश था। बर्माके नागरिक भारतके अंग थे। देश एक था। शासन एक था। समस्याएँ एक थीं। बर्मा विधान सभाके प्रस्तावके विरुद्ध बर्मा भारतसे

साम्राज्य एवं पूँजीवादी नीतिके शोषणार्थ अलग कर दिया गया। यथा-स्थान इस विषयपर प्रकाश डालनेका प्रयास किया गया है।

विभाजन-विषपानके कारण कितने भारतीय तबाह हो गये, नष्ट हो गये। कितने ही दीपक बुझ गये इनका आँकड़ा एकत्र करना कठिन है। आधुनिक बर्माके बनानेमें भारतीयोंने अपना खून-पसीना एक किया है। जंगलोंको साफकर लहलहाते खेत बनाये। व्यापार तथा व्यवसायका बर्मामें जाल फैला दिया। ऐसी कोई आबादी नहीं थी, जहाँ भारतीय दूकानदार अथवा उद्योगी न रहा हो। उन्होंने बर्माको भारत तुल्य मातृभूमि समझा। वे ही अब यहाँ बेगाने थे। उनकी दशा देखकर आँखोमे आँसू आ जाते हैं। भारतीयोंकी इस स्थितिके लिए बर्मावासियोंको पूरा दोष नहीं दिया जा सकता।

भारतीय जहाँ भी गये वहाँके जन-जीवनसे मिल न सके। अपनी जातिपाँति, छूआछूतके कारण छोटा-छोटा समुदाय बनाकर अलग रह गये। सामाजिक व्यवहार आदि अलग ही रखा। मैंने वहाँके हिन्दुओंसे पूछा। भगवान् बुद्ध हिन्दुओके अवतार है। पगोडा तथा बुद्ध-मन्दिरोंमें हिन्दू क्यों नहीं जाते? उन्हे अपना देवता, अपना मन्दिर क्यों नहीं समझते? वह एक ऐसा स्थान है जहाँ हिन्दू और बौद्ध मिलकर अपने एक देवकी पूजा कर सकते थे। मिलकर एक हो सकते हैं। सब लोग किंकर्तव्यविमूढ़ जैसे होकर मेरी ओर देखने लगे। हिन्दुओंकी अदूरदर्शिताका सबसे बड़ा प्रमाण है।

मुसलमानोने ठीक उलटा किया। वे जहाँ गये वहाँ मिलनेकी कोशिश की। रोटी-बेटीमे मिल गये। उनका पैर जम गया। हर जगह मसजिदे उठ खड़ी हुई। रंगून, माण्डले आदि सभी नगरोंके प्रमुख स्थानोंमें मसजिदे मिलेगी। मन्दिरोंका दर्शन न होगा।

चीनी एक कदम और आगे थे। वे जहाँ गये वहींके हो गये। चीनी तथा मुसलमानोंमें पारस्परिक जाति अथवा सम्प्रदाय-भेद नहीं है। हिन्दू अपने अगणित जाति, सम्प्रदाय, पंथके साथ चलता है। अतएव वह

अगणित रूपोंमें बिखरा पड़ा है।

अखण्ड भारतकालमें रंगूनकी गणना करांची, बम्बई, मद्रास तथा कलकत्ता जैसे बड़े शहरोंमें होती थी। वह आधुनिकतम शहर था। नवीन ढंगपर बसाया गया था। बर्माका सबसे बड़ा बन्दरगाह है। उक्त पाँचों विशाल नगर बन्दरगाह थे। अपने प्रदेशोंकी राजधानी थे। भारत बर्माका विभाजन १९३७ में हुआ। रंगून प्रदेशके स्थानपर देश किंवा राष्ट्रकी राजधानी हो गया। करांची भी सिन्ध प्रदेशके स्थानपर पाकिस्तान देश अथवा राष्ट्रकी राजधानी हो गया। कलकत्ता, मद्रास, बम्बई पूर्ववत् कायम हैं। बंगालके विभाजनके पश्चात् कलकत्ताकी पुरानी महत्ताको ठेस लगी। मद्रास प्रदेश भी चार भागोंमें बँट गया। वह भी वह नहीं रहा जो पहले था। बम्बईने अवश्य महत्ता प्राप्त की। इस प्रकार भारतके पाँच महानगरियोंने गत ३० वर्षोंमें परिवर्तनोंका सामना किया है। कलकत्ता, बम्बई विशाल नगर हो गये। करांची विभाजनके पश्चात् उद्योग, राजनीति तथा इसलामी सामाजिक जीवनका केन्द्र हो गया। उसकी आशातीत उन्नति हुई है। मद्रास चार टुकड़ोंमें एक टुकड़ेकी राजधानी रह गया। परन्तु व्यापारिक वृद्धिके कारण उदासी नहीं मालूम होती। रंगून सबसे अधिक उदास है। जिन लोगोंने सन् १९३७ में रंगून देखा है वे उसकी आजकी दशापर आँसू बहाते हैं।

रंगूनकी बड़ी तारीफ सुनी थी। नगर-योजनाकी भी तारीफ सुनी थी। सफाईकी कहानियाँ पढ़ी थीं। आज स्थिति बदल गयी है। रंगूनमें वह आकर्षण नहीं रह गया है। अंग्रेज पूँजीपतियोंने अपने निजी स्वार्थके लिए बर्माको भारतसे अलग किया। सोचा था, भारतीय व्यापारियोंका स्थान वे ले लेंगे। भारतीय व्यवसायियोंसे उन्हें खतरा था। रंगूनमें आधीसे अधिक आबादी गैर-बर्मियोंकी थी। उनमें भारतीयोंका बहुमत था। हिन्दुस्तानी रंगून कारपोरेशनके मेयरतक रह चुके हैं। रंगूनका जीवन भारतीय जीवन हो गया था। जनसंख्या तथा व्यापारमें प्रभाव होनेके कारण रंगूनके भाग्यमें उनका हाथ था। अंग्रेजोंके

हाथोंमें तेलोंकी कम्पनियाँ थी। भारतीयोंके हाथोंमें धान, लकड़ी, कपड़े आदिका व्यापार था। तेलके व्यवसायमें भी भारतीय प्रवेश कर रहे थे। बर्माका व्यापार अंग्रेज, भारतीय तथा चीनवालोंके पास था। बर्मा निवासी जैसे निरपेक्ष देखनेवाले थे। देश उनका था, किन्तु उस देशके बनानेमे जैसे उनका कोई हॉथ नही था। चतुर अंग्रेजोने इसे समझा। उन्होंने भारतीय-विरोधी भावना उभाड़ी।

बर्मा भारतका अंग था। बर्मामे भारतीय कांग्रेसकी शाखा थी। आज उसने बर्मा कांग्रेसका रूप ले लिया है। उसका संघटन है। वार्षिक अधिवेशन होता है। भारतीय कांग्रेसके अधिवेशनोमे बर्मावासी सम्मिलित होते रहे। भिक्षु उत्तमा मुझे याद है। उस समयके प्रमुख कांग्रेसकर्त्ता थे। वे मेरे घर ठहर भी चुके थे। बर्मामे मुझे अनेक बर्मी मिले। वे भारतीय कांग्रेसके कार्यकर्ता तथा संघटक रह चुके थे। वे आज भी विभाजनके लिए दुःखी हैं। उनका कहना है कि यदि बर्मा भारतके साथ रहता तो उसकी अधिक उन्नति हुई होती। उसे गृहयुद्धमे भुनना न पड़ता। स्थिति अधिक सुदृढ़ होती। विद्रोह-जर्जरित न हो उठता। उसका उद्योगधन्धा अव्यवस्थित न हो जाता। वह बातें अब बहुत पुरानी हैं। उन्हे दुहरानेसे अब कोई लाभ नहीं है।

बर्मावाले अंग्रेजोंके हाथोमे खेले नहीं वे विभाजनका अन्ततक विरोध करते रहे। विधान सभाने विभाजनकी मॉग ठुकरा दी। अंग्रेज तुले थे विभाजनपर। स्वार्थ-दृष्टिसे विभाजन किया। सन् १९३४ के विधान द्वारा विभाजन स्वीकार किया गया। पहली अप्रैलको बर्मा भारतसे अलग हुआ। पहली अप्रैलको अप्रैलफूल कहते है। अंग्रेजोंने बेवकूफ बनाया बर्मा और भारत दोनोको। अन्तमे स्वयं बेवकूफ बन गये। उन्हें बर्मा छोड़ना पड़ा। भारतसे उनका व्यापारिक सम्बन्ध आज-तक बना है। अंग्रेजी कम्पनियाँ काम करती है। आयात-निर्यात होता है। परन्तु बर्मामें अंग्रेजोंने सब कुछ खोया। देशके साथ सहानुभूति, विश्वास, उद्योग-व्यवसाय आदि सबसे हाथ धो बैठे। बर्मा कामन

वेल्थसे भी अलग हो गया। प्रभुसत्तासम्पन्न वह पहला अंग्रेजी उपनिवेश था जो अंग्रेजोंके मोहका त्याग कर लोकतन्त्र बना। बिना नकेलके वह हो गया आजाद। उन्हे दुलत्ती देता अलग बैठ गया, जिन्होंने अप्रैल फूलके दिन उन्हे फूल बनानेकी कोशिश की थी।

बर्मा नेशनल आर्मी-बर्माकी राष्ट्रभावनाका प्रतीक था। युद्धकालका बर्माका इतिहास विचित्र है। उन्होंने पहले अंग्रेजोंके विरुद्ध हथियार उठाया। निकाल बाहर किया। जापानी आये। उनसे मिले। शासन व्यवस्था हाथमे लिया। उन्हे हारते देखा। उनके विरुद्ध हथियार उठाया। अंग्रेजोंसे मिल गये। जापान पलायित हुआ। अंग्रेजोंसे फिर उलझे। पूर्ण स्वाधीनता ब्रिटिश पार्लमेण्टके एक कानून द्वारा प्राप्त की। कामनवेल्थसे निकले। पूर्ण सत्तासम्पन्न गणतन्त्र राज्य कायम किया। यह कहानी एक जातिकी राजनीतिक बुद्धि तथा उसके चरित्रकी कहानी है। उसे अध्ययन करना बेकार न होगा।

जनरल आंगसान बर्माके राष्ट्रपिता कहे जाते हैं। बर्मा विश्वविद्यालयसे बी० ए० सन् १९३८ मे पास किया था। स्टुडेण्ट यूनियनके मन्त्री थे। सन् १९३९-१९४० दोवामा असि अयोन दलके मन्त्री थे। सन् १९४० मे टोकियो गये। सन् १९४२ में बर्मा स्वातन्त्र्य सेनाके सेनानायक हुए। सन् १९४५-४६ डा० बा मा के मन्त्रिमण्डलमें सुरक्षा मन्त्री हुए। १९४६-४७ तक एण्टी फासिस्ट प्यूपिल्स फ्रीडम लीगके सभापति थे। लन्दनमें बर्माकी ओरसे सन्धि की। जुलाई १९४७ में मन्त्रिमण्डल हत्याकाण्डमे मारे गये। उन्होंने सन् १९४० मे रामगढ़ कांग्रेसमें भाग लिया था। महात्मा गाधी तथा पण्डित जवाहरलाल नेहरूके निकट सम्पर्कमे आये थे। सन् १९३६ मे रंगून विश्वविद्यालयके विद्यार्थी दलके नेता थे। हड़ताल करानेमे अग्रणी थे। तत्पश्चात् दोवामा एशियायोन 'हम बर्मावासी' संघटनके नेता हुए। संघटनके सदस्योंका नाम 'थाकिन' पड़ा। थाकिन शब्द भारतीय स्वामी अथवा मालिक शब्दका समानार्थक है। इस शब्दका प्रयोग बर्मामें यूरोपियनोंके लिए किया जाता था।

सन् १९४० मे 'थाकिन' दलके लगभग ३० थाकिन जापानमे शिक्षा प्राप्त करनेके लिए गये। कुछ पश्चिमी शिक्षाप्राप्त युवकोंने थाकिन संघटन आरम्भ किया था। यूरोपियनोंकी अपने बराबर मानते थे। उनके बराबर हैं। अतएव उनके लिए प्रयुक्त होनेवाले थाकिन शब्दको ही अपना लिया। वर्तमान प्रधान मन्त्री थाकिन ऊ नू उसी दल के हैं। वर्तमान प्रधान मन्त्री थाकिन ऊनूने अपने नामसे थाकिन शब्द हटा दिया है। आजाद होनेके बाद 'श्री'का किसी प्रकार प्रयोग न किया, जाय सब बराबर हैं इसीलिए इसका प्रयोग वर्जित कर दिया है। वर्माके थाकिन जापानके सह-विकासके सिद्धान्तसे प्रभावित थे। देशकी स्वतन्त्रताके लिए जापानी सहायता प्राप्त करनेके विरोधी नहीं थे। कम्युनिज्मकी ओर इसलिए आकर्षित थे कि बर्माके पूँजीपतियोकी शोषण-नीतिसे घृणा हो गयी थी। कम्युनिस्टोकी धर्म-विहीन समाजकी कल्पना करनेमे अपनेको असमर्थ पाते थे। सभी बौद्ध थे। बौद्ध धर्मका उनपर गम्भीर प्रभाव था। युद्धके पूर्व वर्मामे कम्युनिज्म केवल कुछ बुद्धवादियोंका अध्ययन मात्र आकस्मिक था।

युद्ध आरम्भ हुआ। डॉ० बा० मा कारावासमें थे। श्री यू० सा० प्रधान मन्त्री थे। समयका लाभ उठाया। पूर्ण स्वतन्त्रता का आदर्श रखा। अंग्रेजोंसे स्वाधीनता-प्राप्ति निमित्त लन्दन गये। देशके सभी 'थाकिन' गिरफ्तार कर लिए गये। श्री यू० सा० विदेशमे जापानसे सम्बन्ध होनेके सन्देहमे गिरफ्तार कर लिए गये। वे अफरीकाके युगाण्डामे नजरबन्द कर दिये गये। उनके दलके अन्य लोग भी थाकिनोंके साथ जेलोंमें बन्द हो गये। आगसान गिरफ्तारीसे बचते रहे। आगसानसे जापानियोंका विशेष सम्पर्क नहीं था। चीनमे जापानियोंसे आकस्मिक भेट हो गयी। जापानियोंने आमन्त्रित किया। वे अन्य साथियोंके साथ शिक्षा-निमित्त जापान चले गये।

जापानी सेनाने वर्मामें सन् १९४२ मे प्रवेश किया। जापानियोके साथ जनरल आंगसान वर्मा आये। २६ जनवरी सन् १९४२ को स्वतन्त्र

वर्मा सेनाका संघटन हुआ। वर्मा राइफल तथा सशस्त्रादि पुलिसके दलोंको मिलाकर सेना बनायी गयी थी। १३ सितम्बर को इसका नाम-करण नेशनल आर्मी कर दिया गया। इसी समयसे थाकिन ऊ नूका जनरल आगंसान तथा जापानकी ओरसे नियुक्त प्रधानमन्त्री डॉ० बा० माका साथ हुआ। प्रधानमन्त्री थाकिन ऊ नूने थाकिन शब्दका त्याग कर दिया है। वे सन् १९०७ मे पैदा हुए थे। सन् १९२९ मे रंगून विश्वविद्यालयसे बी. ए. पास किया। नेशनल हाई स्कूल पटनाके सुपरिण्टेडेण्ट हुए। अतः कानून पढ़ने विश्वविद्यालयमें आये। सन् सन् १९३५ में स्टुडेण्ट यूनियनके सभापति हुए। सन् १९३७ मे दो बायादल के कोशाध्यक्ष हुए। सन् १९३९ मे चीनसे सद्भावना शिष्ट-मण्डलके साथ गये। सन् १९४० मे कैद कर दिये गये। सन् १९४३-४५ तक 'एण्टी-फासिस्ट पीपुल्स फ्रीडम लीग' के उपसभापति रहे। १९४५-४७ वर्मा संविधान सभाके सभापति रहे। सन् १९४७ में प्रधान-मन्त्री हुए।

जापानी वर्मामे आये तो थाकिन तुन ओकने थाकिनोंका साथ त्याग दिया। जापान भाग गये। वह जापानी प्रशासकीय पद्धतिपर शिक्षित किये गये। जापानियोंने वर्मामे आनेके पश्चात् उसके हाथोंमे प्रशासन दे दिया था। वह चला न सका। जापानियोंने डॉ० बा० मा० कि शक्ति एवं बुद्धिको स्वीकार किया। उन्हींको शासनसूत्र सौंपा।

जनरल आगसान सुरक्षामन्त्री बने। उनके साले थानटुन, परिवहन तथा पूर्ति मन्त्री बने। थानटुन थाकिन दलके सदस्य थे। एक गाँवमें स्कूल-मास्टर थे। भारतीय राष्ट्रीय महासभा रामगढ़में दोआमा दलके प्रतिनिधिकी हैसियतसे भाग लिया था। १९४२-१९४५ तक कृषिमन्त्री थे। सन् १९४५-४६ श्वेतझण्डा-कम्युनिस्टोंके नेता थे। सन् १९४८ में विद्रोही हो गये। ऊ नू भी इस मन्त्रिमण्डलमे थे। जापानियोंने मन्त्रि-मण्डलको स्वीकार किया। मन्त्रिमण्डलमे होते हुए भी जापानी विरोधी मोर्चा बनाया। यही संघटन कालान्तरमें वर्मा नेशनल आर्मी हुआ। बहुत ही गुप्त तथा रहस्यमय ढंगसे संघटित किया गया था। इसी समय

वर्मा एक्सिस विरोधी संघटन द्वारा गुरेला युद्ध आरम्भ किया गया। जापानियोंके विरुद्ध युद्धारम्भ निमित्त तैयारी कर ली गयी थी। फासिस्ट विरोधी संघटन भी किया गया।

जनवरीसे मार्च सन् १९४५ में अंग्रेजोंकी ओरसे वेतारके तारके यन्त्र अर्थात् ट्रान्समीटर और रेडियो हवाई जहाजसे बर्मामें चारों ओर गिरा दिये गये। वह सब कार्य मित्र राष्ट्रोंकी १४वीं सेना जो वर्मामे जापानसे लड़ रही थी, उसके अनजाने हुआ था। केवल लार्ड माउण्ट वेटनको जानकारी थी। मार्च २७ को माउण्टवेटनने स्पष्ट घोषणा की। गुरेला युद्धमे जापानियोंके विरुद्ध सब प्रकारकी सहायता की जायगी। गुरेलामे १६ हजार करेन लोग भर्ती हुए। करेन-गुरेला सैनिकोंने वरमामे १२५०० जापानियोंकी हत्या की थी।

युद्धारम्भ कालमे वर्मी जनताकी सहानुभूति जापानियोके साथ थी। अंग्रेजोका प्रचार था। चीनमे जापानियोने अत्याचार किया है। चीनको पराधीन बना लिया है। वे साम्राज्यवादी हैं आदि बाते वर्मी जनता असत्य समझती थी। बाते हँसकर उड़ा देती थी। भारतमे भी युद्धकालमे यही प्रवृत्ति हो गयी थी। भारत और बर्माकी जनता जापानियोसे स्नेह नहीं करती थी। वह अग्रेजी शासन तथा अत्याचारसे इतना ऊब गयी थी कि अंग्रेजोंके सिवा चाहे जो भी कोई आवे, उसका स्वागत करनेके लिए उतावली वैठी थी।

जापानी फासिज्मके विरुद्ध जब श्री यू० वा० यो प्रचार करते अथवा थाकिन सो और थाकिन टुन भाषण देते तो जनता मिथ्या समझकर मखौल उड़ाती थी। वा चो स्कूलोंके डिप्टी इन्सपेक्टर थे। सन् १९२१ मे नौकरीसे इस्तीफा दे दिया। पत्रकार हुए। केवियन लीगकी स्थापना की। चीनमें बर्मी सद्भावना शिष्टमण्डलके साथ गये। जापानी शासनसे प्रिवी कौंसिलके तथा राज्यपालके परिषद्के सदस्य १९४६-१९४७ मे थे। जुलाई १९४७ मे अन्य मन्त्रियोंके साथ इनकी भी हत्या हुई थी।

थाकिन सो बर्मा ऑयल कम्पनीमे नौकर थे। कम्युनिस्ट थे। सन्

१९४० मे नजरबन्द कर दिये गये। सन् १९४३-४५ में जापानियोके विरुद्ध गुरेला युद्ध संघटित किया। थानट्टुनके विरोधी हो गये। लालझण्डा कम्युनिस्ट होकर मार्च १९४६ में विद्रोही हो गये। आज भी फरार हैं। सन् १९४१ में युद्ध आरम्भ हुआ तो बहुतसे राष्ट्रवादी जेलमें थे। ऊ नू, थाकिन सो, थाकिन क्या सीन, थाकिन वा हिन तथा थाकिन म्या श्विन माण्डले सेन्ट्रल जेलमें थे। यहीं लोकमान्य तिलक, सुभाषचन्द्र वोस आदि रखे गये थे। माण्डले जेलमें लगभग १२०० वन्दियोंके लिए स्थान था। दक्षिणी वर्मासे अंग्रेज हटने लगे। बहुतसे राजनीतिक वन्दियोंको भी अपने साथ लाये। वे सब माण्डले जेलमे रख दिये गये।

जापानी वम-मार वर्मामे वम वरसाने लगे। जनवरी २ सन् १९४२ को मनीला, फरवरी १४ को सिंगापुर तथा मार्च ८ को जावाका पतन हो गया। इसी दिन अंग्रेजोंने रंगून त्याग दिया। मार्च ८ सन् १९४२ को रंगूनका भी पतन हो गया। अप्रैल ३० सन् १९४२ को जापानने लाशियो ले लिया।

जापानियोंका वर्मामे प्रवेश हो गया था। मई मासमें सभी वन्दी छोड़ दिये गये। केवल ३०० राजनीतिक वन्दी माण्डले जेलमें रह गये। चीनी तथा अन्य विदेशियोंने माण्डले त्याग दिया। केवल चीफ जेलर रह गया था। वाध्य होकर जेलका फाटक खोलना पड़ा। राजनीतिक वन्दी भी जहाँ स्थान मिला वहींके लिए रवाना हो गये। पहली मई सन् १९४२ को माण्डलेमें जापानी सेनाने प्रवेश किया। पर्ल हार्बर आक्रमणके ३ मास पश्चात् जापानने वर्मा ले लिया।

पहली अगस्त सन् १९४२ को श्री डा० वा० मा० ने जापानकी छत्रच्छायामें वर्मी मन्त्रिमण्डल संघटित किया। ९ अगस्त सन् १९४२ को भारतने भी 'भारत छोडो' आन्दोलन छेड़ दिया। वर्माकी नव संघटित सरकारमें वर्तमान प्रधानमन्त्री ऊ नू भी थे। इसी समय दोवामा सिन्येथा दल भी संघटित किया गया। केसरिया लाल तथा हरे रंगका तिरंगा

झण्डा बनाया गया। बर्मावासी विश्वास करते थे कि मोरमें सूर्यका रूप है। अतएव पताकामें मोरकी छाप भी लगा दी गयी। बर्मा प्रदेशका राजचिह्न मोर था। वह चिह्न अभीतक भारतीय लोकसभामें लगा है।

बर्मामें जापानी कब्जेको जनताने चकित दृष्टिसे देखा। वह अभिज्ञ थी। उसने विदेशी जापानी सेनाका प्रतिरोध नहीं किया। अंग्रेजोंने बर्मामें ऊपरी शासन किया था। राजनीतिक शासन करनेमें वे असमर्थ थे। जापानके सम्बन्धमें भी यही बात हुई। जापानने सेनाके बलपर बर्मा लिया था। बर्माका सैनिक शासन उनके हाथोंमें था। जनताका सम्बन्ध बर्मी मन्त्रिमण्डलसे था। जापानी शासन तथा जापानियोंके सम्पर्कसे साधारण जनता दूर थी। जापानी बर्मामें अपनी ५५वीं, ३३वीं, १८वीं तथा ५६वीं डिवीजन लाये थे। जापानी सैनिकोंकी संख्या बर्मामें १९४२ में ५० से ७५ हजारतक रही होगी।

जापानियोंने प्रतिज्ञा की थी कि जापानी अधिकार बर्मापर हो जानेके पश्चात् र्माको पूर्ण स्वतन्त्रता दी जायगी। एक संविधानसभा संविधान बनानेके लिए आयोजित की जायगी। एक समिति संविधान निमित्त बनायी गयी। उसमें अधिकतर जापानी लोग थे। इस समय बर्मामें ओस्का जापानी सैनिक शासनमें गृह विभागका प्रधान था। उसे सफल न होते देखकर जापान एक नवीन व्यक्तिकी खोजमें था। डा० बा० मा० के अनेक मित्र जापानमें थे। डा० बा० मा० के हाथोंमें शासनसूत्र आया। बर्माके जापानियोंने उन्हें जब हटाना भी चाहा तो उनके जापानी मित्रोंके कारण न हटा सके। श्री डा० बा० मा० चतुर देशभक्त थे। उन्होंने अवसरका उपयोग बर्माको पूर्ण स्वतन्त्र बनाने की योजनामें लगाया!

सिंगापुरमें जनरल तोजो आये थे। श्री डा० बा०मा० ऊ नूके साथ उनसे मिलने गये। उस समय श्री सुभाषचन्द्र बोस भी उपस्थित थे। तोजो चाहते थे कि शान प्रदेशका दो भाग थाईलैण्डको दे दिया जाय। बर्मा लौटनेपर डा० बा० मा० अधिपति अर्थात् बर्माके डिक्टेटर नियुक्त

किये गये। अधिपति संस्कृत पाली शब्द है। श्री ऊ नू वैदेशिक मन्त्री हुए। इसी समय निम्नलिखित तीन अध्यादेश जारी किये गये—

(१) वर्मामे केवल बर्मी नागरिक ही सम्पत्ति अथवा जायदाद रख सकता है।

(२) बर्मामे कोई भी विदेशी कम्पनी न तो बन सकती है और न काम कर सकती है जिसका ६० प्रतिशत मूलधन वर्मी न हो।

(३) यदि कोई बर्मी स्त्री विदेशीसे विवाह करेगी तो बौद्ध धर्म उनपर लागू होगा। उसे पति तथा पत्नी दोनोंको मानना पड़ेगा।

जनरल विनगेट बर्मामे गुरेला युद्ध संचालक जापानी अधिकृत बर्माके लिए फरवरी सन् १९४३ में नियुक्त हुए। जनरल विनगेटकी मृत्यु हवाई जहाज की दुर्घटनामें सन् १९४४, मार्च २४ को हो गयी। आजाद हिन्द फौजने श्री सुभाषचन्द्र बोसके नेतृत्वमे मणिपुरपर आक्रमण किया। जापान इस स्थितिमे न था कि हवाई जहाज तथा यन्त्रीय साधनोंसे सहायता करता। आजाद हिन्द फौजने 'दिल्ली चलो' का नारा लगाया। फौज कोहिमासे आगे न बढ़ सकी। जनरल स्टिलवेलने ३ अगस्त सन् १९४४ को म्येटकेनियापर चीनी कचेन, करेनत था अमेरिकन सैनिकोंकी सहायतासे अधिकार कर लिया। जनवरी ५ को अंग्रेजोंने अकयाब ले लिया। ८ मार्च सन् १९४५ को १९वीं भारतीय डिवीजनके टैंकने माण्डलेमें प्रवेश किया। २० मार्च सन् १९४५ में ही १४वीं सेनाके सेनापति जनरल स्लिमने फोर्ट डफरिनपर पुनः यूनियन जैक फहराया। २ मई सन् १९४५ को अंग्रेजोंने रंगून ले लिया।

वर्मामे प्रतिरोधात्मक आन्दोलन जापानके वर्मा-प्रवेशके साथ ही आरम्भ हो गया था। करेन तथा वर्मी लोगोंमे समझौता हो चुका था। जनरल आगसेन तथा थाकिन थान टुनने दोनों जातियोंको मिलानेका बहुत प्रयास किया। उन्होंने स्पष्ट दृष्टिकोण रखा। वर्मा इतना समृद्धिशाली है कि १६,००,००० करेन, कचेन, शान, चिन्स, आदिको पर्याप्त खाना-कपड़ा मिल सकता है। वर्माकी कम्युनिस्ट पार्टीने भारतीय कम्युनिस्ट

पार्टीसे भी सम्पर्क स्थापित किया। थाकिन तिनको थाकिन थानटुनने भारतमें इस कार्यके लिए भेजा।

बर्मा सुरक्षा सेना बहुत ही अच्छे ढंगसे क्रान्तिकारी सेनासे मिला दी गयी। जापानियोंके विरुद्ध १९४५ के आरम्भमें ही अभियान एक प्रकारसे आरम्भ कर दिया गया था।

जापानके विरुद्ध वे ही बर्मी थे जो थाकिन दलके थे। दलमें कम्युनिस्ट भी थे। उनमें कुछ जापानके आते ही फरार हो गये। गुरेला-युद्ध करने लगे। नोटिस आदि बाँटना आरम्भ किया। ब्रिटिश सैनिक प्रशासन तथा भारतीय कम्युनिस्ट पार्टीसे सम्बन्ध स्थापित कर लिया। बर्मामें कम्युनिस्टोंकी कार्यप्रणाली वही रही जो भारतमें थी। जापान, जर्मनी तथा इटली के विरुद्ध जनवादी मोर्चा स्थापित किया।

करेनोंमें २० प्रतिशत जनता इसाई धर्म स्वीकार कर चुकी थी। उनके पादरियोंने उन्हें शिक्षा दी। जापानी मूर्तिपूजक हैं। वे बौद्ध हैं। विधर्मी हैं। उनका साथ देना अपने धर्मके साथ विश्वासघात करना होगा। सन् १८८६ के विद्रोहके समय भी बर्मी पादरियोंने बर्मा सरकार-पर जोर दिया था। करेन इसाई बर्मावालोंको दबानेके लिए फौजमें भरती किये जायँ। इस नीतिको बर्मामें अँग्रेजी शासनने अपनाया। करेन बर्मी सेना तथा पुलिसमें भरती किये जाने लगे। उनकी संख्या इन दोनों विभागोंमें अनुपाततः अधिक थी। बर्मी लोगोंके लिए उनका द्वार एक प्रकारसे बन्द था। करेनोंकी प्रवृत्ति ब्रिटिश-समर्थनकी थी। जापानने बर्मापर जिस समय आक्रमण किया उसी समय बर्मावालोंको उनकी स्वामिभक्तिपर सन्देह हो गया था।

जनरल आगसान बर्मा स्वतन्त्र सेनाके सेनापति थे। उनके साथ थानटुन कम्युनिस्ट नेता भी थे। जापानकी प्रतिज्ञापर कि वे बर्माको पूर्ण स्वतन्त्र कर देंगे, सन्देह हो गया। थानटुन तथा अन्य कम्युनिस्ट नेताओंने स्वतन्त्र सेनाको जापानसे विद्रोह करनेके लिए उभाड़ा। उसे जनरल आंगसानके अन्तर्गत सुरक्षा सेनाका रूप दे दिया गया।

सन् १९४४ के अगस्तमें गुप्त सभाएँ होने लगीं। प्रतिरोधात्मक आन्दोलन तथा सेनाका संघटन किया जाने लगा। फरवरी १९४५में जब अंग्रेजी फौज विजय करती वर्मामें बढ़ने लगी तो जनरल आंगसान तथा सेनाका भी दृष्टिकोण बदल गया। वे जापानियोंके विरुद्ध खड़े हो गये। वर्मा सरकार जापानियोंके साथ पीछे हटने लगी। अगस्त सन् १९४५ में डा० वा० मा ने ऊ नूसे यह रहस्य बता दिया था कि दूसरे दिन जापान आत्मसमर्पण करेगा।

जापानने वर्मा त्याग किया। अधिपति डा० वा० मा० जापानियोंके साथ स्याम चले गये। अक्तूबर सन् १९४५ में जापानियोसे वर्मा खाली हो गया। सिविल प्रशासन देशमें स्थापित हो गया। वर्माके प्रधानमन्त्री ऊ नूने युद्धकालीन घटनाओंपर 'वर्मा' नामक पुस्तक लिखी है। उससे इस समयकी स्थितिपर अच्छा प्रकाश पड़ता है। उसका ऐतिहासिक महत्त्व है। रंगूनमें १५ जूनको विजय परेड हुई। यूनियन जैकके साथ ही साथ फासिस्ट विरोधी संघटन ए० एफ० ओ०का लाल झण्डा एक श्वेत ताराके चिह्नके साथ फहराया गया।

मई १७ सन् १९४५ को अंग्रेजोंने घोषित किया। उनका उद्देश्य कामनवेल्थके अन्दर वर्माको पूर्ण स्वतन्त्रता प्रदान करनेका है। जिस समय-तक यह कार्य पूरा न हो जायगा १९३७ के आधारपर आधारित शासन-सूत्र चलता रहेगा। वर्माके लोग संविधान बनायेंगे। संविधान ब्रिटिश पार्लमेण्ट स्वीकृत करेगी। ब्रिटेन तथा वर्माके बीच उलझी समस्याएँ सन्धि-पत्रों द्वारा हल की जायगी।

जनरल आगसान तथा उनके दलका प्रारम्भसे ही उद्देश्यपूर्ण स्वतन्त्रता था। औपनिवेशिक स्वराज्यके वे विरोधी थे। ब्रिटेनकी नियत-पर विश्वास नहीं था। उन्हे भय था। युद्धोपरान्त ब्रिटेनका आर्थिक, राजनीतिक स्वार्थ अपने नग्नरूपमें पुनः वापस आ सकता है। आजादीके पश्चात् भी वर्मा अंग्रेजोंका आर्थिक गुलाम रह सकता है।

आंगसानके दलको बर्माके ब्रिटिश राज्यपालने मन्त्रिमण्डल संघटित करनेके लिए कहा। तो दलने दो शर्तें रखीं। मन्त्रिमण्डलमें दलका बहुमत होगा। उन्हे अधिकार होगा, दलके उच्च परिषद्से नीतिके सम्बन्धमे आदेश लेते रहे। राज्यपालने शर्तें नहीं मानीं। वे विरोध-पक्षमे हो गये।

बर्माकी इस समय बुरी अवस्था थी। जापानने अपनी मुद्रा चलायी थी। अंग्रेजोंने उसे गैरकानूनी करार दे दिया। जनतामे असन्तोष व्याप्त हो गया। समयका लाभ उठाकर कम्युनिस्ट सक्रिय हो गये। बर्मा सरकार विद्रोह किंवा आन्दोलन दबानेकी तैयारी करने लगी। राज्यपाल श्री डोरमन स्मिथने प्रयास किया कि 'बर्मा एण्ट-फासिस्ट पीपुल्स फ्रीडम लीग' के विरुद्ध दल खड़ा किया जाय। उन्हें सफलता न मिली। कुछ थोड़ेसे गद्दार तथा अमनसभाई आये। उनका जनतामे कोई महत्त्व नहीं था।

राज्यपाल श्री डोरमन स्मिथकी नीति असफल हुई। भारत तथा बर्मा-मे समान नीति अपनायी गयी। भारत तथा बर्मा, दोनों स्थानोंपर प्रक्रिया-वादी पोषकतत्त्वोंको सब प्रकारसे उभाड़ा गया। भारतमे मुसलिम लीग अंग्रेजोंके हाथोंमे खेल गई। बर्मामे नीति असफल हुई। भारतीय वाइसराय लार्ड वावेलके समान राज्यपाल श्री डोरमन स्मिथ भी वापस बुला लिये गये।

अगस्त सन् १९४६ मे बर्माके सैनिक राज्यपाल सर हरबर्ट रेन्स श्री डोरमन स्मिथके स्थानपर राज्यपाल हुए। बर्मा उनसे सहानुभूति रखते थे। इस सद्भावनाका लाभ उठाकर ब्रिटिश सरकार बरमी समस्याको सुलझाना चाहती थी। भारतके समान बर्मामे भी समझौतेकी नीति ग्रहण की गयी। फल भी अच्छा हुआ। राज्यपालके जनरल आगसानकी शर्तोंको मान लिया। फासिस्ट विरोधी संघटनके सदस्य सभी सरकारी नौकरियो तथा स्थानोंपर मौजूद थे। एक प्रकारकी समानान्तर सरकार कायम हो गयी थी। अक्तूबर सन् १९४६मे जनरल आंगसान मन्त्रिमण्डल बनाने-

के लिए आमन्त्रित किये गये।

आगसानने मन्त्रिमण्डलमे कम्युनिस्ट पार्टीको स्थान नहीं दिया। ब्रिटेन तथा अमेरिकाकी नीति युद्धसमाप्तिके पश्चात् रूस-विरोधी हो गयी थी। जनरल आंगसानकी कम्युनिस्ट विरोधी नीतिसे अंग्रेज प्रभावित हुए। जनवरी सन् १९४७ मे आंगसान तथा उनके दलको लण्डनमें ब्रिटिश सरकारने निमन्त्रित किया कि उद्देश्यपूर्ण स्वाधीनताके रूपको अन्तिम रूप दिया जा सके। ब्रिटेनकी मजदूर सरकारकी उदार नीतिके कारण बर्मा तथा ब्रिटेनने मिलकर समस्या हल कर ली।

निश्चय हुआ कि वर्तमान मन्त्रिमण्डलको सुरक्षा तथा पूरे बजटका भी अधिकार दे दिया जाय। आगामी अप्रैल सन् १९४७ में साधारण निर्वाचन कराया जाय। जनमतके आधारपर जो संविधान प्रस्तुत किया जायगा उसे ब्रिटिश पार्लमेण्ट स्वीकार कर लेगी। बर्मी शिष्टमण्डलके दो सदस्य भूतपूर्व प्रधान मन्त्री श्री यू० सा० तथा श्री वा० सीनने सन्धिका विरोध किया। उन्हे अंग्रेजोंकी नीयतपर विश्वास नही था। जनरल आंगसान लेबर सरकारपर अविश्वास करनेका कोई कारण नही समझते थे। वा० सीन थाकिन दलके सदस्य थे। रगून विश्वविद्यालयमे शिक्षा प्राप्त की थी। स्टूडेण्ट यूनियनके सन् १९३०–३१ मे सभापति थे। उन्हे 'गान्धी' सीन भी कहा जाता है। दोवामा असी अयोन दलकी स्थापना की। सन् १९३९ में भारत आये थे। कहा जाता है कि उनका भारतीय हिन्दू महासभासे निकट सम्बन्ध था। सन् १९४० में जापान जानेके प्रयासमे गिरफ्तार कर लिये गये। जापानी शासनमे मंचकुओंमे बर्माके राजदूत नियुक्त किये गये। गिरफ्तार किये गये। पुनः छोड़े गये। सन् १९४५ मे बर्मा राज्यपालकी परिषदके सदस्य नियुक्त हुए। जनरल आंगसानके साथ १९४७ में लन्दन गये। ब्रिटेनके साथ हुए सन्धिपत्रपर हस्ताक्षर करनेसे इन्कार कर दिया। गिरफ्तार कर लिये गये। वर्मोने लोकतन्त्रीय दलकी स्थापना की।

निश्चयमें ब्रिटिश सरकारने करेन, शान, कचिन तथा चिन्सके स्वार्थो-

की रक्षाकी बात रखी थी। इस प्रकार विभिन्न स्वार्थोंकी बात गौण-रूपसे निश्चयमे आ गयी थी। उसने उक्त जातियोंकी भावना उत्पन्न की। उनकी सुरक्षाका भार केवल बर्मा ही नहीं, ब्रिटेनने भी स्वीकार कर रखा है। बर्माके एकीकरणके साथ ही साथ विघटनका भी बीज प्रक्षिप्त रूपसे बो दिया गया।

साधारण निर्वाचनमे जनरल आगसानका दल पूर्णतया विजयी हुआ। करेनोंको सन्तोप नहीं हुआ। उन्होंने स्वतन्त्र राज्यकी माँग की। भारतीय नागाओंके समान वे भी स्वतन्त्र राज्यकी कल्पना करने लगे। आंगसान इस समस्याका शायद हल भी कर लेते। परन्तु १९ जुलाई सन् १९४७ का भयंकर दिन उपस्थित हो गया।

मन्त्रिमण्डलकी बैठक हो रही थी। जनरल आगसान तथा ६ मन्त्रिमण्डलके सदस्य उपस्थित थे। मैने रंगूनमें इस हत्या-स्थानको देखा है। वहाँ बाहरी व्यक्तिके लिए प्रवेश पाना बहुत कठिन नहीं है। भूतपूर्व प्रधानमन्त्री यू० सा० के साथी कुछ हत्यारे सशस्त्र मन्त्रिमण्डलके कमरेमे घुस आये। गोली चली। सभी उपस्थित लोग मारे गये। इन महान् बर्मी वीरोंकी समाधि सादी चौखुटी एक ही स्थानपर बनी है। विदेशी पर्यटक महात्मा गान्धीके राजघाटके दाहस्थान तुल्य यहाँ भी तीर्थस्थान मानकर आते हैं।

ऊ नू उन दिनों संविधान सभाके अध्यक्ष थे। वे प्रधान मन्त्री बने। अप्रैलमें चुने जन-प्रतिनिधियोंने संविधान बनाया। २४ सितम्बर सन् १९४७ को संविधान सर्वसम्मतिसे स्वीकृत हुआ। उद्देश्य प्रभुसत्ता-सम्पन्न पूर्ण गणतन्त्र घोषित किया गया था। मध्य अक्टूबर सन् १९४७ मे ऊ नू लन्दन गये। उन्होंने कामनवेल्थसे अलग होनेका भी प्रस्ताव रखा। अक्टूबर सन् १९४७ को ब्रिटेनकी ओरसे प्रधानमन्त्री एटली तथा बर्माकी ओरसे प्रधानमन्त्री ऊ नूने बर्माके पूर्णप्रभुसत्ता-सम्पन्न राष्ट्रको स्वीकार किया। ब्रिटिश पार्लमेण्टने संविधान १० दिसम्बर सन् १९४७ को मंजूर किया। ४ जनवरी सन् १९४८ को बर्माके अन्तिम ब्रिटिश

राज्यपाल हर्बर्ट रेन्सने बाकायदा सत्ता बर्मा गणतन्त्रके प्रथम राष्ट्रपति शान सरदार श्री सूस्वे थाइकको हस्तान्तरित कर दी। नू-एटली समझौता पूर्णतया कार्यान्वित हो गया। बासठ बरसकी पराधीनताके पश्चात् बर्मा पुनः आजादीकी साँस लेने लगा।

प्रथम राष्ट्रपति श्री स्वे थाइक सन् १८९६ में पैदा हुए थे। यह शान है। प्रथम विश्वयुद्धमें बर्मा राइफलमें थे, सन् १९२३ तक उसमें काम किया। सन् १९२९ में यान्गहेके सखा नियुक्त हुए। बर्मा सेनामें सन् १९४०-१९४७ तक महत्त्वपूर्ण भाग लिया। फरवरी १९४७ के यंगलीग सम्मेलनमें भाग लिया। ऊ नूके पश्चात् संविधान सभाके अध्यक्ष हुए। सन् १९४८-१९५२ तक बर्माके प्रथम राष्ट्रपतिके रूपमें कार्य किया। बर्मामें राष्ट्रपति केवल एक बार और एक सालके लिए कोई चुना जाता है। चेम्बर ऑफ नेशनेलिटीजके अध्यक्ष १९५२ से हैं।

बर्मा अभीतक गृहयुद्धसे जर्जरित है। हम लोग जिस समय बर्मामें पहुँचे, चारों ओर यही हल्ला था कि कब क्या होगा कहना कठिन है। रंगूनसे चालीस मील दूर विद्रोहियोंका आतंक था। सड़कोंपर हम जाते थे। तार तथा तारके खम्भे टूटे मिलते थे। अनेक स्थानोंपर आर्म्ड कारें टूटी-फूटी मिलीं। जापान तथा अंग्रेजोंने जो हथियार छोड़े तथा बाँटे थे उनसे पूरा बर्मा ही मेगजीन हो गया था। भारतमें नागाओंके पास भी इसी प्रकार शस्त्रास्त्र मिले थे। बर्मा सरकारके पास जीपें तथा बहुतसे ट्रक युद्धकालके ही छोड़े हुए थे। उनका उपयोग अभी-तक हो रहा था।

कहा जा चुका है कि सोवियट रूसके युद्धमें प्रवेशके साथ ही कम्युनिस्टोंने युद्धका रूप जनवादी युद्ध दे दिया था। वे रूसकी जीत चाहते थे। रूसकी जीतका अर्थ जापानकी हार था। जापान तथा रूसके बीच युद्ध-घोषणा युद्धके प्रथम चरणमें नहीं हुई थी। जर्मनीके पराभवके साथ ही रूसने जापानके विरुद्ध युद्धघोषणा कर दी। कम्युनिस्ट बर्मामें जापानियोंके विरुद्ध सशस्त्र खड़े होनेमें न हिचके।

गृहयुद्धका आरम्भ धार्मिक एवं राजनीतिक, दोनों ही सिद्धान्तोंके आधारपर हुआ। भारत-पाकिस्तान विभाजनसे अराकानमे रहनेवाले मुसलमानोंकी हिम्मत बढी। पूर्वी पाकिस्तानकी सीमापर होनेके कारण उन्हे पाकिस्तानी मुसलमानोंसे मिलने तथा सहायता पानेका विश्वास था। अलग प्रदेशकी माँग थी। वे मुजाहिद कहलाये। उन्हें विश्वास था कि भारतकी तरह बर्मा भी उनकी बात मान लेगा। देशका विभाजन होगा। पाकिस्तानके समान बर्मामें भी उन्हे एक देश प्राप्त हो जायगा। मूर्ति-पूजक बर्मावालोंसे निजात मिलेगी। सशस्त्र विद्रोह बर्माके विरुद्ध आरम्भ किया। बर्मा उनसे डरा नहीं। बल्कि मुकाबला करनेके लिए डट गया।

बर्मामें एक बड़ी तादाद जहराबदी मुसलमानों की है। उनके पिता भारतीय मुख्यतया पूर्वपाकिस्तानी होते थे। वे बर्मामें काम करने आते थे। बर्मी स्त्रियोंसे शादी कर लेते थे। लड़का होता था। उसका खतना कराते थे। उनमे मुसलिम धार्मिकता कूट-कूटकर भर देनेसे बौद्धोंके प्रति स्वाभाविक घृणा उत्पन्न हो जाती थी। हिन्दू विवाह करते नहीं थे। अगर करते भी थे तो अधिक सफल नहीं होता था। बर्मी स्त्री भारतमें लाकर जात-पाँतसे अलग होना पसन्द नहीं करते थे। मुसलमानों-के सामने यह समस्या थी ही नहीं। हिन्दू विवाहसे बर्मी स्त्री द्वारा उत्पन्न कन्या अपने पिताकी जातिमे स्थान न पा सकती थी। मुसलमान बढ़ते गये। उनकी तादाद बढ़ती गयी। बर्मामे ही अपने लिए एक देश बनानेकी कल्पना करने लगे।

बर्मा सरकारने विद्रोहियोंको मौका दिया कि हथियार रख दें। विद्रोहियों ने कुछ ध्यान नहीं दिया।

कम्युनिस्टोंमे दो दल हो गये थे। लाल झण्डा तथा श्वेत झण्डा-वाले कम्युनिस्ट कहे जाने लगे। श्वेत झण्डावाले कम्युनिस्टोंके नेता श्री एच० एन० घोषाल थे। श्री घोषाल भारतीय जन्मना बंगाली है। उनका जीवनयापन बर्मामें हुआ है। उन्हें थाकिन बातिन भी कहते हैं। भारतीय कम्युनिस्ट पार्टीके भी सदस्य थे। इस समय फरार हैं। १८ फरवरी सन्

१९४८ को कम्युनिस्ट दलके केन्द्रीय कौन्सिलने सिद्धान्त(थीसिस) स्वीकार किया कि वर्तमान सरकार साम्राज्यवादियोंकी कठपुतलीमात्र है। इसीसे सरकारको उलटनेका सिद्धान्त मान लिया गया। २५ मार्च को कम्युनिस्टोंकी गिरफ्तारीका आदेश वर्मा सरकारने जारी किया। पी०वी० ओने लाल, श्वेत कम्युनिस्ट, समाजवादी आदि दलोंमें समझौता करनेका भी सुझाव आया। विरोधी दल मिलकर संयुक्त मोर्चा वनाते। प्रयास असफल रहा। मार्च २७ आया। कम्युनिस्टोंने प्रतिरोध दिवस मनाया। सरकार गिरफ्तारी करनेपर तुल गयी। श्री थानटुन फरार हो गये। उनके साथ २५,००० अनुयायी थे। सरकारके पास इस समय केवल ६ बटालियन करेन तथा कम्युनिस्टोंकी थी। कम्युनिस्टोंका विद्रोह पेगू मिंग्यांग तथा वसीन डेल्टा में फैला।

करेनोंने अच्छा मौका देखा। विद्रोह किया। पापुनमें आन्दोलन जोर पकड़ने लगा अगस्तमें थाटन तथा मौलमीन करेनोंने ले लिये। करेनोंको भरोसा दिया गया कि अंग्रेज उन्हें सहायता देंगे। 'डेलीमेल' अखबार रंगूनके श्री अलेक्जेण्डर कैम्पबेल तथा कलकत्ताके लेफ्टिनेन्ट कर्नल श्री जे० सी० तुलौक एम० सी०, दोनों ही १३६ सेनामें रह चुके थे। करेन-विद्रोहके पीछे उनका हाथ था। देशसे निर्वासित कर दिये गये। करेन संघटनका नाम करेन राष्ट्रीय सुरक्षा संघटन था। करेनोंमें साम्प्रदायिक भावना भर दी गयी। उनके सामने हजरत मूसाका नकशा खींचा गया। वारवलकी गाथा याद दिलाई गयी। कैसे मूसाने मूर्तिपूजक मिस्रियोंसे इसराइल जातिको स्वतन्त्र किया। सन् १९४९ तक करेनोंने वसीन, इनसीन, मेम्यो, माण्डले, तौंजी, लेशियो तथा नामखान और सन् १९५० में पंतनौ, यान्मे, नांग्लेविन, तांगू, लोका ले लिया।

कम्युनिस्टोंने सन् १९४९ मे हेनजादा थारवाड्डी, यमथेन तथा सन् १९५० मे प्यिन्मना तथा पकोकूपर अधिकार कर लिया।

पी० वी० ओके साथ कुछ सेनाने भी विद्रोह किया था। उनका संयुक्त मोर्चा था। उन्होंने सन् १९४९ में येनाग्येनांग, चौक, कौकप्यू तथा

१९५० मे प्रोम, थायत्यमो, मगवे, मिनबू, सन्दोवे ले लिया।

मुजाहिदोंने कम्युनिस्टोंकी सहायतासे रथेडौंग तथा बुथीडौंग, दोनोंपर सन् १९५० मे आधिपत्य स्थापित कर लिया था।

यह केवल बर्मा सरकारके विरुद्ध ही अभियान नहीं था, बल्कि विद्रोही दल आपसमें भी उलझ जाता था। परस्पर सन्धि करता था। फरवरी सन् १९५४ में मुजाहिदों तथा पी. यू. वी. ओंने परस्पर अनाक्रमण-सन्धि की थी।

सन् १९५३ में बर्माके सामने एक और विषम समस्या उपस्थित हो गयी। चाँग काई शेकके पतनके पश्चात् के. एम. टी. सैनिक पूर्णतया चीनसे भाग नहीं सके थे। वे बर्मामे चले आये। बर्माके पूर्वी सीमान्त क्षेत्रमें रहने लगे। संघटित सेना थी। उन्होंने लगभग १२ नगरोंपर अधिकार कर लिया। सन् १९५३ मे उनके हाथोमे थाकिलेक, क्वांगतुंग, मागला, मागपुंग, मांगपिन, वानसाला, मागलन, मूसे, म्यूखोक, यांगह्वे, लाक्का ले लिया। करेनोंने माइशी, पापुन, लेगबू तथा खैरिक ले लिया। मई सन् १९५४ में मुजाहिदो तथा पी० यू० वो० की अनाक्रमण-सन्धि समाप्त हो गयी। मई सन् १९५४ मे मुजाहिदोंका नेता कासिम पाकिस्तान सरकार द्वारा पकड़ा गया। वह माझी था। उसे भरोसा था कि पाकिस्तान मदद करेगा। पाकिस्तान इस समय स्वयं परेशानीमें था। अन्तरराष्ट्रीय घटनाओंने कासिमको पकड़नेके लिए पाकिस्तानको बाध्य कर दिया। कासिम पकड़कर चटगॉव जेल भेज दिया गया। नवम्बरमें बर्मी सेनाने मुजाहिदोंपर आक्रमण किया। उनके जेहादकी कल्पना समाप्त हो गयी।

सन् १९५५ में बर्मा-सेनाने पूरी शक्तिके साथ करेनों तथा के. एम. टी. के विरुद्ध मोर्चेबन्दी की। भीषण युद्ध हुआ। सात वर्षोंके पश्चात् पापुन बर्माके हाथोंमें आया। करेन जंगलोमे भाग गये। के. एम. टी का नाश हो गया। जो बचे थे उन्होंने बर्मा त्याग दिया।

सन् १९५६ में हम बर्मामें थे। विद्रोहियोंका आतंक उस समयतक

छाया हुआ था। देशकी सारी शक्ति अपने भाइयोंको दबानेमें लगी थी। बर्मामें चलना कठिन था। जनता विद्रोही सरकार तथा बर्मा सरकार, दोनोंको कर देती थी। सारा व्यापार एवं व्यवसाय अस्त-व्यस्त हो गया था। रंगून-माण्डले रेल एशियामें अपनी गतिके लिए प्रसिद्ध थी। परन्तु अब वह १२ घण्टेके स्थानपर चार दिनमें रंगूनसे माण्डले पहुँचती थी। रातमें रेल चलती ही नहीं थी। रेलवे लाइन उलट देना, लोगोंको लूट लेना, सामान्य घटनाएँ थीं। स्टीमरोंपर भी विद्रोही चलते थे। जहाजका जहाज लूट लेते थे। भारत सरकारने कुछ सामान बर्मा सरकारके लिए भेजा था। वह पड़ गया विद्रोहियोंके हाथ। बर्मा जैसा सुन्दर देश उजड़ गया था। चारों ओर घबराहट तथा अशान्ति मालूम होती थी। इस समय बर्मामें शान्तिके बादल पुनः उमड़ते नजर आ रहे हैं।

मलाया

मलाया-दर्शन

कवियोंके छन्दोबद्ध पद्योंके मलयानिल, भारतीय वाङ्मयके सुरभित चिर वसन्त, रीतिकाव्यकी मलय सुन्दरीकी कल्पनासे भी कहीं अधिक सुन्दर मलयभूमि है। उषाकालीन नक्षत्रो तुल्य कवियोंकी कल्पना मलिन होते-होते लोप हो सकती है। लेखकोकी उड़ान गिरते वायुयान तुल्य ढलती दिखाई दे सकती है, किन्तु मलयकी हरियाली, उसकी वनस्थली, उसका निविड़ सुरम्य कानन किसी चम्पक कलिकाकी हलकी मुस्कानसे भी अधिक आकर्षक है।

ऑखे थक जायॅगी। दृश्यावलीकी अनुपम शोभा बढ़ती रहेगी। मलय-दर्शन 'शोभा-यात्रा' है। इस यात्राकी कामनामे ही एक रस है। उस रसका मै पान करने चला।

उस रससे भी एक रस अधिक आह्लादकारी है। वह रस अब सूख गया है। लेकिन सूखे रसकी भी याद रहती है। यदि कवि रसका दर्शन न कर शब्दोमे रस ढाल सकता है तो उन पर्वतोसे, उन लहरोसे, उस स्वच्छ नीलाम्बरसे उस रसकी कहानी सुनना रुचिकर होगा।

इस रसकी धारा कहीं-न-कहींसे चली थी। वह आयी थी भारतसे। भारतका रस सूखा। उसके साथ ही सूखा उन समस्त स्थानोका रस जहॉ उसकी धारा गयी थी। मलय भारतीय था—भारतीय धर्म-रत था। संस्कृत साहित्य विकसित हुआ था। राजभाषा संस्कृत थी। लिपि देव-नागरी थी। जनता हिन्दू थी। उसका जीवन रसमय था। वह रस अब नहीं। बहुत कुछ अब नहीं। फिर भी उस रसकी स्मृतिमे भी एक

रस है। इस रसपानमें एक तृप्ति है। हमारे पूर्वजोंने किया है। इस गौरवमें एक रस है। वही रस हमारी आज सम्पत्ति है।

मलायामें अगस्त्य—पुराणोंमें रस है। वायुपुराण भी एक रसकी कहानी कहता है। अगस्त्य ऋषि दक्षिण-पूर्व एशिया गये थे। उन्होंने मलयद्वीप, वृंहणद्वीप (वोरनियो), कुशद्वीप, शखद्वीप, वाराह द्वीपको पवित्र किया था। महामलय पर्वतपर निवास किया था। उनकी प्रतिभा सुवर्णद्वीपके घर-घरमें गूँज उठी। वामनपुराण भी मलायाकी बात भूला नहीं। उसने कटाह (केदाह) रूपमें मलायाको देखा। सप्त-पुरियोंके समान हम अपने प्रार्थनामें सप्तपर्वतोंका स्मरण करते मलयका स्मरण करते हैं—महेन्द्र, मलय, सह्य शुक्तिमान रिक्षपर्वतः।

विन्दपश्च परिपात्रस्य सप्तैव कुलपर्वताः॥

यह सब बातें पुरानी हैं। पुराण पुराने हैं, कुछ आगे बढ़ें।

कवि रसिक होते हैं। उनके शब्दोंमें रस होता है। कौमुदीमहोत्सवके रचयिताको जगत्का ज्ञान था। साकेत, कांचीपुर, विदिशा, कुन्दिन, पम्पा महान् समृद्धिशाली नगरियोंमें कटाह (केदाह) को रखता है। उसकी दृष्टिमें साकेतसे कम केदाहमें रस नहीं था। कथासरित्सागरकार-को कटाह नगर अर्थात् कलगम अथवा कदारम अर्वाचीन केदाह नगरके समृद्धिशाली वणिक् समाजमें अपूर्व रस मिलता है। चलें, कुछ इस युगका रसपान करें।

जब हिन्दू देवताओंकी उपासना होती थी—कुछ समय पूर्व कोई इसकी कल्पना नहीं कर सकता था कि तीन सौ वर्ष पूर्व समस्त मलाया, सिंगापुर, पेनाग, सुमात्रा, जावा, वोरनियो आदि (सुवर्णद्वीप) पूर्ण तथा हिन्दू थे। विष्णु, शिव, ब्रह्माकी उपासना होती थी। मन्दिरोंमें घण्टे बजते थे। आरती होती थी। साड़ियोंमें निखरती रमणियाँ गाती मन्दिर जाती थीं। भगवान्के चरणारविन्दपर सौभाग्य-सिन्दूरसे चमकता मस्तक नत होता था। वेदध्वनिसे वनस्थली गूँज उठती थी। हवनकुण्डकी ऊर्जस्वित पवित्र सुगन्धिसे मलय-भूमि भर उठती थी। सहस्रों आश्रम

काननोंमे बिखरे पड़े थे। उनमे कृषि-जीवन था। गुरुकुलकी पवित्र झॉकी मिलती थी। काल सब कुछ खाता है। वह संस्कृति-सभ्यता-धर्मको भी नही छोड़ता।

हमारे आधार कुछ शिलालेख, भूगर्भमे सोयी बुद्धमूर्तियॉ तथा कुछ पाषाणखण्ड रह गये है। उन्हे भूगर्भमें सुलानेवाले, किसी दिनके हिन्दू थे। सुवर्णद्वीपमे कोई हिन्दू नही रह गया है। इसलामकी धारा बही। सभी उसमे स्नान कर हिन्दुत्वको तिलाञ्जलि दे चुके है। नाम परमेश्वरके स्थानपर सिकन्दर हो गया। संस्कृत पुस्तके, काव्य-साहित्य आदि आगमे जल उठे। हमे खोजना पड़ता है अपने उन पूर्वजोकी गाथाऍ ताम्रपत्रो, चीनी तथा विदेशी पर्यटकोके वर्णनों और मलय रीति-रिवाजोमे।

सन् १९११ तक हिन्दूराज—कौन जानता है सन् १९११ ई० मे सुवर्णद्वीपमे हिन्दूराजकी टिमटिमाती ज्योति अचानक बुझ गयी। हममेसे कितनोंने जाना? हममेसे उस समय बहुत जीवित थे। किन्तु भारतने एक बूँद ऑसू न बहाया। किसीने एक आवाज भी न उठायी। मरनेवाले मर गये। हम अध्यात्मवादी है। सोचते हैं, ससार मिथ्या है। मरना-जीना एक काम है। पता नहीं हमारी हालतपर कोई आह भरनेवाला भी रहेगा या नही।

हम जिन्हे भूल गये है। हम जिन्हे जाननेका प्रयास करते है। जो हमारे रक्तमास है। जिनका मुख अब पूर्वकी अपेक्षा पश्चिमकी ओर उठता है। उनकी गाथा चीनी इतिहासकारो, अरबी व्यापारियों तथा पाश्चात्योने गायी है। उनके इतिहास, जिसे नष्ट करनेका प्रयास किया गया था, भूगर्भसे निकल रहे हैं।

पुरानी बातोंमे रस मिलता है। पुराना रस शायद अच्छा न लगे। सुना है, पुराने दाखरसमे दिनो-दिन शक्ति बढ़ती जाती है। अधिक मादकता होती है। शक्ति होती है। आजादीके बाद हमे उस शक्तिकी आवश्यकता है। इस रसको पीना ही है। अपना सम्बन्ध बनाये रखनेके लिए, एक-दूसरेको समझनेके लिए।

कोई एकाकी जीवन नहीं बिता सकता। भारत एकाकी जीवनमें अस्तित्व कायम नहीं रख सकता। उस अस्तित्वके जीवनकी रक्षाके लिए कुछ समझना, कुछ पढ़ना, कुछ लिखना व्यर्थ नहीं कहा जायगा।

एक प्राचीन वर्णन—दूसरी शताब्दीके 'लंगाशुक' आधुनिक मलय संघके केदाह-प्रदेशका वर्णन करते हुए चीनी लेखक लिखता है—'नगरके नर-नारी खुला केश रखते हैं। बिना आस्तीनका वस्त्र धारण करते है। उनका वस्त्र कनमनका बना होता है। वह केपिक एक प्रकारकी रुईका होता है। राजा, अमात्य तथा पारपदगणका अरुण वस्त्र स्कन्धप्रदेश अथवा गलेसे झूलता कमरतक आता है। (वह भारतीय अंगवस्त्र है।) वे धोती पहनते है। कटिमे पेटी धोतीके ऊपर बॉधते हैं। कानोमे सुवर्ण-वाली पहनते हैं। नारियॉ रत्नजटित चादर ओढ़ती हैं।

'नगरके प्राचीर पक्की ईंटोंके बने हैं। मकानोंमे दोहरे दरवाजे होते हैं। मकानके सम्मुख बरामदा ऊचाईपर बना रहता है। बरामदेसे भूमितक सीढ़ी होती है। राजाके हाथीका हौदा रजत-वर्ण होता है। वह राजद्वारसे गजारूढ़ निकलता है। हौदेपर श्वेत छत्र लगा रहता है। उसके आगे निशान तथा नगाड़े बजते चलते हैं। वह आयुधधारी सैनिकोसे घिरा रहता है।'

यह वर्णन है अपने उन दो हजार वर्ष पूर्वके भारतीय भाइयोंका जिन्होने हजार मील समुद्र पारकर मलयमे भारतीय उपनिवेश बसाया। भारतीय वातावरण, रीति-रिवाज तथा शासन-व्यवस्था कायम की थी। उन भाइयोकी कुछ बाते जानना रुचिकर होगा।

यात्रा आरम्भ—समुद्रसन्तरण

मई मासके लूके थपेड़ोमे, धूँआ उगलती जी० टी० एक्सप्रेस दिल्ली-से चली। मद्रास तक लम्बी दूरीमे शरीर भुन उठा। उत्तरभारतसे मद्रासके लिए रवाना हुई दक्षिण भारतकी यात्रामे ऋतु, भूमि, प्रकृति सभी बदलती रहती है। यदि कोई चीज नही बदल रही थी तो वह गरमी थी। मद्रास

पहुँचा। नील गगनके नीचे विशाल नील समुद्र देखकर ऑखे ठण्ढी हुई।

मद्रास सेण्ट्रल स्टेशन हमारी सोलह-सौ मील लम्बी स्थल-यात्राका अन्त था। दिनका भी अन्त समीप था। स्टेशनपर मिले श्री शरीफ एम० एल० ए०। वे थे सरकारी जहाजी कम्पनीके एजेण्ट। हम ठहरे 'दास प्रकाश' शाकाहारी होटलमे। जहाज दूसरे दिन साय ५ बजे छूटनेवाला था। समय काफी था। काम भी काफी था।

पहले-पहल मद्रास सन् १९२७ मे आया था। बनारससे काग्रेसमे सम्मिलित होनेके लिए एक दल ही आया था। उसमें स्वर्गीय शिवप्रसाद गुप्त, श्री बैजनाथ सिह और श्री विश्वनाथ सिह आदि सभी थे। मद्रास काग्रेसका अवसर था। डाक्टर अन्सारी सभापति थे। उनमेसे कोई न रहा। लेकिन मद्रास शहर बढ़ता ही गया। लोग बढ़ते ही गये। इमारते गिरती गयीं, बनती गयी। समयने कितना अन्तर कर दिया है।

पहुँचे समुद्र तटपर। अग्रेजोके ऐतिहासिक फोर्ट सेण्ट जार्जके सामने, क्लाइवकी कर्मभूमिपर, ब्रिटिश साम्राज्यके एक प्रतीकपर। अरकाटके नवाब, चन्द्रा साहब, डुप्लेकी कितनी ही बाते याद आयी और याद आयी भारतीय राजाओ, नवाबों, सुलतानोकी अकर्मण्यता, कायरता, मूर्खता और उनकी दयनीय स्थितिके फलस्वरूप फहराता हुआ यूनियन जैक। लेकिन अग्रेज न रहे। यूनियन जैक न रहा। उसपर उड़ रहा था तिरगा। ऑखे उठी दूसरी ओर। नीरव गगनमे नक्षत्र आने लगे थे। देखने हमारा जीवन।

'मद्रास बीच' विश्वका दूसरा सर्वश्रेष्ठ प्राकृतिक समुद्रतट है। उसपर बिजली जगमगा रही थी। हजारो नर-नारी लेटे थे। बाते कर रहे थे। टहल रहे थे। युवक-हृदय समुद्रके चिर-गानमे हृदयगान सुन रहा था। चिन्ताहीन, आदर्शहीन लोग जैसे समय काट रहे थे। बालूमे लेटनेपर भी धूल नही लगती। यहॉकी यह विशेषता है। बालू मोटा है। धूल समुद्रके ज्वार-भाटेमे धुलकर चली जाती है। उसी तरह चली जाती है, जैसे राज्य आते-जाते है। मन न लगा। होटलमे खाकर सो रहा।

रहे थे। हम क्षितिजमे लोप होने लगे।

नागीपत्तनम्—दूसरे दिन प्रातःकाल भारतीय बन्दरगाह नागीपत्तनम् पहुँचे। समुद्रतटसे लगभग तीन मील दूर समुद्रमे जहाजने लंगर डाल दिया। तटपरके लाइट हाउस, ऊँची मीनारे, गिर्जाघर और इमारते दिखाई पड़ रही थीं। नगर तंजौर जिलेमे है।

तमिल जातिमे जनश्रुति है कि इस बन्दरगाहसे यात्रा करनेवाला सम्पन्न होकर लौटता है, यात्रा शुभ होती है। प्राचीन कालमे जब समुद्री परिवहन आज जैसा विकसित नहीं था, यात्रा जीवनके साथ खेल समझी जाती थी। यदि नाविक सकुशल जहाजके साथ लौट आते थे तो बड़ा उत्सव होता था। भारत सरकारने बहुत प्रयास किया कि लोग मद्राससे ही जाया करें परन्तु प्रयास विफल ही रहा। अधिक यात्री यहींसे यात्रा करते है। अन्धविश्वास भी कभी धर्म जैसा रूढ़ हो जाता है।

एक लाइफ बोटवाला लच जहाजसे जलमे उतारा गया। उससे लगभग ढाई मील दूरतक गये। तत्पश्चात् देशी नावपर बैठे। हाथसे नाव लगभग आधमील उथले समुद्रके कारण खींचकर लायी गयी।

इधर मिले शिलालेखोसे नागीपत्तनम्के इतिहासपर काफी प्रकाश पड़ा है। सुमात्राके शैलेन्द्र सम्राट्ने यहाँ दसवी शताब्दीमे बौद्ध विहार निर्माण कराया था। उसके व्ययके लिए चोलराजने एक गाँव विहारपर चढ़ाया था। यहाँसे भारतीय दक्षिण-पूर्व एशियाकी यात्रा भगवान्का दर्शन कर करते थे। दक्षिणका पवित्र स्थान था। परम्परा आज भी कायम है, तीर्थस्थानकी कहानी खोकर। तटपर पहुँचते ही जहाजी कम्पनीके एजेण्ट के० पी० वी० एस० रौदर एण्ड को० के श्री सैयद हुसेन मिले। सैकड़ो वर्षोंसे उनके वंशमे जहाजी काम हो रहा है। भारत सरकारके सभी एजेण्ट इस लाइनमे प्रतिष्ठित मुसलमान है। बड़ा ही सुन्दर सत्कार किया। मैंने पूछा—क्या यहाँ कोई प्राचीन चीज है? उत्तरसे निराशा हुई। मालूम हुआ कि नागोर शरीफ, वेलगानी गिर्जाघर तथा कारीकल दर्शनीय स्थान है। हम नागोर शरीफ चले।

नागोर शरीफ—उत्तरभारतमें अजमेर शरीफका जो स्थान है वही दक्षिण भारतमें नागोर शरीफका है। हजरत शाहुल हमीदकी मजार है। बहुत ऊँची मीनारें खड़ी हैं। दूरसे दिखाई देती हैं। इस मजारसे सम्बन्धित अनेक दन्तकथाएँ तथा जनश्रुतियाँ हैं।

कथा है कि पैगम्बर मुहम्मद साहबकी सत्तरहवीं पीढ़ीमें हजरत सिंधमें आये। वहाँके राजाको इसलाम धर्ममें दीक्षित किया। सिन्धसे चलकर मलाबार आये। इसलाम-प्रचार निमित्त मलाबारके राजापर आक्रमण कर दिया। मारे गये। उनकी मजारपर रौजा खड़ा हो गया। तंजोरके राजाने सबसे ऊँची मीनार मध्यमें बनवायी है। पूजा करने आनेवालोंमें कहा जाता है, अस्सी प्रतिशत हिन्दू हैं। मैंने स्वयं अनेक हिन्दू स्त्रियों तथा पुरुषोंको देखा। मजारके पास ही एक सरोवर है। लोग कहते हैं कि हजरतकी लाश जब धोयी गयी तो उसके बहते पानीसे सरोवर बन गया। जहाँ उनकी लाश रखी गयी थी, जहाँ नहलायी गयी थी, जहाँ उन्होंने नमाज पढ़ी थी, सबपर स्मारक बना है।

भोली-भाली जनताको आकर्षित करनेके लिए अनेक चमत्कारी तथा फलदायक कथाओंसे नागोर शरीफको सम्बन्धित किया गया है। दुनिया-की सब बीमारी यहाँ आनेपर अच्छी हो जाती है। यहाँसे यात्रा करनेवाला समुद्री यात्री धन-धान्यपूर्ण लौटता है। जहाज समुद्रमें फँस जानेपर यहाँकी मन्नत माननेसे सकुशल वापस आ जाता है। इतनी बातें वहाँके गौरवके सम्बन्धमें कही गयीं कि सुनते-सुनते थक गया। अपढ़ गरीब जनता उनसे प्रभावित हो तो कोई आश्चर्य नहीं।

लौटनेपर यहाँ जहाज पुनः ठहरा। मैं इस स्थानपर आया। कुछ शंका रह गयी थी। मैंने वहाँका रूप गम्भीरतापूर्वक देखा। निश्चय हो गया, हिन्दुओंका तीर्थ स्थान रहा होगा। अजमेर शरीफ भी तारागढ़के राजाका स्थान था। वहाँ मन्दिर था। राजपूत सत्ताका दिल्लीके पश्चात् प्रधान स्थान था। अजमेर शरीफ हिन्दू तीर्थस्थानके स्थानपर उत्तर-भारतमें मुसलिम धर्म-प्रचारका केन्द्र हो गया था। वही अवस्था नागोर

शरीफकी दक्षिणभारतमे रही। नागोर शरीफमे तीन मजार हैं। स्थानोमे यदि कब्रे न हो तो उनका रूप पूर्णतया हिन्दू मन्दिरके समान है। दक्षिणके हिन्दू मन्दिर तुल्य रूप मजारका है।

खूब दीपक जलते हैं। धूप और लोहबान जलता रहता है। मजारों-पर तमिल और अरबी, दोनोमे लिखा है। उत्तरभारतकी किसी मसजिद-पर नागरी अक्षरोंमे लिखा मैने अभीतक कही नहीं देखा है। उत्तरभारतमें मसजिदोपर यदि कोई नागरी अक्षरोमे कुछ खोदवा या लिख दे तो वह अधार्मिक कृत्य समझा जाता है। दक्षिणमे हिन्दू-मुसलमानोमे दंगा नही-सा हुआ है। वहॉके लोग कहते है कि उत्तरभारतके लोगोंको यहाँ आकर शिक्षा लेनी चाहिये। मजारके द्वारके दोनो ओर फले कदलीके स्तम्भ बनाये गये है। नारियल टॉगा गया है। उत्तर भारतमें यह असम्भव प्रतीत होगा। उन्हे हिन्दुओंका चिह्न कहकर स्वीकार न किया जायगा।

प्राचीनकालमे तारागढ़ (अजमेर)के समान नागोर (नागीपत्तनम्)का हिन्दू-जगत्मे मुख्य स्थान था। मेरे मनमे शका थी कि वह स्थान प्राचीन नागीपत्तनम्का बौद्ध विहार रहा होगा। इस विहारका वर्णन मिलता है। यदि तीर्थस्थान न होता तो मलय-सुमात्राके सम्राट् शैलेन्द्र वहॉ बौद्ध विहारकी स्थापना क्यो करते। नागोर शरीफके सरोवर जिसकी बनावट पूर्णतया हिन्दू है, देखकर मैं इस निष्कर्षपर पहुॅचा हूॅ कि यह दसवी शताब्दीमे बनाया गया था। शैलेन्द्र सम्राट् मलायाके द्वारा निर्मित चूड़ा-मणि पद्म विहार इसी स्थानपर था। चोल राजराजाके तेइसवें वर्षीय राज्यकाल सन् १००७-१००८ ई० के लगभग नागपत्तनम् अथवा नागी-पत्तनम्मे बना था। कालान्तरमे वही तीर्थस्थान अन्य हिन्दू तथा बौद्ध तीर्थस्थानोके समान मुसलिम तीर्थस्थानमे परिवर्तित कर दिया गया। अजमेर शरीफके समान दक्षिणमे मुसलिम प्रचारका प्रमुख केन्द्र हुआ। यहॉसे तमिल मुसलमान दक्षिण-पूर्व एशियाको सौराष्ट्री तथा गुजराती मुसल्मानोके साथ मिलकर किस प्रकार समस्त दक्षिण-पूर्व एशियाई हिन्दू जगत्को पूर्णतया मुसलमान बनानेमे सफल हुए, उसका यथास्थान

वर्णन करेंगे।

कारीकल—नागोरसे हम कारीकल चले। कुछ समय पूर्व कारीकल फ्रेंच उपनिवेश था। यहाँ तिरंगा झण्डा फहराता है। चन्द्रनगर, पाण्डीचेरी, माही, कारीकल, एनामके फ्रासीसी भूभाग भारतमें थे। सभी भारतमे मिल गये हैं। कारीकल वन्दरगाह था। फ्रासके छोटे जहाज आकर ठहरते थे। नागीपत्तनम्‌के कारण अव महत्त्वहीन हो गया है। कुछ फ्रेंच रहते हैं। भारतीय नागरिक हो गये हैं। खेती अथवा व्यापार करते हैं। अवैध व्यापारका कारीकल पहले अड्डा था। नगर योजनानुसार वनाया गया है। सड़के सीधी हैं। प्रत्येक महाल चौकोर चारों ओर सड़कोंके वीच वसा है। सफाई अच्छी है। कारीकलकी सड़ककी भारतीय सीमापर दोनों ओर प्रवेशद्वार वने हैं। द्वारोंपर गायकी मूर्ति तथा वीचमें अशोकस्तम्भ है। यहाँकी प्राचीन गरिमा जाती रही। किंचित् ऐतिहासिक महत्त्व शेप रह गया है। आवादीमें ईसाइयोंकी काफी सख्या है।

वेलगानी—नागीपत्तनम्‌के समीप ही वेलगानी गिर्जाघर है। इसे लोग देखने दूर-दूरसे आते हैं। छोटी आवादी है। सभी ईसाई हैं। ईसाई औरते तथा मर्द भारतीय पोशाक पहनते हैं। उनमें तथा हिन्दूमे कोई अन्तर नहीं मालूम देता। गिर्जामें प्रभु ईसा मसीह तथा उनकी माँ मरियमकी मूर्ति है। गिर्जाका नाम 'लेडी आफ दी हेल्थ' रखा गया है। भीतरसे गिर्जा विल्कुल हिन्दू मन्दिर-सा मालूम होता है। धूपवत्ती तथा मोमवत्ती जलती है। वाहर माला विकती है। चढ़ायी जाती है। गिर्जाके फर्शपर अनेक वृद्ध स्त्रियाँ वैठी माला जप रही थी। वे पलथी मारे थी। कुछ मुस्कुनियाँ वैठकर हाथ जोडे वन्दना कर रही थीं। एक भारतीय ईसाई एक युवती ईसाई कन्याको तमिल भापामें वाइविल पढ़ा रहे थे। वाहर धर्मशाला, पूजाके सामानकी दूकान आदि थे। यदि क्रास तथा ईसाकी मूर्ति न हो तो हिन्दू मन्दिर अथवा तीर्थ तथा इस स्थानमें कुछ अन्तर न मालूम होगा। ईसाई प्रचारको कमसे कम सामाजिक परिवर्तनके साथ धर्म-परिवर्तन किया था। उनकी इस नीतिके कारण दक्षिणमे

ईसाइयोंकी संख्या काफी हो गयी है। वहाँ हिन्दू प्रचारक ही नहीं मिले। दो-एक मन्दिर मार्गमे मिले, परन्तु उनकी हालत खराब ही थी। दक्षिणमे प्रायः प्रत्येक गॉवमे चर्च मिलेगे। प्रत्येक ग्राममे इसाई प्रचारक होगे। धर्म-परिवर्तनका कार्य अब भी जारी है। पहलेकी अपेक्षा कम है।

पेनाँगकी ओर

सायंकाल जहाजपर लौटे। जहाजने रात्रि आठ बजे लंगर उठाया। दो घण्टा माल चढ़ानेके कारण विलम्ब हो गया था। बगालकी खाड़ीमे प्रवेश किया। नागीपत्तनम्से छूटकर जहाज निकोबार द्वीपसमूह तथा सुमात्रा दाहिनी ओर छोड़ता पेनांग जलडमरूमध्यमे आकर ठहरता है। सोलह सौ मीलकी लम्बी यात्रा है! छ दिन लगा। निरन्तर जहाज चलता रहता है। चारों ओर जलके अतिरिक्त और कुछ दिखाई नही देता।

जहाजसे पानीका विचित्र रग देखनेमे आता है। समुद्रतटके समीपका जल हरा तथा जितना ही तटसे दूर और गहरे जलमे जहाज होता जायगा, पानी गाढ़ा नीला होता जाता है। नील समुद्रका जो वर्णन मिलता है वह समुद्रतटसे लगभग तीन सौ मील बिना दूर गये नहीं मिल सकता। समुद्रका वह रंग इतना हृदयग्राही होता है कि वर्णन करनेके लिए कवि-हृदय चाहिये।

समुद्रमे पहुॅचनेपर पक्षियोका दर्शन नहीं मिलता। ऊपर नील गगन और नीचे गम्भीर नील समुद्रका विलास अत्यन्त सुन्दर मालूम होता है। केवल यह ध्यान आते भय मालूम होता है कि दुर्घटना होनेपर मृत्युके अलावा और कोई गति नही है। चार-पॉच सौ मील दूर रहनेपर जहाजोके सहायता निमित्त आनेकी सम्भावना रहती है, नही तो जल-समाधि, एकमात्र मार्ग शेष रह जाता है। जहाजके डकसे लहरोको चीरते जाते जहाजकी गति देखने लायक होती है। यहॉसे मृत्यु केवल ३० फुट नीचे उछलती चलती है। जहाजसे गिरनेपर शायद ही कोई बचता हो।

जहाजमे बैठे-बैठे यात्री थक जाता है। केवल भोजन तथा चायके

समय थोड़ी चहल-पहल दिखाई देती है। अँग्रेजी तथा हिन्दुस्तानी, दोनों ढंगका खाना रुचिके अनुसार जहाजपर प्राप्त होता है। कोई भोजन नहीं बना सकता। जहाजी नाविक तूफानसे उतना नहीं घबराता जितना जहाजमे आग लगनेसे। जहाजकी आग अत्यन्त भयंकर होती है। आग लगनेपर लोहा सुलगने लगता है। उनपर हमेशा मोटी वारनिश लगायी जाती है। एक बार आग लग जानेपर उसे नियन्त्रित करना कठिन हो जाता है। आग लगनेपर किस प्रकार कार्य किया जायगा, सप्ताहमे एक बार इसका रिहर्सल होता है। जहाज यदि डूबने लगे तो किस प्रकार लोग बचाये जायँगे तथा प्रत्येक कर्मचारी और अधिकारी किस स्थानपर खड़ा रहेगा इसका भी समय-समयपर रिहर्सल होता रहता है।

जहाजका जीवन—जहाज स्वयं एक नगर है। हमारे जहाजमे लगभग दो सौ कर्मचारी तथा एक हजार यात्री थे। उनके भोजन, जल आदिका पर्याप्त प्रबन्ध पूरी यात्राके लिए कर लेनेपर जहाज चलता है। मास, तरकारी तथा सड़नेवाली चीजोंके लिए कोल्ड स्टोरेज बना रहता है। एक दिन मैं देखने गया। पचीसों बकरे कटे टँगे थे। मछलियाँ भरी पड़ी थीं। जहाजमें अस्पताल रहता है। छुतहे मरीजके लिए अलग तथा साधारणके लिए अलग प्रबन्ध होता है। जहाजमें दूकाने लगती है। यात्री इच्छानुसार सामान खरीद सकता है। प्रतिदिन सिनेमा, नृत्य तथा अनेक प्रकारके खेल यात्रियोंके मनोरंजनार्थ हुआ करते हैं। छोटे-छोटे गेदोंके खेलोका भी प्रबन्ध होता है। स्नानके लिए 'शॉवरबाथ' और 'टबबाथ' सबका इन्तजाम प्रशंसनीय होता है। धोबी भी जहाजमे रहता है। प्रति वस्त्र चार आनेमे धोता है। धुलाई अच्छी होती है। जहाजसे बढ़कर सफाई कहीं न मिलेगी। प्रति सप्ताह रग किया जाता है। डेकका फर्श रोज रगड़कर साफ किया जाता है। भारतीय यात्री-जहाजमे समाज-कल्याण अधिकारी रहता है। वह यात्रियोमेसे गायक, नृत्यकार आदिको ढूँढ़कर उनके कार्यक्रमका आयोजन करता है। जो लोग मूल्य लेकर प्रदर्शन करना चाहते हैं उनके लिए यात्री परस्पर चन्दा कर लेते है।

जहाज एक प्रकारसे 'फ्री पोर्ट' है। बाजारसे सस्ती चीजे मिलेगी। जहाजके बन्दरपर आते ही शराब तथा अन्य ड्यूटी लगनेवाली वस्तुओंपर मुहर लगा दी जाती है। एक कस्टम अधिकारी जहाजके साथ चलता है। जहाज अवैध व्यापारका प्रधान साधन माना जाता है।

सुवर्ण-भूमि तथा स्वर्ण-द्वीप

भारतीय तथा पाश्चात्य विद्वानोंने सुवर्ण-भूमि तथा सुवर्ण-द्वीपको समानार्थक समझा था। उनसे एक ही सज्ञाका बोध करते रहे है। अनेक भारतीय विद्वानोने भी भ्रान्ति पैदा कर दी है। आधुनिकतम शिलालेखोसे स्पष्ट हो गया है कि 'सुवर्ण-भूमि'का प्रयोग दक्षिण-पूर्व एशियाके उन देशोके लिए किया गया है जो एशियाई भूखण्डसे मिले है। स्वर्ण-भूमिकी सज्ञामे वर्मा, श्याम, कम्बुज, एनाम तथा लाओस आते है। द्वीपका अर्थ होता है जलसे घिरा प्रदेश। यद्यपि जम्बूद्वीपका प्रयोग मिलता है।

जम्बूद्वीप

जम्बूद्वीपका प्रयोग भारतवर्षके लिए किया गया है। द्वीपान्तर भारतका प्रयोग समुद्र-पारके भारतीय द्वीपोंके लिए प्रयुक्त हुआ है। अग्निपुराणमे समुद्रतारित शब्द आता है। उसका अर्थ है समुद्रसे अलग किया गया देश। 'भारतस्य अस्य वर्षातस्य नवभेदान्'—अर्थात् समुद्र-तारित नव द्वीप थे। वामन तथा मारकण्डेय पुराणोमे बहुत नाम दिये है। उनमे इन्द्रद्वीप, कसेरू, ताम्रपर्ण, गभस्तिमान, नागद्वीप, सौम्य, गन्धर्व, वरुण, कटाह (मलाया) आदि नाम आते है। कटाह मलायाका समृद्धि-शाली नगर था। उस नामसे मलयका ही बोध होता था। इस द्वीपके प्रयोग-के आधारपर ही शायद सुवर्ण-द्वीपमे उन देशोको मान लिया गया है, जो फिलिपाइन्ससे लेकर मलायातक फैले हैं। किन्तु सुवर्ण-द्वीपकी संज्ञा शैलेन्द्र, श्रीविजय तथा संजय हिन्दू साम्राज्योके शिलालेखो तथा मुख्यतः नालन्दा और नागीपत्तनम्के लेखोंमे सुमात्रा, जावा, बोरनियों, बाली आदि द्वीपो

तथा मलाया प्रायद्वीपके लिए दी गयी है। नालन्दाका सन् ८५४ ई० का ताम्रपत्र बड़ा महत्त्व रखता है। उसमें लिखा है कि बालपुत्र देवपुत्र रानी तारा राजा यव-द्वीप तथा सुवर्ण-द्वीपने जावाके भिक्षुओं निमित्त नालन्दामें विहार निर्माण कराया। उसपर मणिवाटक, नाटिका ग्राम, हस्तिग्राम, पालामकग्राम, देवोत्तर चढ़ाया था। लेख है—सुवर्णद्वीपाधिमहाराजश्रीबाल्पुत्रदेवेन दूतकमुखेन वयं विज्ञापिताः यथा मया श्रीनालन्दायां विहारः कारितस्तत्र भगवतो बुद्धभट्टारकस्य—

मंजुश्री मूलकल्पमें कर्मरंग (निगोर), नग्नद्वीप (निकोबार), वारुषक (सुमात्रा !) वलिद्वीप (बाली), यवद्वीप (जावा) आदिका नाम दिया है। निगोर मलायामें है। संस्कृत वाङ्मयमें भी अन्य द्वीपोंके अतिरिक्त मलय-द्वीप (मलाया), कटाहद्वीप (केदाह), वरुणद्वीप (बोरनियो) नाम आया है। स्पष्ट है कि सुवर्ण-द्वीप तथा स्वर्ण-भूमिका पूर्ण भौगोलिक ज्ञान प्राचीन-कालमें भारतीयोंको था।

इस लेखमें दोनों शब्दों का प्रयोग इसी अर्थमें किया गया है। यही तर्क-सम्मत भी प्रतीत होता है। मलाया तथा इण्डोनेशियामें हजारों द्वीप है। उन सब द्वीपोंके लिए सुवर्ण-द्वीप शब्दका प्रयोग किया गया है। सुवर्ण-द्वीपकी यात्रा उत्तरभारतमें ताम्रलिप्ति (तमलुक), पलूरा (गोपानदर, गंजाम), पाटलिपुत्र (पटना) तथा धुर दक्षिणमें मछलीपत्तन तथा नागी-पत्तनम् आदि मुख्य पत्तन अथवा तीर्थ या बन्दरगाह थे। ताम्रलिप्ति ही श्रीविजयके मार्गमें नग्नद्वीप (नीकोबार), केदाह तथा मलय पड़ते थे।

सुवर्ण-द्वीपकी संज्ञा क्यों दी गयी, यहाँ आनेपर स्पष्ट हो जाता है। सिंगापुर-पेनांग तथा मलाया अन्तरीप तथा द्वीपसमूहोंकी भूमि, समुद्रका तट तथा टिन और सोनेकी खानोंको देखा जाय तो वहाँकी भूमिका रंग गिनी गोल्ड (सुवर्ण) तुल्य प्रतीत होगा। भूमिका रंग उजला, काला, भूरा अथवा मटमैला नहीं है। शुद्ध तपे हुए सुवर्णके तुल्य है। भारतीयोंने भूमिके इस रंगके कारण इस महान् भूखण्डका नाम स्वर्ण-द्वीप रखा है। सुवर्ण-भूमिके साथ लगा स्वर्ण-द्वीप एक ही देशान्तरका बोध कराता है।

यह संज्ञा तथा नामकरण वैज्ञानिक है। हिन्दुओंके वैज्ञानिक मस्तिष्कका एक प्रतीक है।

चीन-भारत—इतिहासकी एक विचित्र पहेली है। चीनकी सभ्यता बड़ी पुरानी है। चीनके सीमान्तपर सुवर्ण-भूमि तथा स्वर्ण-द्वीप है। चीनने कभी उन्हे प्रभावित न किया। दो सहस्र मील समुद्रकी उत्ताल तरंगोंका अतिक्रमण कर भारतीय वहाँ पहुँचे। उन्होने देशको अथवा भारतके उपनिवेशोंको, किसी भी द्वीप अथवा भूखण्डको भारतीय शासनके अन्तर्गत करनेका प्रयास नहीं किया। यह है भारतका महान् गौरव। यह गौरव दुनियामे कही और न मिलेगा। वैभवशाली देशके उपनिवेशक सर्वदा अपनी जन्मभूमिका धर्म, सभ्यता तथा संस्कृति उपनिवेशपर लादनेका प्रयास करते है। भारत अपवाद है। उसने किसी जाति किंवा धर्मवालोपर धर्म, संस्कृति, साहित्य, सभ्यता लादनेका स्वप्नमे भी कल्पना नहीं की थी। भारतकी यही बोधात्मा रही है। यह बोधात्मा आज भी देशकी आत्मा है।

भारत और मलाया

मलायाका आध्यात्मिक तथा भौतिक जीवन भारतकी देन है। उसने देशवासियोंको अनुप्राणित किया है। उन्नीसवी शताब्दीमे भी मलाया भारतीय शासन-व्यवस्थाका अंग था। भारतीय सम्पत्ति, शक्ति तथा जनबलसे अंग्रेजोने मलायाका विकास किया। विशाल भारतके स्वातन्त्र्य-आन्दोलनसे भय होते ही मलाया भारतसे अलग कर दिया गया। बर्मा कुछ दिनोंके पश्चात् भारतसे अलग किया गया। अदनकी बारी अन्तमें आयी। मलाया जलडमरूमध्य तथा मलाया प्रायद्वीप अंग्रेजी राजनीतिके कारण भारतीय शासन-व्यवस्थासे अलग कर दिये गये।

अदन, मलाया और बर्मा यदि पूर्ववत् भारतके साथ होते तो भारतीय महासागरके देशोकी कुछ और ही स्थिति होती। अदन तथा सिंगापुर भारतीय महासमुद्रके द्वार हैं। उनका भारतीय सुरक्षासे सम्बन्ध

है। उन्हें अलग रखकर भारतीय सुरक्षाको खतरेमें डाला गया है।

हिन्दू उपनिवेश—दक्षिण-पूर्व एशियाके लिए कहा जाता है कि वे भारतीय उपनिवेश थे। कौटिल्यने दो प्रकारके उपनिवेश बताये हैं। अभूतपूर्व अर्थात् नवीन तथा भूतपूर्व पुराना उपनिवेश। उपनिवेशोंमें आवाद होनेके लिए जानेवालोंके लिए 'अभिशप नध्वामनम्' आदि। अर्थात् देशसे बाहर कर देना शब्दका प्रयोग किया है। स्पष्ट है कि कौटिल्यके समयमे भारतके बाहर भारतीय उपनिवेश थे। लोग भारतसे बाहर बसनेके लिए देश त्याग देते थे, अन्यथा उक्त नामोंकी संज्ञा देनेकी क्या आवश्यकता हो सकती थी? अशोकसे शताब्दी पूर्वसे ही भारतीय बाहर बसने जाते रहे। मलायामें वे आजतक जाते हैं। अतएव कौटिल्यके शब्दोंमें मलाया हिन्दुओंका अभूतपूर्व तथा भूतपूर्व, दोनों ही उपनिवेश था।

मलायाकी जनता हिन्दू धर्मावलम्बी थी। राजनीति, शासन-व्यवस्था मनुस्मृतिके आधारपर बनायी गयी थी। उसकी झलक आज भी वहाँकी शासन-व्यवस्थामे दिखाई पड़ती है। साहित्य भारतीय था। लिपि नागरी थी। कला भारतीय थी। रामायण, महाभारत, पुराण तथा वैदिक साहित्य प्रचलित था। आदिवासी जनता भारतीय जनसमुदायमे मिलकर एकाकार हो गयी थी। आज वहाँ यह सब कुछ नहीं है। केवल अतीतकी कहानी शेष है।

मलय जाति—मलय शब्द जाति एवं देश, दोनोंका वाचक है। सन् १९३८ ई० मे 'पेरक उपत्यका' की खोदाईमे कुछ ऐसे औजार मिले हैं, जिनसे अनुमान किया गया है कि एक जाति इरावती नदीकी उपत्यका, बर्मा, पेरक तथा जावामें आबाद थी। उसकी सभ्यता तथा सस्कृति एक थी। मलायाके मध्य पाषाणयुगकी संस्कृतिके कालसे पता चलता है कि केदाह, पेरक, केलण्टन तथा पहङ्ग राज्योमे खूब आबादी थी।

मलायामे एक विश्वास था। सेमंगत अर्थात् एक आत्मा है। वह

सबमे है। चाहे वह जीवित हो अथवा मृत। वह तत्त्व केश, नख, पादप, पक्षी, धान, पत्थर, हथियार, मकान, नाव आदि सबमे रहता है। यह धारणा मैलेनेशियन मनकी धारणासे मिलती है। भारतीय दर्शनमे मन, बुद्धि आदिको आत्माका ही एक रूप मानते है। मेरा विचार है कि मन शब्द मैलेनेशियामें आत्माके लिए प्रयुक्त होता रहा है।

सबसे प्राचीन जाति जिसका पता चला है, वह हब्शियोकी थी। उन्हे पेरक राज्यमे पहंग तथा केलण्टन राज्यमे पगन कहते है। यह जाति फिली-पाइन्स, अन्दमान द्वीपसमूह, हिन्दचीन, मलय द्वीप-समूह, न्यूगिनी तथा भारतमे भी कही कहीं मिलती है। सिनोई जातिकी आबादी मलायामे लगभग २४,००० होगी। वे लोग दक्षिणभारत तथा श्रीलंकासे सम्भवतः अत्यन्त प्राचीन कालमे मलाया पहुँचे थे। जेलेबू पर्वतमालामे केनबोई जाति है, यह भी भारतसे गयी थी।

यहाँ आबाद होनेवालोमे मिश्र मगोल जाति सबसे अधिक है। इस जातिको मलय जाति कह सकते हैं। फिलीपाइन्स तथा फारमोसातक फैली थी। इसकी आबादी ६० लाख होगी। बर्मा, आसामकी मिश्र मगोल जाति, उड़ीसा तथा छोटा नागपुरकी मुण्डा जातिके अनुरूप जातियाँ भी मलायामे है। अनुमान किया जाता है कि यह जाति लगभग पाँच हजारसे साढ़े तीन हजार वर्ष पूर्व मलायामे आयी थी। इन जातियोके अतिरिक्त मलय जातिमे मलयू, जावी, सेलेबीजके गूगी तथा फिलीपाइन्सके तगला जातिका भी रूप मिश्रित है।

वर्तमान मलय जातिमे चीनी, भारतीय (बगाली और दक्षिणी), अरब तथा स्यामी जातिका मिश्रण है। बुगिस, बाली, मिनगक बाउ तथा एचिनी जातियोमे स्पष्ट अन्तर मिलता है। केलण्टनके मलय यदि लम्बे होते है तो दक्षिणके नाटे। केदाह, केलण्टन, मिनंगका बाऊ तथा नगरी सेम्बिलनके कृपक समुद्रतटीय मलयसे भिन्न मालूम पड़ेगे। मलय भाषामे संस्कृत मध्यप्रदेशकी मुण्डा, आसामकी खासी, मोन अथवा तेलगू, कम्बुज-की क्मेर निकोबारी तथा सेमंग भाषाके शब्दोंका बाहुल्य है। स्पष्ट है कि

मलय भाषा भारतीय भाषाका ही एक रूप है। क्मेर भाषा कम्बुजकी भाषा थी। उसकी मूल संस्कृत थी।

भारतीय राजवंश—गाथा है कि पाटलिपुत्रका राजवंशीय राजपुत्र आजसे तेइस सौ वर्ष पूर्व वोहित अर्थात् जहाज द्वारा मलायामें आया। राजकुमारका नाम मलय जनश्रुतिके आधारपर मरोङ मालूम होता है। मलायाके पुरातन निवासी गिर गासियोंसे उसका संघर्ष हुआ। राजकुमार विजयी हुआ। उसने जनस्थान बनाया। उसका नाम लंकाशुक था। उसने मलायामें अनेक मन्दिर तथा विद्यालयोंका निर्माण कराया। उसने देशको लिपि तथा भाषा दिया।

एक दूसरी गाथा और है। पाँचवीं शताब्दीमें राजा शक्तिहीन हो गया। राजवंशका एक राजकुमार अत्यन्त प्रतिभासम्पन्न था। राजाने उसे कारावासी बनाया। तत्पश्चात् देशसे निर्वासित कर दिया। वह भारत आया। भारतीय राजकन्यासे विवाह किया। राजाकी मृत्युपर निवासियों-ने उसे भारतसे बुलाकर राजा बनाया। उसका पुत्र भगदत्त राजा हुआ। वह चीन-सम्राट्के दरबारमें भी गया था।

भारतीयोंका आगमन—चौथी शताब्दीका संस्कृत बौद्ध शिला-लेख केदाहमें प्राप्त हुआ है। भारतीय व्यापारी उससे पूर्व मलायामें जाते रहे होंगे। प्रथम शताब्दीसे भारतीयोंके उपनिवेशोंका पता लगता है। प्रथम शताब्दीसे पन्द्रहवीं शताब्दीतक हिन्दुओंका प्रभुत्व सुवर्ण-द्वीपपर कैसे रहा, यह अलग एक अध्ययनका विषय है।

मुख्यतया दो कारण माने जा सकते हैं। पहला बौद्धोंका जातिहीन, वर्गहीन, कर्मकाण्डहीन धर्मका प्रचार था। उसमें देशी-विदेशी सबके सम्मिलित होनेके लिए द्वार खुला था। उसने समुद्र यात्रापर रोक नहीं लगायी। समुद्रयात्राके लिए भिक्षुओं तथा व्यापारियोंको प्रोत्साहित किया गया। धर्मप्रचारकी प्रेरणा दी गयी। अन्य जातियोंमें धर्मप्रचार करनेके लिए योजना बनायी गयी। धर्मप्रचार मानवका पवित्र कर्तव्य उसी प्रकार बताया गया जैसे विद्यादान, सम्पत्तिदान, भूदान, जीवनदान, जलदान

अथवा भिक्षादान। हिन्दूओंकी मूढ़ान्धताको उसने दूर किया। भारतीय जनसमुदाय भारतीय धर्म तथा धर्मपोथीके साथ समुद्रयात्रा करना पवित्र कर्तव्य मानने लगा।

दूसरा कारण भारतमे विशाल समुद्रगामी जहाजोंका निर्माण था। अरब-नाविकोंके मानसून तथा हवाके रुखोंके अन्वेषणने भी इसमे काफी हाथ बँटाया। भारतीय जहाज अरब-लेखकोंके अनुसार इतने बड़े बनते थे कि उनमे ६०० यात्री बैठ जाते थे।

मलायाके प्राचीन तकोला (तकुआ पा) बन्दरगाहका वर्णन तालेमीने किया है। यह बन्दरगाह वर्तमान् ताकुआ पा है। विद्वानोंने सिद्ध करनेका प्रयास किया है कि सर्वप्रथम भारतीय इसी बन्दरगाहपर उतरे थे। यहाँसे वे श्याम, कम्बुज, यनाम तथा दक्षिण-पूर्व एशियाकी ओर बढ़े थे। मलय प्रायद्वीप ही भारतीय व्यापारियो तथा उपनिवेशकोका दक्षिण-पूर्व एशियाके लिए मुख्य द्वार कहा जा सकता है।

पूर्वी तटपर चैपा, नखोना, श्री धम्मरत, बीपेङ्-लाके अन्य स्थान हैं जहाँ भारतीय उपनिवेशके प्राचीन अवशेष प्राप्त होते हैं।

मलय जलडमरूमध्यमे स्थित सिंगापुर पूर्व तथा पश्चिमका मिलन-केन्द्र है। हिन्द महासागर तथा पैसिफिक अर्थात् प्रशान्त महासागरको मिलाता है। मेरा अनुमान है कि ताम्रलिप्ति अर्थात् तामलुकके नामपर ही भारतीयोने इस बन्दरगाहका नामकरण किया होगा। ताम्रलिप्तिका नाम तामलुक है। उसी प्रकार तकोला अर्थात् ताकुआ पा ताम्रलिप्तका अपभ्रंश हो सकता है। कालान्तरमें सस्कृत नामोके मुसलमानीकरण-कालमे ताकुआ अथवा ताकुआ पा हो गया हो।

तकुआ पा—तक्कोल अथवा तकुआ पा मलयका प्रसिद्ध बन्दरगाह था। वहाँ बहुत-से शिलालेख मिले है। यह स्थान मलायाका स्थलडमरू-मध्य है। यहाँसे बगालकी खाड़ीसे बन्दोनकी खाड़ीतक पहुँचनेके लिए बहुत ही कम भूभाग पार करना पड़ता है। वह कठिनतासे तीस मिल होगा। थाईलैण्ड तथा कम्बुज आदि पहुँचनेके लिए मलाया प्रायद्वीपकी

पूरी परिक्रमा करनी पड़ती, जो लगभग एक हजार मील हो जाती है। इस स्थानसे श्याम, कम्बुज तथा चम्पा अर्थात् येनान शीघ्रतापूर्वक थोड़ा स्थल-मार्ग समाप्त कर पहुँचा जा सकता है। चेफान, चैपा, बन्दोन उपत्यका, लिगोर पाला, तथा सेलेन सिग अर्थात् पहनके तथा पश्चिमी अंचलमे मलक्का, बेलेजली तकुआ पा, लीनपा तथा तनासरिममे उपनिवेश फैले थे। श्रीधम्मरत तथा चैपा उनमे मुख्य थे। उनमे हिन्दू थे। कालान्तरमे बौद्धधर्म फैल गया। पहन, पेगा, पुकेन् तकुआ पा आदिमे रॉगा और सोना प्राप्त होता था। वही उनकी समृद्धिका कारण था। श्रीधम्मरत तथा पतलुनमे भारतीय ब्राह्मण-वंशजोंकी आबादी है। उनका कहना है कि वे स्थलमार्ग द्वारा मलायामे आये थे।

भारतीय तथा इसलाम धर्म—मलाया तथा दक्षिण-पूर्व एशिया-को भारत धर्म देता आया है। उसने मलाया ही नहीं, समस्त सुवर्ण-द्वीपमे हिन्दू धर्म फैलाया। हिन्दू रीति-रिवाज जारी हुए। मन्दिर बने। वहॉ शतप्रतिशत इसलाम धर्म-प्रचार करनेका भी श्रेय भारतीयोको ही प्राप्त है।

इसलामका प्रचार भारतीय नागरिकोंने सुवर्ण-द्वीपमे सोलहवी शताब्दी तथा उसके पश्चात् उसी प्रकार किया जैसे प्रथम शताब्दीसे पन्द्रहवी शताब्दीतक भारतीय धर्मका प्रचार किया था। भारतीय धर्मका प्रचार दक्षिण-भारतीयोने किया। मुसलिम धर्मका प्रचार सौराष्ट्र, गुजरात, तमिल तथा बगालके मुसलमानोने किया। गुजरात, सौराष्ट्र, तमिल तथा बगालके मुसलमान अपने ही प्रदेशोको पूर्णतया इसलाम धर्मावलम्बी बनानेमे सफल न हुए। परन्तु समस्त सुमात्रा, जावा, बोरनियो तथा मलायाको इसलाम धर्ममे दीक्षित करनेमे उन्होने महान् सफलता प्राप्त की। इसका अध्ययन रोचक ही नहीं, भारतीय जातिके भविष्यके लिए भी उपयोगी सिद्ध होगा।

मलायाके भारतीय—इसलाम-ग्रहणके पश्चात् मलाया-निवासियोमे भारतीय अवशेषों अथवा धर्मके लिए कोई रुचि नहीं रह गयी। मलाया-वासी संस्कृत तथा नागरी लिपिके स्थानपर अरबी भाषा तथा अरबी

लिपिको अपनाने लगे। उन्हे अनुप्राणित करनेके लिए भारतकी अपेक्षा अरबसे रोशनी आने लगी। अतएव भारतकी ओर उनकी दृष्टि न उठना स्वाभाविक था। जावा, सुमात्रा आदिमे भारतीय सस्कृतके प्रतीक मन्दिर, चैत्य, स्तूप, मूर्तियाँ आदि मिलेगी। मलायामे उनका दर्शन कठिन है। वे उसी प्रकार नष्ट कर दिये गये जैसे भारतमे मन्दिर। उन साहित्यों तथा काव्योमे मलयवासियोंके लिए कोई आकर्पण नही रह गया था, जिन्होंने उन्हे भारतीय जाति तथा धर्मसे सम्बन्धित किया।

भारतीय धर्म मूर्तिपूजा-प्रधान था। मूर्तिपूजक काफिर थे। उनसे किसी प्रकारका सम्बन्ध स्थापित करना कुफ्र था। मलायाके पीछे थे भारतके हिन्दूसे हुए भारतीय मुसलमान। भारतमे पुस्तकोको फूकना, मन्दिरोको नष्ट करना, विजातियोपर अत्याचार करना भारतीय मुसलमानोने मलयके नव मुसलिमोको सिखाया। प्राचीन पुस्तके नष्ट हो गयी है। जो कुछ नवीन प्रकाश मलय इतिहासपर पड़ता है, वह उन शिलालिपि, मूर्तियो आदिके कारण है, जो तोड-फोड़कर भूगर्भके हवाले कर दी गयी थी। इसलामीकरणका एक आन्दोलन सुवर्ण-द्वीपमे हुआ था। यहॉका मुसलिम प्रचार फिरोजशाह तुगलक, सिकन्दर लोदी तथा औरंगजेब द्वारा अपनाये गये साधनोसे सर्वथा भिन्न था। एक योजना थी। जिस योजनाके अनुसार समस्त देश हिन्दूसे मुसलमान बन गया; देशका कायापलट हो गया। इस कायापलटका रूप देखना आवश्यक है।

इतिहासकी जानकारी—चीनी लेखकोके लेखोसे मलय इतिहासपर प्रकाश पड़ता है। कुछ मन्दिरोके भग्नावशेप तथा पापाणमूर्तियॉ प्राप्त हुई है। सुगाई, बाट्ट, गुनाग, जेराई पहाड़के तलहटी (पाद) से हीनयान, महायान, बुद्धमूर्तियॉ प्राप्त हुई है। चौथी शताब्दीका लेख केदाहमें मिला है। छठीं शताब्दीकी पल्लव लिपीमे महायानी लेख सस्कृतमे केदाहके ब्रजग नदीकी उपत्यकामे मिले हैं। केदाहमे एक स्पष्ट सस्कृत भापामे शिलालेख मिला है। वेलेजली प्रदेशकी उत्तरी सीमापर बौद्ध मन्दिरका एक स्तम्भ प्राप्त हुआ है। पेरक राज्यके सेलेंगसिंगमे गरुड़ारोही

भगवान् विष्णुकी मूर्ति मिली है। इसी राज्यके टिन क्षेत्र, जिला केण्टा पेंगकलन तथा तनजोंग रम्बुतनमें पाँचवीं शताब्दीकी भारतीय गुप्त शैलीकी हीनयान सम्प्रदाय सम्बन्धी मूर्तियाँ प्राप्त हुई हैं। पाँचवीं शताब्दीके हिन्दू राजा विष्णुवर्माका भारतीय लिपिमें एक लेख कीमती पत्थरपर खुदा एक वृक्षके खोखलेसे मिला है। ताकुआ पाके समीप अनेक हिन्दू देवस्थान तथा मूर्तियाँ प्राप्त हुई हैं।

मलय देशके पूर्वीय तटपर भी भारतीय संस्कृतिके भग्नावशेष प्राप्त हुए हैं। उनमें मुख्य चेंपा, श्री नखोन, श्री धम्मरत तथा वीपङश्रीके हैं। यहाँके देवस्थानों तथा शिलालेखोंसे पता चलता है कि भारतीयोंका उपनिवेश चौथी तथा पाँचवीं शताब्दीके पूर्व आबाद था। मलायामें प्रायः सर्वत्र चौथी तथा पाँचवीं शताब्दीके संस्कृत भाषा तथा भारतीय लिपिमें शिलालेख मिले हैं। उनसे स्पष्ट होता है कि मलायामें हिन्दू तथा बौद्धधर्म साथ ही साथ प्रचलित थे। उनसे यह भी जाहिर होता है कि उत्तर तथा दक्षिणभारत दोनों, स्थानोंके लोगोंने उपनिवेश बनाये थे। उत्तरी तथा दक्षिणी भारतीय लिपियोंमें मिले शिलालेख इसके प्रमाण हैं। इनमें एक शिलालेखपर 'महानाविक बुद्धगुप्तस्य रक्तमृतिकावास—।' का नाम खुदा है। यह मुर्शिदाबादसे १२ मील दक्षिण 'रंगामाटी' स्थान हो सकता है।

समुद्रमार्गसे यातायात—मलाया प्रायद्वीप है। पूर्वमें चीन-सागर, दक्षिणमें मलाया जलडमरूमध्य, पश्चिममें बंगालकी खाड़ी तथा भारतीय महासागर है। उत्तरमें बर्मा तथा श्यामसे स्थलडमरूमध्यसे मिला है। यह स्थलमार्ग द्वारा एशियाके विशाल भूखण्डसे मलायाको सम्बन्धित करता है। यहाँसे बर्मा, श्याम, कम्बुज, वियतनाम, लाओस तथा चीन जाया जा सकता है। समुद्रका मार्ग मलायाके लिए सर्वदासे सुगम रहा है। उत्तरभारतके लोगोंके लिए बंगाल, आसाम, बर्माके दुर्गम पहाड़ी मार्गोंको डाँककर ही मलाया पहुँचना सम्भव था। अतएव भारतीयोंने जलमार्गका ही अवलम्बन लिया।

पूर्वीय मलय तटपर श्रीधम्मरत था। उसे अब लिगोर कहते है। लिगोर बौद्ध जगत्मे महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। धर्मेक्षाका ही अपभ्रंश सारनाथका धमेख स्तूप है। श्रीधम्मरत शब्दका उच्चारण श्याममे श्रीधमर्थ करते है। धमर्थ शब्द धर्मेक्षाका अपभ्रंश हो सकता है। धर्मेक्षाके आधारपर ही धमेक स्तूप तुल्य यहाँ स्तूप बनानेकी कल्पना की गयी होगी। यहाँपर मध्यमे स्तूप था। उसके चारो ओर पचास मन्दिर घेरे हुए थे। चैपामे हिन्दू तथा बौद्ध, दोनो ही धर्म प्रचलित थे। दोनो धर्मोंके ध्वसावशेष प्राप्त हुए है। श्रीधम्मरत तथा चैपा, दोनों ही उपनिवेश प्रायः कृषिजीवी थे। पूर्वीय मलाया तटके स्थानोका सम्बन्ध व्यापारसे अधिक था। सुवर्ण तथा टिनका व्यवसाय था। ये धातुएँ मलयसे भारत तथा विश्वके अन्य स्थानोमे जाती थी।

संस्कृति भाषाका प्रसार—मलाया, जावा, सुमात्रा, बोरनियोके प्राप्त शिलालेख तथा साहित्यसे पता चलता है कि संस्कृत भाषा, भारतीय धर्म सुवर्ण-द्वीपमे पूर्णतया फैल गया था। मूलवर्माके कुटी शिलालेखसे पता चलता है कि सुवर्ण-द्वीपमे भारतीय धर्म, भाषा, सस्कृतिके अतिरिक्त और कोई धर्म, सस्कृति तथा सभ्यता शेष नही रह गयी थी। प्राचीन उपलब्ध साहित्यमे विष्णु, शिव, ब्रह्मा, इन्द्र, गणेश, नन्दी, स्कन्द, महाकाल, ऐरावत हाथीका वर्णन खूब मिलता है।

गंगाकी महिमा—दुर्गा, गणेश, नन्दीकी मूर्तियाँ मलायामे खूब मिली है। विष्णुकी चतुर्भुज मूर्ति प्राप्त हुई है। हाथमे शख, चक्र, गदा तथा पद्म है। शिवके हाथमे त्रिशूल है। लेखोमे भी गगा नदी तथा जलकी पवित्रताका खूब सागोपांग वर्णन मिलता है।

बड़े ही भावपूर्ण ललित सस्कृतमे लिखा है कि गगाके एक बूँद जलमे अपार शक्ति है। वह जल मुक्तिदायक है। यह पढ़कर कौन ऐसा भारतीय है जिसका मस्तक गर्वसे ऊँचा न हो उठेगा। उन महान् औपनिवेशकोंके चरणोमे मस्तक स्वतः झुक जाता है।

भारतीय तौल-माप—प्राप्त शिलालेखोमे भारतीय शक संवत्,

मास, पक्ष, सप्ताह, दिन तथा तिथिका प्रचार था। भारतीय तौल-माप प्रचलित था। यहींतक नहीं, नदियोंका नाम गोमती, चन्द्रभागा आदि रखा गया था। मदुरा आदिके नामोंसे उपनिवेश तथा प्रदेश बस गये थे।

चीन यद्यपि दक्षिणपूर्व एशियाके समीप था, परन्तु चीनी जाति वहाँ सोलहवीं शताब्दीके पूर्व फैल न सकी थी। भारतीय ही सर्वत्र फैले। चीनी पर्यटक फाहियान भारतसे लौटता सुवर्ण-द्वीप आया था। वह लिखता है—हिन्दू धर्म खूब फैला है। बौद्ध धर्म हिन्दू धर्मकी अपेक्षा बहुत कम है। फाहियानके साथ दो सौ व्यापारी भारतसे सुवर्ण-द्वीप गये थे। वे सब हिन्दू थे। कालान्तरमें बौद्ध धर्म फैलने लगा। उसका केन्द्र जावा था।

गुणवर्मा—चीनी संकलनसे मालूम होता है, गुणवर्माके कारण बौद्ध धर्मका जावामें प्रवेश हुआ था। वह कश्मीर राजवंशका राजकुमार था। धार्मिक प्रवृत्तिका था। उसकी ३० वर्षकी अवस्था हुई तो कश्मीरके राजाका देहान्त हो गया। राज्य तथा सिंहासन दिया गया। राजा बनना अस्वीकार कर दिया। श्रीलंकामें बौद्ध धर्मका अध्ययन किया। जावा आया। जावाकी राजमाताको बौद्ध धर्ममें दीक्षित किया। राजमाताने अपने पुत्रको भी बौद्धधर्म स्वीकार करनेके लिए प्रेरित किया। राजा बौद्ध हो गया।

राज्यपर आक्रमण हुआ। राजाने गुणवर्मासे राय ली। युद्धमें हत्या, हिंसा होगी। क्या किया जाय? गुणवर्माने तुरन्त उत्तर दिया—आततायी तथा आक्रमकसे देशकी रक्षा करना कर्तव्य है। दुष्टोंको मारना हिंसा नहीं है। राजाने युद्ध किया। विजय प्राप्त हुई। समस्त जावामें बौद्ध धर्म फैल गया। राजाने भिक्षु बननेकी इच्छा प्रकट की। मन्त्रियोंने राजधर्म न त्यागनेके लिए जोर दिया। प्रव्रजित न होनेपर भी आदेश दिया। राज्यमें जीवहिंसा न की जाय।

चीनमें गुणवर्मा—सन् ४२४ ई०में चीन सम्राट्ने गुणवर्माको

चीन आनेके लिए आमन्त्रित किया। एक हिन्दू व्यापारी नन्दिनके जहाजसे गुणवर्माने चीनके लिए प्रस्थान किया। वह नानकिन सन् ४३१ ई०में पहुँचा। पहुँचनेके कुछ समय पश्चात् ८५ वर्षकी अवस्थामें उसकी मृत्यु हो गयी।

भारतीय उपनिवेश—पाँचवीं शताब्दीतक हिन्दुओंका उपनिवेश लगातुक, कमलक, अथर्व, कर्मरंग, कलसपुर (उत्तरी कलापा), कल (केदाह) तथा पंहगमें पूर्णतया स्थापित हो गया था।

श्रीविजय साम्राज्य

सातवीं शताब्दीमें चीनी बौद्ध यात्री इत्सिंग परसियन जहाज द्वारा चीनसे श्रीविजय आया। श्रीविजयके सम्राट्ने उसे अपने राजकीय जहाजसे भारत भेजा। उस समय सुमात्रामें दो राज्य मुख्य थे। मलयू अर्थात् जम्बी और श्रीविजय। श्रीविजयके स्थानका निर्णय कुछ विद्वानोंने किया है। श्रीविजय साम्राज्य नामक पुस्तक श्रीनीलकण्ठ शास्त्रीने लिखी है। कुछ इतिहासज्ञोंके मतानुसार श्रीविजयकी राजधानी वर्तमान पलेमबंग थी। यह दक्षिणी सुमात्रामें जम्बीके दक्षिण है। समुद्रतटपर स्थित था। सन् ६८३से ६८६ ई०तकके मलय लेख पलेमबगमें मिले हैं। उनकी लिपि पुरानी मलय है। एक लेख करगत्रहीमें बतंग नदीके ऊपरी भागमें मिला है। बेको द्वीपमें भी एक शिलालेख मिला है। यह द्वीप पलेमबंगसे पूर्व थोड़ी दूरपर स्थित है। इनसे पता चलता है कि पलेमबगमें बौद्धधर्मावलम्बियोंका राज्य था। उसने मलायू अर्थात् जम्बीपर आक्रमण किया था। जावापर भी आक्रमण करनेका विचार कर रहा था। तेरह अप्रैल, सन् ६८३ ई०का एक शिलालेख है। उससे पता चलता है कि राजाने बीस सहस्र सेनाके साथ श्रीविजयकी उन्नति तथा श्रीवृद्धि निमित्त अभियान किया था। राजाका नाम लेखमें नहीं दिया है। दूसरा लेख सन् ६८४ ई० का मालूम होता है। राजा जयनस अथवा जयगके आदेशसे एक सार्वजनिक उद्यान श्रीक्षेत्रमें बौद्ध-धर्मीय पुण्य कर्म निमित्त निर्माण कराया

गया था। तीसरा तथा चौथा लेख सन् ६८६ ई० का है। बतंग नदीकी उपत्यकाके निवासियोको चेतावनी दी गयी है। चेतावनी देनेके अतिरिक्त लेखसे यह भी जाहिर होता है कि श्रीविजयकी सेना जावापर आक्रमण करनेकी तैयारी कर रही है।

श्रीविजयकी मुख्य राजधानी कहॉ थी। इसपर विद्वानोंमे मतभेद है। कुछ लोगोंका कहना है कि मलय प्रायद्वीपके केदाहमे राजधानी थी। कुछ उसे मलयके पूर्वी तटस्थित चैपा स्थान बताते है। विशेष अन्वेषणकी आवश्यकता है। इस प्रश्नको यही छोड़ देता हूॅ।

बहेमवंग राजधानीके लिए उपयुक्त स्थान था। यह चीन-सागर तथा भारत-समुद्रके जलमार्गपर था। प्राकृतिक बन्दरगाह था। सामानके बदलनेके लिए व्यापारियोको बहुत सुविधा प्राप्त थी, उसे विकसित किया। राजा जयनसने श्रीविजयको मजबूत समुद्री शक्ति बना दिया था।

श्रीविजय साम्राज्य कब स्थापित हुआ था, कहना कठिन है। राज्यका नाम श्रीविजय क्यो रखा गया, कहना कठिन है। श्रीविजय शब्दसे यही ध्वनि निकलती है कि किसीने विजय द्वारा राज्य स्थापित किया था। अतएव उसका नाम श्रीविजय रख दिया गया।

श्रीपुरी एलिफेण्टा

बम्बईके समीप एलिफेण्टा द्वीप है। वहॉ गुफाऍ है, उन गुफाओमे त्रिमूर्ति है। भारतीय कलाका उत्कृष्ट नमूना है। इस द्वीपका प्राचीन नाम श्रीपुरी था। राज्यवशका नाम कोकन मौर्य था। यह राज्य अनेक द्वीपों तथा भारतीय भूखण्डतक फैला था। पुर्तगाली आदि लेखक लिखते है कि इसके राजाके पास सहस्रों जहाज थे। वे समुद्र पारकी यात्रा करते थे। राज अत्यन्त समृद्धिशाली था। एलिफेण्टा अर्थात् श्रीपुरीके समीप ही एक द्वीप और है। उसे बुचर द्वीप कहते है। प्राचीन कालमे दीपक-द्वीप कहते थे। उसका रूप दीपक जैसा है। यहॉ बम्बईके तेल रिफाइनरी कारखानोके लिए तैलवाहक जहाजोंसे तेल उतारा जाता है। एलिफेण्टा द्वीपसे पुरा-

तत्त्व सम्बन्धी बहुत सामग्रियाँ मिलती हैं। श्रीविजय तथा श्रीपुरीमे कभी कोई सम्बन्ध था या नहीं अथवा श्रीविजय नाम क्यो रखा गया, इसकी खोजका भार विशेषज्ञ ऐतिहासिकोंपर छोड़ देना ही ठीक है। चीनमे सुग-वशीय सम्राट्के दरबारमे श्रीविजयका प्रथम राजदूत सन् ४५४-४६४ ई० के बीच गया था। श्रीविजयका मूल स्थान कहाँ था, यह भी चीनके लेखोसे स्पष्ट नही है। कुछ उसे मलाया कुछ जावाका उत्तरी समुद्रतट तथा कुछ सुमात्रामे कोई स्थान बताते हैं।

श्रीविजयके अस्तित्त्वका पता तीसरी शताब्दीसे १३वीं शताब्दीतक चलता है। श्रीविजयके राजा महायान सम्प्रदायके बौद्ध थे। उनके द्वारा निर्मित बोधिसत्त्वकी मूर्तिसे यह स्पष्ट होता है। हीनयान सम्प्रदायका सर्वथा अभाव नही था।

धर्मसमन्वय—श्रीविजयमे केवल बौद्धधर्म ही नही रहा। वहाँ तान्त्रिक धर्म भी प्रचलित था। हिन्दू धर्मावलम्बियोकी काफी बड़ी संख्या थी। धर्म परस्पर विरोधी नही थे। एक-दूसरेके पूरक थे। हिन्दू भी बुद्ध-मन्दिरोमे जाते थे। भारतके बाहर बौद्ध तथा हिन्दू धर्ममे कभी सघर्ष हुआ ही नहीं। समन्वयकी प्रवृत्ति चारों ओर थी। सातवी शताब्दीमे धर्मपाल तथा आठवीमे वज्रबोधि धर्मप्रचारार्थ भारतसे सुवर्ण-द्वीप आये थे।

सन् ६९५ से ७४२ ई० तक श्रीविजयने इतिहासमे कौन-सा स्थान प्राप्त किया था, कहना कठिन है। इतना अवश्य पता चलता है कि चीन सम्राट्के यहाँ एक श्रीविजयका राजकुमार कुछ सगीतज्ञो, अनेक बावनो तथा रगीन तोते लेकर गया था। मालूम होता है कि सन् ७७५ ई० मे शैलेन्द्रने श्रीविजयपर आक्रमण कर उसपर विजय प्राप्त कर ली थी।

प्रकट करता है कि आजसे १३ सौ वर्ष पूर्व मलाया, जावा-सुमात्रा आदिमें शक संवत् प्रचलित था। सुवर्ण-द्वीप जैसे भारतका अंग हो गया था। स्तम्भ श्रीविजयके एक सम्राट् द्वारा लगाया गया था। उससे यह भी स्पष्ट होता है कि श्रीविजय साम्राज्यमे महायान बौद्ध-धर्म फैल रहा था।

स्तम्भके दूसरी ओर असमाप्त श्रीशैलेन्द्र-वंशीय राजाका अपूर्ण आलेख है। इसी लेखके आधारपर डच विद्वान् कहते है कि शैलेन्द्र-वंश श्रीविजयकी ही एक शाखा था।

अरब-लेखक मसूदीने सन् ९५५ ई० मे श्रीविजय साम्राज्यके विषयमें बड़े ही अच्छे शब्दोका प्रयोग किया है। उसके लेखमें प्रयुक्त 'श्रीबुज' ही श्रीविजय साम्राज्य है। केलाट द्वीपका प्रयोग 'क्रा' द्वीपके लिए किया गया है।

सन् ९७१ ई० मे चीनी शासकोंने कैण्टनमे व्यापार करनेवाले विदेशी व्यापारियों, राज्यों तथा देशोंकी एक तालिका तैयार की थी। उसमें श्रीविजय तथा उसके व्यापारियोका वर्णन मिलता है।

सन् ९८० ई० के स्वाटोके वर्णनमें श्रीविजयके व्यापारियोंके वर्णनमे बताया गया है कि श्रीविजयसे चीन-सम्राट्के यहाँ सन् ९७२, ९७४, ९७५, ९८०, ९८८ ई० मे राजदूत आये थे। सुग-वशीय पुरातत्त्व विभागके कागजोमे लेखा मिलता है। बहुतसे स्थानोंमे श्रीविजयके राजाओंका नाम भी लिखा है। वे संस्कृत नाम हैं। चीनी भाषामें लिखे गये है। उनके मूल उच्चारणका पता लगाना कठिन है।

श्रीविजयका राजदूत चीन-सम्राट्के राजदरबारमे सन् ९८८ ई०मे गया था। कैण्टनमें सन् ९९० ई०मे वापस आया। वहाँ उसे मालूम हुआ कि जावाकी सेनाने श्रीविजयपर आक्रमण किया है। चम्पा अर्थात् वियतनाममें आनेपर अपने राज्यके विषयमे उसे और दुःखद समाचार मिले। वह चीन-सम्राट्की सेवामे पुनः सन् ९९२ ई० मे उपस्थित हुआ। निवेदन किया कि श्रीविजयका साम्राज्य चीन साम्राज्यमें सम्मिलित कर लिया जाय।

जावाका भी राजदूत चीन-सम्राट्की सेवामे उपस्थित हुआ। उसने

निवेदन किया कि श्रीविजयकी युद्धीय महावृत्तिसे लोग परेशान हो गये है। जावा स्वतन्त्र होना चाहता है। यह युद्ध पूर्वीय जावाकी ओरसे राजा धर्मवंश (९८५-१००६) लड़ रहा था। श्रीविजयने मलायाकी नवशक्तिसे धर्मवंशकी वाहिनी नष्ट कर दी। राजा स्वय युद्धमें वीरगति प्राप्त हुआ।

धर्मवशने चीन-सम्राट्के पास सन् १००३ ई० दूत भेजा था। सन्देश भिजवाया कि चीन-सम्राट्की श्रीवृद्धि निमित्त एक बुद्ध-मन्दिरका निर्माण कराया गया है। प्रतीत होता है कि श्रीविजयको भारतीय चोलराज तथा चीन-सम्राट्, दोनोंका समर्थन प्राप्त था। चीनी कथानकके अनुसार श्रीविजयके राजाका नाम श्रीराजा चूलामणि वर्म देव था। सम्भव है कि चोलराजकी मित्रताके कारण श्रीविजयके राजाने नागीपत्तनम्मे बौद्ध विहार निर्माण कराया हो। सन् १००८ ई० में चीन-सम्राट्के यहाॅ चूडामणि वर्माके पुत्र राजा मरविजयोत्तुग वर्माका राजदूत गया था।

भिक्षु अतिस—बौद्ध जगत्मे भिक्षु अतिसका नाम प्रसिद्ध है। उन्होने तिब्बती बुद्धधर्ममे बहुत सुधार किया था। उनकी जीवनी तिब्बती भाषामे है। पता चलता है कि अतिसने श्रीविजय आकर तत्कालीन पूर्वके सर्वश्रेष्ठ बौद्ध विद्वान् धर्मकीर्तिसे सन् १०११-१०२३ ई०तक अध्ययन किया था। इससे स्पष्ट है कि श्रीविजय अथवा दक्षिण-पूर्व एशिया कुछ विषयोंमे भारतसे भी पाण्डित्यमें बहुत आगे बढ़ा था।

चोल-श्रीविजय संघर्ष—दक्षिणभारतमें चोल, पाण्ड्य तथा पह्लव राज्योका बड़ा महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है। हिन्दुओंके प्रसारकी प्रक्रिया भारतसे आरम्भ हुई थी। उनके नाशका भी ठोस कदम भारतसे ही उठाया गया। राजराजा तथा राजेन्द्र चोलके लेखसे इस संघर्षपर प्रकाश पड़ता है। चोलने मलाया, सुमात्रा तथा जावापर विजय प्राप्त की थी। चोलराजने महान् नौवाहिनी एकत्र की। श्रीविजयपर आक्रमण किया। यह हिन्दूघातक आक्रमण ग्यारहवीं शताब्दीमें उस समय हुआ

२ हजार मील दूर भारतीय उपनिवेश दक्षिण-पूर्व एशियापर चोलराजने आक्रमण किया। श्रीविजयकी पराजय हुई। चोलराजने श्रीविजयके मलाया भूखण्डपर अधिकार कर लिया।

सन् १०३०-१०३१ ई०के राजेन्द्र चोलके तंजौर शिलालेखसे पता चलता है—राजेन्द्र राजाने उमड़ते महासागरकी उत्ताल तरंगोंका नौवाहिनी द्वारा अतिक्रमणकर संग्राम विजयोतुंग वर्मन कदरमके राजाको उसकी गौरवशाली सेना तथा हाथियोंके सहित पकड़ लिया। राजाके विशाल संचित कोषपर अधिकार कर लिया। श्रीविजयकी राजधानीका विद्याधर तोरण, जिसे युद्धद्वार कहते थे, जयघोषके साथ विजय कर लिया। रत्नजटित द्वार, जिसमे बहुमूल्य मणि जड़े थे, उन्हे भी ले लिया। जलस्थान, स्नानागार, घाटयुक्त पनाई, पर्वतीय परिखावेष्टित मलयूर, गम्भीर समुद्र द्वारा परिवेष्ठित मयिरु, जल द्वारा सुरक्षित मप्प पलय, शक्तिशाली प्राचीरसे घिरा वलैप्पण्डुरु, विज्ञान-प्रसिद्ध नगरी तलैत्तकोलम आदिसे रक्षित था। राजेन्द्र चोलकी शक्तिशालिनी नौवाहिनीने ले लिया।

चोल आक्रमण—तमिल साहित्यमे संग्राम-विजयोतुंगका नाम मलायाके केदाह राजाके नामसे प्रयुक्त हुआ है। चोल आक्रमण श्रीविजयकी राजधानी पलेयवंगसे आरम्भ हुआ था। तत्पश्चात् मलय देशपर अधिकार किया गया। इस आक्रमणका परिणाम यह हुआ कि शैलेन्द्रके राजा श्रीदेवराज स्वीकार किये गये। श्रीविजय दुर्बल हो गया। धर्मवंशने जावाकी स्वाधीनताका युद्ध छेड़ा था, उसे युग ऐयरलिगा सन् १०१९-१०४२ ई०ने पूरा करनेका बीड़ा उठाया। अपने देशसे श्रीविजयका अस्तित्व समाप्त किया। ऐयरलिगाने संग्राम विजयोत्तुंगकी एक कन्यासे सन् १०३० ई०मे विवाह कर लिया। सन् १०३० से १०६४ ई०तक श्रीविजयका इतिहास उपलब्ध नहीं है। सन् १०६७ ई०में चोलराज राजेन्द्र वर्मन कुलोतुंगका राजदूत चीन-सम्राट्के दरबारमे गया था।

सन् १०९० ई०मे श्रीविजयके निवेदनपर चोलराजने नागीपत्तनम् विहारको नवीन दान दिया। श्रीविजयका नाम इसके पश्चात् सुनाई

नहीं पड़ता। चोलराजका तथा श्रीविजयमें मेल हो गया था। परन्तु श्रीविजयके पतनने दक्षिण-पूर्व एशियामे नवीन शक्तियोंके विकासके लिए द्वार खोल दिया।

समृद्ध राष्ट्र—सन् १२२५ ई० मे चीनी लेखकोने श्रीविजयको समृद्धिशाली राष्ट्र लिखा है। उसमे मलाया, वेदान खाड़ी देश, पश्चिमी जावा सम्मिलित थे। १२८१ ई० मे श्रीविजयका राजदूत जम्बीसे गया था। मार्कोपोलो सन् १२९२ ई० मे सुमात्रामे आया था। उस समय श्रीविजय महत्त्वहीन हो गया था।

थाई संघर्ष—जावामे सिगोश्री तथा मजपहित साम्राज्योंके उदयके कारण श्रीविजयको धक्का लगा। राज्य समाप्तप्राय हो गया। थाई राज्यके उदयने भी श्रीविजयको गहरा धक्का दिया। सन् १२८० ई० से ही थाई लोग श्रीविजयके साम्राज्यके उत्तरी मलाया प्रदेशपर अधिकार करना चाहते थे। सन् १२९२ ई० के थाई राजराम क्षेमहेमके सुखोथाई (सुखोदया) शिलालेखसे प्रकट होता है कि मलायाके उत्तरी भूखण्ड निगोरपर श्याम अर्थात् थाईलैंडका अधिकार हो गया था। श्यामका उत्तरी मलायापर आजसे पचास वर्ष पूर्व अर्थात् सन् १९०८ ई० तक राज्य रहा। इस वर्ष थाई लैण्डमे अग्रेजोंके सरक्षणमे उत्तरी मलय प्रदेश स्वतः दे दिया। इस प्रकार मलायामे अन्तिम गैर हिन्दू राज्यका स्वतः लोप हो गया। श्रीविजयको सबने कमजोर कर शक्तिशाली होनेका प्रयास किया। प्रयास करनेवाले शक्तिशाली न हो सके। एक दूसरी शक्तिका उदय हो रहा था। वह थी इसलाम।

संस्कृत-पालीके वे दिन—सातवीं शताब्दीमे ही पर्यटक इत्सिग लिखता है—दुर्गाय श्रीविजय नगरमे एक हजार बौद्ध भिक्षु रहते है। वे सद्गुणी है। सर्वदा धर्मग्रन्थोका अध्ययन करते है। उनका आचरण शुद्ध है। भारतके समान वे ज्ञान-विज्ञानका अन्वेषण तथा अध्ययन करते रहते है।

भारत तथा श्रीविजयके नियमो, पर्वो तथा त्यौहारोमे कोई अन्तर नहीं

है। इत्सिंग लिखता है यदि कोई चीनी एशिया या पूर्वका पर्यटक पश्चिम अर्थात् भारत जाना चाहे तो उसे यहाँ एक या दो वर्ष ठहरकर अच्छे ढंगसे अध्ययन कर लेना चाहिये।

इत्सिगने श्रीविजयमें शब्द-विद्या अर्थात् संस्कृत एवं पाली व्याकरणों-का अध्ययन किया। अध्ययन करनेके पश्चात् वह भारत आया। उसे भारत तथा श्रीविजयमें ऋतुओंके अतिरिक्त और किसी बातमें अन्तर नहीं दृष्टिगोचर हुआ। भारतसे लौटनेपर वह पुनः श्रीविजय ठहर गया। वहाँ उसने बौद्ध ग्रन्थोंका चीनी भाषामें अनुवाद किया।

संस्कृतका केन्द्र—इत्सिंगके वर्णनसे स्पष्ट है कि श्रीविजय संस्कृत विद्याका केन्द्र था। आज भी मलायामें बारह प्रतिशत भारतीय हैं। उनके निवासस्थानोंमें भारतीय वातावरण मिलेगा। अन्तर केवल यह है कि पाँच सौ वर्ष पूर्व वह सम्पूर्ण मलय प्रदेशमें था। आज उसका महत्त्व केवल स्थानीय है।

चीनी लेखोंसे पता चलता है कि आठवीं शताब्दीके पूर्वार्द्धमें काची-निवासी धर्मपाल नालन्दा विश्वविद्यालयमें तीस वर्षतक कुलपति थे। वे सुवर्ण-द्वीप गये थे। बौद्ध-धर्मका प्रचार किया। श्रीविजयमें निवास किया था। यह उनके जीवनका अन्तिम समय था। आठवीं शताब्दीमें दक्षिण भारतीय बोधिने श्रीलंकासे श्रीविजय होते चीनकी यात्रा की थी। उनके शिष्य अमोघवज्र भी उनके साथ थे। उन्होंने चीनमें तान्त्रिक बौद्ध धर्मका प्रचार किया था।

भारतसे विवाह-सम्बन्ध—उन दिनों केवल भारतका सांस्कृतिक सम्बन्ध ही नहीं था, दोनो देशोंकी जनतामें परस्पर विवाह भी होता था। दोनों ही देशोंमें जातिप्रथा थी। वर्णव्यवस्था प्रचलित थी। भारतीय अपनी जात-पाँतके साथ आये। आबाद हुए। जात-पाँत आदि सब भारत तुल्य कायम रखा। गाथा है कि सुवर्ण-भूमिके एक राजाका भाई निर्वासित कर दिया गया था। वह भारतमें आया। एक भारतीय राजाने अपनी कन्यासे उसका विवाह कर दिया।

क्षत्रिय राजवंश—तनतनके एक राजवंशके विषयमें चीनी लेखक लिखते हैं—राजवंश क्षत्रिय था। राजाकी उपाधि 'सिंह' थी। वह प्रतिदिन राजकार्य करता था। उसके आठ मन्त्री थे। मन्त्री शुद्ध ब्राह्मणोंमेंसे ही चुने जाते थे। राजा कुछ दूरके लिए पालकी तथा दूरके यात्रा निमित्त हाथीका प्रयोग करता था। युद्धके समय शंख तथा भेरी बजती थी।

उक्त वर्णनसे पता चलता है कि सामाजिक गठन जातिके आधारपर था। समाज ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र वर्णोंमे विभाजित था। राजा क्षत्रिय तथा मन्त्री ब्राह्मण होते थे। यह प्रथा प्राचीन भारतीय राजाओंमे थी। क्षत्रिय अपने नामके आगे आज भी 'सिंह' शब्दका प्रयोग करते हैं। भी

आठ मन्त्रियोका वर्णन बड़ा महत्त्वपूर्ण है। प्राचीन शास्त्रानुसार आठ मन्त्री रखनेकी प्रथा थी। उसे राज्यका अष्टाग-सिद्धान्त कहते हैं। इसी प्रथाने बिगड़कर भारतीय राजाओंमे 'अठकौशल'का रूप ले लिया। युद्धकालमें शंख तथा भेरी बजाना महाभारतकालसे प्रचलित था। उसका जैसे अक्षरशः प्रतिपालन सुवर्णद्वीपमें किया गया था।

विवाह तथा अन्त्येष्टि—विवाह तथा दाह-प्रथा शुद्ध भारतीय ढग-से होती थी। विवाहमे पुगीफल (सुपाड़ी) तथा नारियलका प्रयोग किया जाता था। कभी-कभी २०० थाल सुपाड़ी विवाहके समय एक पक्ष दूसरेको देता था। धर्मपत्नी पतिके गोत्रकी हो जाती थी। उसे स्त्रीधनके वे सब अधिकार प्राप्त थे, जो भारतमे थे।

मृत्युके पश्चात् शव स्मशान भूमिमें चितापर भस्म कर दिया जाता था। भस्म और अस्थियाँ सुवर्ण-कलशोंमे रखी जाती थीं। अस्थिप्रवाह समुद्रमे कर दिया जाता था। भारतमे अस्थिप्रवाह तथा दाहकी यही प्रथा किंचित् लौकिक परिवर्तनके साथ प्रचलित है। आज तो मलायामे मुसल-मानों, ईसाइयोंके लम्बे चौड़े कब्रिस्तान देखनेमे आते है। मलायामे रहने-वाले हिन्दू ही दाहक्रिया करते है। अस्थिप्रवाह समुद्रमे और यदि समृद्धशाली हुए तो कुलपरम्परानुसार भारतमे प्रवाहार्थ भेज दिया जाता है।

शैलेन्द्र साम्राज्य

शैलेन्द्र कौन थे ? कहाँसे आये थे ? उनका मूल स्थान कहाँ था ? कहना कठिन है। यह ऐतिहासिक अनुसन्धानका विषय है।

शैलेन्द्र शब्दके आधारपर पाश्चात्य तथा भारतीय विद्वानोंने उनके मूल स्थान तथा वंशको खोज निकालनेका स्तुत्य प्रयास किया है। शैलेन्द्र शुद्ध संस्कृत शब्द है। हिमालयके लिए सम्बोधित हुआ है। वेल्सने लिखा है कि आठवीं शताब्दीमे मैसूरके गंग वंशके जो लोग मलाया गये उन्हींमेसे शैलेन्द्र है। उसने वहाँ अपना वश चलाया।

शैलेन्द्र-वंश

शैलेन्द्र हिमालय है। हिमालयकी कन्या गगा है। अतएव शैलेन्द्र-वश गंग वंशकी एक शाखा है, अनुमान लगाया गया है। कुछ विद्वान् कहते हैं, वे कलिगवासी थे। आन्ध्रके पलौरा वन्दरगाहसे सुवर्ण-द्वीप आये थे। मलयका नाम कहीं-कही भारतीय साहित्यमे तथा सुवर्ण-द्वीपसे प्राप्त साहित्यमे कलिंग दिया गया है। इसीसे यह निष्कर्ष निकालनेका प्रयास किया गया है कि वे कलिगसे आये थे। कलिग उस समय गंग तथा शैलोद्भव वंशके प्रभावमे था। विन्ध्यप्रदेशमे भी एक शैलेन्द्रवंश था। गंग राजाओके नामके अन्तमे महाराज तथा महाराजाधिराज आता है। मलायाके लिगौर शिलालेखमे यह उपाधिक्रम मिलता है।

पुलकेशिन द्वितीय सातवी शताब्दीमे चालुक्य वंशीय राजा हुआ था। उसने गंग वंशको पराजित कर चालुक्य वशकी स्थापना की थी। उसने पल्लवोको भी पराजित किया था। सम्भव है कि गगवशीय लोग दक्षिणभारतमे पराजित होनेपर सुवर्णद्वीप चले आये हो, वहाँ शैलेन्द्र वशकी स्थापना की हो।

शैलेन्द्र शब्द शिवके लिए भी प्रयुक्त किया गया है। दक्षिणभारतमे पाण्ड्य राजवंश अपनी वंशावली भगवान् शिवसे जोड़ता है। इस आधारपर उन्होंने किनेकित शैलेन्द्र अपनी उपाधि रखी है। शैलेन्द्र इसी

वशकी शाखा है। कुछ विद्वानोने साबित करनेकी कोशिश की है। परन्तु यह मत अप्रमाणिक साबित हुआ है।

नागरी लिपि—एक बात विचित्र है। नागरी लिपिका प्रचार दक्षिणमे नही था। उसका प्रयोग शैलेन्द्र साम्राज्य तथा मलायामे प्रचलित था। मलायामे जो मूर्तियाँ प्राप्त हुई है उनमे गुप्त तथा पाल-कालीन है। उनकी शैली उत्तरभारतीय है। स्पष्ट है कि उत्तरभारतके लोग वहाँ गये होगे। इस आधारपर कुछ विद्वान् कहते हैं कि शैलेन्द्र-वंश उत्तरभारतीय था। कुछ लोग मानते है कि शैलेन्द्र श्रीविजय वशकी ही एक शाखा और उसका मूल स्रोत मलयमें ही है। इस विपयमे साधिकार कुछ कहना कठिन है।

प्राप्त शिलालेखोके आधारपर कहा जा सकता है कि कभी पूरा सुवर्णद्वीप शैलेन्द्र राजाओंके अधीन था। मलाया, जावा तथा सुमात्रा उनके अधीन था। उनकी राजधानी मलाया अथवा सुमात्रामे कही थी।

मलय प्रायद्वीपमे आठवी शताब्दीके अन्ततक उनका साम्राज्य स्थापित हो गया था। लिगौर प्रदेश श्रीविजयसे सन् ७७५ ई० मे ले लिये थे। जावापर उनका शासन सन् ७८२ ई० मे हो गया था। लगभग सन् ८२५ ई० तक जावा, सुमात्रा, मलयका बहुत भूखण्ड उनके अधिकारमे था।

महायान बौद्ध सम्प्रदायको शैलेन्द्रोने सुवर्णद्वीपमे प्रचलित किया। उनके कालकी महान् कलाकृति जावामे चण्डी कलशन तथा बोरोबुदुर है।

प्राचीन नागरी लिपिको उन्होने अपने साम्राज्यमे प्रचलित किया। मलय एशियाका नवीन नाम 'कलिग' रखा।

अरब यात्रियों द्वारा उल्लेख—शैलेन्द्र साम्राज्यका वर्णन पुराने अरब पर्यटकोने किया है। उसकी संज्ञा अरबी भापामे 'जावग', 'जावज' तथा 'महाराज'के साम्राज्यसे दी गयी है। मेरा मत है कि 'जावग' तथा 'जावज'का प्रयोग जावा अर्थात् यवद्वीपके लिए अरब लेखकोने किया है। शैलेन्द्रोकी प्रमुख लीलाभूमि जावा ही रही है। उनका आधिपत्य

सुवर्णभूमि तथा सुवर्णद्वीप, दोनों भूखण्डोंपर था।

शैलेन्द्र-नाविक-शक्ति—शैलेन्द्र-नाविक-शक्ति अपने समयमें भारतीय तथा प्रशान्त महासागरमें सर्वश्रेष्ठ थी। अरब लेखक सुलेमानने शैलेन्द्रों द्वारा कम्बुज-विजयका वर्णन किया है। उसने लिखा है—कम्बुज-विजयसे शैलेन्द्रोंकी ख्याति भारत तथा चीन, दोनों महान् देशोंमे फैल गयी थी। आठवीं शताब्दीमें शैलेन्द्र साम्राज्य अपनी पूर्ण गरिमापर पहुँच गया था। नवीं शताब्दीमें कम्बुजके जयवर्मा (सन् ८०२-८५४ ई०) द्वितीयने अपने देशको शैलेन्द्रोंसे मुक्त कर लिया था। जयवर्मा कम्बुजका महान् राजा हुआ है। जावामें रह चुका था। शैलेन्द्रोंका उन दिनों वहाँ शासन था। जयवर्माका सम्पर्क श्रीविजय तथा शैलेन्द्र, दोनोंसे ही था। कालान्तरमें जावाने भी कम्बुजका अनुकरण किया।

उत्तरी मलायापर कम्बुज अधिकार—कम्बुजके महान् सम्राट् सूर्यवर्मा द्वितीयने बारहवीं शताब्दीके आरम्भमें अर्थात् सन् ११०० ई० के लगभग उत्तरी मलायापर अधिकार स्थापित कर लिया था। कम्बुजराज जयवर्मा सप्तमने सन्० ११८१ ई० के करीब मलायाके दक्षिणी भागोंको छोड़कर शेष अपने अधीन कर लिया था।

भारतसे सम्बन्ध—शैलेन्द्र महायान बौद्ध सम्प्रदायके अनुयायी थे। उनका सम्बन्ध पाल-वंशीय राजाओंसे था। सन् ७८२ ई० में बंगालके कुमार घोषका पता लगता है। वे शैलेन्द्र सम्राट्के गुरु थे।

नालन्दा विहारमें एक शिलालेख मिला है। समग्रवीर शैलेन्द्रराजका पुत्र सुवर्णद्वीपके राजा बालपुत्रदेवने नालन्दामें एक बौद्ध विहार निर्माण कराया था। उसके निवेदनपर बंगराज देवपालने पाँच गाँव विहारके खर्च निमित्त देवोत्तर किया था।

दो सौ मन सोना दैनिक आय—अरब लेखक खोरदद जवेह (सन् ८४४-४८ ई०) लिखता है—शैलेन्द्रराजको महाराज कहा जाता है। उसकी दैनिक आय २०० मन सोना है। इस सोनेकी वह ठोस ईंट बनवाता है। उसे जलमें फेंक देता है। उसका यही कोष है।

देशमे मुर्गाकी लड़ाईसे लगभग ५० मन सोना नित्य आय होती है। विजयी मुर्गाका एक पैर राजाका माना जाता है। मुर्गेका मालिक उसे सोना देकर छुडा लेता है।

अबूजवाद हसनने सन् ९१६ ई० मे लिखा है—'शैलेन्द्रराजाकी उपाधि महाराज है। राजधानीका क्षेत्रफल ९०० परसंग है। राज बहुतसे द्वीपोंका भी राजा है। वे द्वीप १००० परसगमे फैले हुए हैं। जिन स्थानोंपर वह राज्य करता है, उनमे श्रीविजय भी है। श्री विजयका क्षेत्रफल ४०० वर्ग परसग होगा। रामी द्वीपका क्षेत्रफल ८०० वर्ग परसंग है। अरब और चीनके मध्य स्थित कलह द्वीप भी उसके अधीन है। उसका क्षेत्रफल ८० परसग है। कलहका नगर सबसे अधिक टिन, मुसब्बर, कपूर, चन्दन, हाथीदॉत, मसाला तथा अन्य सामान तथा न जाने कितनी ही वस्तुओं-का व्यापारिक केन्द्र है। इस बन्दरगाह तथा ओमनप्रदेश(अरब)से बराबर आवागमन रहता है।

राजाका द्वीप एक सिरेसे दूसरे सिरेतक खूब आबाद है। राजप्रासाद समुद्रसे छिछली झील द्वारा सम्बन्धित है। राजा प्रतिदिन इस झीलमे एक सोनेकी ईंट फेंकता है।

राजाकी मृत्युके पश्चात् जलसे सुवर्णईंटे निकाली जाती है। उनकी गणना की जाती है। उन्हे बही-खातेमें लिखा जाता है। एकत्र सुवर्णईंटे राजवंशियों, सेनापतियो, राजाके सेवकोंमे उनके पदगौरवके अनुसार विभाजित कर दी जाती है। दरिद्रोंमे छोटे-छोटे शेष सुवर्णके टुकडे बॉट दिये जाते है।

अरब लेखककी दृष्टिमें—सन् ९९६ ई० मे अरब लेखक समूदी लिखता है—चम्पामे महाराजका साम्राज्य है। उसके द्वीपसमूहोकी सख्या अगणित है। तेजसे तेज चलनेवाला जहाज भी उसके अधीनस्थ द्वीपोंकी परिक्रमा २ वर्षोंमे समाप्त नही कर सकता। इस राजाके राजमे सब प्रकारके मसाले मिलते है। विश्वका ऐसा कोई राजा नहीं है जो भूमिसे इतनी अधिक सम्पत्ति उपार्जित करता हो।

अलबरूनीका वर्णन—सन् १०३० ई० मे अलबरूनी लिखता है—इस महासागरमे पूर्वी द्वीपसमूह, जो भारतकी अपेक्षा चीनके अधिक समीप है, हिन्दुओं द्वारा सुवर्णद्वीप कहा जाता है। इस भूमिको थोड़ा धोनेसे ही सोना मिल जाता है (यह आज भी होता है)। टिन तथा सोनेकी खुली खाने हैं। मिट्टीको जलसे टिन तथा सोनेसे अलग किया जाता है।

चीनी लेखासे पता चलता है कि १०वीं शताब्दीमे कितनी ही बार शैलेन्द्र सम्राट्ने चीन सम्राट्के यहाँ राजदूत भेजा था।

शैलेन्द्र-चोल-संघर्ष

शैलेन्द्र तथा दक्षिणभारतीय राजा चोलका संघर्ष एक अत्यन्त दुःखान्त घटना है। इसने भारतीय उपनिवेशोसे ही सम्बन्ध-विच्छेद नहीं कराया बल्कि यह पूरे सुवर्ण-द्वीपमे इसलामका झण्डा फहरानेमे सहायक हुआ। सुवर्ण-द्वीप, जहाँ शत-प्रतिशत लोग हिन्दू थे, शत-प्रतिशत मुसलमान हो गये।

चोल राज्य दक्षिणभारतमे था। शैलेन्द्र और चोल राज्योमे कमसे कम दो हजार मीलका अन्तर था, तथापि दोनो राज्योमे भयंकर संघर्ष हुआ।

भीषण जल-युद्ध—पाश्चात्य लेखकोंने अनेक जल-युद्धोंका वर्णन किया है। प्राचीन कालमे इतना बड़ा जल-युद्ध कभी नहीं हुआ था। दो सौ, चार सौ मील दूर किसी भूभागपर आक्रमणकी कल्पना की जा सकती है। परन्तु वे देश, जिनके बीच दो हजार मील लम्बी भयंकर समुद्रकी उग्र जलराशि हो, कल्पना करना कठिन है। भारतका अत्यन्त साहसिक अभियान था। वह अभियान विश्व-इतिहासमे उस समयके साधनोको देखते हुए अतुलनीय है।

भारतका चोल राज्य—चोल राज्य मद्रासके कारोमण्डल-तटपर स्थित था। उत्तरमें पेन्नर, दक्षिणमे लार नदी, पूर्वमे बंगालकी खाड़ी और पश्चिममे कुर्ग प्रदेश उसकी विशाल सीमा थी।

दक्षिणभारतमें पल्लव, चोल तथा पाण्ड्य मुख्य राज्य हुए हैं। पल्लव राजके पतनके कारण चोलराज अत्यन्त शक्तिशाली हो गया था।

सन् ९०७ ई० में परान्तक चोलका राजा था। राज्यविस्तारकी उसमें महत्त्वाकांक्षा थी। इस वंशका महान् राजराजा सन् ९८५-१०१४ ई० दक्षिणभारतमें एकमात्र शक्तिशाली राजा रह गया था। उसके पुत्र राजेन्द्र चोलने (सन् १०१४-४२ ई०) चोल राज्यकी सीमा उत्तरमें बंगालतक बढ़ा ली थी।

राजराजाका पालन शैलेन्द्रराजचूड़ामणि वर्मनने नागपत्तनम् अर्थात् नागीपत्तनम्में चूड़ामणि बौद्ध विहारका निर्माण कराया था। यह राजराजाके शासनकालके २१वें वर्ष सन् १००६ की घटना है। राज-राजाने इस विहारके खर्चके लिए ग्रामदान किया था।

शैलेन्द्रराजचूड़ामणि वर्मनके समय विहार-निर्माणका कार्य आरम्भ हुआ था। उसकी समाप्ति उनके उत्तराधिकारी श्रीविजयोत्तुंग वर्मनके समय हुई। दोनों विराट् राज्योंमें स्नेह बहुत दिनोंतक कायम न रह सका।

शैलेन्द्रराज पराभूत—राजेन्द्र चोलने अद्भुत बलशाली नव-वाहिनी एकत्र की। शैलेन्द्रराजपर सन् १०२५ ई० में आक्रमण किया। शैलेन्द्रराज पराभूत हुआ। अत्यन्त दुर्बल राष्ट्र हो गया। सन् १०२४ तथा १०३० ई० के प्राप्त शिलालेखोंसे पता चलता है कि चोलराजने श्रीविजय, नीकोबार द्वीप-समूह प्राचीन मलयूर तथा लंकाशुक—वर्तमान केदाहके दक्षिणका प्रदेश विजय कर लिया था।

एक ओर भारतीय जलवाहिनी २ सहस्र मील दूर सुवर्ण-द्वीपपर हमला कर रही थी और ठीक उसी समय सन् १०२६ ई० में महमूद गजनवीने सोमनाथपर आक्रमण कर मन्दिर नष्ट किया। उसकी शक्ति रोकनेवाला कोई भारतमें न था। मुसलिम शक्ति बढ़ती गयी और हिन्दू

समयकी गति तथा राजनीतिमे कितने पीछे थे, इसीसे पता चलता है।

राजेन्द्रचोलकी मृत्युके पश्चात् शैलेन्द्रराजने पुनः विजित स्थानोपर अधिकार कर लिया। चोलराज वीरराजेन्द्र (सन् १०६३-१०७० ई०) ने पुनः शैलेन्द्रराजपर आक्रमण किया। शैलेन्द्रराजने हार स्वीकार कर ली। वीर राजेन्द्र चोलने शैलेन्द्रका राज्य वापस कर दिया। सन् १०९० ई० तक दोनों राजाओंमे मेल हो गया। राजा कुलोत्तुगने राज विद्याधर सामन्त तथा अभिमानोत्तुंग सामन्तोंको चोलराजके दरबारमे भेजा। चोलराजने निवेदनपर आदेश दिया कि शैलेन्द्रराजचूड़ामणि वर्माके चूड़ामणि बौद्ध विहारपर चढ़ाये गये ग्रामोसे किसी प्रकारका कर न लिया जाय। चोलराजने सर्वदाके लिए सुमात्रा तथा मलयपर अधिकार करनेका विचार त्याग दिया। ग्यारहवीं शताब्दीके चोल-शैलेन्द्र-संघर्षने शैलेन्द्र-राजको जर्जर कर दिया।

शैलेन्द्रराज कबतक कायम रहा, कहना कठिन है। इतना निश्चित है कि किसी-न-किसी प्रकार वह दो-तीन शताब्दी और जीवित रहा। चीनी लेखकोंके उद्धरणोंसे मालूम होता है कि मलक्का जलडमरूमध्यमे शैलेन्द्रका प्रभुत्व अक्षुण्ण था। मलाया तथा सुमात्राके चौदह राज्य उसके अन्तर्गत थे।

चीनी इतिहासज्ञोंकी बातका प्रमाण राजा चन्द्रभानुके इतिहाससे प्रकट होता है। वह सन् १२३० ई० मे राजा था। लकाके चूलवंशसे इसपर काफी प्रकाश पड़ता है।

लंकापर आक्रमण—लंकाका पराक्रमबाहु द्वितीय सन् १२३६ ई० मे राजा था। उसके राज्यकालके ११वे वर्षमे जावक राजा चन्द्रभानु कक्खाला नामक लंकाके एक समुद्रतटपर उतरा। शंका होनेपर उसने बताया, बौद्ध है। शान्तिका सन्देश लेकर आया है। उनके पास विष-बुझे बाण थे। लंकामे उतरते ही उसने आयुधका आश्रय लिया। लंकराज-के अभिभावक राजा वीरबाहुने उसे कितने ही संघर्षोंमे पराजित कर लंका त्यागनेके लिए विवश किया।

शैलेन्द्र-राज चन्द्रबाहुने लकापर पुनः सन् १२५६ ई० मे आक्रमण किया। इस बार उसके साथा दक्षिणभारतके पाण्ड्य तथा चोल राज्य भी थे। तीनो राज्योंकी सम्मिलित शक्तिने लकापर भयंकर आक्रमण जलशक्तिके आधारपर किया। कुछ समयतक जावक (जावा-शैलेन्द्र) शक्तिको सफलता मिलती रही, अनन्तर वीरबाहुने शैलेन्द्र-सेनाको घेर लिया। राजा चन्द्रभानु अपने कुटुम्ब तथा कोपके साथ घेरेसे निकल भागा।

चन्द्रभानु शक्तिहीन हो गया। उसने मलाया, सुमात्रा, जावासे आकर लंकापर आक्रमण करनेका साहस किया था। राजेन्द्रचोल तुल्य उसने विशाल जलवाहिनी एकत्र की थी।

चन्द्रभानुकी पराजय—गाथा है कि चन्द्रभानुको पाण्ड्य राजा जटावर्मनने हरा दिया। चन्द्रभानुकी मृत्यु हो गयी। पराभव एवं शक्तिहीनताने जावाराज कृतंगरको शक्तिशाली वना दिया। उसने शैलेन्द्र-राज्य तथा मलय देशके पहंगपर अधिकार कर लिया। वह तन्त्रका महान् ज्ञाता तथा साधक था।

सन् १२७५ ई०मे मल्यू (सुमात्रा) जिसे जावा साहित्यमें सुमात्राके लिए प्रयोग किया गया है, अभियान किया और उसपर अधिकार कर लिया। अपने साम्राज्यके अन्तर्गत एक राज्य वना लिया। किन्तु कृतगरका स्वयं पतन हो गया। जावाकी सेना मल्यूसे वापस आ गयी। मल्यू एक स्वतन्त्र राज्य बना रहा। कृतगरकी दुर्वलताका लाभ उठाकर शैलेन्द्र पुनः उठ सकते थे परन्तु मालूम होता है कि उनकी शक्ति सर्वथा क्षीण हो गयी थी। थाई लोगोका भी इसी समय उदय हो गया। श्याममे वे शक्तिशाली हो गये। उत्तरमे थाई तथा दक्षिणमे मल्यूकी शक्ति-वृद्धिने शैलेन्द्रकी कमर तोड़ दी।

चीनी इतिहाससे पता चलता है कि जावाने शैलेन्द्रपर सन् १३७७ ई० मे अधिकार कर लिया था। जावाने देशका नाम वदलकर कु-कंग रख दिया।

शैलेन्द्र-सत्ताके लोप होनेसे चारों ओर अव्यवस्था तथा अराजकता

फैल गयी। जावा शैलेन्द्र साम्राज्यके भूखण्डपर अधिकार स्थापित रखने अथवा सुव्यवस्था कायम करनेमे असमर्थ रहा। स्थितिका लाभ उठाकर स्थानीय चीन औपनिवेशिकोने कैप्टन के० नान० हे०को अपना सरदार घोषित कर दिया। पन्द्रहवीं शताब्दीके आरम्भसे शैलेन्द्रराज तथा शैलेन्द्र साम्राज्यके नामका लोप हो जाता है।

परिणाम—शैलेन्द्र-साम्राज्यके लोप होनेसे सुवर्ण-द्वीपकी एकता नष्ट हो गयी। शक्तियॉ बिखर गयीं। प्रतिक्रियावादी शक्तियॉ उठने लगीं। मुसलिम आक्रमणके पूर्व भारत जैसी अव्यवस्था हो गयी। छोटे-छोटे राज्यो और रियासतोका जाल सुवर्ण-द्वीपमे फैल गया।

राजा कृतंगरकी मृत्युके पश्चात् जावा-सेना विजित प्रदेशोंसे हट गयी। मलयूकी दो राजकन्याएँ जावा आयी। उनमे दारा पेतकका विवाह जावाके राजाके साथ हुआ। द्वितीय राजकन्या दारा जिग्गाका विवाह देवसे हुआ। उससे तुहुन जनक नामक पुत्र हुआ। यही जनक कालान्तरमे मलयूका राजा हुआ। उसे श्रीमर्मदेव भी कहा जाता है। सम्भवतः वह मौलि वर्मदेवका उत्तराधिकारी हुआ। वह कृतंगरके समय राजा था।

मार्कोपोलोने वहॉकी यात्रा सन् १२९२ ई०में की थी। वह लिखता है मलयू एक समृद्धिशाली राज्य था। राज्य उदीयमान था। जनकके पश्चात् आदित्य वर्मा देवराजा हुआ। वह तान्त्रिक बौद्ध था। सन् १३४७-१३७५ ई० तक राज्य किया। उत्तरी सुमात्रामे मलयू राज्यका पूर्ण अधिकार नहीं था। उसमे अनेक छोटे-छोटे राज्य थे। वे कभी जावा और कभी चीन सम्राट्का प्रभुत्व सुविधानुसार स्वीकार करते तथा छोड़ते रहते थे। उस समय सुमात्रामे आठ राजा तथा आठ राज्य थे। मार्को-पोलोके अनुसार केवल परलेकके राजाने इसलाम स्वीकार किया था।

हिन्दू संजय वंश

संजय-वंशीय राजा पूर्णतया शैव थे। मतरमके राजा हिन्दू थे।

आठवी शताब्दीमे राजा सन्नाह हुआ। उसका उत्तराधिकारी राजा संजय था। उससे तथा शैलेन्द्रोसे सघर्ष चलता रहा। यदि श्रीविजय तथा शैलेन्द्र साम्राज्योंके राजा शुद्ध बौद्धधर्मावलम्बी थे तो सजय राजा शुद्ध हिन्दू थे।

सजय-वशके विपयमे बहुत कम मालूम हो सका है। यह एक विचित्र बात है कि सुवर्णद्वीपकी जनता हिन्दू थी, किन्तु शैलेन्द्र तथा श्रीविजयके सम्राटगण बौद्ध थे। जनता तथा राजामे कभी धर्मके नामपर सघर्ष नही हुआ। हिन्दू जन्मजात सहिष्णु होता है। उसने धर्मके नामपर कभी कहीं भी अत्याचार अथवा अपनी विचारधारा दूसरेपर थोपनेका प्रयास नहीं किया। हिन्दुओकी जाति-प्रथा इसमे सहायक थी। जाति जन्मना होती है। अतएव कोई भी दूसरा धर्मावलम्बी हिन्दू होनेमे असमर्थ होता था। तुरन्त समस्या उत्पन्न होती थी कि उसे किस जातिमे लिया जाय। यही एक प्रधान कारण है कि हिन्दू 'मिशनरी-धर्म' न हो सका।

चंगलदेवका शिलालेख—बोरो बुदुरके दक्षिण-पूर्वमे चगलदेवका एक स्थान है। सन् ७३२ ई० का पूर्ण बमाका सस्कृतमे शिलालेख प्राप्त हुआ है। लेखसे स्पष्ट होता है कि मतरमके राजा सजयने कुजर कुंजमे, जो अन्न तथा सुवर्ण-खनिजसे पूर्ण था, शिवलिंग स्थापित किया था। सन् ९०७ ई० मे एक लेख कुदुमे प्राप्त हुआ है। उसमे सजय-वशीय कतिपय राजाओके नाम दिये है। तत्कालीन राजाका नाम बलितुंग था। सभी राजाओकी उपाधि श्रीमहाराज है। कुछ नाम प्राप्त हुए है—सजय (७३२-७६०), पचपण पन्नग कर्ण (७६०-७८०), पन्नुगलन (७८०-८००), वर्क या अर्क (८००-८१०), गुरुग (८१०-८३८), पीतकर्ण (८३८-८५१), कमुवणि (८५१-८८२)।

जकार्ताके पूर्वमे स्थिप चण्डी कलशनके शिलालेख (सन् ७७८ ई०) से पता चलता है कि सजयराज पंचपणको शैलेन्द्र नामसे सम्बोधित किया गया है। मतरम मध्य जावामे था। सन् ७४२-७५५ ई० के चीनी

लेखसे पता चलता है कि राजधानी मतरमसे सन् ७६० ई० में पूर्वी जावा-के राजा गजायन द्वारा हटायी गयी थी। गजायनने पूर्वी जावाके दिनय स्थानमें अगस्त्य-मन्दिरका निर्माण कराया था। एक पाश्चात्य विद्वान्का मत है कि एक समय संजय-राजाने वाली सुन्द कम्बुज तथा श्रीविजयपर अधिकार किया था। उसने ८९८ ई० में राजा धर्मोदय महाशम्भु बड़ा पराक्रमी राजा हुआ था। उसने राजका सुदृढ़ संघटन किया था।

इसलामका उदय

विश्वमें दो मुसलमानी क्षेत्र हैं। पश्चिममें अतलान्तक महासागरसे रावी नदी अर्थात् लाहौरतकका भूखण्ड और पूर्वमें हिन्देशिया अर्थात् सुमात्रा, जावा, बोरनियो, मलाया, पेदाग तथा सिंगापुर।

पूर्वमें प्रसार—पश्चिममें मुसलिम धर्म अरबोंके द्वारा फैलाया गया। पूर्वमें भारतके द्वारा। भारतने ही पूर्वीय मुसलिम क्षेत्र अर्थात् सुवर्णद्वीपको बौद्ध तथा हिन्दू धर्म दिया था। उसीने उसे मुसलिम धर्म भी दिया। पश्चिममें धर्मप्रचारका साधन आक्रमण, भय, शिक्षा तथा धार्मिक प्रचारके द्वारा किया गया। परन्तु पूर्वमें शक्तिके स्थानपर शान्ति-मय तरीके अपनाये गये। वे सफल हुए। इसका विवेचन रुचिकर होगा। प्रत्येक भारतीयके मनमें जिज्ञासा उठती है। यह कैसे हुआ? मैंने अध्ययन किया है। उसीके आधारपर कुछ विचार प्रकट करूँगा। सम्भव है, वह गलत हो।

इसलाम धर्म स्वीकार करनेके शताब्दियों पूर्वसे ही अरबके लालसागर से चीनतकके समुद्री मार्गके बन्दरगाहोंपर कुछ-न-कुछ अरब० व्यापा-रियोंकी आबादी थी। अरब और चीनतकका जलमार्ग पश्चिम और पूर्वको जोड़ता था। अरबोंकी इतनी प्रभावजनक आबादी हो गयी थी कि अरबोंने सन् ७५८ में कैण्टन बन्दरगाहपर आक्रमण किया था। नवीं शताब्दीतक छोटी-छोटी अलग आबादियाँ मुहल्लोंके रूपमें बन्दरगाहोंमें हो गयी थीं। ग्यारहवीं शताब्दीमें चम्पामें अरबोंके अस्तित्वका पता

सहायक हुई।

सन् १२९७ ई० का गुजरातसे आया एक सतून मिला है। कब्रका मलिक अलसलेहकी मजारपर लगा था। शायद समुद्रप्रदेशका सरदार अथवा शासक था। सन् १२९२ ई० के मार्कोपोलोके वर्णनसे स्पष्ट होता है कि उस समय सुवर्ण-द्वीपमें मुसलिम धर्मका प्रभाव बिलकुल नहीं था।

महमूद गजनवीने सोमनाथपर सन् १०२६ ई० में आक्रमण किया था। मुसलमानोंका प्रवेश गुजरात तथा सौराष्ट्रमें हो गया। मुहम्मद गोरीने भारत-पर सन ११९२ ई० में आक्रमण किया। आक्रमणके पश्चात् मुसलमानी सल्तनत भारतमें कायम हुई। दिल्लीका प्रथम सुल्तान कुतुबुद्दीन ऐबक सन् १२०६ ई० में दिल्लीके तख्तपर बैठा वह सल्तनत उन्नीसवीं शताब्दी-तक भारतमें कायम रही। बहादुरशाह दिल्लीका अन्तिम बादशाह था।

गुजरात-विजय—अलाउद्दीन खिलजीके समय गुजरातपर सन् १२०२ ई० मे मुसलमानी आक्रमण हुआ। राजा कर्ण पराजित हुआ। रानी कमलदेवी अपनी पुत्री देवलदेवीके साथ अलाउद्दीनके हरममें दाखिल हुई। सोमनाथका मन्दिर दो सौ सत्तर वर्ष पश्चात् सन् १२९७ ई० पुनः तोड़ा और लूटा गया। खम्भात खूब लूटा गया। गुजरातमें मुसल्मानी सल्तनत कायम हुई। अलाउद्दीनने गुजरातपर पुनः आक्रमण किया। खम्भातमे काफूर नामका एक दास खरीदा। वह पहले हिन्दू था। कालान्तरमे वह मलिक काफूरके नामसे प्रसिद्ध हुआ और अलाउद्दीनके सिपहसालारकी हैसियतसे दक्षिण-विजय करता रामेश्वरतक पहुँच गया। अलाउद्दीनके पश्चात् ३५ दिनोंके लिए स्वयं सुल्तान बन बैठा, किन्तु मार डाला गया और अलाउद्दीनका लड़का मुबारक गद्दीपर बैठा। गुजरातका प्रसिद्ध स्थान काम्बे मुसलमानोंके हाथोंमें सन् १२९८ मे आया। गुजरात-सौराष्ट्रमें सभी मुसल्मान न हो सके, परन्तु मुसल्मानी बादशाहत कायम हो गयी। दरबारमें मुसलिम प्रभाव था। काम्बेका ऐतिहासिक महत्त्व है। वहाँ अरब तथा ईरानके व्यापारी नवीं शताब्दीसे ही आबाद थे। सुवर्ण-द्वीप तथा काम्बेका शताब्दियों पुराना व्यापारिक सम्बन्ध था। हिन्दू

व्यापारियोंने मुसलमान धर्म ग्रहण कर लिया। नव मुसलिमोंमें तबलीगका नया उत्साह पैदा होना स्वाभाविक था। उन्होने बड़े जोशसे तबलीगमे हाथ लगाया।

भारतीय मुसलमानों द्वारा इसलाम-प्रचार—गुजरातके मुसलिम व्यापारियों द्वारा पहले-पहल सुमात्राके पासी प्रदेशके राजाने मुसलमान धर्म स्वीकार किया। इब्नबतूता सन् १३४५-४८ ई० मे चीन जाते तथा आते हुए समुद्रप्रदेशमे आया था। वह लिखता है—मुसलमान शफीई कानून मानते हैं। समुद्र नगरकी नदीकी दूसरी ओर एक मुसलिम मजार सन् १४२१ की पायी गयी है। यही स्थान पासी राज्यका था। इसके ही राजाने सर्वप्रथम मुसलिम धर्म ग्रहण किया था। सन् १५०९ के एक यूरोपियन यात्रीने लिखा है—यही सुवर्ण-द्वीपका पहला केन्द्र था, जहाँसे मुसलिम धर्म फैला।

गुजरातमे मुसलिम शासन सुव्यवस्थित था। दिल्लीसे प्रायः सम्बन्ध नही रहता था। वे स्वतन्त्र थे। जफर खाँने स्वतन्त्र गुजरात राज्य बना लिया था। गुजरातके बादशाहोमे महमूद शाह बेगड़ा (१४५९-१५११ई०) बड़ा प्रसिद्ध हुआ है। उसने टर्कोंसे सम्बन्ध स्थापित किया था। उसकी जलवाहिनी मजबूत थी। उसने सन् १५०८ ई० मे पुर्तगालियोको जल तथा स्थल-युद्धमे हराया था। इससे स्पष्ट होता है कि गुजरातकी जलशक्ति सघटित और मजबूत थी। गुजराती मुसलिम व्यापारी यही कारण है कि दक्षिण-पूर्व एशियामें अपने सुलतानकी शक्तिके भरोसे निर्भय व्यापार करते थे। गुजरातके नव मुसलिमोमे नवीन उत्साह था। वे जहाँ गये, मुसलिम धर्मके प्रचारक रूपमे व्यापारी रूपके साथ ही साथ पहुंचे।

मलायाके सम्बन्धमे इब्नबतूता कहता है कि वहाँके रहनेवाले मूर्तिपूजक काफिर थे। मलायामे पन्द्रहवी शताब्दीके पूर्व इसलामका फैलना अधिक प्रमाणित नही होता।

मार्कोपोलोके अनुसार सुमात्रामे केवल परलेकने ही इसलाम धर्म स्वीकार किया था। उसे गुजराती व्यापारियोने इसलाम धर्म स्वीकार

करनेकी ओर प्रेरित किया था।

इब्नबतूता समुद्र-राज्यमें आया था। उसे वह सुमात्रा नामसे सम्बोधित करता है। वही नाम आज द्वीपका प्रसिद्ध है। समुद्रसे ही विगड़कर सुमात्रा हुआ है। सुमात्राको कुछ लोग संस्कृत शब्द मानते हैं। सुमात्रा चाहे संस्कृत हो भी, परन्तु वह समुद्र-राज्यका अरबीकरण है। कतिपय अर्वाचीन विद्वानोंने सुमात्राका प्राचीन नाम बारूसक अथवा बरूस दिया है। कुछ लोग सुवर्णद्वीपका अपभ्रंश सुमात्रा द्वीप बताते हैं। बतूताका स्वागत वहाँके सुल्तान मलिक अलजहीरने किया था। वह कहता है—'इस राज्यके चारों ओर हिन्दू राज्य हैं। वे सुल्तानपर आक्रमण करते रहते थे। वह मूर्तिपूजकोंको हराता रहता था। उनसे शान्तिसे रहनेके लिए समझौता कर लेता था।'

अपनी ही सन्तानोंको मुसलमान बनानेका श्रेय भारतको प्राप्त है। वहाँ अरब, ईरान तथा तुर्कोंने इसलाम नहीं फैलाया था। गुजरात तथा सौराष्ट्रके मुसलिम व्यापारियोंने नीतिसे काम लिया। एक सुनिश्चित योजनाका अनुकरण किया गया।

पासे तथा समुद्रके मजारके पत्थरसे पता चलता है कि वे गुजरातमें बनाये गये मजारके पत्थर मलाया आदिसे आते थे। गुजरात तथा सौराष्ट्र-के बने पत्थर कब्रोंपर खूब मिलते हैं। वे गुजरातसे लाकर सुल्तानों तथा विशिष्ट पुरुषोंकी मजारोंपर लगाये गये थे।

सुमात्रामें इसलाम-प्रचारका मुख्य कारण यही मालूम होता है कि केदाहका व्यापारिक स्थान पासेने ले लिया था। पासे व्यवसाय तथा व्यापारका केन्द्र हो गया था।

भारतमें मुसलिम सत्ताके उदय तथा भारतीय सत्ताके लोपके कारण हिन्दुओंका सम्बन्ध विदेशोंसे टूट गया। भारतमें इसलाम-प्रचार तथा मुसलिम आतंकसे वे स्वयं परेशान थे। उन्हें अपनी जानके लाले थे, बाहरका हाल कौन पूछता ?

हिन्दुओंकी आत्मघातक नीति—दूसरा महत्त्वपूर्ण कारण हिन्दुओं

का समुद्र-यात्रापर रोक लगा देना था। समुद्र पार जानेवाला जाति-बहिष्कृत हो जायगा, यह धारणा फैल गयी कि समुद्र-यात्रा कर लौटनेपर प्रायश्चित्त करना बीसवीं शताब्दीके प्रथम दशकतक प्रचलित था। महात्मा गान्धीके असहयोग आन्दोलनके पश्चात् इस प्रथाका पूर्णतया लोप हो गया। लोकमान्य तिलकको भी समुद्र यात्राके कारण प्रायश्चित करना पड़ा था।

सम्बन्ध टूटा—दक्षिण-पूर्व एशिया हिन्दू था। भारत उसके लिए आदर्श था। वहाँसे मार्ग-निर्देशनकी आशा रखता था। हिन्दुओंका आवागमन समुद्र-यात्रापर लगाये गये बन्धनोके कारण वन्द हो गया। हिन्दू व्यापारियोका स्थान मुसलमान व्यापारियोने ले लिया। अदनसे चीन-तकके व्यापारपर एकाधिकार मुसलमानोके हाथोमे हिन्दुओके अनायास हट जानेके कारण आ गया। जल तथा नौ-शक्ति, जिसके लिए हिन्दू जाति थी, स्वतः उसे त्याग दिया।

मुसलमानोंकी सफलता—मुसलमान व्यापार हाथोमे आ जानेके कारण सभी विदेशोमे जाने लगे। उनका सम्पर्क वढ़ने लगा। सभी स्थानोंमे उनके व्यावसायिक केन्द्र स्थापित होने लगे। रोटी-वेटीका सवाल नही था। जहाँ जाते, सधर्मी आबादीमे ठहरते। परस्पर विवाह आदि कर लेते। जातीयताके आधारपर वर-कन्या खोजनेकी समस्या उपस्थित न होती। वे जगत्के आधुनिकतम साधनो तथा विचारोसे परिचित थे। प्रत्येक बन्दरगाहपर मुसलिम आबादी कायम हो गयी। एक धर्मके लोग मिलने लगे। एक-दूसरेकी सहायता प्राप्त करने लगे। अतएव जो भी थोड़े हिन्दू व्यापारी या नाविक शेष रह भी गये होंगे, उन्हे मुसलमानो जैसी सुविधा नही प्राप्त होती थी। अतएव हिन्दू व्यापारी अथवा नाविक रोजगारके लिए या तो मुसलमान हो गये अथवा व्यवसाय और जहाजी कारबार त्यागकर घर बैठ गये।

सुवर्ण-भूमिपर प्रभाव—सुवर्ण-भूमि अर्थात् वर्मा, श्याम, कम्बुज, अनाम तथा लाओसमे यह वात न हो सकी। उनका सम्बन्ध एशियाई भूखण्डसे था। भू-मार्ग द्वारा वहाँ पहुँचा जा सकता था। किन्तु जावा,

सुमात्रा, बोरनियो आदि सहस्रों द्वीपोंका सम्बन्ध केवल जहाजों अथवा जलमार्ग ही द्वारा हो सकता था। एशियामें उस समय भारतके पास ही महान् जलशक्ति थी। भारत स्वयं गुलाम हो गया। मुसलिम राजाओं-को जलशक्तिकी आवश्यकता न थी। अतएव भारतीय जलशक्तिने स्वतः जल समाधि ले ली। भारतसे सम्बन्ध छिन्न हो जानेसे सुवर्ण-द्वीपके देश अकेले पड़ गये। उनका निदर्शन करनेवाला कोई न रह गया था। मुसलिम व्यापारियोंसे जो समाचार उन्हें मिलते थे उन्हींपर भरोसा करना था। वे एक प्रकारसे पराश्रित एवं पगु हो गये थे।

इसलाम-प्रसारका केन्द्र—पन्द्रहवीं शताब्दीमें मलक्काने पासेका स्थान ले लिया। मलक्का इसलाम-प्रसारका केन्द्र हो गया। मलक्का पश्चिमी तटपर मलाया देशका एक राज्य है। वहींसे मुसलिम धर्मप्रचारक समस्त सुवर्ण-द्वीपमें धर्मप्रचारार्थ जाने लगे। उन्हें राज्यकी छत्रच्छाया भी मिल गयी। मलक्का जो कभी मलायामें हिन्दू धर्मका मुख्य केन्द्र था, किस प्रकार घोर इसलाम-प्रचारक हो गया, इसकी कहानी बड़ी रोचक है।

अलबुकर्कका वर्णन—पुर्तगाली गवर्नर अलबुकर्क इस सम्बन्धमें जो लिखता है वही इस सम्बन्धमें एकमात्र सहारा है। इसलाम-प्रचारके साथ ही मलक्कामें प्राचीन ग्रन्थ, मन्दिर, मूर्ति आदि सबका लोप हो गया अथवा उनके प्रति रुचि न होनेके कारण वे स्वतः नष्ट हो गये होंगे। आगे लिखता है—जावामें भटार तम्पेल राज करता था। पलेमबेगमें परमेश्वरका राज था। दोनों राज्योंमें बहुत झगड़ा होता था। शान्ति-स्थापनार्थ दोनोंने परस्पर सम्बन्ध स्थापित करना चाहा। परमेश्वरने जावा-की राजकन्या परमेश्वरीसे विवाह कर लिया। उसने श्वसुरकी अधीनता स्वीकार की। कर देने लगी। कुछ समय पश्चात् परमेश्वरने कर देना बन्द कर दिया। जावाके राजाने पलेमबेगपर आक्रमण किया। राजा परमेश्वर हार गया, साथियोंके साथ भागकर वर्तमान सिंगापुरमें आया।

पमेश्वरका पलायन—एक और गाथा है। सन् १४०१ ई० में राजा वीरभूमि तथा विक्रमवर्धनमें मजपहित राज्यके उत्तराधिकारके प्रश्नको

लेकर झगड़ा उठ खड़ा हुआ। परमेश्वर उसी समय भागकर तुमसिक अर्थात् सिगापुर आया। सिगापुरका नाम सिहपुर था। सिंगी शब्द सिहका अपभ्रंश है।

सिंगापुरमें परमेश्वर—सिगापुर उन दिनों श्यामके राज्यमे था। सम्पत्तिशाली नगर था। नगरके राज्यपालने राजवंशीय भगोड़ा समझकर उसे आश्रय दिया।

परमेश्वरने अपने आतिथेय सिगापुरके राज्यपालकी सन् १४०२ मे हत्या कर दी और स्वय नगरका राजा बन बैठा। राजा बननेका समाचार पलेमबेगमे उसके पहलेके राज्यमे पहुँचा। वहाँसे उसके ३ हजार साथी सिंगापुरमे आकर आबाद हो गये। परमेश्वरने उनका स्वागत किया। सिगापुर जलडमरूमध्यसे गुजरनेवाले जहाजोंको लूटना आरम्भ कर दिया। पटनीका राजा सिगापुरके राज्यपालका भाई था। उसने परमेश्वरपर आक्रमण किया। परमेश्वर अपने साथियोके साथ मुआर नदीके मुहानेपर आकर आबाद हो गया। उस समय वहाँ कुछ मछुए रहते थे। वहाँके २० या ३० मछुओने उसे अपने गाँवमे आश्रय दिया। परमेश्वरने ग्राममे हर प्रकारकी सुविधा देखकर अपने कुटुम्बको बुला लिया।

समुद्री लुटेरे इस स्थानपर जहाजोंके लिए पानी तथा सामान लेनेके लिए आते थे। लूटका माल भी बेचते थे। यह स्थान अवैध व्यापारका अड्डा हो गया। सिगापुरका महत्त्व कम होने लगा। उसकी अवनतिपर मलक्काकी वृद्धि होने लगी। श्याम अर्थात् शाम तथा मजपहित, दोनो मलायापर अपने अधिकारकी बात करते थे।

श्यामकी सीमा मलायासे मिली थी। श्याम अपने अधिकारका प्रयोग कर सकता था, परन्तु मजपहितके लिए यह असम्भव था। सन् १४०३ मे चीनके मिग वशीय सम्राट् चेगत्सूने एक राजदूत मलक्का भेजा। परमेश्वरने श्यामके विरुद्ध सहायताकी याचना की। सम्राट् सिंगापुरपर उसका प्रभुत्व स्वीकार कर ले इसकी भी बात उठायी। परमेश्वरने सन् १४०५ ई० मे एक राजदूत चीन भेजा। चीनके सम्राट्ने

उसकी वात मान ली।

चीन द्वारा सहायता—चीनके सम्राट्ने उसकी सहायता की। एक नौवाहिनी सन् १४०५ ई० में हेगंसके सेनापतित्वमें भेज दिया। सन् १४०९ ई० मे चंग हो मलक्का आया। सन् १४११ ई० में राजा परमेश्वर स्वय चीन सम्राट्की सेवामें वोकिंगमें उपस्थित हुआ। सन् १४१५ ई० में चेग होने पुनः मलक्काकी यात्रा की। परमेश्वरने पलेमवेगपर अधिकारकी वात की।

सन् १४१९ ई०में परमेश्वर पुनः चीन सम्राट्की सेवामें उपस्थित हुआ। उसने श्यामके विरुद्ध सम्राट्से सहायता माँगी। चीन सम्राट् युग लोके सम्मुख पलेमवेगपर अधिकारकी वात चलायी। सम्राट्को यह नीति नापसन्द न थी। अपने विवाद शांत करानेके लिए चेग होको भेजा।

मलक्काकी ख्याति—कुछ समयमें ही मलक्काने ख्याति प्राप्त कर ली। अवैध व्यापारका अड्डा हो गया। गाँवकी आवादी दो हजार हो गयी। परमेश्वरने उस गाँवका नाम मलक्का रखा। शनैः-शनैः वंगाल तथा पासेके व्यापारी आने लगे। मुसलमानोंकी भी एक छोटी-सी आवादी वस गयी। भारतमें मुसलिम-विजय तथा मुसलिम राजकी वात वड़े गर्वके साथ कही जाने लगी। जनतापर प्रभाव पड़ने लगा। भारत मुसलमान हो गया। प्रमाणमें दिल्लीके वादशाहों तथा उनके हिन्दुओंके साथ होते संघर्ष, उनके हारकी वात खूब वढ़ा-चढ़ाकर कही जाने लगी।

इसलामीकरणकी योजना—भारतके मुसलिम व्यापारियोंने सुवर्णद्वीपमें वही नीति जारी की, जो नीति मुसलिम वादशाहोंने भारतको मुसलिम देशमें परिवर्तित करनेके लिए अपनाया था। भारतमें मुख्यतया चार वातें इसलामीकरणके लिए चलायी गयी थीं—

(१) मुसलमान स्त्रीसे शादी करनेवाला मुसलमान होगा, अन्यथा सजा मौत होगी।

(२) यदि कोई मुसलमान-धर्म स्वीकार करनेके पश्चात् पुनः धर्म-परिवर्तन करना चाहे तो उसकी सजा भी मौत ही होगी।

(३) गैर-मुसलमानोंको जजिया या अन्य प्रकारका कर देना होगा।

(४) सरकारी नौकरीमें मुसलमानोंको प्राथमिकता दी जायगी।

मलायामें हिन्दू राज्य था, अतएव सजा देनेमें या राज्याश्रय पानेमें मुसलमानोंको सफलता नहीं मिल सकती थी। उसके स्थानपर अन्य सुनिश्चित योजना अपनायी गयी। एक भी मजबूत राजाके मुसलमान होनेपर मलायामें पाँव रखनेका स्थान मिल सकता था। इसी योजनाके अनुसार उस समयके शक्तिशाली राजा परमेश्वरको पहले मुसलमान बनाया गया।

परमेश्वर मुसलमान हुआ—परमेश्वरकी अवस्था ७२ वर्षकी थी। मलक्काकी समृद्धिके कारण कहा जा चुका है कि वह मुसलिम व्यापारियोंका एक छोटा उपनिवेश बन गया था। यहाँसे मुसलिम-प्रचारकोंने मलायाके भीतरी भूखण्ड वेतग्गानूतक मुसलिम धर्मकी ख्याति पहुँचा दी थी। वहाँ १३२६-१३८८ के अरब तथा मलय लिपिके शिलालेख मिलते हैं। एक कब्र मिली है। उससे ज्ञात होता है कि एक मुसलिम रानी पासे तथा केदाह (लंकाशुक) पर शासन करती थी।

शादीकी शर्त इसलाम-दीक्षा—परमेश्वरकी उम्र ७२ वर्षकी थी। पासेके सुलतानने उससे अपनी कन्याकी शादी करना चाहा। शर्त रखी गयी। राजाको इसलाम धर्म स्वीकार करना पड़ेगा। परमेश्वरको हिन्दू स्त्रीसे सन्तानें थीं। हिन्दुस्तानका बादशाह मुसलमान है। उसकी प्रतिष्ठा बढ़ेगी। मुसलमान उसके मददगार होंगे। हिन्दू राजाओंसे भय न रहेगा। परमेश्वरने शादी कर ली। मुसलमान हो गया। उसका नाम इस्कन्दर रखा गया। चीनी लेखकोंने उसे इस्कन्दर शाह भी लिखा है। उसने अपने साथियोंको भी मुसलमान बनाया। उसकी मृत्यु शायद शादीके ही एक वर्ष पश्चात् सन् १४२४ में हो गयी। वह इसलाम धर्मका प्रवर्तक दक्षिण-पूर्व एशियामें माना जाने लगा। उसके मुसलिम धर्म ग्रहण करनेके सम्बन्धमें अनेक किंवदन्तियाँ गढ़ ली गयी हैं। मलक्का दक्षिण-पूर्व एशियामें इसलामी मिशनरी योजना, प्रचार, संस्कृति, सभ्यता तथा राज्यका केन्द्र हो गया।

मुसलमान बनानेका षड्यन्त्र—परमेश्वरके विवाहके सम्बन्धमे पुर्तगाली लेखक लिखते हैं—कुछ अमीर मुसलिम व्यापारी पसाईसे मल्का आये। उनमे ईरानी, बंगाली तथा अरबी मुसलमान सौदागर मल्कामे रहते थे। वे बहुत अमीर, बड़े व्यापारी तथा किस्मतवर थे। अपने साथ मुल्ला तथा मौलवी लाये। वे मुसलिम प्रचारमे पटु थे। परमेश्वर मुसलमान व्यापारियोसे खुश रहता था। उसने उनके रहनेके लिए स्थान दिया था। मसजिद बनानेके लिए सहायता दी। स्थान दिया। वे व्यापारी खूब व्यापार करते थे। उनसे परमेश्वरको अत्यधिक आमदनी होती थी। उन्हे पूर्ण स्वतन्त्रता अपने सामाजिक तथा राजनीतिक कार्योंके लिए मिल गयी थी।

बहुतसे मुसलमान तथा मुल्ला परमेश्वरको मुसलमान बनानेका प्रयास चुपचाप कर रहे थे। पासेके राजाकी बड़ी इच्छा थी कि परमेश्वर मुसलम न हो जाय। पासेके राजाको मालूम हुआ कि परमेश्वर मुल्ला तथा मौलवियों-की इज्जत करता है। उसने चुपचाप बहुत ऊँचे दर्जेके मुल्ला तथा मौलवी परमेश्वरको अपनी जाति, धर्म आदि त्यागकर मुसलमान बनानेके लिए भेजे। षड्यन्त्रमूलक साधनके प्रयोगकी सलाह भी दी। सार्वजनिक रूपमे काम न किया जाय। इसका खास आदेश दिया गया था। जब परमेश्वर ७२ वर्षका हुआ तो वह मुसलमान हो गया। उसने अपने साथ अपने सब कुटुम्बको भी मुसलमान बना लिया। कुछ समय पश्चात् उसने अपनी प्रजाको भी हिन्दूसे मुसलमान बना दिया।

परमेश्वरका पुत्र हिन्दू था। हिन्दू स्त्रीसे जन्मा था। उसने भी एक मुसलमान स्त्रीसे शादी की। पिताके समान मुसलमान-धर्म स्वीकार किया। उसके भी पूर्व हिन्दू स्त्रीसे दो सन्ताने थीं।

सिकन्दर शाह—वह सिकन्दर शाहके नामसे पिताका उत्तरा-धिकारी हुआ। उसने श्रीविजयकी तथा श्रीमहाराजकी पदवी धारण की। उसे शाह तथा सुलतान शब्द शायद अच्छा नहीं लगा। उसने स्यामके विरुद्ध सहायता पानेके लिए चीन सम्राट्के यहाँ राजदूत भेजा था।

उसके समयमें मलक्काकी अत्यन्त समृद्धि हुई। उसने व्यापारिक मार्ग वदल दिया। सिंगापुरके स्थानपर मलक्का व्यापारका केन्द्र हो गया। सिंगापुर श्यामके कब्जेमें था। अतएव मुसलिम व्यापारियोंने मलक्काको महत्त्व देना आरम्भ किया। सिंगापुरका महत्त्व घट गया। उसने अत्यन्त वलशाली नाविक शक्ति तैयार कर ली। उसने मलक्का जलडमरूमध्य अर्थात् सुमात्रा और मलायाके बीचसे गुजरनेवाले जहाजोंको मलक्का आनेके लिए वाध्य कर दिया। श्यामके राजाने सिकन्दरसे युद्धकी तैयारी की, उसने श्यामके राजाका आधिपत्य स्वीकार कर सुलह कर ली।

सिंगापुर मुसलमानोंके हाथमें—निश्चय हुआ कि सिंगापुरसे जितनी आय श्यामको प्रति वर्ष होती है उतनी आय सिकन्दर शाह प्रति वर्ष श्यामके राजाको देता रहेगा। सिंगापुरमें पुलन सोम्बेलनतकके सभी द्वीप सिकन्दर शाहको मिल गये।

हिन्दू राज्य स्वयं अपनी नीतिसे सिंगापुर आदि द्वीपोंसे समाप्त हो गया। हिन्दू राज्य तथा धर्म मलक्का सागरसे सर्वदाके लिए विदा हो गया। सिकन्दर शाहकी यह नीति इतनी सफल हुई कि सिंगापुरको खंड-हर बना उसने मलक्काकी भव्य रचना कर दी। मलक्का अर्थात् मलाया-का एकमात्र नवमुसलिम राज्य उत्तर तथा दक्षिणके आक्रमणोंके खतरेसे बच गया। मलक्काको अपनी शक्ति मजबूत करनेका सुवर्ण अवसर प्राप्त हो गया।

परमेश्वरदेव शाह—सिकन्दर शाहके पश्चात् उसका पुत्र इब्राहीम श्री परमेश्वरदेव शाहके नामसे गद्दीपर बैठा। प्रतीत होता है कि मलाया-में वह पुनः हिन्दू संस्कृति पुनरुज्जीवित करना चाहता था।

सम्भव है कि वह अपने पूर्वधर्ममें पुनः दीक्षित होना चाहता रहा हो। 'शाह' पद नेपालके राजा अपने नामके आगे आजतक लगाते हैं। राजाकी इस नीतिसे मुसलमानोंमें शंका तथा खलबली पैदा हो गयी।

उसने सन् १४४५ में चीन मिशन भेजा।

तमिल मुसलमान—भारतीय मुसलमानोंको, जो मलायामें आबाद

थे, यह बात पसन्द न आयी। तमिल और गुजराती दोनों ही भारतीय मुसलिम मलायामें आबाद थे। इब्राहीमका बड़ा भाई राजा कासिम था। उसकी माँ तमिल मुसलमान थी। वह एक बड़े भारतीय तमिल मुसलिम व्यवसायीकी कन्या थी। वह पासेका रहनेवाला था। तमिलोंके सहयोग-से राजा कासिमने षड्यन्त्र किया। इस साजिशमे राजा कासिमके तमिल चाचाका, जो मुसलमान हो गया था, बहुत बड़ा हाथ था। उसीके कारण राजा कासिमको अपने भाई परमेश्वरके विरुद्ध बगावत करनेमे सफलता मिली। वह अत्यन्त शक्तिशाली हो गया।

सिंहासनका त्याग तथा हत्या—राजा परमेश्वरदेव सिंहासन त्यागनेके लिए तमिल मुसलमानोंके षड्यन्त्रके कारण बाध्य हो गया। उसने राजसिंहासन त्याग दिया। नव तमिल मुसलमानोको इससे भी सन्तोष नही हुआ। उसकी चुपचाप एक दिन हत्या कर दी गयी।

मुजफ्फर शाह—राजा कासिमने मुजफ्फर शाहकी पदवी धारण की। वह कट्टर मुसलमान था। औरंगजेबके समान उसने कट्टर मुसल-मानोके कारण गद्दी प्राप्त की थी। मुसलिम धर्मके प्रति उसे अधिकसे अधिक भक्ति दिखाना अत्यन्त आवश्यक था।

उसके समयमे मुसलिम धर्मका प्रचार जोरोंके साथ आरम्भ किया गया। हिन्दुओसे उसे खतरा मालूम हुआ। अपनी शक्ति बढ़ाने तथा मुसलिम हितसुरक्षाके लिए उसने समस्त मलायाको मुसलमान बनानेका इरादा किया। उसके चारो ओर हिन्दू राजा थे। मुसलमानोंकी सहायता तथा उनकी वृद्धि उसके अस्तित्वके निमित्त आवश्यक थी। भारतमें अपनी स्थिति कायम रखनेके लिए मुसलिम बादशाहोने भी यही नीति अपनायी थी। उन्हे हिन्दू राजा तथा हिन्दू जनतासे भय था। मुजफ्फर शाहका दरबार भारतीय मुल्ला-मौलवियोंका केन्द्र हो गया।

बलात् धर्मपरिवर्तन—उसने इन्द्रगिरी, कम्पर तथा पहंगका प्रदेश जीता, वहाँके हिन्दू राजाओंको जबरदस्ती मुसलमान बनाया। वे पुनः हिन्दू न हो जायँ इसलिए उसने अपने भाईकी तीन कन्याओंकी

शादी राजाके साथ मुसलिम धर्मके अनुसार कर दी।

मलक्कामे गुजरातके शक्तिशाली मुसलमान आबाद हो गये थे। उनका धन तथा राज्यशक्ति मुसलिम धर्मप्रचारमे लग रही थी। मुजफ्फर शाहकी स्त्रीका भाई तुनकुदू था। तुनकुदूका भाई तुनपेरक था। वह महान् मेधावी शासक तथा योद्धा हुआ है। उनके पिता प्रधान मन्त्री अर्थात् बेन्दहर (भाण्डरिक) थे। मुजफ्फर शाहके तमिल चाचाकी ताकत बढ़ती देखकर उसने आत्म-हत्या कर ली। उसके पश्चात् तमिल तुनअली बेन्दहर हुआ।

तुनपेरक और तुनअलीमे बहुत मनमुटाव हो गया था। मुजफ्फर शाहने तुनअलीपर जोर दिया। मुँह-माँगा इनाम लेकर प्रधानमन्त्रित्व त्याग दे। उसने बादशाहकी स्त्री अर्थात् तुनपेरककी बहनको माँगा। सुलताननने बिना हिचक उसके भाई तुनपेरककी सम्मतिसे उसे तुनअलीको दे दिया।

श्यामसे युद्ध—श्यामने अपनी गलतीका अनुभव किया। श्याम बौद्ध देश था। श्यामने जल तथा स्थल, दोनो मार्गोसे मलक्कापर आक्रमण किया। तुनपेरककी चातुरीसे श्यामका पराभव हुआ। मुजफ्फर शाहने सन् १४५६ मे चीन-सम्राट्से सम्पर्क स्थापित किया। चीन सम्राट्ने उसे सुल्तानकी पदवी दी। पुर्तगालने भी उसे सुल्तान स्वीकार किया। उसने सन् १४५९ तक शासन किया।

मन्सूर शाह—उसके पश्चात् उसका पुत्र राजा अब्दुल्ला मन्सूर शाहके नामसे सुलतान हुआ। अपने शासनके प्रथम वर्षमे उसने चीन सम्राट्के यहाँ दूत भेजा। तुनपेरक श्याम, मलाया तथा सिंगापुरका वीर कहा जाता है। उसने मलक्का राज्यको और बढ़ाया। पहगके राजा देवसुरको गद्दीसे उतारकर एक मुसलिम राजकुमारको गद्दीपर बैठाया। मन्सूर शाहके राजत्वकालमे ही केदाह, तेगानू, पहग, जोहोर, जम्बो, कम्पर तथा केरीमन द्वीपसमूह मलक्काकी छत्रच्छायामे आ गये। इस प्रकार सुमात्राके कुछ स्थानोंपर उसका राज्य कायम हो गया।

राजा अब्दुल्ला अर्थात् मन्सूर शाहके पश्चात् उसका पुत्र अलाउद्दीन रियायत शाह सन् १४७७-१४८८ ई० तक राजा रहा। सन् १४८८ ई०

मे रियायत शाहका भाई महमूद शाह गद्दीपर बैठा।

सन् १४८९ ई० में श्यामकी नाविक शक्तिने पुनः आक्रमण किया। सुलतान महमूदकी सेनाने श्यामी सेनाको पुलो वेसाहंगमें पराजित किया। सन् १४९८ मे तुनपेरक, जिसके कारण मलक्काकी इतनी उन्नति हुई थी, मर गया।

विदेशी शक्तियाँ—महमूद अफीम खाता था। राज्यका शासन वेन्दहर अर्थात् मन्त्री तुन मुनाहिरके हाथमे था। कुछ पुर्तगाली जहाज सन् १५०९ ई० मे मलक्का आये। पहले तो उनका स्वागत किया गया। अनन्तर वेन्दहर अर्थात् प्रधान मन्त्रीने बीस पुर्तगालियोंको कैद कर लिया। पुर्तगाली जहाजोंके प्रस्थानके पश्चात् महमूद और वेन्दहरमे झगड़ा हुआ। महमूदने वेन्दहरको मरवा दिया। किन्तु दूसरी शक्तियोंका उदय होना अवश्यम्भावी था। वे शक्तियाँ यूरोपीय थीं।

सन् १४९८ मे वास्कोडिगामाके जहाजने भारतभूमिके कालीकट-तटका स्पर्श किया। भारतमें इस समय सिकन्दर लोदीका राज्य था। भारतमें हिन्दुओंपर अत्याचार करने तथा मन्दिरोंको गिरानेमे शायद वह किसी मुसलिम बादशाहसे पीछे न था। मुगलोंका पैर बाबरके नेतृत्वमें अफगानिस्तानमे जम रहा था। मुसलिम शासकोंको विदेशियोंके खतरोंका ध्यान ही नहीं था। उनके सम्मुख आन्तरिक विद्रोह दबाने तथा हिन्दुओं-को इसलाममे दीक्षित करनेके अतिरिक्त और कोई जैसे काम ही नहीं रह गया था।

अल्बुकर्कने २५ नवम्बर, सन् १५१० को गोवापर अधिकार कर लिया। इसी समय इस्माईल आदिलशाहने बीजापुरमें राज्यारोहण किया तथा कृष्ण देवरायने रायचूर दोआबापर अधिकार कर लिया। पुर्तगा-लियोंको गोवापर अधिकार करनेमें कुछ भी कष्ट नहीं उठाना पड़ा। उन्हें भारतमें सैनिक बेस मिल गया। आजतक गोवापर पुर्तगाली झण्डा फहरा रहा है।

मलक्काका हाल मालूम होते ही पहला जहाज पहली अगस्त, सन्

१५०१ ई० को इस ओर चल दिया। पुर्तगालियोंका जहाज जब किनारेपर लगा तो मलक्काके लोगोंने उन्हें दाढ़ीवाला बंगाली समझा। भारतीय मुसलिम व्यापारियोंने जोर दिया कि इन नये काफिरोंको मार डालना चाहिये। एक षड्यन्त्र रचा गया। पुर्तगालियोंको पता लग गया। बीस पुर्तगाली तटपर रह गये थे। मलक्कावालोंके हाथ पड़ गये। शेषने जहाजोंमें जाकर जान बचायी। २ मई सन् १५११ ई० को अल्बु-कर्क कोचीन बन्दरगाहसे मलायाके लिए रवाना हुआ। उसके साथ ८०० पुर्तगाली तथा ३०० मलाबारी सैनिक थे।

सुल्तान महमूदने जहाज किनारेसे हटानेके लिए कहा। पुर्तगाली ६ दिनोंतक ठहरे रहे। महमूदने सद्भावनाका भाव नहीं दिखाया। पुर्तगालियोंने हिन्दू तथा चीनी जहाजोंके अतिरिक्त मलक्कामें ठहरे सब जहाजोंमें आग लगवा दिया। अन्तमें महमूदको झुकना पड़ा। पुर्तगाली बन्दी मुक्त कर दिये गये।

मलक्काका पतन—पुर्तगालियोंके साथ ११ सौ सैनिक थे। महमूदने २० हजार विदेशी सैनिक, २० हाथी तथा बहुत बड़ा तोपखाना एकत्र कर लिया था। पुर्तगालियोंका २५ जुलाईको महमूदपर आक्रमण हुआ। एक मसजिद तथा पुलपर अधिकार पहले दिन हुआ। महमूदने भयसे जावाके वैतनिक सभी सैनिकोंको बाकी तथा तीन मासका वेतन पेशगी अदा कर दिया। अगस्त ८ को नाविक सहायतासे पुर्तगालने विजय प्राप्त की। उन्हें तीन हजार तो केवल तोपें आदि मिलीं।

मलायाके किसी सुलतानकी मजारपर लगे सिंहोंको अल्बुकर्कने अपनी मजारके लिए निकलवा लिया। सुलतानके १५०० दासोंको मुक्त किया, उन्हें सुल्तानों तथा अन्य लोगोंकी कब्रोंके पत्थर उखाड़नेपर लगा दिया गया। मसजिदें मिसमार कर दी गयीं। मजजिदों, मजारों आदिके पत्थरोंसे पुर्तगाली दुर्ग एफमोसाका निर्माण किया गया।

मलक्कामें जावाके लोग उपनिवेश बनाकर रहते थे। उनका सरदार तिमुत अथवा उतिमुतराज अल्बुकर्कसे मिल गया। उसके मिलनेपर मह-

मूदकी शक्ति अत्यन्त क्षीण हो गयी।

सुलतानका पलायन—सुलतान महमूद पहंग भाग गया। कुछ काल पश्चात् उसने मलक्का लेनेका प्रयास किया। विफल रहा। चीन सम्राट्के पास राजदूत भेजा गया। पुर्तगालियोंके विरुद्ध सहायता माँगी गयी। चीन इस समय तातारोंके संघर्षसे परेशान था। उसने असमर्थता प्रकट की।

महमूदने जौहोर नदीके ऊपरी तरफ सयोगे पेनेगमें अपना केन्द्र स्थापित किया। स्थान समुद्रसे दूर था। उसने उसने सिंगापुरके दक्षिण-पूर्व विन्तेंगपर भी अड्डा जमाया। पुर्तगाली उसपर आक्रमण करते रहे। उसने सन् १५२३ ई० में पुर्तगाली प्रयासको विफल कर दिया। मलक्का घेरनेके लिए सेना भी भेजी। सन् १५२६ में पुर्तगालियोंने उसके नवीन राज्यपर आक्रमण किया। राज्य नष्ट कर दिया गया। राजा लिंगाको महमूदका नवीन राज्य दे दिया गया। महमूद सन् १५२८ ई० में सुमात्रा चला गया। कम्फरमें उसकी मृत्यु हो गयी।

मलय देशका मलक्का नाम—पुर्तगालियोंने मलय देशको मलक्का नामसे सम्बोधित किया है। उन्होंने लिखा है—मलक्कामें बहुतसे 'मूर' (मुसलमान) तथा कारोमण्डलके चेटी व्यापारी रहते हैं। उनके पास जहाज है। उन्हें जुगोस अथवा जंक कहते हैं। बहुतसे 'मूर' तथा गैर-मुसलिम व्यापार करने आते हैं। चीनसे भी दो मस्तूलवाले जहाज आते हैं। यहाँसे जहाज मलक्का द्वीपसमूह, तनासरीम, पेगू, बंगाल, कालीकट, कारोमण्डल, मलाबार, खम्भात तथा अदन सामान लेकर जाते है। मलक्का बन्दरगाह विश्वका श्रेष्ठ सम्पत्तिशाली बन्दरगाह है। बहुतसे जहाज यहाँसे चारों ओर जाते हैं।

अल्बुकर्कने लिखा है—मलक्का व्यापार-केन्द्र है। मलय द्वीपसमूहके द्वीपों, फारमोसा, चीन, जावा, उत्तरी सुमात्रा, भारत, अदन आदि स्थानोंसे यहाँ सामान आता है। व्यापारी लोग आपसमें सामान बदलते तथा खरीदते हैं। नगर समुद्रतटपर आबाद है। जनसंख्या एक

लाख होगी।

अन्य राजाओंने इसलाम स्वीकार किया—पहगका प्रथम मुसलिम शासक मलक्काके सुल्तानका लड़का था। उसकी कब्रका पत्थर गुजरातसे बनकर आया था। सन् १९७४ में केदाह-विजयके पश्चात् मुसलिम शासन स्थापित हुआ। केलण्टन राज्यने पटनी राज्यके अधीन होनेपर इसलाम धर्म स्वीकार किया। त्रेनग्गनू राज्य मलक्काके अधीन था। अतएव मुसलिम धर्म स्वीकार कर लिया। इसके पश्चात् जावामे मजपहितका साम्राज्य भी १५२३-१५२८ ई० के बीच मुसलिम शक्तिके प्रभावशाली होनेपर लुप्त हो गया। सन् १५९५ ई० तक बलंम्बंगन हिन्दू राज्य था। वह अठारहवीं शताब्दीके मध्य अर्थात् सन् १७५० मे हिन्दू राज्यसे मुसलिम राज्यमे परिणत हो गया।

यूरोपीय शक्तिके उदयसे मलक्काकी राजनीतिने पलटा खाया। उत्तरोत्तर यूरोपियनोकी शक्ति बढ़ती गयी। परन्तु मलाया इस समयतक पूर्णतया इसलाम ग्रहण कर चुका था।

इसलामीकरण—मलक्का राज्यकी छत्रच्छाया तथा अभिभावकत्वमें समस्त मलाया, जावा, सुमात्रा तथा बोरननियोमे मुसलिम धर्म फैल गया। शत प्रतिशत हिन्दुओंने इसलाम ग्रहण किया। इस समयका जीन डी बरोंसने जो वर्णन किया है, वह पढ़ने योग्य है—

'गुजराती तथा फारसके मुसलिम व्यापारियोंके, जो यहाँ आबाद हो गये थे, उभाड़ने तथा प्रयासपर लोगोंको मुसलमान बनाया जाने लगा। यहाँसे मुसलिम धर्ममे दीक्षित करनेके लिए मुसलमान मिशनरी, सुमात्रा, जावा तथा मलक्काके समीपस्थ स्थानोमे भेजे जाने लगे। मलक्काका राज्यवैभव, शक्ति, गुजराती मुसलिम व्यापारियोंका धन मुसलिम धर्म प्रचारमें लगने लगा। मलक्का मुसलिम धर्मप्रचारका केन्द्र हो गया।

गए। हम इसे हिन्दू शासन तथा हिन्दू जातिका आत्मघात अथवा हत्या ही कहेंगे।

कुछ ही समयमें मलायाके हिन्दू मुसलमान बन गये। इस समय मलायामें हिन्दुओंका कोई ऐसा संघटन तथा शक्ति शेष नहीं रह गयी थी, जो उनमें प्राण फूँकती अथवा धर्मपरिवर्तनसे रोकती।

हिन्दू तथा बौद्ध जन्मजात धर्मनिरपेक्ष होते हैं। अपने ही लोगोंको धर्मपरिवर्तन करते देखकर भी उन्होंने कुछ करनेका प्रयास न किया। स्वयं बर्मा, कम्बुज तथा थाई संघर्षोंमें उलझ गये। दूरदर्शितासे काम ले न सके। कालान्तरमें मलायाके जितने भूभागपर स्यामका अधिकार था, वह भी उठ गया।

मलायामें रामायण तथा महाभारतकी गाथाएँ प्रचलित थीं। उनके आधारपर छायानाटक तथा अल्पनाटक प्रदर्शित किये जाते थे। मुसलमानोंने इन्हें बन्द करना चाहा। उन्हें पूर्ण सफलता प्राप्त न हुई।

राजदरबारसे संस्कृत शब्द छाँट-छाँटकर निकाले जाने लगे और उनके स्थानपर अरबी शब्द भरनेकी धूम मच गयी। अमीर हमजा, मुहम्मद हनीफ, सिकन्दर आदिकी गाथा, कहानियाँ आदि प्रचलित होने लगीं। मुसलिम रहस्यवाद, मुसलिम कानून आदि भारतसे भारतीय रंगमें रँगे आने लगे।

मलक्काका अन्तिम सुलतान जोहोर राज्यका प्रथम सुलतान हुआ। उसके तथा उसके उत्तराधिकारियों द्वारा इसलामका प्रचार जोहोर, रियायू तथा लिंगामें हुआ।

पुर्तगालियोंसे संघर्ष—महमूदका कनिष्ठ पुत्र अलीउद्दीन उसका उत्तराधिकारी हुआ। जोहोर नदीपर एक स्थानको उसने अपनी राजधानी बनाया। सन् १५३६ में पुर्तगालियोंने उसपर आक्रमण किया। उसने सन्धि कर ली तथा मुआरमें अपना निवास बनाया।

अलीउद्दीनके बड़े भाई मुजफ्फर शाहने पेरक प्रदेशमें अड्डा जमाया। इस प्रदेशमें इस वंशका अबतक राज्य है। । पेरक, जोहोर तथा पहंगके

सुलतान पुर्तगालियोसे शान्ति-सुलहकी बाट जोहने लगे। अचेहका सुलतान अली मुफैयत (१५३०-१५८६) शक्ति संचय कर रहा था। गुजरात तथा चीनसे व्यापार बढ़ गया। सन् १५३७ में उसने मलक्कापर आक्रमण किया। पुर्तगालियोंको पराजित करनेमे विफल रहा।

सन् १५४७ मे अचेहने पुनः मलक्कापर आक्रमण किया। मलायाके मुसलिम सुलतानोंने बड़ा अच्छा मौका देखा। जोहोर, परेक तथा पहंगके सुलतान मिलकर मुआर नदीके मुहानेपर डट गये। पुर्तगाल अथवा अचेह, जिसकी विजय हो उसीका ढोल पीटनेके लिए तैयार थे। पुर्तगाली विजयी हुए। तीनो सुलतान बिना लड़ाईमे उतरे चुपचाप लौट गये। सन् १५५१ ई० मे मलय सुलतानोंकी प्रायः सम्मिलित शक्तिने पुर्तगालियोंको कमजोर जानकर मलक्कापर घेरा डाल दिया। पुर्तगाली उनकी राजधानियोपर आकमण करने लगे। सब सुलतान खतरा आसन्न देखकर लौट गये।

तुर्कोंसे मदद—अचेहके अलाउद्दीन रियायत शाहने सन् १५६८ ई० में पुर्तगालियोंके विरुद्ध मुसलिम शक्ति संघटित की। तोप, तोपची तथा गोला-बारूद टर्कीसे मिला। मलक्कापर आक्रमण करनेके पूर्व जोहोरपर सन् १५६४ ई० मे आक्रमण किया गया। वहाँके सुलतान अलाउद्दीनको पकड़कर सुमात्रा भेज दिया गया। जोहोर तथा अचेहमे इस आक्रमणके कारण मनमुटाव हो गया। जोहोरने पुर्तगालका साथ देनेका निश्चय किया। सन् १५६८ ई० मे अचेहने मलक्कापर आक्रमण किया। पुर्तगालने जोहोरसे सहायता माँगी। जोहोरके ६० जहाज उस समय लड़ाईपर पहुँचे, जब पुर्तगाल विजय प्राप्त कर चुका था।

अचेह और मलक्काका संघर्ष सन् १५७५ ई० तक चलता रहा। इसी बीच अचेहने पेरकके सुलतानपर आक्रमण किया। वहाँका सुलतान मार

हुआ। उसने अपनी कन्याकी शादी जोहोरके सुल्तान अब्दुल जलील रियायत शाहके साथ कर दी। उसने अपने भाईको पेरकका सुल्तान बनाकर भेजा। विवाहका उद्देश्य जोहोरकी सहायता प्राप्त करना था। सन् १५८२ ई० मे अचेहने जोहोरपर आक्रमण किया। पुर्तगालने अचेहको पराजित करनेमें जोहोरकी सहायता की।

सन् १५५८ ई० में मन्सूर शाहका कत्ल जल-सेनापतिने करवा दिया। चार वर्ष पश्चात् वह सुलतान अलाउद्दीन रियायत शाहके नामसे सुल्तान बन गया। सन् १६०४ ई० तक शासन किया।

मलक्कापर आक्रमण—सन् १५८६ ई० तथा १५८७ ई० में जोहोरने पुर्तगाली दलके मलक्कापर आक्रमण किया। उसने अचेहसे भी सम्बन्ध कर लिया। परन्तु पुर्तगालने जोहोरको हरा दिया। विजयपर अचेहने मलक्काको बधाई दी, यद्यपि उसने जोहोरको सहायता देनेका वचन दिया था। शताब्दीके अन्ततक जोहोर बहुत शक्तिशाली हो गया।

उसकी शक्ति बढ़ती देखकर अचेहके सुलतानने मलक्कासे सहायता माँगी। जोहोरकी नवीन राजधानी बाटूसवरको घेरनेके लिए सेना भेजी।

डच और अँग्रेज—इसी समय मलायामें अँग्रेजों तथा डचोंका उदय होता है। जोहोरके सुल्तानने डचोंसे सम्पर्क स्थापित किया। डच और जोहोरकी सम्मिलित शक्तिने मलक्कापर सन् १६०६ ई० आक्रमण किया। सफलता न मिली।

सन् १६०७ ई० में इस्कन्दर शाह तत्कालीन सुल्तानको हटाकर सिंहासनपर बैठा। उसने पुर्तगालकी शक्तिका ह्रास देखा। सन् १६१० ई० में केदाह, सन् १६१८ ई० में पहंग तथा १६२० ई० मे पेरेक अपने राज्यमें मिला लिया। सन् १६१३ ई० तथा सन् १६१५ ई० में जोहोरपर आक्रमण किया। वहाँका सुल्तान मलक्का अर्थात् पुर्तगालसे सुलह कर रहा था। अतएव सन् १६१६ ई० में सुल्तान जोहोरने इस्कन्दर शाहसे मिलकर मलक्कापर आक्रमण किया। आक्रमण असफल रहा।

सन् १६२९ ई० मे मलक्का, जोहोर तथा पटनीकी सम्मिलित शक्तिने

अचेहको मलक्काके समीप बुरी तरह हरा दिया। अचेहके सुल्तान इस्कन्दरकी सन् १६३६ ई० मे मृत्यु हो गयी। उसका दत्तक पुत्र इस्कन्दर द्वितीय गद्दीपर बैठा।

जावामें इसलामका प्रचार—सुवर्ण-द्वीपमे जावा अर्थात् यवद्वीप भारतीय सभ्यता, संस्कृति तथा धर्मका केन्द्र था। वहॉ भी इसलाम फैला। प्रचारका ढग भारत तथा मलायाके सदृश था। चीनी लेखक माहुयन सन् १४१६ मे लिखता है—जावामे विदेशी मुसलमान उप-निवेश बनाकर आवाद हो गये थे। वे व्यापारी थे, उन्होंने कोई राज-नीतिक अधिकार नही प्राप्त किया था।

पुर्तगाली लेखकोके विवरणसे पता चलता है कि पन्द्रहवी शताब्दीके अन्ततक कुछ बन्दरगाहोंपर जावाके मुसलमान हुए सरदारोंका प्रभाव था। उनमे विदेशी मुसलमान भी थे। हिन्दू राजाका प्रभुत्व मानते थे।

मलक्काका मुसलमान था। अतएव उसे भय था जावाका हिन्दू राजा उसपर आक्रमण कर सकता है। श्याम शत्रु था। सुमात्रा भी विरुद्ध हो सकता था। मलक्काके नाशका अर्थ मुसलिम व्यापार तथा नव-मुस-लिमोका भविष्य अन्धकारमय करना था। जावामें मलाया तुल्य ही धर्मप्रचारकी नीति अपनायी गयी। विवाह साधनसे धर्मप्रचार आरम्भ किया गया। मुसलिम कन्याऍ इस प्रकार शिक्षित की जाती थीं कि वे अपने प्रेमी अथवा पतिको धर्म बदलनेके लिए बाध्य कर देती थीं।

समुद्रतटके नगरोसे मुसलिम व्यापारी खूब धनी हो गये थे। उनके पास दुनियाभरकी खबर थी। हिन्दू व्यापारियोंका लोप हो गया था। खलीफा तथा दुनियामे मुसलमानोके फैलावकी खूब बात कही जाने लगी। मुसलिम धनिकोंके पास अनेक सुन्दर नारियॉ तथा दास-दासी थे। उनके वैभवको देखकर हिन्दू राजा तथा सामन्त ललचा उठते थे।

उसका नाम सुननगुनो यती हिन्दुओंको आकर्षित करनेके लिए रखा गया। उसके दो पुत्र थे। उनमे हसनुद्दीन साहसी योद्धा था।

सिगापुर भ्रमणके समय हमे आजमगढ़के दो शिक्षित हिन्दू युवकोंका पता लगा। मलय स्त्रीसे शादी की थी। उन्होंने अपने धर्म तथा नाम, दोनोंका परिवर्तन कर लिया था।

जावामे विवाह-प्रथा खूब प्रचलित की गयी। पासेका पदच्युत सुल्तान जैनुल आवदीन जावाके राजासे सम्बन्धित था। उसने जावामे शरण ली। राजाके यहाँ भी कुछ मुसलिमोकी आवादी थी। पासेके सुल्तानके साथ शरणार्थी बहुतसे मुसलमान भी आ गये थे। राजदरवारमे धीरे-धीरे मुसलिम प्रभाव बढ़ने लगा। राज्यके बहुतसे सरदार तथा दरवारी मुसलमान नीतिसे प्रभावित हो उठे। राजापर जोर दिया जाता। सिंहासनका भय दिलाया जाता। परिणाम यही होता कि राजा या तो मुसलमान हो जाता या भागता। राजाको दरवार तथा राज्यप्रासाद, अर्थात् भीतर तथा बाहर किसी तरफसे सहायता न मिलती। मुसलिम व्यापारी तथा अन्य मुसलिम राज्योकी शक्तिकी सहायतासे राजा दहला दिया जाता था।

वन्दरगाहों तथा व्यापारिक केन्द्रोमें जहाँ मुसलमान आवाद थे, चुपचाप अपना काम करते थे। उनकी शक्ति जब बढ़ जाती तो हिन्दू राजा अथवा सरदारकी सत्ता माननेसे इनकार करते। हिन्दू राजा तथा सरदारोंको एक-दूसरेसे लड़ाकर कमजोर कर देते थे। राजाको या तो परिस्थितिके अनुसार समाप्त कर देते अथवा उसे विश्वास दिलाते कि मुसलमान बनकर राज्य करनेमे समस्त मुसलिम जनताकी शक्ति उसके पीछे रहेगी। उनका पारस्परिक मिलन, एक साथ खाना, एक साथ पीना, एक साथ रहना आदि साधारण जनताको प्रभावित भी करता था। जनता कभी उनके प्रचारके कार्यमे वाधा न देती थी।

गिरीन्द्रवर्धन—राजा गिरीन्द्रवर्धनने इस खतरेको समझा। उसने राणा प्रतापके समान सघर्ष किया। रणविजय राजाका नाश चाहता था।

मुसलमान इसी अवसरकी तलाशमे थे। गिरीन्दके विरुद्ध खूब सहायता की। उनकी नीति सफल हुई। गिरीन्द्रवर्धनके चले जानेपर मुसलमानोंने रणविजयका भी खात्मा कर दिया। इसलामने जावामे पैर जमा लिया, चेरीवोन इसलाम-प्रचारका मलक्काके समान केन्द्र बन गया। सन् १५५२-१५५६ ई० के बीच हिन्दू राज्य सुन्दापर भी मुसलमानी झण्डा लहरा उठा। भजपहितके छोटे-छोटे मुसलिम सामन्त रदेनपताके नेतृत्वमे एकत्र हो गये। वह जावामे इसलामका सबसे बड़ा जेहादी माना गया है। तिङ्किर मजपहितका राजकुमार था। मुसलमानोने उसे अपना सुलतान घोषित किया। उसने मुसलिम धर्म स्वीकार कर लिया था। किन्तु रोग 'मर्जुल मौत' हो गया था, उसने सन् १५२२ ई० मे जावा त्याग कर वाली द्वीपमे शरण ली। जावा भी मलायाके समान पूर्णतया मुसलमान हो गया। सुवर्ण-द्वीपमे केवल वालीके अतिरिक्त सभी इसलाम धर्मके अनुयायी है। सुन्दरसे सुन्दर मसजिदे बनने लगी। देवमूर्तियोंके सम्मुख कोई सर झुकानेवाला न रह गया था। उनकी कोई उपयोगिता न रह गयी। मन्दिर और मूर्तियॉ स्वय कालान्तरमे प्रकृतिके चपेटेमे नष्ट हो गयी।

सन् १३३८-१३६५ ई० के बीच हिन्दू राज्य भजपहितने श्रीविजयके अनेक द्वीपो तथा बहुतसे भूखण्डोको जीत लिया। उससे हिन्दू प्रभाव मलायामे बढ़ा। मलायामे इसलाम यद्यपि बारहवी शताब्दीमे आ चुका था, परन्तु ४०० वर्षोंमे वह नाममात्रकी भी प्रगति नही कर सका। मलक्काके राजा परमेश्वर तथा उनके लड़कोके इसलाम ग्रहण कर लेनेके पश्चात् ही इसलामीकरणका कार्य जोरोसे प्रारम्भ किया गया।

मन्दिर-ध्वंस—मलायामे धार्मिक स्थानो, मन्दिरो-मूर्तियोंको सुनिश्चित योजनाके साथ नष्ट किया गया, कुछ भी अवशेष नही रह गया है। कही-कही गड़े शिलालेखोके मिल जानेपर कुछ प्रकाश पड़ता है। इसलाम-प्रचारकोने मलायाका नवीन इतिहास बनाना चाहा। पुरानी सब बातोको पुराने हिन्दू धर्मकी तरह गाड़ देना चाहते थे। वे प्रत्येक

वंशके तथा राजाकी वंशावली किसी-न-किसी विदेशी अथवा देशी मुसलिम-राजसे जोड़कर भुला देना चाहते थे कि वे कभी हिन्दू थे। प्रसिद्ध कवि हमजा लिखता है—तलवार खींच लो। म्यान जला दो। मूर्तियोंको फेंक दो। तभी अल्लाहकी आज्ञाका पालन होगा। फिर भी मलाया जनता सभी बातोंको भूल न सकी।

सती-प्रथा—जावा और बालीमें सती-प्रथा थी। परन्तु मलायामें केवल सुमात्रामें सन् १५०२-१५०८ ई० का एक उदाहरण मिलता है कि एक स्त्री सती हुई थी। मलायामें भी वह प्रथा थी। मलायाके राजा तथा सरदार-पत्नी तथा दासियाँ ही सती होती थीं। परन्तु उपलब्ध इतिहाससे अभीतक कोई उदाहण नहीं मिल सका है।

समन्वयी भाव—मलायामें पढ़े लिखे लोग हिन्दू तथा बौद्ध धर्मके समन्वयी भावको मानते थे। अर्थात् दोनों धर्मोंके देवताकी आराधना करते थे। दोनों धर्मोंके पर्वोंको भी मानते थे। साधारण जनता यद्यपि हिन्दू थी, परन्तु भारतीय ग्रामोंके समान वहाँ भूत, प्रेत, जादू, टोना, प्रचलित था।

इस कुसंस्कारमें बँधी जनताको राजाओं द्वारा प्रचारित आदेशोंसे मुसलमान बनानेमें परिश्रम नहीं करना पड़ा। भूत, प्रेत, जादू, टोनाके साथ ही साथ उपभाव अल्लाह और कुरानका प्रवेश करा दिया गया। उनकी महत्ता तथा श्रेष्ठता जनताके मनमें बैठा दी गयी। पहले जनता हिन्दू तथा मुसलमान धर्म, दोनोको मानने लगी। समय जैसे बीतता गया, हिन्दूके स्थानपर पूर्णतया मुसलिम धर्म मानने लगे। भारतमें भी वह प्रक्रिया बहुत पहले शुरू की गयी थी। उसका ही अनुकरण मलायामें किया गया। भारतमें हिन्दू लोग पीर शहीदमर्द, ताजिया, मजार-पूजा, पीरी-मुरीदी मानते थे। बहुतसे भारतीय हिन्दू राजा मुहर्रम मनाते थे। मुसलिम फकीरोंकी प्रतिष्ठा करते थे।

एक पुराने लेखका उद्धरण है—'ओम् मैं तुम्हें नमस्कार करता हूँ।' धीरे-धीरे वर्षा गरमीसे शान्त करनेके लिए होने लगी। धूल आकाशमें

उड़ रही है। वह एक चिह्न है। प्रतीत होता है कि देवतागण स्वर्गमें चढ रहे है। बड़े दरवाजेको खोल दो। शिव स्वर्गकी चोटीसे नीचे बुरे प्रेतोंको, बुरे रोगोको भगानेके लिए आ रहे है। जब कि यह पृथ्वीमात्र एक फुटकी थी अथवा स्वर्गमें रूहोंकी रचना हुई थी, उस समय केवल अल्लाहका तख्त, किस्मतका लेख तथा कुरानका अस्तित्व था। बाद-शाह सुलेमान और शिव भूतोको भगा देते थे।

'शिव' और 'सुलेमान'—उक्त लेखसे स्पष्ट होता है कि शिवको कुरान-वर्णित हजरत सुलेमानके समकक्ष लाया गया। अल्लाह तथा कुरानका अस्तित्व पृथ्वीकी रचनाके पहले माना गया। कालान्तरमे शिवको एक मूर्ति-पूजक जिनका रूप दिया गया, अर्थात् शिवसे अल्लाह नाराज हैं, क्योंकि वह मूर्तिपूजक है। मूढ़ जनताने इसे ही सत्य समझा। सुलेमान तथा शिव, दोनोको समकक्ष समझनेके स्थानपर सुलेमानको अल्लाहका प्रेमी और शिवको द्रोही बना दिया। द्रोहीकी कौन पूजा करेगा? शिवको जनता भूल गयी।

देवता जिन्न बने—राहु, केतु, देवी, दनु, राक्षस, भूत आदि देवी-देवता, भूत-प्रेत, सबको जिन्न बना दिया गया। सर्वशक्तिमान् भगवान् अल्लाह उनसे नाराज है। उनपर भगवान्का कोप होगा। अतएव जनता उनपर विश्वास करना छोड़ने लगी। हिन्दू कुसंस्कारके स्थानपर शुद्ध इसलाम धर्म स्थायी हो गया। रामायण और महाभारतकी गाथाएँ प्रेम-काव्य आदिमे वर्णित थीं। उनमे धीरे-धीरे इसलामिक भाव फैलाया गया। एक प्रेमी कहता है—मैं अपनी प्रेमिकाकी प्रेमाग्निमे जल रहा हूँ। मेरी ज्वाला 'अर्जुनका बाण' है। यदि वह सोती हो तो उसे उठा दो। यदि वह जागती हो तो उसे आने दो। वह मुझसे विवेक, लज्जासे रहित होकर मिले। उसे केवल मुझे समर्पण कर देना चाहिये।

रामायण तथा महाभारतका साधारण जनतापर प्रभाव था। उसे भी बदलनेका प्रयास हुआ। रामायण तथा महाभारतके देवताओका बिल-कुल बहिष्कार न किया गया। अल्लाह तथा रसूलको भी उनकी जगह

रखकर जनताके गलेके नीचे उतारा गया।

राम, लक्ष्मण और अर्जुनके नामोंके स्थानपर सिकन्दर तथा ईरानी बादशाहोंके नाम भरती किये गये।

बालीका हिन्दू राज्य

पुर्तगालियोंके वर्णनसे ज्ञात होता है कि सुन्दके नगरों तथा बन्दरगाहोंमें कुछ मुसलमान आबाद थे। वे हिन्दू राजाके आश्रयमें फल-फूल रहे थे। सन् १५२२-१५२८ ई० के बीच उन्होंने राजापर आक्रमण किया। राजाका अस्तित्व समाप्त कर दिया।

मदुराका राजा मुसलमानोंकी बढ़ती ताकत तथा अपने लिए भय उपस्थित देखकर स्वतः मुसलमान हो गया।

सुवर्ण-द्वीपमें लगभग १५ सौ वर्षोंसे फैली हिन्दू संस्कृति, सभ्यता एवं धर्मका चुपचाप लोप हो गया। दो-एक हिन्दू राजा बच गये थे। उनका भी कालान्तरमें अवसान हो गया। केवल बाली हिन्दू रह गया।

स्वर्णभूमि तथा देशका चित्तौर—जावाके पूर्व बाली स्थित है। द्वीप है। लम्बान ९३ और चौड़ान ५० मील है। आबादी १० लाख है। चित्तौड़ तथा उदयपुरके समान बाली दक्षिण-पूर्व एशियामें स्वाधीन हिन्दूराजका झण्डा अन्ततक फहराता रहा। उसने मुसलमानोंकी अधीनता न स्वीकार की और न उन्हें अपने देशमें पैर रखने दिया। बालीको यदि सुवर्णद्वीप तथा भूमिका चित्तौर कहें तो अतिशयोक्ति न होगी।

बालीकी गाथा है कि भगवान् बुद्धकी माता शुद्धोधनकी धर्मपत्नी महामाया बाली कन्या थी। वे उसमें विश्वास करते हैं। यह भी गाथा है कि कम्बुजके समान कौडिन्य राजवंश बालीमें स्थापित हुआ। पाँचवीं शताब्दीके कथानकसे पता चलता है कि राजा रेशमी वस्त्र तथा रत्न-जटित मुकुट धारण करता था। उसका सिंहासन सुवर्ण तथा पावपोश चाँदीका होता था। चामरधारिणी कामिनियाँ उसके साथ रहती थीं।

उसका रथ हाथी खींचता था। रथपर छत्र लगा रहता था। राजाके आगे नगाड़ा तथा शंख-ध्वनि होती चलती थी। वह रूप कहना न होगा कि शुद्ध हिन्दू राजाका है। वालीका सम्बन्ध सीधा भारतसे था, न कि सुवर्ण-द्वीपके अन्य द्वीपों द्वारा हिन्दुत्व तथा भारतीय सभ्यता वालीमे आयी थी।

सन् ८९६ ई० का ववेतिन तथा सन् ९१५ ई० का ववहनके ताम्रपत्र तथा अभिलेख मिले है। वालीकी भाषा जावाकी भाषा 'कवि'से मिली है। उसमे वालीराज उग्रसेनका वर्णन है। उग्रसेनके पश्चात् तबनेन्द्र वर्मदेव, चन्द्राभव सिह वर्मदेव, जनसाधु वर्मदेव तथा रानी श्रीविजय महादेवीका राज्य करना मिला है। राजा धर्मवशने वालीको जीता, जो लगभग सन् १०२२ ई० मे था। उसपर उदयन तथा महेन्द्रदत्त राजाकी ओरसे शासन करते थे। सन् १२२२ ई० मे कादिरी राज दुर्बल हो गया। वालीने स्वतन्त्रता प्राप्त की। सन् १२५० ई० मे परमेश्वर आदि लाच्छेन राजा था। कृतनगरने सन् १२८४ ई० मे वालीके राजाको वन्दी कर लिया। तत्पश्चात् वाली पुनः स्वतन्त्र हो गया। भजपहित राज्यके उदयमे वालीने अपनी स्वतन्त्रता पुनः खो दी।

वाली—हिन्दुओंका शरणार्थी शिविर—मलाया, सुमात्रा, जावा आदिके इसलाम धर्म ग्रहण करनेपर हिन्दू वहाँसे भागकर वाली आये। वाली दक्षिण-पूर्व एशियाका हिन्दुओका शरणार्थी शिविर हो गया। भजपहित राजवंशके पराभवके पश्चात् दक्षिण-पूर्व एशियामे हिन्दू राजका एकमात्र प्रतीक वाली रह गया।

वालीराज—लिखा जा चुका है कि जावाके भजपहित राजा भी अपनी रक्षा इस तापकी बढ़ती बाढ़से न कर सके। उन्होने धर्मरक्षणार्थ उसी तरह देशत्याग किया, जिस तरह पाकिस्तानके हिन्दुओने किया है। बालीमे आकर हिन्दू जनता तथा राजा आवाद हो गये। वालीका राजादेव अगुड् केतु (देव अंगकेतु ?) हुआ। उसने देशमे शान्ति तथा सुव्यवस्थित राज्य-व्यवस्था कायम की। गेलगेलमे राजधानी स्थापित हुई। उसके वंशज सत्रहवीं शताब्दीतक राज करते रहे।

इस वंशमे वतुरेङोङ सोलहवी शताब्दीमें प्रतिभाशाली राजा हुआ है। उसने वालीके अतिरिक्त सम्बवा तथा वलम्बेगनपर शासन किया था। वलम्बेगनके कारण मतराम सुल्तान तथा वाली राजमे संघर्ष हुआ। सन् १६३९ ई० मे मतरामने वालीपर आक्रमण किया, वह विफल रहा। वालीका डचोंके आक्रमणकालतक अधिकार स्थापित रहा।

डचोंका प्रवेश—वालीकी राजधानी करङ सेम नष्ट कर दी गयी। नवीन राजधानी क्लुङकुङमें स्थापित की गयी। वाली अनेक जिलोंमे विभक्त था। प्रत्येक जिलेमे एक राज्यपाल होता था। वे धीरे-धीरे स्वतन्त्र हो गये। नौ राज्य वन गये। डचोंने वालीपर आक्रमण कर उसे जीत लिया। वालीने सन् १८३९ ई० मे डच सत्ता स्वीकार कर ली। राजा लोग भारतीय रियासतोंके तुल्य वने रहे।

सन् १९०८ ई० मे क्लुंगकुंगमें मजपहित राजका वंशज देव अगुङ (अंग) था। उसने डचोंसे वालीको स्वतन्त्र करनेका प्रयास किया।

विश्वका अन्तिम जौहर—डचोंसे संघर्ष आरम्भ हुआ। राजाका प्रासाद घेर लिया गया। विना शर्त आत्मसमर्पणकी शर्त डचोंने उपस्थित की। राजाने उसे अपमानजनक कहकर अस्वीकार कर दिया।

राजा क्षत्रिय वंशका था। उसे अपने वंशगौरवका अभिमान था। उसने अपने वंशकी वह कृपाण हाथमे ली जिसने शताब्दियोंसे सुवर्ण-द्वीपके न जाने कितने संघर्षोंमे भाग लिया था।

राजवंशके पुरुष, स्त्री, वाल-वच्चे, सगे-सम्बन्धी सब मरनेके लिए तैयार हो गये। चित्तौड़के राजपूतों सदृश वे प्रासादसे निकल आये। प्रासाद घेरे डच सेना खड़ी थी। हिन्दू समाजका अपने ढंगका यह अन्तिम समुदाय जयघोष करता शत्रुकी वाहिनीपर टूट पड़ा। उसने अपने साथियोंके साथ वीरगति प्राप्त की। क्लुङकुङका पतन हो गया। वहाँके वचे-खुचे सैनिक अथवा योद्धा लम्वोकमे निर्वासित कर दिये गये।

अन्तिम हिन्दू राज्य—सन् १९११ ई० में दक्षिण-पूर्व एशियाका एकमात्र हिन्दू राज्यका दो हजार वर्षके इतिहासों के साथ सर्वदाके लिए

लोप हो गया। भारत सात सौ वर्षतक परतन्त्र रहा। उसके मन्दिर गिरते-बनते रहे। हिन्दुओसे निकलकर लोग मुसलमान बनते रहे। हमे यह नहीं भूलना चाहिये कि भारतके पराधीन होनेके सात सौ वर्ष बादतक बालीमे हिन्दू राज्य कायम रहा। वे मुसलमानोसे लड़ते रहे। वे सफल योद्धा साबित हुए। डचोंके आधुनिकतम हथियारोंके सम्मुख उनकी तलवार काम न दे सकी, लेकिन उनमे कितने ही स्वतन्त्रताकी रक्षामे काम आ गये। राज्य डच साम्राज्यमे सम्मिलित कर लिया गया।

सुवर्ण-भूमिके देश बर्मा, श्याम, कम्बुज आदि बौद्ध धर्मावलम्बी है। वहॉकी आत्मा भारतीय है। श्याम तथा कम्बुजमे प्राचीन ब्राह्मणवंशका अभी भी अस्तित्व वर्तमान है।

मलायामें प्रतिक्रिया—मलायामे धर्मपरिवर्तन होनेके साथ सब कुछ बदल गया। बौद्ध धर्म भारतीय धर्म था। उसके तीर्थस्थान भारतमे थे। भाषाका आधार सस्कृत तथा पाली था। हिन्दू धर्मके स्थानपर बौद्ध धर्म ग्रहण करनेपर भी वे देश भारतसे विरत न होकर उसे अपना पवित्र तीर्थ-स्थान मानते है। यह सम्बन्ध आज बढ़ता जा रहा है।

मलायामे प्रतिक्रिया उलटी हुई। मलायाका धर्म इसलाम हो गया। ऑखें अरबकी ओर उठी। भारतमे उनके लिए कोई आकर्षण न रह गया। धार्मिक तीर्थ-स्थान अरबमे थे। धार्मिक भाषा अरबी थी। नागरी लिपिके स्थानपर अरबी अपना ली गयी। भारत उन्हे न तो कुछ दे सकता था और न उन्हे आध्यात्मिक ढगसे अनुप्राणित कर सकता था। समस्त मलायामे अरबी लिपि प्रचलित है। भारत, ईरान, अफगानिस्तान, इराक, तुर्किस्तान आदि देशोमें अरबी लिपि न चल सकी। किन्तु मलायामें वह जनसाधारणकी लिपि है। अरब जगत्के अतिरिक्त यदि किसीने अरबी लिपि विदेशोमे अपनायी तो वह सुवर्ण-द्वीप था, जहॉकी राजभाषा कभी संस्कृत थी।

कुछ ही वर्ष पूर्व मलायाके लोग अपने नामके आगे राजा लिखते थे, किन्तु उसके स्थानपर सुल्तान शब्दका प्रयोग होने लगा। नामोंका

मुसलमीकरण खूब हुआ। अब्दुल्लाहसान बिन मुहम्मदका प्रयोग किया जाने लगा। अरबमें 'बिन' शब्दका प्रयोग होता है। भारत, अफगानिस्तान तथा ईरानमें 'बिन' शब्द प्रचलित न हो सका। परन्तु मलायामें प्रत्येक नामके साथ 'बिन' होता है। 'बिन'का अर्थ पुत्र होता है। राजवंशीय लोग बिनका प्रयोग न कर पुत्रका प्रयोग करते हैं। वर्तमान प्रधान-मन्त्रीका नाम टेंकू अब्दुल रहमान पुत्र है। मलय भाषाका जितना अरबीकरण किया गया, शायद ही किसी और भाषाका किया गया हो। बचे-बचाये संस्कृत शब्दोंका लोप होता जा रहा है उनके स्थानपर आज भी अरबी तथा फारसी शब्द भरे जा रहे हैं, तथापि मलयमें भारतीयताके बहुत चिह्न प्राप्त होंगे। मलय जाति मुसल-मान होनेके बावजूद भारतके उन मुसलमानोंके समान पागल नहीं है, जिन्होंने देशका बँटवारातक करा डाला। यहाँ अनेक प्रदेशोंमें गोहत्या बन्द थी। वर्तमान मलय संघके सुलतानकी महारानीका नाम 'पर-मेश्वरी' है।

मलाया तथा हिन्देशियामें अन्तर है। मलायामें नामतक बदल दिये गये थे। अरबी और ईरानी नाम रखे गये, परन्तु हिन्देशियामें नाम आदिका मुसलिमीकरण नहीं किया गया। लोगोंके नाम संस्कृतमें रहे। भाषा भी बदलनेका प्रयास नहीं किया गया। हिन्देशियाकी 'एयरलाइन'-का नाम 'गरुड़' है। सिंगापुर अन्तर्राष्ट्रीय वायुपथ पत्तन है। वहाँ विश्वकी प्रत्येक वायुयान कम्पनीका नाम तथा आफिस है। भारतके वायुयान कार्यालयका नाम 'एयर इण्डिया इण्टरनेशनल' लिखा था। ठीक उसीके पास हिन्देशियाके आफिसपर 'गरुड़ एयरवेज' लिखा था। मुझे पहले भ्रम हुआ। मैंने तीन-चार बार गौरसे देखा। कहना न होगा कि मुझे लज्जा मालूम हुई।

इसलामी विचारधारा—पान इसलामिक तथा पाकिस्तानी विचारधाराने विष बोनेका प्रयास किया है। पाकिस्तानी प्रचार मुसलिम जनतामें ऐसे ढंगसे किया जाता है कि जनता भारतविमुख हो जाय।

इसकी विशद छाया हमने चारों ओर देखी। हमारे प्रचारका ढग ढीला-ढाला है और उत्साहप्रद नहीं है।

परेक राज्यमें राजचिह्न सिवा एक पुराने ब्राह्मण कुटुम्बके वंशज अथवा राजवंशियोंके और कोई दूसरा स्पर्श नहीं कर सकता। इसका अधिकार नरदिराजको है। उसके वंशमे गोमास-भक्षण नहीं किया जाता। गाथा है कि उसका वंश शिवके पारपद नन्दीका वंश है। सुलतानके राज-तिलकके समय सिंहासन आरोहण तथा राजा होनेकी घोषणा वही करता है। प्रत्येक राजवंशीय शिशुका कान फूकता है कि अमुक देवता उसकी रक्षा करता रहेगा।

परेकके सुलतानके राजमुकुटमे एक मुहर रख दी जाती है। उसकी मूठ, कहा जाता है कि इन्द्रके वज्रसे बनी है। सुलतानके स्कन्धप्रदेशपर एक कृपाण रखी जाती है। उसपर लिखा है—'देवसरिता गंगासे प्राप्त।' नरदिराज अशुद्ध संस्कृतमे राजाकी वंशावली अर्थात् गोत्रोचार करता है।

नेगरी सेम्बिलन राज्यमे सुलतानके राज्यारोहणकी क्रिया ब्राह्मण-शैलीसे की जाती है। घोषणा करनेवाला दाहिना पैर बाये पैरकी ठेहुनीपर रखकर एक पैरसे खडा हो जाता है। दाहिना हाथ ऑखोके ऊपर लग जाता है। बाये हाथकी ऊॅगली बाये गालमे लगी रहती है। यहॉ श्री नरदिराजके समान संस्कृतमे नहीं पढ़ा जाता, बल्कि अनुवाद पढ़ते हैं। पढ़नेवाले दरबारीके लिए आवश्यक है कि वह किसी पुराने ब्राह्मण-वंशका हो।

हिन्दू कालमे पहंग प्रदेशकी राजधानीका नाम इन्द्रपुरी था। नेगरी सेम्बिलन राज्यके श्री मेनान्ती राजप्रासादके पीछे काल पर्वत इन्द्रपर चढ़ा दिया गया था। मलक्का परेक तथा नेगरी सेम्बिलनके सुलतान अपनेको श्रीविजयका वंशज मानते हैं। मुसलमान लेखकोने उनकी वंशावली सिकन्दरसे जोड़नेका अथक प्रयास किया है। परन्तु वे सफल न हो सके।

सुवर्ण-द्वीपमे वर्णव्यवस्था तथा जातिप्रथा प्रचलित थी। जनता ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र वर्णोमे विभाजित थी। मनुसंहिताके

अनुसार व्यवहार तथा शासन-व्यवस्था थी। बाली और लम्बोकमें जो व्यवस्था देखनेमें आती है वह प्राचीन व्यवस्थाका अवशेष है। उसका यहाँ वर्णन करना उचित प्रतीत होता है। यही व्यवस्था इस्लामके पूर्व समस्त सुवर्ण-द्वीपमें व्याप्त थी।

नदियोंके भारतीय नाम—बालीमें नदियोंका नाम गंगा, सिन्धु, यमुना, कावेरी, सरयू तथा नर्मदा रखा गया है। भारतके लोगोंकी तरह बालीके लोग प्रेतों तथा भूतोंके अस्तित्वको मानते हैं। पूजामें कुश, तिल, मधु, अक्षत, शर्करा आदिका प्रयोग किया जाता है। काली, दुर्गा, भूत तथा राक्षसोंके निमित्त बलि दी जाती है।

विवाह-प्रथा—वर्ण तथा जातिप्रथा होनेपर भी अन्तर्जातीय विवाह-प्रथा प्रचलित थी। पुरुष अपनी जाति तथा अपनेसे छोटी जातिमें विवाह कर सकता था। स्त्री अपनी तथा अपनेसे ऊँची जातिमें ही विवाह कर सकती थी। यदि कोई स्त्री निम्न वर्णके पुरुषसे शादी कर लेती तो उसे मृत्युदण्ड दिया जाता था। अन्तर्जातीय विवाहमें पिताके गोत्रका पुत्र होता था।

शिव तथा बुद्ध-पूजक दो भागोंमें ब्राह्मणवर्ग विभाजित है। शिव-पूजक ब्राह्मण निम्न जातिकी स्त्रियोंके साथ शादी करनेके कारण पाँच भागोंमें विभाजित हैं।

क्षत्रियोंमें ९ वर्ग है। बालीका राजवंश क्षत्रिय नहीं है। क्षत्रियोंकी पदवी 'देव'की है। क्षत्राणी 'देशक' कही जाती है।

वैश्य जातिको 'अर्या' कहते हैं। बालीका मुख्य राजवंश वर्ग इसी जातिका है। वे क्षत्रिय नहीं है।

शूद्रको 'कौलस' कहते हैं। वे अस्पृश्य अथवा अछूत नहीं है। स्पृश्यास्पृश्यका विचार वहाँ नहीं है। जातियाँ कर्मणा नहीं, अपितु जन्मना स्थित है। कुम्हारके काम करनेवालेके लिए यह आवश्यक नहीं है कि वह कुम्हार जातिका हो। भारतमें काम करनेके कारण धोबी, लोहार, कुम्हार, ग्वाल आदि जातियों वर्ग बन गया है। जाति एवं वर्ण-

व्यवस्था सनातन हिन्दू व्यवस्थासे पूर्णतया मिलती है।

चारों वर्णोंका पद भारत तुल्य ही है। राजवंश चाहे वह क्षत्रिय अथवा वैश्य ही क्यों न हो, ब्राह्मण वर्णसे ऊँचा नहीं माना जाता। राजा देवताका अंश है। वह मानवमें श्रेष्ठ है। यह शास्त्रीय बात वहाँ अब भी दिखाई देती है। राजा ब्राह्मण स्त्रीसे शादी नहीं कर सकता।

मतरामका राजा एक बाली स्त्रीसे प्रेम कर बैठा। वह मुख्य देव (क्षत्रिय) की कन्या थी। उससे शादी करनेके लिए कुछ संस्कार करना आवश्यक था। ब्राह्मणोंने उसे त्याज्य कन्या कहकर घरसे निकलवा दिया। घरसे निकलते ही राजाने उससे शादी कर ली। राजकी जाति अर्थात् वैश्य गोत्रकी हो गयी। साधारणतया पुरुष अपनेसे उच्च जाति ब्राह्मणकी कन्यासे शादी नहीं कर सकता।

ब्राह्मण अपनेसे निम्न वर्णकी कन्यासे विवाह कर सकता है। उनकी सन्तान भुजंग कही जाती है। ब्राह्मण दूसरी जातिको नमस्कार नहीं करता। सेवकका कार्य नहीं कर सकता। वह जमीनपर भी नहीं बैठ सकता है। उसके पदगौरवके अनुसार आसन आवश्यक है। चण्डाल ग्रामके भीतर नहीं आबाद हो सकते। वे ग्रामके बाहर रहते हैं। नर्तकियाँ प्रायः वैश्य तथा शूद्र जातिकी हुआ करती हैं। आजकलके सुधारवादी युगमें बहुत-कुछ परिवर्तन हो चुका है।

सती-प्रथा—सती होनेका अधिकार ब्राह्मण, क्षत्रिय तथा वैश्यकी स्त्रीको ही प्राप्त है। शूद्र स्त्री सती नहीं हो सकती। सन् १८१४ ई० के यूरोपियन पर्यटकोंके लेखोंसे प्रकट होता है कि बालीमें सती-प्रथा प्रचलित थी। सती-प्रथा हिन्दुओंकी सभी जातिकी स्त्रियोंमें प्रचलित थी। क्षत्रिय स्त्रियाँ मुख्यतया सती-प्रथाका अवलम्बन करती थीं। तत्कालीन राजाके पिताके साथ पचहत्तर स्त्रियाँ सती हुई थीं। भारतके समान बालीमें सती होनेके लिए कभी बलप्रयोग नहीं किया गया है। कुछ पहलेतक यह प्रथा केवल राजवंशतक ही सीमित रखी गयी थी।

स्त्रियाँ सती दो प्रकारसे होती थीं। पहली प्रणाली के अनुसार अपने

पतिकी मृत्युपर स्त्री कृपाणसे आत्महत्या कर लेती थी। पति-पत्नी दोनोंकी लाश एक साथ चितापर रख दी जाती थी। दूसरी प्रथा भारत-तुल्य पतिकी चिताकी अग्निमें कूदनेकी थी। कभी कभी दास-दासी तथा पोषिता स्त्री भी अपने स्वामीके साथ प्राणत्याग देती थी।

यहाँ परदा नहीं है। कन्याएँ स्वयंवर तुल्य अपने पतिका वरण कर लेती हैं। अन्यथा माता-पिता विवाह ठीक करा देते हैं।

चरित्र—बालीके लोग जावा, सुमात्रा तथा मलायाके लोगोंसे अधिक कदमें ऊँचे तथा बलिष्ठ होते हैं। वे आलसी न होकर उद्योगी होते हैं। स्पष्टवादी तथा उदार विचारके होते हैं। उनमें स्वेच्छाचारिता नहीं है। विलासिता तथा पतनोन्मुख मनोवृत्तिसे दूर हैं। वैवाहिक जीवन चरित्रमय होता है। शैव ब्राह्मण बत्तक, बकरी तथा भैंसका मांस खाते हैं। गाय तथा सूअरका मांस वर्जित है। बौद्ध ब्राह्मण सब प्रकारका मांस भक्षण करते हैं। बालीमें शैवधर्मका बाहुल्य है। भगवान् बुद्धको शिवका छोटा भाई कहते हैं। धार्मिक कृत्यके समय चार शैव तथा एक बौद्ध पुरोहित प्रायः बुलाये जाते हैं। बुद्ध एवं शिव सार्वजनिक दृष्टिमें एक ही माने जाते हैं। काली, उमा, सरस्वतीकी मान्यता है। देवताओंमें यम, वरुण, सूर्य, चन्द्र, राहु, कुबेर, काम, वासुकी, गणेश आदि प्रसिद्ध हैं। सूर्यसेवन प्रधान पूजा है। वह शिवकी पूजा है, न कि सूर्यकी। पादन्द ब्राह्मण पुरोहितका नाम है। वह पूजा करता है। तत्पश्चात् कहा जाता है कि पादन्दमें शिवकी शक्ति आ जाती है। भारतके समान बालीमें भी लोगोंपर भूत तथा देवी-देवता चढ़ते हैं। ब्राह्मणोंके अतिरिक्त अन्य जातिवाले भी पूजा-पाठ आदि करा सकते हैं। एक अन्य पुरोहितका नाम 'मठन्कू' है। महिलाएँ भी पादन्द होती हैं। उच्च कुलीन जातिके पादन्द आजन्म अविवाहित रहते हैं। बौद्ध पादन्द विवाह कर सकते हैं। पादन्दके जूठे पकवान अथवा भोज्य पदार्थको प्रसादस्वरूप पवित्र माना जाता है। पादन्द ज्योतिषी तथा अध्यापकका भी कार्य करता है।

अन्तिम संस्कार—अन्त्येष्टिके लिए चार प्रथाएँ प्रचलित थीं। दाह, समाधि, जलप्रवाह तथा पारसियोंके समान जंगलमे शरीर छोड़ देना ताकि जीव-जन्तु उसे समाप्त कर दे।

मृत्युकालमे मुखमें सोना रख दिया जाता था। भारतमे सुवर्ण, तुलसी तथा गंगाजल डालनेकी प्रथा है। मृत्युके उपरान्त हाथोमे सुवर्ण-कंकण पहना दिया जाता था। कपूर, कपूरका तेल तथा अन्य सुगन्धित द्रव्योंके साथ शव चितापर रख दिया जाता था। अस्थियाँ सुवर्ण-पात्रमे रखकर समुद्रमे प्रवाहित कर दी जाती थीं।

आजकल बालीमे अन्त्येष्टिकी अन्य प्रथा है। मृत्यु होते ही शरीर 'तैलाक्त' कर दिया है। उसे सर्वप्रथम मसालोसे ढकते है। तत्पश्चात् मुद्राएँ रखी जाती है। पुनः वस्त्रसे वेष्टित किया जाता है। वस्त्रके पश्चात् चटाई तथा उसके बाद बाँसकी खपाच्चियाँ चारो ओरसे बाँध देते हैं। तीन दिनतक शव इस प्रकार रखा रहता है। अन्तिम दिन लाशका मुख खोल दिया जाता है। लोग अन्तिम दर्शन करते है। शवयात्रा एक ऊँचे रथपर होती है। यह रथ तीन मरातिबसे ग्यारह मरातिबतकका बनाया जाता है। आर्थिक दशाके अनुसार रथ बनता है।

राजवंशका शव सैनिक सम्मानके साथ तथा साधारण जन-समुदायका कुटुम्बियों, स्नेहियों आदिके साथ चलता है। शवयात्रामे बाजेका प्रयोग किया जाता है। दैनिक प्रयोगकी वस्तुएँ तथा पवित्र जल साथ-साथ श्मशान भूमिकी ओर ले जाया जाता है। श्मशान भूमिमे शव कफनमे रखा जाता है। अन्तमे 'पदण्ड' अर्थात् पुरोहित आता है। वह मन्त्रोच्चारके साथ पवित्र जल शवपर छिड़कता है। कफनके नीचे आग लगा दी जाती है। दूसरे दिन अस्थिचयन कर बड़े उत्साहके साथ कुछ मुद्रा तथा चढ़ावेके साथ उसे प्रवाहित कर दिया जाता है।

मलकामें डच

सन् १६४१ ई० मे मलकापर डचोने अधिकार कर लिया। उसी समय इस्कन्दर द्वितीयकी भी मृत्यु हो गयी। आगामी ६० वर्षोंतक

अचेहमें रानियोंका राज्य रहा। अचेहने डच तथा जोहोरकी सम्मिलित शक्तिके सम्मुख अपना बहुत-सा क्षेत्र खो दिया। केवल परेक अधिकारमें रह गया। जोहोर मलक्का चाहता था। डचोंको यह स्वीकार नहीं था। सुलतान अब्दुलजलील पुर्तगालियोंसे घृणा करता था। सन् १६३७ ई०में डचोंके साथ मलक्कापर आक्रमण किया। उसने ४० जहाजोंसे डचोंकी सहायता की।

पुर्तगालका ऐतिहासिक दुर्ग एफमोसा बड़ा मजबूत था। उसकी दीवार ३२ फुट ऊँची तथा २४ फुट चौड़ी थी। उसमें २५० पुर्तगाली तथा २ या ३ हजार एशियाई सैनिक थे। जून सन् १६४० ई० में डच सेना मलक्कामें उतरने लगी। लगभग ६ मासतक दुर्ग घिरा रहा। अन्तमें १४ जनवरी सन् १६४१ ई० को दो बजे रातमें डचोंके ६५० सैनिकोंने दुर्गपर आक्रमण किया। प्रातःकाल १० बजे दुर्गका पतन हुआ। घेरा ५ मास १२ दिनतक पड़ा रहा। डचोंके एक हजार सैनिक रणक्षेत्रमें काम आये। डचोंने दुर्गका नाम बदल दिया। मलक्कापर डच झण्डा लहरा उठा।

सुलतान अब्दुलजलीलने भी अचेहकी शक्ति क्षीण होती देखकर पहंगको अपने राज्यमें मिला लिया। वर्तमान कोटा तिग्गीके समीप उसने नवीन राजधानी 'मुकाम लौहीद' स्थापित की।

पुर्तगालियोंका पतन—पुर्तगालके शक्तिके इतिहासका अध्याय मलायामें बन्द होता है। पुर्तगाली विश्वमें चारों ओर गये। विश्वका पता लगाया। किन्तु कहीं भी वे साम्राज्य स्थापित न कर सके। इसके प्रधान दो कारण थे। पुर्तगाल स्वयं बहुत छोटा देश है। उसकी जनसंख्या इतनी अधिक नहीं थी कि वह काफी सैनिक तथा शासक चारों ओर भेज सकता, आवश्यकता पड़नेपर बड़ी फौज उतार सकता। इसका कारण सहिष्णुता थी। वे कट्टर रोमन कैथोलिक ईसाई थे। मुसलमानोंसे घृणा करते थे। हिन्दुओंको मूर्तिपूजक कहकर उनपर भी अत्याचार करते थे। मूर्तियाँ नष्ट करनेमें वे आनन्दका अनुभव करते थे। बम्बई

के समीपस्थ एलिफैण्टाकी गुफाओंकी त्रिमूर्तियाँ आदि पहले उन्होने हाथोसे तोड़नेकी चेष्टा की। इसमे सफल न हो सकनेपर गुफामे तोप लगाकर मूर्तियाँ उड़ायी गयी। एलिफैण्टा उनकी मूर्तिभंगकी भावनाका ज्वलन्त उदाहरण है। उनमे प्रतिहिंसाकी भावना थी। वे जनताका सहयोग न प्राप्त कर विरोध पैदा कर लेते थे।

डचोंकी सहिष्णुता—डच धार्मिक मामलोमे पुर्तगालियोसे अधिक सहिष्णु थे। डच मलायाकी टिनकी खानोपर ऑख लगाये थे। सन् १६३९ ई० मे एचेह तथा परेककी टिनकी खानोंका एकाधिकार उन्होने प्राप्त कर लिया। सन् १६४१ ई० मे डचोने परेकके सुलतानपर जोर डाला। टिन केवल डच कम्पनी वी० ओ० सी० के हाथो बेचा जाय। सुलतानने आनाकानी की। सन् १६५० ई० मे एचेहकी रानीसे सौदा पटा लिया गया। टिनकी समस्त खानोंमे आधा हिस्सा रानी तथा आधा हिस्सा डचोका रख गया। सन् १६५९ ई० मे पुनः इकरारनामाका नवीनीकरण किया गया। एचेहकी रानीका भाग केवल तृतीयांश रह गया। परेकमे भी इसी प्रकारका इकरारनामा हुआ। सन् १६६७ ई० मे प्रसिद्ध पैनन इकरारनामा हुआ। इसके अनुसार पश्चिमी मलायाके बहुतसे राज्योंके सुलतानोने डचोंको टिनका एकाधिकार दे दिया।

सुलतानोंमें अन्तःसंघर्ष—मलकाके सुलतान अब्दुल जलीलको सुअवसर मिला। वह जोहोरकी शक्ति बढाने लगा। सन् १६४४ ई० मे उसके कनिष्ठ भ्राताने पटनीकी रानीसे विवाह कर लिया। डचोकी शक्ति-वृद्धिसे सुलतान सशंकित हो गये। उसे एचेह तथा जम्बीकी सहायता मिलने लगी। उसने इन्द्रगिरि तथा सियाकपर अधिकार कर लिया। सन् १६६६ ई० मे जम्बीके साथ होनेवाला इसके पुत्रका वैवाहिक सम्बन्ध टूट गया। महत्त्वाकांक्षी जोहोरके लकशयन (जल-सेनापति) ने अपनी कन्याकी शादी युवराजसे कर दी। जम्बी तथा अब्दुल जलीलमे मनमुटाव हो गया। सन् १६७३ ई० मे जम्बीने अब्दुल जलीलकी राजधानी बहूगवरपर आक्रमण कर दिया। सुलतान भागकर

पहंग चला गया। वहीं उसकी ९० वर्षकी अवस्थामें मृत्यु हो गयी।

सुलतानका भतीजा तथा उत्तराधिकारी इब्राहीम रऊमें आबाद हो गया। उसने 'बुगिस' पेशेवर सैनिकोंसे सहायता ली। सन् १६७९ ई० में जम्बीपर आक्रमण किया। संघर्ष चलता रहा। सन् १६८२ ई० में इब्राहीमने एक राजदूत हेग भेजा। डच गवर्नर जनरलने जोहोर तथा पहंगके व्यापारका अधिकार माँगा। इब्राहीमकी सन् १६८३ ई० में मृत्यु हो गयी।

इब्राहीमका नाबालिग पुत्र महमूद अपनी माता, पादुका राजा तथा जल-सेनापतिके अभिभावकत्वमें गद्दीपर बैठा। बालिग होनेपर सन् १६८९ ई० में डचोंने उसपर जोर डाला। उसने आज्ञा दे दी कि भारतीय व्यापारी उसके राज्यमें व्यापार नहीं कर सकते। सन् १६९९ ई० में उसकी हत्या हो गयी। मलाका राजवंशीय जोहोरका वह अन्तिम राजा था।

उसका उत्तराधिकारी बेन्दहर श्री महाराज तुनहबिन अब्दुल जलील हुआ। शासनसूत्र उसके भाई राजा मुदाके हाथोंमें रहा। सन् १७१७ ई० में उसके अत्याचारोंसे ऊबकर राजा केचिलने जोहोरपर आक्रमण किया। गद्दी ले ली। अब्दुल जलील बेन्दहरके स्तरका हो गया। उसे अब्दुल जलील रहमत शाह भी कहा जाता है। उसने १७१८ ई० में राज लेनेका षड्यन्त्र किया। पकड़ा गया। उसकी हत्या कर दी गयी।

सन् १७२२ ई० में अब्दुल जलीलके एक लड़केने बुगिस सरदारोंकी सहायतासे राजा केचिलको भगाकर अब्दुल जलीलके ही एक दूसरे लड़केको सुलतान बनाया। दैंग परनीका बड़ा भाई यान तुअनमुदा उपराजा हुआ।

टिन क्षेत्रोंका नियन्त्रण—केदाह तथा पेरकके टिन क्षेत्रोंपर नियन्त्रण किया गया। उसने सुलतानकी बहनसे विवाह कर लिया। राजा केचिलने सन् १७२४ ई० में हमला किया। दैंग परनी मारा गया। किन्तु बुगिस लोगोंने राजा केचिलको भी भगा दिया। दैंग परनीके भाई दैंग मरवतका लड़का राजा लूमा सेलंगूरका प्रथम सुलतान बना। उसने

सन् १७४२ ई० मे पेरकपर आक्रमण किया। डच और बुगिस लोगोंमे व्यापारपर अधिकार करनेके लिए पारस्परिक संघर्ष होने लगा। बुगिसने मलक्कापर सन् १७५६ ई० मे आक्रमण कर दिया। बुगिस हार गये। सुलतान सुलेमानने रेम बाऊ तथा लिग्गी डचोको दे दिया। पहली जनवरी सन् १७५८ ई० को तीन बुगिस नेता दैगं कम्बोजा, लिग्गीके क्लागके राजा तुआ तथा राजा आदिलने डचोंको टिन-खानोंका एकाधिकार दे दिया।

जोहोरकी प्राचीन गरिमा समाप्त हो चुकी थी। वहॉ अराजकता थी। सेलंगोर बुगिस सरदारोंके प्रभावमे था। मलायाके अन्य राज्य बुगिस तथा मिनंगक बौसके प्रभावमे थे। सियाक अपनी स्वतन्त्रता खोने जा रहा था। सन् १७५९ ई० मे वहॉके महमूदने जेनतंग द्वीप-स्थित डच सैनिकोंकी हत्या कर दी। सन् १७६१ ई० मे डचोने अपने आदमीको वहॉका सुलतान बनाया। सन् १७५९ ई० मे सुलतान सुलेमानका देहान्त हो गया। बुगिस नेता राजा हाजीने जो दैगं कम्बोजाका भतीजा था राउमे विद्रोह किया। अपने चाचाको जोहोरका सुलतान बना दिया। सुलतान सुलेमानके मरते ही बुगिसोने उसके उत्तराधिकारीकी हत्या करवा दी। दैगं कम्बोजा सुलतानके प्रपौत्रका, जो उसी वर्ष हुआ था, अभिभावक बनकर शासन करने लगा। राजा हाजीके सैनिक सघटनके कारण जोहोरकी कुछ उन्नति हुई। उसने सुमात्राके इन्द्रगिरि तथा जम्बीको आत्मसमर्पण करनेके लिए बाध्य कर दिया। पेरक तथा केदाहपर भी अपना प्रभाव स्थापित कर लिया।

सन् १७७७ ई० मे कम्बोजाका देहान्त हो गया। राजा हाजी राउ गया। उसने दिवंगत राजाके पुत्रसे सब अधिकार ले लिया। उसका प्रबन्ध सन् १७८२ ई० तक डचोंसे अच्छा रहा। कुछ समय पश्चात् उसने डचोके स्थानोपर आक्रमण करना आरम्भ किया। सन् १७८३ ई० मे डचोको विफलता मिली। राजा हाजीने मलक्कापर आक्रमण कर

दिया। सन् १७८४ ई० में डचोंने राजा हाजीको हरा दिया। वह मारा गया। सेलंगोरसे डचोंने बुगिस सुल्तानको सन् १७८५ ई० मे हटा दिया। मलायामें सर्वप्रथम रेजिडेण्ट प्रथाका श्रीगणेश हुआ।

मलायामें अंग्रेज

सन् १७८५ ई० तक स्थिति उलटती-पलटती रही। यूरोपमें फ्रासीसी क्रान्तिकारी सेनाने सन् १७९५ ई० में डचोंके देश हालैंडपर अधिकार कर लिया। अग्रेजोंको अवसर मिला। फ्रासीसी डचोंके प्रदेशो अथवा राज्योंपर अधिकार न कर सके। फ्रान्सकी शक्ति-वृद्धि न हो, इसलिए अग्रेजोंने डचोंके प्रभावक्षेत्रों तथा राज्योंपर अधिकार करना आरम्भ किया। अग्रेजोंने महमूदको रियाबूकी गद्दीपर बैठाया। डच फौजे हटा दी गयी। अठारहवीं शताब्दीके डचोंके शासनका अध्याय बन्द होता है। अग्रेजोंका अध्याय खुलता है। शक्ति अग्रेजोंके हाथोंमे आती गयी। सन् १७९५ ई० मे मलायामे यूनियन जैक फहराने लगा। पेनांग अग्रेज सत्ताका केन्द्र हो गया।

पूर्वमें नाविक अड्डा—पेनाग लेनेमे ईस्ट इण्डिया कम्पनीका मुख्य उद्देश्य जहाजोकी मरम्मत तथा ठहरनेके लिए एक केन्द्र बनाना था। बगालकी खाड़ीके पूर्वी तटपर नाविक अड्डा होना सुरक्षाकी दृष्टिसे आवश्यक था। स्याम तथा कम्बुजमे फ्रांसके बढ़ते प्रभावके कारण यह अनिवार्य हो गया था। ईस्ट इण्डिया कम्पनीका व्यापार चीन तथा पूर्वमे बढ़ रहा था। ब्रिटिश सरकारने इस कार्यमे स्वयं कोई भाग न लिया। ईस्ट इण्डिया कम्पनीके ही जिम्मे मलायाका प्रश्न छोड़ दिया गया था।

अफीमका व्यापार—चीनसे खरीदे हुए सामानकी कीमत चॉदीमे अदा करनी पड़ती थी। यूरोपमे इतनी चॉदी नहीं थी कि सबकी कीमत चुकायी जा सके। व्यापारियोंने एक नया साधन ढूँढ़ निकाला। चीनमे अफीमका प्रवेश कराया गया। चीनियोंको अफीम खानेकी आदत लगायी गयी। कुछ दिनों बाद अफीमकी इतनी खपत चीनमे होने लगी कि

चीनी सामानका दाम अदा करनेके पश्चात् भी काफी धन बच जाता था। जबतक अफीमका पूरा प्रचार नहीं हो पाया था, बम्बई तथा कारो-मण्डलके किनारे बननेवाले सूती वस्त्रोंसे चीनके रुपयोंकी अदायगी की जाने लगी। एक महान् देशको अफीमची बनाया गया। ब्रिटेनका घर सोनेसे भर उठा। । चीनके इस लाभप्रद व्यापारकी सुरक्षाके लिए एक नौसैनिक अड्डा आवश्यक था। उसके लिए फ्रांसिस लाइटने सिंगापुरके दक्षिण बिन्तग द्वीप उपयुक्त बताया। उसने पेनांग लेनेका भी सुझाव दिया था। सन् १७८६ ई० में केदाहके सुल्तानने पेनांग अंग्रेजोंको दे दिया।

आर्थर वेलेजली (ड्यूक आफ वेलिंगडन) स्वयं मलाया आये थे। पेनांगकी रक्षाके लिए यह आवश्यक समझा गया कि पेनांगकी दूसरी ओर पड़नेवाले भू-भागपर कब्जा कर लिया जाय। सन् १८०० ई० में वह भूभाग ले लिया गया। इसे वेलेजली प्रदेश कहते हैं।

सिंगापुरकी प्राप्ति—श्री रेफल्सका नाम सिंगापुर तथा मलायाके साथ आदरसे सम्बन्धित है। वे सन् १८०५ ई० में आये। पेनांगको डाकयार्डके लिए अनुपयुक्त बताया। इस सिद्धान्तका प्रतिपादन किया कि भारतीय समुद्रका द्वार सिंगापुर है, न कि पेनांग। सन् १८१० ई० में पेनांगको नौसैनिक अड्डा बनानेका विचार त्याग दिया गया। २५ जन-वरी, सन् १८२० ई० को रेफल्सने सिंगापुरकी भूमिपर पैर रखा। नेवल-बेसके लिए सर्वश्रेष्ठ स्थान माना। रेफल्सने हुसेनको जोहोरका सुल्तान बनाया। सुल्तान जोहोरकी गद्दीपर ६ फरवरी, सन् १८१९ ई० को बैठा। हुसेनने सिंगापुर ईस्ट इण्डिया कम्पनीको दे दिया।

मलायका शासन—मलायाका शासन ईस्ट ईण्डिया कम्पनीके

तथा सैनिक शक्ति मलायाको अंग्रेजी शासनमे रखने तथा उसका उद्योगीकरण करनेमे मुक्तहस्तसे लगने लगी। भारत मन्त्रीसे मलायाका शासन लेकर उपनिवेश मन्त्रालयको दिया जाय इसके लिए वड़ा प्रयास कुछ लोगोंने किया, परन्तु प्रारम्भमे यह प्रयास विफल रहा।

उन्नीसवीं शताब्दीके मध्यतक टिनकी खानोमे काम करनेवाले चीनी श्रमिकोकी संख्या वढती गयी। चीनी खनकोके उपनिवेश परेकमे लारूट, सेलागुर प्रदेशमे कोलालामपुर, क्लेग सिरी, उजोंग तथा नेगरी सेम्त्रिलनमे स्थापित हो गये थे। सन् १८५० ई० मे सरदार लोंग जाफरने हजारों चीनियोंको टिन खानोमे काम करनेके लिए आमन्त्रित किया। चीनियोंमे दो दल हो गये थे। वे आपसमे लड़ते रहते थे। इब्राहीम जाफरका लड़का था। उसके कालमे यह सघर्ष अत्यन्त उग्र हो गया था। दोनों दलोंके केन्द्र पेनागमे थे। सुलतानकी सन् १८७१ ई० में मृत्यु हो गयी। उत्तराधिकारके विपयमे विवाद खड़ा हो गया। डकैती, खून, उपद्रव तथा लड़ाईका वाजार गर्म था। राजा मेहदी तथा सुलतान केदाहके भाईमे संघर्प हो गया। सिंगापुर चेम्बर आफ कामर्सने सन् १८७१ ई० मे भारत मन्त्रीको स्पष्ट सूचना दी कि व्यापार करना अत्यन्त कठिन हो गया है।

डच और अंग्रेजोंमें सन्धि—सुमात्रा सन्धि नवम्बर, सन् १८७१ ई० में डच तथा अग्रेजोंमे हुई। डचोंको सुमात्रा तथा अग्रेजोंको मलाया जल-डमरूमध्यके भूभागोपर पूर्ण अधिकार प्राप्त हो गये। सन् १८७७ ई० मे लार्ड केम्वरलेने एक नवीन नीति चलायी। नीतिका अर्थ अधिकसे अधिक मलय देशपर नियन्त्रण करना था।

रेजिडेंसी प्रथा—परेकमे अंग्रेजोने पहला ठोस कदम उठाया। वहाँके सुलतान अव्दुल्लाने अग्रेजोंसे शासन-व्यवस्था ठीक करनेके लिए सहायता मॉगी। मलायाके मुसलिम धर्म तथा रस्मोके अतिरिक्त सभी वातोंका अधिकार अग्रेजोंको दिया गया। अग्रेजोंने उक्त अधिकारोंके साथ एक रेजीडेण्ट नियुक्त कर दिया।

भारतीय राजनीतिसे सम्बन्ध रखनेवाले खूब जानते है कि देशी रियासतोंमे रेजिडेण्टोके क्या अधिकार होते थे। वह वास्तविक शासक होता था। इस प्रथाको मलायामे चालू कर मलायाके सभी राज्योंको रियासतोमे परिणत करनेकी निश्चित योजना अंग्रेजोने बना ली।

पेरकके पश्चात् सेलंगोर राज्यपर हाथ साफ किया गया। एक बहाना निकाला गया। सन् १८७४ ई० मे सैनिक प्रदर्शन किया गया। सुलतानने भयभीत होकर स्वतः रेजीडेण्टकी नियुक्तिके लिए निवेदन किया। श्री जे० जी० डेविडसन मुख्य तथा सहायक रेजीडेण्ट स्वीटनहम हुए। स्वीटनहम बन्दरगाहका नाम इन्हीके नामपर रखा गया है। मलाया देशके मुख्य भूखण्डका स्वीटनहम प्रमुख बन्दरगाह है। यहाँसे उतरकर क्वालालमपुर मोटरसे जाया जाता है। मलायाकी आजादीके पश्चात् एक दूसरा बन्दरगाह क्वालालमपुर तथा स्वीटनहमके मध्य बनानेकी योजना है। उसके बन जानेपर सिंगापुर तथा पेनाग, दोनोका महत्त्व बहुत कम हो जायगा।

तीसरा राज्य नेगरी सेम्बलियन था। उसने सन् १८७४ ई० मे रेजीडेण्ट रखना स्वीकार किया। रेजीडेण्टका शासन वास्तविक शासन हो गया। सुल्तान अन्धकारमे चले गये। सुलतानोको निश्चित भत्ता दिया जाने लगा।

न्याय-व्यवस्था—अदालतोंमे अंग्रेज मजिस्ट्रेटोकी नियुक्तियाँ हुई। भारतीय दण्ड-विधान तथा भारतीय दण्ड-प्रक्रिया जाब्ता दीवानी आदि भारतीय कानून मलायामे चलने लगे। सन् १८६१ ई० मे भारतीय कौंसिलके अनुसार राज्योमे 'स्टेट कौंसिल' कायम की गयी। सुलतान कौंसिलके सभापति होते थे। रेजीडेण्ट, मुख्य-मुख्य राज्यके सरदार तथा २ या ३ चीनियोके प्रतिनिधि कौंसिलमे होते थे। मलय भाषामे कार्य होता था। कौंसिल कानून बनाती तथा सभी विषयोपर विचार-विमर्श करती थी।

वह समाप्त कर दी गयी। चीनियोंके हाथोंमे टिनकी खाने थीं। श्रमिकों-की बहुत कमी थी। सन् १८८४ ई० मे भारतसे कुली ले जानेकी योजना बनायी गयी।

सन् १८८४ ई० मे पहगमे भी रेजीडेण्ट नियुक्त हो गया। सन् १८९५ ई० मे मलायाके अधिक राज्योंका सघ ब्रिटिश संरक्षणमें कायम किया गया। ब्रिटिश रेजीडेण्टोंका धर्मके अतिरिक्त अन्य सब विषयोमें पूर्ण अधिकार प्राप्त था। सन् १८९६ ई० में स्वीटनहम प्रथम रेजिडेण्ट जनरल मलायाके नियुक्त हुए। मलय राजाओका पहला सम्मेलन सन् १८९७ ई० मे कुअल कंगसर परेक राज्यमे हुआ। कोलालामपुर मलाया-की वर्तमान राजधानी व्यवस्थापकीपर केन्द्र बनायी गयी। सन् १९०३ ई० मे कोलालामपुरमे द्वितीय बैठक हुई। उसमे यह आवाज सर्वप्रथम उठायी गयी कि राजाओ तथा मलायावासियोको अधिकसे अधिक अधि-कार दिये जायँ।

सिंगापुरमें रेलवे लाइन—सन् १९०३ ई० तक सिगापुरसे वेलेजली प्रदेशतक रेलवे लाइन बन गयी। सन् १९०७ ई० मे मलय राजाओंके सम्मुख मलय सघका विधान रखा गया। यह विधान राजाओने स्वीकार कर लिया। इसके सभापति हाईकमिश्नर, रेजीडेण्ट जनरल, चार रेजीडेण्ट, चार सुलतान तथा चार गैरसरकारी सदस्य थे। उनकी नियुक्ति हाई-कमिश्नर ब्रिटिश सम्राट्की अनुमतिसे करता था।

सुलतानोंकी विचित्र दशा हो गयी। उन्हें कोई अधिकार नही रह गया। वे साधारण सदस्योके तुल्य हो गये। चार गैरसरकारी सदस्योमें तीन ब्रिटिश तथा एक चीनी नियुक्त हुआ। सन् १९१३ ई० मे इस कौंसिलमे एक कानूनी सलाहकार तथा एक और गैरसरकारी सदस्य बढाया गया। सन् १९२० ई० मे कौंसिलमे कोषाध्यक्ष तथा एक सर-कारी सदस्य और नियुक्त किया गया।

सन् १९२७ ई० मे सुधार किया गया। इस सुधारके अनुसार कौंसिलमे गैरसरकारी सदस्योंकी संख्या ८ हो गयी। उसमे ५ यूरोपियन,

२ चीनी तथा १ मलयका और राजा था। जोहोर प्रदेश संघमे सम्मिलित नही था।

सिगापुर, पेनांग आदिका सम्बन्ध सीधे ब्रिटिश सरकारसे था। वे संघमे सम्मिलित नही थे। जोहोरके सुलतान अबूबकरने, जिनकी मसजिद जोहोरमे अत्यन्त दर्शनीय है, जोहोरके लिए एक विधान बनाया था। उसमे एक कौसिल मिनिस्टरोंकी थी। उसके सभी सदस्योका मुसलमान तथा मलाया नागरिक होना आवश्यक था। दूसरी स्टेट कौंसिल थी। उसका कोई भी सदस्य हो सकता था। सन् १९१२ ई० मे एक तीसरी एक्जीक्यूटिव कौसिल और बनायी गयी। यह ब्रिटिश औपनिवेशिक प्रशासकीय आधारपर बनी थी।

सन् १९१४ ई० मे जनरल एडवाइजर भेजा गया। इसी समय विधानमे कुछ और सशोधन किया गया। उसमे ब्रिटिश अधिकारी सुलतानके प्रति बिना राजभक्तिकी कसम खाये बैठ सकते थे।

द्वितीय महायुद्धके पूर्व—द्वितीय महायुद्धके आरम्भतक मलायामे तीन प्रकारकी शासनव्यवस्था थी—१. मलाया जलडमरूमध्य—इससे सिगापुर, वेनाग, वेलेजली प्रदेश, मलक्का क्षेत्रका क्षेन तथा नानिंग था। २. मलाया सघ—पेरक, सेलागोर, नेगरी, सेम्बिलन तथा पहग। ३. असघीय मलाया राज्य—केदाह, केलण्टन, त्रिग्गान तथा जोहोर।

मलायाकी प्राकृतिक सम्पत्ति

मलाया अत्यन्त उर्वर देश है। शत-प्रतिशत भूखण्ड हरित दूर्वा अथवा पादपोसे आच्छादित है। तीन-चौथाई भूखण्ड वनस्थली है। मलायामे धूल-गर्द नही मिलेगी। लगभग सत्रह प्रतिशत भूमि उपजके काममे लायी गयी है। मलायामे प्रति व्यक्ति पीछे २॥ एकड़का औसत है। खाद्यान्नके लिए आयातपर निर्भर है। रबर, नारियल, पान, सोपाडी तथा अन्य फल होते है। खाद्यान्नका केवल ३० प्रतिशत चावल देशमें होता है। चावल बर्मा, स्याम आदिसे आयात होता है।

मलायामें कृषि—द्वितीय महायुद्धके पश्चात् चावल-उत्पादनमें अधिकता हुई है। मलायी काश्तकार भारतीय काश्तकारके समान कर्जका शिकार बना रहता है। भारतीय तथा चीनी महाजन सूदपर रुपया देते हैं। इसे दूर करनेके लिए सहकारिता आन्दोलनको प्रोत्साहित किया गया है। मलायाका नागरिक साधारणतया खर्चीला होता है। रुपया मिलनेके पहले ही वह खर्चकी योजना बनाने लगता है।

पेनांग तथा सिंगापुरमें चीनी आबादीका बहुमत है। मलाया देशमें मलायोंकी अपेक्षा चीनियोंकी आबादीमे अधिक वृद्धि हुई है। सन् १८३० में केवल जोहोरमें चीनी थे। सन् १८५० तक वे सम्पूर्ण मलाया प्रदेशमें फैल गये। वे चीनसे आते ही रहे। ब्रिटिश संरक्षणकालमे देशकी आर्थिक विकास-व्यवस्था चीनी जनताके हाथोंमे थी। वे ही टिनकी खानोंमें काम करते थे। यूरोपियन टिनकी खानोंमे सन् १८८२ मे आये। वे खानोंके अतिरिक्त मलायाके सभी व्यापारिक क्षेत्रोंमे घुस गये। उनका महत्त्व इतना बढ़ गया कि मलायाके प्रत्येक राज्यकी परिषदमे उनके २ प्रतिनिधि रहते थे।

मलायामें चीनी जनता—बीसवीं शताब्दीके प्रारम्भतक चीनी यही समझता था कि मलायासे रुपया उपार्जन कर मातृभूमि चीन भेजना चाहिये। सन् १९३० के पश्चात् मलायामे पैदा हुए चीनियोंकी संख्या अधिक हो गयी। इस संख्याका अनुपात दिनोदिन बढ़ता जा रहा है। वे मलायाको अपनी मातृभूमि समझने लगे हैं। उनकी यह देश-भक्ति मलायाका सरदर्द हो गया है। द्वितीय महायुद्धके पश्चात् ३३ प्रतिशत चीनियोंका कोई सम्बन्ध चीनसे नहीं रह गया है।

मलायाकी चीनी जनतामे कुमिंतागका गुप्त संघटन था। आजकल मलायाके चीनियोंके खिलाफ यह प्रचार किया जाता है कि उनमे कम्युनिस्ट चीन-समर्थक गुप्त संस्थाएँ है। सन् १९३० तक चीनियोंके आनेमे कोई रुकावट नहीं थी। उस समय बाजारोमे बड़ी मन्दी आयी। उस समय ३,६७,००० चीनी नागरिक स्वदेश लौट गये। सिंगापुरकी

जनसख्यामें ८० प्रतिशत चीनी हैं। मलाया देशमे मलय ४८ प्रतिशत, चीनी ३८ प्रतिशत, भारतीय १२ प्रतिशत तथा शेष २ प्रतिशत अन्य जातियाँ हैं।

भारतीयोंकी संख्या—भारतीयोंकी संख्या सन् १९०७ से बढने लगी। भारतीय आबादी बढ़नेका कारण रबड़ है। मलायामे रबड़के वृक्षसे दूध निकालनेका पूरा काम भारतीय तमिल श्रमिक करता है। भारतीय कुलियोंकी सख्यापर विचार करनेके लिए सन् १९३६ ई० मे भारत सरकारने श्री श्रीनिवास शास्त्रीको नियुक्त किया था।

मलय लोगोमे द्वितीय महायुद्धके पूर्व राष्ट्रीयताकी भावना नही थी। सन् १९१७ से राष्ट्रीयताकी भावना प्रबल होने लगी है। उनमे धार्मिक कट्टरता नही थी। हिन्दू तथा चीनीको मूर्तिपूजक कहकर घृणा करनेकी ओर बढ़ चले है। अँग्रेजोका प्रचार चीनी तथा मलय जातिमे भेद उत्पन्न करनेका है।

रबड़—मलाया सन् १९२० मे विश्वका ५३ प्रतिशत रबड उत्पादन करता था। मलाया तथा श्रीलंका मिलकर विश्वका ७० प्रतिशत रबड़ पैदा करते है। सन् १९३८ मे ३३,०२,१७० एकड़ भूमिमे रबड़के वृक्ष लगे थे। उस समय विश्वका ४३ प्रतिशत रबड़ मलाया उत्पादित करता था। कृषियोग्य भूमिमे २०,२३,३४८ एकड़ भूमि बड़े कृषको तथा १२,७५,८२२ एकड़ भूमि छोटे खेतिहरों अर्थात् मलय कृषकोके पास थी। उसमे कुल ३,६१,००० टन रबड़ उत्पादित हुआ था। सिगापुरमे ५,२७,००० टन रबड़ निर्यात किया गया। शेष रबड श्याम, बोरनियो, सुमात्रा आदिसे सिगापुर आता था। अग्रेजोने मलायामे विदेशी पूँजी लगानेमे कभी बन्धन नही लगाया। आस्ट्रेलियाने अपना धन टीन तथा जापानने कच्चे लोहेमे लगाया। सन् १९२१ ई० मे ब्रिटिश सरकारने सिगापुरमे 'नैवल बेस' बनाना आरम्भ किया जो २० मिलियन पौंडके व्ययसे सन् १९३८ मे पूरा हुआ। वह सन् १९४० ई० मे जापानकी बमबाजीसे क्षतिग्रस्त हो गया था।

जापानियोंके आधिपत्य-कालमें चीनी जनता आतंकित थी। च्यांग काई-शेकको काफी समर्थन इस ओरसे मिला था। भारतीय तथा मलय भयहीन थे। चीनी जनताने बड़े धैर्यसे कार्य किया। द्वितीय युद्धके पश्चात् अंग्रेजोंने देखा कि समस्त व्यवसाय धीरे-धीरे चीनी जनताके हाथोंमें चला गया है। लोकतन्त्रीय युगमें जनताके बहुमतका बड़ा महत्त्व होता है। सिंगापुर तथा पेनांग, दोनों ही स्थानोंमें चीनी जनताका बहुमत था। इस समय मलायामें एक ही आन्दोलन है। चीनी चाहते हैं कि पेनांगके समान सिंगापुर भी मलायामें शामिल कर दिया जाय। परिणाम यह होगा कि चीनियोंका बहुमत एक प्रकारसे हो जायगा और मुसलिम मलय जाति राज्य तथा शासनसे वंचित रह जायगी।

अंग्रेजोंकी नीति—अंग्रेजोंने सिद्धहस्त राजनीतिज्ञों तुल्य भारतीय नीतिका वहाँ भी अनुकरण कर धार्मिक भावना उभाड़ी। मलाया मलय-वासियोंका है, इसपर बहुत जोर दिया गया। मलायामें धर्मनिरपेक्ष राज्यकी पहले चर्चा हुई। परन्तु मुसलिम भावना उभाड़ने तथा चीनियों-को दबानेके लिए विधानमें मलय संघको इस्लामिक प्रजातन्त्र, गणतन्त्र घोषित किया गया। सिंगापुरका महत्त्व चीनी बहुमतके कारण कालान्तरमें अंग्रेजोंके लिए कम हो जाना अवश्यम्भावी भी है अतएव उन्होंने मलाया-को उभाड़कर क्वालालम्पुर तथा स्वीटनहमके बीच बन्दरगाह बनानेकी योजना पारित की है। इसके बन जानेपर सिंगापुर तथा पेनांगका महत्त्व निर्यात-बन्दरगाहके रूपमें समाप्त हो जायगा। सिंगापुर तथा पेनांगमें जहाज केवल मरम्मत तथा तेल और पानीके लिए ठहरा करेंगे। इस समय सिंगापुरमें पानी जोहोरसे आता है। जोहोर मलायामें है। सिंगापुर तथा जोहोरके बीच अत्यन्त पतला समुद्र है। उसपर ठोस पुल बना है। यह पाइप लाइन उसी पुलपरसे आती है। मैंने चीनी मित्रोंसे पूछा कि यदि मलाया पानी बन्द कर दे तो क्या सिंगापुर प्यासा मर सकता है। उन्होंने मुसकराकर कहा—हम जानते हैं। उसका प्रबन्ध सिंगापुरमें ही ही किया जा रहा है ताकि वह जलके लिए किसीका मुखापेक्षी न रह सके।

युद्धके समय मलायामे 'मलाया एण्टी जापानी आरमी'का जनतामे संघटन किया गया था। उसमे कम्युनिस्ट अधिक थे। वे शक्तिसंचयका प्रयास करने लगे। दिसम्बर सन् १९४५ ई० मे अंग्रेजोंने इस संघटनके प्रत्येक सैनिकको ३०० डालर अर्थात् ५०० रुपया देकर छुट्टी दे दी। किन्तु उनका संघटन भीतर ही भीतर कुछ बना है। कम्युनिस्ट आजकल मलायाके जंगलोंमे है। नित्य ही कहीं-न-कहीं गोली चलती है। लोग मारे जाते हैं।

युद्धके पश्चात् सर्वतोमुखी उन्नति हुई है। स्कूलोंमे विद्यार्थियोंकी संख्या दूनी हो गयी है। अन्नकी उपज बढ़ गयी है। सन् १९५० ई० मे युद्धके पूर्व जितना उत्पादन टिनका होता रहा है, पुनः होने लगा है। टिन और रबड़ ही मलाया देशके कुल निर्यातका ८६ प्रतिशत है।

सुधार—युद्धके पश्चात् सन् १९४६ ई० मे सुधार की बात उठी। ब्रिटिश सरकारने एक श्वेतपत्र प्रकाशित किया। मुख्य बात यह थी कि मलाया तथा सिंगापुरमे जितने लोग पैदा हुए है, सब नागरिक मान लिये जायँ। विदेशोंसे आनेवाले दस वर्ष निवास करनेके पश्चात् नागरिकताका अधिकार प्राप्त कर सकेंगे। मलायाके नवो राज्य, पेनांग तथा मलक्काकी यूनियन बनायी जाय। सिंगापुर अलग रखा जाय। जोहोरके प्रधान मन्त्री जाफरके नेतृत्वमे 'यूनाइटेड मलाया नेशनल आरगेनाइजेशन' कायम किया गया। इसकी शाखाएँ सर्वत्र फैल गयीं। 'मलय जातिका इन सुधारोंसे नाश हो जायगा'का नारा लगाया गया। भारतके मुसलिम-लीगके तुल्य वहाँ भी 'शोक-दिवस' मनाया गया। परिणामस्वरूप यूनियन-का विचार त्याग दिया गया। सन् १९४७ ई० मे उक्त संघटन, चीनी तथा भारतीय दलोंसे विधान प्रस्तुत करनेके लिए कहा गया। सुझाव दिये गये। एक नया विधान प्रस्तुत किया गया। इसके अनुसार १५ वर्ष रहनेके पश्चात् नागरिकता प्राप्त होती। कम्युनिस्टोंने शस्त्र द्वारा राज-शक्ति लेनेका प्रयास किया, किन्तु विफल रहे।

सिंगापुरका महत्त्व

सिंगापुर शब्द संस्कृत शब्द सिंहपुरका अपभ्रंश है। एशियामें यह स्थान भूमध्यसागरके माल्टा तुल्य सामरिक दृष्टिसे महत्त्वपूर्ण है। नाविक शक्तिका केन्द्र है। लगभग १५०० जहाज प्रतिमास आते हैं। यूरोपसे पूर्व एशिया, आस्ट्रेलिया, फिलिपाइन, जापान, न्यूजीलैंड आदि जानेका यह प्रवेशद्वार है। भारतीय तथा प्रशान्त महासागरको जोड़ता है। आस्ट्रेलिया तथा न्यूजीलैंडकी रक्षाके लिए ब्रिटेन सिंगापुरको अपने अधीन रखना चाहता है। बंगालकी खाड़ीके पूर्वीय भागकी रक्षाके निमित्त भी सिगापुरका महत्त्व है। भारतकी सुरक्षा ब्रिटेनपर अवलम्बित नहीं है, अतएव भारतके लिए आवश्यक है कि अपनी नाविक शक्तिके लिए निकोबार अथवा एण्डमानमे अड्डे बनाये।

सिगापुर 'फ्रीपोर्ट' है। फ्रीपोर्टका अर्थ यह होता है कि जहाँ देशी अथवा विदेशी वस्तुओपर किसी प्रकारकी चुगी अथवा आयात-निर्यात-कर नहीं लगता। यह एक द्वीप है। लम्बा २७ मील तथा १४ मील चौड़ा है। एशिया भूखण्डसे जोहोरके समीप एक टोस पुल द्वारा सम्बन्धित है। इसी पुलपरसे जोहोरसे सिगापुरकी जलपाइप लाइन आती है। इसे हम सिगापुरकी 'जीवन-धारा' भी कह सकते हैं। इस पुलके जोहोर-तटीय स्थानपर जोहोर राज्यका कस्टम आफिस है।

सिगापुरका 'डक-यार्ड' विश्वप्रसिद्ध है। यहाँ सैकड़ो जहाज एक साथ ठहर सकते हैं। उनपर माल चढ़ाया और उतारा जा सकता है। माल चढ़ाने और उतारनेका काम पूर्णतया यन्त्रोंसे होता है। उन्नीसवी शताब्दीमे प्राइवेट कम्पनीके हाथोंमे बन्दरगाहका प्रबन्ध था। मरम्मतके लिए 'ड्राइडक' तथा अन्य एकका भी प्रबन्ध कम्पनियाँ करती थीं। बीसवीं शताब्दीके आरम्भमे सिगापुर हार्बरबोर्डकी स्थापना हुई।

युद्धकालमें बरबादी—बन्दरगाह पहले जापान तत्पश्चात् मित्र राष्ट्रोंकी बमबाजीसे ७०० प्र० नष्ट हो गया था। द्वितीय महायुद्ध सितम्बर,

सन् १९३९ ई० को आरम्भ हुआ। जापान सन् १९४१ ई० के युद्धमे एक्सिस शक्तिकी ओरसे युद्धमे सम्मिलित हुआ। फरवरी सन् १९४२ ई० को जापानने सिगापुरपर अधिकार स्थापित किया। सितम्बर ५, सन् १९४५ ई० को जापानने सिगापुरका त्याग किया। इस समय सब डक आदि बन गये है। कभी यह नगर ध्वस्त हुआ था इसका पता भी नही चलता।

श्रेष्ठ बन्दरगाह—एशियाका सर्वश्रेष्ठ स्वास्थ्यप्रद शहर अथवा बन्दरगाह सिगापुर है। इम्प्रूवमेट ट्रस्टने अनेक आदर्श नगर बसाये है। स्लम नामकी चीज सिगापुरके लिए आश्चर्यजनक बात होगी। आधुनिकतम पुस्तकालय, सग्रहालय, अस्पताल आदि देखने योग्य है। सड़के चौड़ी, साफ-सुथरी तथा सीधी है। जनसख्या १५ लाख है। उनमे ८० प्रतिशत चीनी, १० प्रतिशत भारतीय तथा १० प्रतिशत मलायाके लोग आबाद है। सिगापुरमे भारतीय आबादी १,२०,००० है। सम्पूर्ण मलायामे भारतीय लगभग ७ लाख होगे। भारतीयोमे ८० प्रतिशत दक्षिणभारतके लोग हैं। उनमे ७० प्रतिशत केवल श्रमिक हैं, जो विभिन्न क्षेत्रोमे श्रम करते है। मलाया सबकी आबादी ६५,००,००० है। यदि इस ६५ लाखमें सिगापुरके १५ लाख जोड़ दिये जायँ तो मलायामे चीनी जातिका बहुमत हो जायगा।

ऊँचा जीवनमान—एशियामे सिगापुरका जीवन-निर्वाहका स्तर सबसे ऊँचा है। मैले वस्त्रोमे कोई नही दिखाई देगा। श्रमिकोंके हाथोमे भी घड़ी होगी। प्रति ८ व्यक्ति पीछे एक कार है। हम लोगोने सुना कि ५ श्रमिकोने मिलकर एक कार ली है। यह श्रमिकोका एक अनुभव है। यदि यह सफल हो गया तो सिगापुरका श्रमिक सबसे अधिक खुशहाल हो जायगा।

होटलो तथा खाने और पीनेके स्थानोकी भरमार है। होटल महँगे है। विदेशसे आनेवाले भारतीयोको रामकृष्ण मिशन अथवा किसी भारतीयके घर ठहरना चाहिये। रुपयेका यहाँ मोह नहीं है। खर्च करनेकी

ही समस्या सबके सामने रहती है। जितना लोग पैदा करते हैं प्रायः खर्च कर दिया करते हैं। केवल भारतीय इसके अपवाद समझे जाते हैं।

चीनी उद्योग—व्यापार चीनी तथा भारतीयोंके हाथोंमें है। चीनी सफल व्यापारी सिद्ध हुए हैं। मोल-भाव खूब होता है। बाजार विदेशी सामानोंसे पटा है। खपड़ैलसे लेकर आदमीतक बाहरसे आता है। मक्खन, दूध, तरकारी सब कुछ विदेशोंसे आता है। सिंगापुरमें स्वतः कुछ उत्पन्न नहीं होता। भारतीय प्रायः सिंगापुरके नागरिक हो गये हैं। यहाँकी राजनीतिमें काफी भाग लेते हैं।

मौजियों, व्यापारियों तथा अवैध व्यापार करनेवालोंका सिंगापुर अड्डा है। विश्वके प्रत्येक भागके जहाज तथा आदमी यहाँ मिलेंगे। यहाँके मूलनिवासियोंका लोप हो गया है। वे इस समयकी जातियोंमें सम्भवतः घुल-मिल गये हैं।

चीनियोंकी बहुसंख्या—यहाँ आनेपर मालूम होगा कि सिंगापुर चीनी उपनिवेश है। ननमाग विश्वविद्यालय चीनी जनताकी महान् कीर्ति है। लगभग ११०० एकड़ भूमिमें विश्वविद्यालय फैला है। कुल जमीन केवल १ व्यक्तिने दान दी है।

सबसे अधिक आश्चर्यकी बात यह है कि इतने बड़े विश्वविद्यालयमें एक पैसेकी भी मदद सरकारसे नहीं ली गयी है। विश्वविद्यालय केवल जनताके चन्देसे बनाया गया है। नगरके बाहर वह आदर्श विद्यामन्दिर पहाड़ियोंके चढ़ाव-उतारपर प्रकृतिकी गोदमें बड़ा सुन्दर मालूम होता है। इमारतें सादी, कलापूर्ण तथा उपयोगी बनी हैं। बालक-बालिकाओंकी सहशिक्षा होती है। यह अभी शैशवावस्थामें है। शिक्षाका माध्यम चीनी भाषा है। अँग्रेजी सभी जानते हैं। भारतीय भाषाओंमें हिन्दी या तमिल पढ़ायी जाय, इसपर विचार हो रहा है। यही प्रश्न हमसे भी पूछा गया। निस्सन्देह हम लोगोंने राष्ट्रभाषा हिन्दीपर जोर दिया। मुझे तमिल हिन्दी-का विवाद विदेशोंमें पसन्द न आया।

भारतीयोंका संघटन—भारतीयोंका यहाँ अच्छा संघटन है।

उत्तरभारत समाज भी है। इण्डियन असोसिएशन सिंगापुरकी प्रमुख सार्वजनिक संस्था है। उसका अपना भव्य भवन है। इसी भवनको देखकर श्रीलंका तथा अन्य देशवालोंने अपने देशोंका सामाजिक केन्द्र बनाया है। हम लोगोंको बम्बईके श्री आर० जुमाभाई सी० वी० ई०, जे० पी० एम० सी० एच० तथा एम० एल० राने रात्रिमे भोजन कराया। विदेशोंमे भारतीय अतिथि-सत्कारमे विशेष रुचि रखते है।

क्वारेण्टाइन—सिंगापुर आनेके दूसरे दिन हम 'क्वारेण्टाइन' देखने गये। यह एक पुरानी प्रणाली चली आती है। उसे बदलना चाहिये। प्रथम श्रेणीके यात्री सिंगापुर बंदरगाहपर उतर सकते है, परन्तु डक पैसेंजर अर्थात् तृतीय श्रेणीके यात्रियोको सिंगापुरसे तीन-चार मील दूर एक द्वीपके पास उतार लिया जाता है। वे इस द्वीपमे तीन दिनतक कैदियोके समान बैरेकमे रहते है। उन्हे वहाँ भोजन मिलता है। भोजनका मूल्य यात्रियोके टिकटके साथ ले लिया जाता है। इस टापूपर पीनेका पानी सिंगापुरसे आता है। यहाँ डाक्टर, अस्पताल आदि सब-कुछ है। यदि तीन दिनतक यात्री किसी बीमारीसे पीडित नही दिखाई पड़ता तो वह सिंगापुर जा सकता है। क्वारेण्टाइनसे बचनेके लिए प्रायः भारतीय यात्री पेनागमे उतर जाते है। पेनागकी दूसरी तरफ मलाया देशका भूखण्ड है। बदरवर्थ-की छोटी-सी आबादी है। प्रत्येक दस मिनटपर स्टीमर उस पारसे इसपार आता-जाता रहता है। हम लोग भी वहाँ गये थे। दर्शनीय कुछ नही है। केवल रेलवे स्टेशन है। क्वारेण्टाइनसे बचनेके लिए पेनागसे यात्री उतरकर यहाँ चला आता है। वहाँसे रेलवेसे सिंगापुर पहुँच जाता है। रेलवेसे यात्री जहाजकी अपेक्षा शीघ्र तथा सस्ते किरायेमे पहुँच जाता है। मलायामे भी यह व्यवस्था थी कि क्वारेण्टाइन प्रथा लागू की जाय। परन्तु भारतीयो तथा चीनियोके सम्मिलित प्रयाससे प्रथा लागू न हो सकी। पेनागके समीप भी एक द्वीपपर क्वारेण्टाइनका प्रबन्ध है।

कहा जाता है कि इस प्रथाके कारण सिंगापुरमे कोई बीमारी बाहरसे आकर फैल नहीं सकती। भारत सरकार तथा सभी चाहते हैं कि यह प्रथा तोड़ दी जाय, क्योंकि सभीके पासपोर्टके साथ स्वास्थ्य विभागका प्रमाणपत्र रहता है। कुछ समय पूर्व, कहा जाता है कि झूठे प्रमाणपत्र भारतीय डाक्टरोंने चला दिये थे। बीमार व्यक्तिके पास भी स्वस्थ होनेके प्रमाणपत्र थे। सम्भव है कि निकट भविष्यमें प्रथा तोड़ दी जाय।

गान्धी-स्मारक—गान्धी-स्मारक भवन सिंगापुरका अत्यन्त सुन्दर भवन तथा भारतीय कलाका प्रतीक है। भारतीय आबादीमें स्थित है। बहुत बड़ा, सुन्दर दोमंजिला हाल है। पुस्तकालय है। लगभग ३ लाख रुपया लगाकर भारतीयोने इस भवनका निर्माण कराया है। शायद भारतके बाहर वही केवल एक स्मारक है, जिसे भारतीयोने बनवाया है।

आइलैंड क्लब सिंगापुरमे दर्शनीय स्थान है। यह अन्तरराष्ट्रीय क्लब है। क्लबके समीप ही गोल्फका मैदान है। यह एक पहाड़ीपर बना है। इतना हरा-भरा और सुन्दर गोल्फका मैदान मैंने कहीं नहीं देखा। हरियाली इतनी अच्छी थी कि मालूम होता था कि किसीने एक कालीन बिछा दी हो। वहाँ पर स्नान करने, खाने, पीने, नाचने आदि सभीका प्रबन्ध है। सिंगापुर आकर उसे अवश्य देखना चाहिये।

बौद्ध मन्दिर—बौद्ध मन्दिर नगरमे अनेक है। सभी चीनियोंके हैं। एक मन्दिरमे लगभग एक सहस्र महिलाएँ भिक्षुणियाँ हुई है। लगभग पचास वर्षोंके पश्चात् सामूहिक भिक्षुणी-दीक्षा इतने बडे पैमानेपर दी गयी है। भिक्षुणी होनेके पश्चात् ६ बिन्दु मुण्डित मस्तकपर दाग दिये जाते है। बौद्ध मन्दिर सुन्दर है। भारतीयोके भी मन्दिर है। गिरजाघर और मसजिदें काफी बड़ी और उत्तम है।

जोहोर हम देखने गये। जोहोर ठोस पुल पार करनेपर पहुँच गये। जोहोर नगर भी बड़ा साफ-सुथरा और नये ढगसे बसाया गया है। जोहोरकी मसजिद एक बडी ही सुन्दर पहाड़ीपर बनी है। देखनेमे वह राज्यप्रासाद मालूम पड़ती है। खूब सजी है। इतनी साफ मसजिद हम

लोगोने नही देखी थी। वहाँके सुलतान अबूबकरने बनवाया था। जोहोर आनेपर मलाया लोगोकी आबादी मिलने लगी, यद्यपि बाजारका व्यवसाय चीनियोके हाथोमे है। हम जुमाभाईके साथ गये थे। लौटकर मार्गमे बोटानिकल गार्डन देखा। जुमाभाईके यहाँ ही रात्रिका भोजन था।

'टाइगर बाय हेल' दिल्लीके बिड़ला मन्दिरके समान एक विचित्र कलाकृति है। भगवान् बुद्धके जीवन तथा चीनी इतिहास सम्बन्धी अनेक गाथाएँ मूर्तियों तथा चित्रकारियोंमे दिखायी गयी है। यह स्थान सिगापुर-मे चीनी कलाका अद्भुत नमूना है।

सिंगापुरमे सिनेमा, चीनी थियेटर, ऑपेरा डान्स हाल आदिकी भरमार है। रात्रिमे कोई-न-कोई किसी-न-किसी प्रकार आनन्द मनाता है। चीनियोंके महाल तिलोक आपर स्ट्रीट तथा लूनतन स्ट्रीटमे पहुँचकर कोई यह नही कह सकता कि वह टिपिकल चीनी टाउनमे नहीं है।

मलाया संघके राज्य

जोहोर राज्यका किनारा चीनी सागर तथा मलक्का जल-डमरूमध्य दोनों ओर पड़ता है। यहाँसे सिंगापुरको जल दिया जाता है। यहाँ एक इण्टर-नेशनल क्लब है। बड़ा ही सुन्दर स्थान है। हम लोगोने यहाँपर चाय पी और कुछ विश्राम किया। जोहोर राज्यकी राजधानी 'जोहोर बहरू' सिगापुरके ठोस पुलसे सम्बन्धित है।

मलाया अल्पमतमे है। व्यापार चीनी लोगोके हाथोंमे है। रबरके बागोमे भारतीय काम करते दिखाई पड़े। सन् १५११ ई० मे मलक्का-विजयके पश्चात् प्रसिद्ध बेन्दहररा तेपोट भागकर यहाँ आया और मर गया। उसके साथियोने यहाँपर आबादी बसायी और धानकी खेती करने लगे। इस प्रदेशमे टिन, लोहा तथा रबड़ खूब होता है। राज्यमे दलदल बहुत है। जमीन नीची है। सन् १५११ ई० मे ही मलक्काका सुल्तान महमूद वहाँ भागकर आया और अपनी सल्तनत कायम की।

राजधानी 'कोटा टिंगरी'में थी। वह शत्रुओंसे आक्रान्त रहती थी, अतएव वर्तमान राजधानी 'जोहोर बहरू' बनी।

पहंग—पहंग मलाया संघका दूसरा राज्य है। मलायाके पर्वतीय समुद्र तटपर स्थित है। अत्यन्त अविकसित क्षेत्र है। जापानी आधिपत्य-कालमें यहाँ भी रेलवे लाइन उखाड़ दी गयी थी। पहंग नदी मलायाकी सबसे बड़ी नदी है। पेकनकी राजकीय मसजिद पहंग नदीपर ही स्थित है। दूरसे यह भी एक बड़े महल सी मालूम होती है। यहाँ सोनेकी खान है। मलायाका सबसे ऊँचा पर्वत 'गुनोंग तहन' इसी राज्यमें है। कुछ मूल मलय निवासी जैसे 'पंगन' आदि यहाँ है। गटापारचाकी खेती होनेवाले विश्वके दो स्थानोंमें एक पहंगके कुलातिपिसमें है।

त्रेंगनू—त्रेंगनू राज्य मलायाके पूर्वी तटपर है। अभीतक इस राज्यका सर्वेक्षण पूर्णतया नहीं हुआ है। इसके विषयमें बहुत कम जानकारी है। विकास भी नाममात्रका हुआ है। त्रेंगनू नदीकी धारा बहुत तेज रहती है। अतएव कुअल ब्रंगके ऊपर यह नदी नौपरिवहनके योग्य नहीं है। यहाँ मछली पकड़ने और हथकरघापर कपड़ा बुननेका काम होता है। सारंग अर्थात् लुगी यहाँकी प्रसिद्ध है। श्वेत धातु यहाँ होती है। उससे अनेक प्रकारकी आकर्षक वस्तुएँ बनायी जाती है। वे केलण्टनके चाँदीके सामानोंकी तरह होती हैं। यहाँके बने वस्त्रको केन सोंगकेट कहते है। चटाई, बैग, डलिया, पर्स, तश्तरी ढकनेके समान भी अच्छे बनते हैं। सन् १९०९ ई० मे स्याम अर्थात् थाईने इस प्रदेशका सब अधिकार अँग्रेजोंको सौंप दिया था।

केलण्टन—केलण्टन राज्य मलायाके पूर्वी तटपर स्यामकी सीमासे मिला है। केलण्टन दो शब्दों—किलट तथा तनटसे मिलकर बना है। शाब्दिक अर्थ है—'बिजलीका देश'। श्रीविजय साम्राज्यका कभी अंग था। राज्य पहाड़ी तथा ऊबड़खाबड़ भूमिमय है। जीवन परिश्रमशील है। स्त्रियाँ यहाँ खूब काम करती हैं।

उत्तर-पूर्वी मानसूनके कारण यहाँ पानी खूब बरसता है। अन्धड तथा

बाढ़ आती रहती है। चाँदीके कलाकारोंने अपने हस्तकौशलमें विशेषता प्राप्त की है। बाजारका काम महिलाएँ विशेष करती है। सरोंग अर्थात् लुंगी और चटाई आदि बुननेका काम अच्छा होता है। लगभग २० वर्ष पूर्व बटिक सरोंग बुननेका कार्य आरम्भ हुआ था। इस समय तीन हजार श्रमिक इस कार्यमे लगे हुए हैं। कोटा बहरुमे सबसे बड़ा कारखाना है, जिसमे ३०० श्रमिक काम करते हैं। यहॉकी स्त्रियॉ अत्यन्त स्वतन्त्रताप्रिय हैं। मलाया संघमे वे अपनी सुन्दरता तथा रंगबिरंगे पहनावेके लिए प्रसिद्ध है। कपड़ेकी छपाईका काम तथा दियासलाईका भी कारखाना है। लगभग १ हजार वर्गमीलमे धानकी पैदावार होती है। राज्यका संघटन अठारहवीं शताब्दीमे नोगं पण्डकने किया था। वर्तमान राज्यवंशकी स्थापना लोग पुनुसने की थी। केलण्टन अपने पुराने बन्दरगाह टुम्बटके स्थानपर कुअलवसर बनवानेका विचार कर रहा है।

परलिस—मलायाके पश्चिमी तटपर धुर उत्तरमे श्यामकी सीमापर परलिस सबसे छोटा राज्य है। वह सन् १९०९ ई० तक श्यामके अधीन था। श्यामने इस क्षेत्रकी प्रभुसत्ता अंग्रेजोंको दे दी। जापानी आधिपत्यके समय यह पुनः श्यामको दे दिया गया था। अंग्रेजोंके पुनःप्रवेशपर मलायाके मुसलिम कुटुम्बीय राज्यमे यह पुनः सम्मिलित कर लिया गया। यहॉका सुलतान 'अरऊ'में रहता है। प्रशासकीय केन्द्र कगरमे है। राज्यकी जनसंख्या केवल ७०,४९० है। उनमे ६३२४ व्यक्ति शहरोंमे रहते हैं। पहाड़ियॉ चूनेके पत्थरोंकी है। गोभामे अनेक गुफाऍ पानी बरसने तथा चूनेके पत्थरोंके बह जानेके कारण बन गयी हैं। कुछ गुफाओंमें टिन मिलता है। राजकीय मसजिद सुन्दर तथा बगीचेके बीचमे बनी हुई है। गुम्बद काले रंगका तथा शेष मसजिद श्वेत है। गुम्बदपर चॉद है।

केदाह—केदाह राज्य पश्चिमी तटपर परलिसके दक्षिणमे स्थित है। मलायाका पुराना जीवन यहॉ देखा जा सकता है। चीन तथा भारतके औपनिवेशकोंने जगल साफकर देशमे कृषि योग्य भूमि बनायी है। चौरस जमीन होनेके कारण धानकी खेती होती है। जनसंख्या ५४००० है।

उसमें १३·८ प्रतिशत जनता शहरोंमें रहती है। सन् १७८५ ई० मे पेनागका द्वीप केदाहके सुल्तानसे ईस्ट इंडिया कम्पनीने लिया था। सन् १८२१ ई० में केदाहपर श्यामने आक्रमण किया था। सुल्तान भागकर अंग्रेजोंकी शरणमे आ गया था। सन् १८४२ ई० मे सुल्तान पुनः केदाह प्राप्त कर सका। किन्तु श्याम अपनी प्रभुसत्ता बनाये रहा। सन् १९०५ ई० मे श्यामने एक ब्रिटिश सलाहकार केदाहमे नियुक्त किया और १९०९ ई० मे केदाहको पूर्णतया अंग्रेजोंको दे दिया। केदाह भूखण्डके समीपके द्वीपसमूह भी केदाह राज्यमें ही सम्मिलित हैं।

मलायामें केदाह सबसे अधिक धान पैदा करता है। रबरकी भी खेती खूब होती है। केदाहकी राजधानी एलोर स्टार नगरमें हवाई अड्डा है। एलोर स्टारकी राजकीय मसजिद सुन्दर है। गुम्बद काले और शेष मसजिद-की इमारत श्वेत हैं। अन्य नगर सुंगीपटनी, कुलिम तथा बलिंग हैं। गुसनमे एक बहुत बडा इसलामी मदरसा है। कुरान शरीफ तथा धार्मिक ग्रन्थ पढ़ाये जाते हैं।

पेनांग—मद्राससे चलकर हम लोगोंका जहाज पेनांग रुका। यहाँपर जुमाभाईके पुत्र मुस्तफा जुमाभाई ईस्टर्न शिपिंग कारपोरेशनके एजेंट हैं। वे हमसे जहाजपर ही आकर मिले। हम लोग मोटर-बोटसे उनके कार्या-लयमे आये। यहाँ सिख चौकीदार प्रायः मिलेंगे। उत्तरभारत और दक्षिणभारतके लोगोंकी काफी आबादी है।

पेनाग अत्यन्त रमणीय तथा सुन्दर द्वीप है, पर बाली जैसा सुन्दर नही है। फिर भी बालीके पश्चात् इसीको स्थान दिया जा सकता है। जुमाभाईके यहाँ चाय पीकर हम पेनाग देखनेके लिए रवाना हुए। पेनांगमे सायंकाल ५ बजेतक ठहरना था। प्रातः ७ बजे यहाँ पहुँच गये थे। हम लोग पेनागसे ९ मील दूर सर्पमन्दिर देखनेके लिए रवाना हुए। पेनांग हमें बहुत स्वच्छ लगा। सड़कें सीधी तथा मकान साफ-सुथरे थे। पेनांगमे मोटरसे चलना स्वयं एक आनन्ददायक बात है।

सर्पमन्दिर चीनियोंका है। यहाँ भारतीय मन्दिरो जैसे भिखमंगे

बाहर बैठे मिले। हमने समझा था कि बनावटी सर्प होगे। परन्तु हजारों सर्प मन्दिरकी छत, दीवार, टेबुल, कुर्सी, आलमारी तथा किवाडोपर लटके थे। हमे भय लगा। बीचमे बुद्ध-मूर्ति है। वहाँ भी सर्प थे। एक प्रकारकी धूपबत्ती जलती रहती है। कहा जाता है कि धूपकी सुगन्धसे सर्प सोने लगते है। उनमे काटनेकी प्रवृत्ति नही रहती। इस स्थानसे यथाशीघ्र बाहर आना चाहता था। सर्पका अण्डा भी देखा ? मन्दिरके बाहर दाहिनी ओर एक बडा अजगर था। सस्ते दिनमे वह एक मुर्गी रोज खाता था। एक चीनी बौद्ध भिक्षुने इस मन्दिरकी कल्पना की थी। उनका चित्र भी वहाँ लगा है।

पेनांगमे चीनी बहुसख्यक है। भारतीय तथा मलय आबादी भी है। आनेवाले अधिक श्रमिक अपनी स्त्रियोंके साथ नही आये, इसलिए यहाँ स्त्री-स्वच्छन्दता बहुत है। लगभग ५ हजार वेश्याएँ तो रजिस्टर्ड है। मलय संघमे पेनागके मिल जानेके पश्चात् वेश्यावृत्तिपर रोक लगानेकी योजना बन रही है। पेनाग म्युनिसिपल कारपोरेशनके चेयरमैन गैर-मलय है। भारतीय कारपोरेशनके सदस्य है। दो-तीन अंग्रेजी दैनिक अखबार निकलते है। समुद्रतटपर स्नानागार तथा होटलोकी कतारे मीलोतक चली जाती है। हम सर्पमन्दिर देखनेके पश्चात् लोन पाइन होटल पहुँचे। यह समुद्रके तटपर है। पाइनके वृक्ष लगे है। स्थान अत्यन्त सुरम्य है। होटल चीनी लोगोका है। यूरोपियन काफी सख्यामे यहाँ मिले। दो-चार सिख भाई भी सामान बेचनेके फेरमे घूमते दिखाई दिये। मुस्तफा भाईने यहाँ लचका प्रबन्ध किया था।

मद्रासके बाद हम लोगोने अभीतक डाभ अर्थात् नारियलका पानी नहीं पीया था। नारियलके वृक्षोंको देखकर डाभकी हमारे एक मित्रने तुरत फरमाइश की। चीनी कुशल व्यापारी तथा सेवक होते है। तुरन्त गाँवसे आदमी बुलाया गया। डाभका पानी हम लोगोके टेबुलपर १५ मिनटके अन्दर मौजूद हो गया। यदि भारतीय होटल होता तो निश्चय ही असमर्थता प्रकट कर क्षमायाचना करते। सोचते, कौन इतनी

तकलीफ उठाये ।

पेनांग तथा मलायामें किसी होटलमें शाकाहारी भोजनके लिए आज्ञा देना होटलवालेकी फजीहत करना है । हम सभी शाकाहारी थे । होटलवाला परेशान हुआ । परन्तु तुरन्त उसने अच्छे भोजनकी व्यवस्था कर दी । कहा जा चुका है कि मलायामें सभी खाद्यपदार्थ आयात किये जाते हैं । होटलवालेने भी टिन-बन्द आस्ट्रेलियाकी गोभी, गाजर, आलू, सैण्डविच, टमाटर, चीज, आइसक्रीम, रोटी, मक्खन आदिसे टेबुल भर दिया । प्रत्येक व्यक्ति पीछे १४ रुपया भोजन-का चार्ज किया । रुपया देते हुए अखरा नहीं । उनके व्यवहारने हमें मोह लिया था ।

पेनांगका बोटेनिकल गार्डेन अत्यन्त सुन्दर है । यहाँ झरना भी है । ऊपर 'बबनाकी' सरोवर बना है । यहाँ लंगूर बहुत हैं । आपके हाथसे चीनिया बादाम अथवा खानेकी चीजें लेकर खायेंगे । उद्यानकी सड़कें चौड़ी हैं । मोटरसे समस्त उद्यान घूमा जा सकता है । अफगानिस्तानके पागमान उद्यानकी याद आ गयी । फोटो खींचनेवाले चीनी घूमते मिलेंगे । यदि समय हो तो इस उद्यानमें कुछ समय प्रकृतिकी अनुपम शोभा निरखनेमें बिताया जा सकता है ।

पेनांग आकर पेनांग 'हिल बे रेलवे'से यात्रा अवश्य करनी चाहिये । विश्वकी यह भी मानवीय मस्तिष्ककी अद्भुत उपज है । पेनांगसे काफी दूरपर २२०० फुट ऊँची पहाड़ी है । इसी पहाड़ीपर रेल चढ़ती है । एक बोगी रहती है । उसमें प्रथम तथा द्वितीय श्रेणीका टिकट मिलता है । चलानेवाला हिन्दुस्तानी था । ऊँचाई जरा तिर्छी-सीधी है । एक डब्बा उतरता और साथ ही एक चढ़ता है । दोनों डब्बोंके बीचमें 'क्रासिंग' होती है । रेलवे लाइनपर स्टेशन बने हैं । स्टेशनोंपर गाड़ी रुकती चलती है । लगभग १२०० फुटपर जंकशन मिलता है । यहाँ डब्बा बदलना पड़ता है । ऊपर २२०० फुट ऊँचाईपर पहुँचनेपर पेनांगका भव्य दृश्य देखनेको मिलता है । शिखरपर हवा ठण्डी मिलती है । वहाँसे पेनांगका

जार्ज टाउन सुन्दर लगता है। पहाड़ीपर आबादी भारतीय तथा चीनी, दोनो समाजोकी है। भारतीय लोग शिखरपर भी मिले। शिखरपर बड़ा सुन्दर बगीचा तथा होटल है। होटलमे चाय पीकर हम पुनः रेलसे ही उतरे। इस रेलवेमे टनल भी कई एक बने है। टनलसे गाड़ी चलनेपर रोमाच हो आता है। लाइन सन् १९२९ ई० मे पूर्णतया बन गयी थी। सन् १९२२ ई० मे काम लगा था। टिकट लगभग ३=) उस समयके विनिमय बाजार भावसे लगा।

पेनांगका हितस मन्दिर—पेनांगमे आयर हितस मन्दिर दर्शनीय है। इसमे एक ऊँचा शिखरका मन्दिर है। उसे मिलियन बुद्ध मन्दिर कहते है। वह एक पहाड़ीपर बना है। इन्हे चीनी धार्मिक संग्रहालय कहे तो अतिशयोक्ति नही होगी। चीनी मन्दिरोमे एक बातका विशेष ध्यान रखना चाहिये। वहॉके प्रबन्धक आपको बुलाकर एक रजिस्टरपर हस्ताक्षर करनेके लिए कहेगे। हस्ताक्षर करनेका अर्थ है कि कुछ द्रव्य दानस्वरूप अपने नामके आगे लिखकर देना। यदि आप नहीं देते तो वे सख्त नाराज होते है। हमे यह व्यवस्था अच्छी नहीं लगी। मिलियन बुद्ध-मन्दिरके शिखरपर चढ़नेकी सीढ़ीके पास भी एक ऐसी ही व्यवस्था है। हम टिकट जैसा पैसा देकर ऊपर नही जाना चाहते थे, उन्होने हमे जाने नहीं दिया, इस प्रथाका अन्त होना चाहिये।

पेनांग भी फ्री पोर्ट है। लगभग २० लाख टन सामानका आयात-निर्यात इस बन्दरगाहसे होता है। सिगापुरमे सामान सस्ता मिलता है। मलाया संघमे मिलनेके कारण यह महत्त्वहीन नगर हो जायगा। इस समय यह बन्दरगाह है। मलायाके मुख्य भूभागपर बन्दरगाह बन जानेपर टिन, रबड़ आदिका आयात एवं निर्यात नवीन बन्दरगाहसे होगा न कि पेनागसे। मलाया संघमे मिल जानेके कारण पेनांग मलाया सघका एक अगमात्र रह गया है, उसकी अपनी स्वतन्त्रता नष्ट हो चुकी है। अबतक वह ब्रिटिश उपनिवेश था। फ्री पोर्टकी भी सुविधा आज नहीं तो कालान्तरमे जाती रहेगी। चीनी जनताका बहुमत होनेके कारण मलय

सघ तथा मलय जातिके लिए पेनांग विशेष आकर्षणकी वस्तु न रह जायगा।

पेनांगका निःशुल्क स्कूल सन् १८१६ ई० मे स्थापित हुआ था। मलायामे यह सबसे पुराना स्कूल है। नगरमें अनेक स्कूल तथा सार्वजनिक सस्थाएँ हैं। मलायाको बौद्धिक केन्द्र माना जाता रहा है। यहाँ बयन लेप्स हवाई जहाजका अड्डा है। मलायाके मुख्य भूभागपर भी मत कुचिग हवाई अड्डा है। पेनांगमें अनेक मसजिद, गिरजाघर, मन्दिर तथा बौद्ध विहार हैं।

हम लोगोंने ईस्टर्न ओरियण्ट होटलमे भोजन किया। यह पेनागका सर्वश्रेष्ठ होटल है। चीनी होटल है, शाकाहारी भोजन बड़े उत्तम ढंगसे स्वादिष्ठ बनाया था। होटल समुद्रके तटपर है, परन्तु महँगा बहुत है। पेनांगकी सडकोंपर वृक्षोंकी कतार बड़ी अच्छी लगती है। उनसे छाया रहती है। प्रांयः लोग 'रिटायर' होकर यहाँ रहने आते हैं। यहाँका पानी बहुत अच्छा तथा स्वास्थकर होता है।

मलायाकी राजधानी कालालम्पुर

'पेरक' राज्य मलक्काके अन्तिम सुलतानके बड़े पुत्रने स्थापित किया। इसका राजवंश अपनेको सिकन्दरका वंशज कहता है। सिकन्दरके वंश तथा वंशजोंपर हम पहले प्रकाश डाल चुके है। यहाँ राज्यका उत्तराधिकार पितासे पुत्रको नही मिलता। वह कुछ वंशोमे घूमता रहता है। सन् १८२४ ई० मे वंशकोर तथा सेम्बिलन द्वीप पेनागमे मिला लिये गये थे। सन् १९२४ ई० मे वे पुनः वापस कर दिये गये। सन् १८६९ ई० मे शाह इब्राहीम लारूतके मन्त्रीने स्वतन्त्रताकी घोषणा कर दी। सन् १८७१ ई० मे सुलतान अलीकी मृत्यु हो गयी। वास्तविक उत्तराधिकारी राज्य करनेके अयोग्य था। राजा बेन्दहरा इसमाइलने शासनसूत्र अपने हाथोमे ले लिया। गृहयुद्धसे राज्य जर्जर हो गया। सन् १८७४ ई० मे राज्यमे रेजीडेण्ट नियुक्त किया गया।

यह राज्य धान, टिन, रबड़, नारियल, 'पाम' तेल आदिके उत्पादन-

मे वहुत आगे वढ़ा हुआ है। पेरक जल-विद्युत् शक्ति-गृह भी यहाँ है। सुल्तानका राज्यप्रासाद कुअल केगसर पेरक नदीपर है। लुमुटमे मसजिद तथा इवोहमे चीनी मन्दिर दर्शनीय स्थान है। 'पब्लिक वर्क्स डिपार्टमेंट'-मे दक्षिणी भारतीय काम करते है। स्वास्थ्य-विभागमे जाफनाके तमिल डाक्टर काम करते है। 'टेपिंग' पेरकमे सुन्दर हिल स्टेशन है। प्रत्येक नगरमे कमसे कम एक स्कूल है।

सेलंगोर—पश्चिमी तटपर पेरक तथा नेगरी सेम्बिलानके बीचमें है। इसी राज्यमे मलय क्षेत्रकी राजधानी कालालम्पुर है। यहाँपर चीनी तथा इण्डोनेशियायी अधिक आबाद है। स्वीटनहम सन् १८७४ ई० मे ब्रिटिश रेजीडेण्ट हुआ। उसके समयमे राज्यकी बहुत उन्नति हुई। उसने क्वग नदीपर बन्दरगाह बनाया। इसका नाम उसीके नामपर स्वीटनहम रखा गया।

हम सिंगापुरसे लौटते समय यहाँ उतरे थे। यहीसे कार द्वारा काला-लम्पुर गये थे। दोनोमें लगभग ६ मीलका फासला होगा। हमारा जहाज प्रातःकाल सात बजे पहुँचा था। भारतीय व्यापारमण्डलके सभापति तथा मलाया सघके संसद-सदस्य श्री अबेदुल्ला यहाँ मिले। वे सुभाष बाबूके साथ काम कर चुके थे। एस० के० पाटिल साहबके सम्पर्कमे भी रह चुके थे। उन्होंने अत्यन्त आत्मीयताका परिचय दिया। उनके आतिथ्यको हम कभी भूल न सकेगे।

मलायाके इस बन्दरगाहसे भी काफी भारतीय आते-जाते है। मद्राससे जाते समय जहाज यहाँ नही रुकता। बन्दरगाहपर उतरते ही हम काला-लम्पुरके लिए कारसे रवाना हो गये। सड़क बहुत ही अच्छी है। दोनों ओर रबड़के बगीचे है। मार्ग अनेक स्थानोपर सड़कके किनारे है। कही तमिल महिला अपनी बच्चीके सरमे फीता बाँधती अथवा माला गूँथती दिखाई दी। कही तामिल पिता अपने छोटे कुटुम्बके साथ घूमता नजर आया। यह दृश्य देखकर हमारा हृदय भर आया। भारतीय अपने भारतीय रंगरूप तथा पोशाकमे जैसे अपने साथ छोटा भारत ही लिये

घूमता है। सड़क बहुत ही अच्छी है। रबड़के बाग दोनों ओर मिलेंगे। हम क्वालालम्पुर लगभग १० बजे दिनमें पहुँच गये। यहाँ हमने टिनकी खान, रबड़के बगीचे, रबड़के कारखाने देखे।

क्वालालम्पुर स्टेशन—क्वालालम्पुरका रेलवे स्टेशन दूरसे मसजिद मालूम होता है। मसजिद जैसी मीनार तथा गुम्बद बने हैं। जहाजपर ही मलायाके राजदूत श्री नायरके साथ श्री ओवेदुल्ला आये थे। हम लोग सीधे श्री नायरजीके निवासस्थानपर पहुँचे। अनेक दूतावास हमने देखे हैं। राजदूतोंका निवासस्थान भी देखा है। परन्तु नायरजीका निवासस्थान सादा, सुरुचिपूर्ण तथा भारतीयतामय था। श्रीमती नायर अल्पशिष्ट महिला हैं। वे हिन्दी, अंग्रेजी आदि भाषाएँ बोल लेती हैं। उन्होंने बड़े सौजन्यपूर्ण व्यवहारसे सबको मोह लिया। भारतीय ढंगपर चायका प्रबन्ध था। भारतीय मिष्टान्न तथा नमकीन खाकर मन पुलकित हो गया।

वहाँसे हम होटल पहुँचे। ओवेदुल्ला साहबने दोपहरके भोजनके लिए मन्त्रियोंको आमन्त्रित किया था। मलाया संघके लगभग सभी मन्त्रिगण उपस्थित थे। वे हमें अत्यन्त सरल, टीम-टाम-विहिन मालूम हुए। भारतके लिए उनके हृदयमें स्थान था। मलाया संघके भारतीय मन्त्री श्री सम्बन्धन् भी उपस्थित थे। खुलकर बात-चीत हुई। होटल चीनी लोगोंका था। प्रबन्ध अत्यन्त सुन्दर और भोजन स्वादिष्ट था। भारतीय पकवान बनाने-की सफल चेष्टा की गयी थी।

सबसे बड़ा फूल—भोजनके पश्चात् हम क्वालालम्पुरका राजकीय उद्यान देखने गये। उद्यान बड़ा ही उत्तम है। स्वातन्त्र्य-दिवसपर यहाँ खूब चहल-पहल रहती है। एक वृक्ष हमने वहाँ देखा। उसमें विश्वका सबसे बड़ा पुष्प लगा था। वह साठ वर्षोंमें एक बार फूला था।

स्वतन्त्रता-दिवस १५ अगस्तको मनाया जाता है। जिस स्थानपर उत्सव मनाया जाता है उसे स्टेडियम कहते हैं। उसकी रचना आधु-निकतम है। यह विश्वके प्रमुख स्टेडियमोंमेंसे एक है। इसीके समीप चीनी

लोगोंका एक क्लब देखा। भारतीय क्लबोंकी इससे तुलना नहीं की जा सकती। यह इतना साफ और सभी साधनोंसे युक्त है कि मन अनायास प्रसन्न हो जाता है। क्लबमें नाट्यघर, मल्लस्थान, स्थानागार, तैरनेका सरोवर, सभी अत्यन्त कलापूर्ण थे। खाने-पीनेका भी अच्छा प्रबन्ध था।

सुगी बुलोटमे कुष्ठ-रोगियोंका उपनिवेश है। पर्वतीय उपत्यकामें छोटी कुटिया बनी है। मानवकी सेवाका यह आदर्श केन्द्र अनायास श्रद्धासे सर झुकानेके लिए बाध्य करता है।

वाटू गुफा—नगरसे काफी दूरपर वाटू गुफाएँ है। लगभग २०० सीढ़ियाँ चढ़कर गुफामें पहुँचा जाता है। गुफा प्राकृतिक है। सम्भव है। वह किसी ज्वालामुखीका मुख रहा हो जो अब बन्द हो गया है। ऊपर भी झरोखे जैसा खुला है। उस गुफामें काफी रोशनी रहती है। यहाँ भी प्राकृतिक दृश्य बड़ा सुन्दर दिखाई देता है।

गुफामें सुब्रह्मण्यम् भगवान्की मूर्ति है। वर्षमे एक बार मेला लगता है। लगभग २ लाख भारतीय एकत्र होते है। गुफामे एक लाख आदमी बैठ सकते हैं। छोटी गुफामे भी २ हजार व्यक्ति बैठ सकते हैं। गुफामें भीड़ बहुत है। पुजारी तमिल ब्राह्मण हैं। गुफाकी दीवारोंपर जहाँतक मनुष्यका हाथ पहुँच सकता है, लोगोंने अपना नाम ग्राम आदि लिखा है। यहीपर यह भी लिखा था कि तमिल भाषा शुद्ध रखी जाय, उसमे दूसरी भाषाके शब्द न मिलाये जायँ आदि। गुफा पर्वतके मूलमे पुजारीका निवासस्थान तथा सिगरेट आदि बेचनेवाले एक हिन्दुस्तानीकी छोटी दूकान है। यहाँके डाभमे इतना पानी निकलता है कि एक व्यक्तिका पूरा पी जाना कठिन है।

ब्राजीलसे लाकर रबड़के बाग यहाँ लगाये गये थे। मलायाकी एक-मात्र कोयलेकी खान वाटूअरगमे है। अनन्नासकी यहाँ बड़े पैमानेपर खेती होती है। मलायामे यही फल सबसे अधिक होता है। रबड़के जूतोंके कई कारखाने हैं। साबुनका भी कारखाना है। अनेक कृषि विद्यालय तथा टेकनिकल स्कूल है।

राज्यकी प्राचीन राजधानी क्वालालम्पुरसे २३ मील दूर कंगमें थी। इस समय क्वालालम्पुर राज्य तथा मलाया संघ, दोनोंकी राजधानी है। नगर योजनानुसार निर्मित किया गया है। नवीन उपनगर बनते ही जा रहे हैं। मकान अत्यन्त सुन्दर, सादे तथा आकर्षक होते हैं। मकानोंकी टाइल्स रंग-बिरंगी होती है। उनकी पालिश दूरसे ही चमकती है। भारतीय, चीनी तथा मलय आबादी अलग-अलग है। चीनी मजदूर टिनकी खानों तथा भारतीय रबड़के उद्यानोंमे काम करते हैं। राजधानीकी आबादी संघकी राजधानी हो जानेके पश्चात् बढ़ती ही जा रही है।

मलक्का—मलक्कापर जिस समय पुर्तगालियोंने आधिपत्य स्थापित किया उस समय इस राज्यमें सुमात्राके हिन्दू आबाद थे। उन्हे मेनंगकबौस कहते थे। इसलाम धर्म ग्रहण कर लेनेपर भी उनके बीच अनेक रीति-रिवाज पुराने ही बरते जाते हैं। इसे 'आदत' कहते हैं। आदत एक परम्परा थी, जिसका अक्षरशः पालन किया जाता था। इसका प्राचीन नाम व्यवहार रहा होगा। इसलाम स्वीकार करनेके पश्चात् प्राचीन नाम बदलकर फारसी 'आदत' रख दिया गया है।

सिरेमबन (श्रीवन) राज्यकी राज्यधानी है। डिक्सन छोटा बन्दरगाह है। वह मलाया रेजिमेण्टका क्वार्टर है। वहाँके लोग मुकदमेबाज खूब होते हैं। दिवंगत सुलतान सर मुहम्मदके समयमें राज्यकी उन्नति काफी हुई।

मलय-कला—मलक्काका ऐतिहासिक महत्त्व है। उसके विषयमें बहुत कुछ लिखा जा चुका है। यहाँ पुराने मलक्काके सुलतानोंके वंशज, पुर्तगालियोंके वंशज तथा डचोंके वंशज अपनी-अपनी विरुदावली गाते हैं। वहाँ सन्त फ्रांसिस जेवियरकी समाधि थी। हालमें ही पुर्तगालियोंने उनके अवशेषोंको भारतके गोआमें ले जाकर दफन किया है। पुर्तगालियोंका बनवाया दुर्ग और चेंग हून तेंग चीना मन्दिर देखने लायक है। गाँवोंकी मसजिदें नेपाली मन्दिरों जैसी लगेंगी। यहाँ अन्य स्थानोंकी अपेक्षा अधिक शान्ति रहती है। जनता अधिकतर कृषिसे सम्बन्धित है।

बाहरी लोग यहाँ बहुत ही कम आबाद हुए है। चीनी कुटुम्ब सदियोंसे यहाँ आबाद है। वे चीनी भाषाके स्थानपर मलय भाषा बोलते है।

मलक्कामे मलय-कला मिलेगी। मलक्काके मकान मलय स्थापत्य तथा वास्तुकलाका एक प्रारूप सामने रखते है। उससे पता लगता है कि आधुनिक मकानोके पूर्व मलायाके मकान किस प्रकारके होते थे। मलक्काका महत्त्व समाप्त होता जा रहा है। उसके बन्दरगाहमे बालू बैठ रही है और पानी छिछला हो रहा है।

मलाया संघ—मलाया कामनवेल्थके अन्दर गणतन्त्र है। कोलम्बो नेशन्सका सदस्य है। गत १५ अगस्त सन् १९५७ ई० को मलाया सघकी स्थापना हुई। सन् १८६७ ई० तक वह भारत द्वारा शासित होता था। भारत मन्त्रीसे ब्रिटिश उपनिवेशमन्त्रीके हाथोमे शासनसूत्र आ गया। सन् १८१५ ई० तक मलाया संघमे केवल चार राज्य पेरक, सेलंगोर, नेग्री सेम्बलन तथा पहंग थे। सन् १८८५ तथा १९३४ ई० मे जोहोर राज्यको संरक्षण दिया गया। बंकाककी सन् १९०९ ई० की सन्धिके अनुसार और चार राज्य अर्थात् केलण्टन, ट्रेंगानू, परातेस और केदाहकी सत्ता श्याम-ने अग्रेजोको हस्तान्तरित कर दी। यह राज्य मलाया सघमे सम्मिलित नही किया गया। उन्हे 'संघबद्ध' राज्यकी संज्ञा दी गयी। वे ब्रिटिश सरक्षणमे रहे। पेनाग, सिगापुर, वेलेजली तथा मलक्का सन् १८२४ ई० मे मलाया जलडमरूमध्यके उपनिवेश माने गये। उनका प्रशासकीय केन्द्र सिगापुर था। सिगापुरमे लेजिसलेटिव कौसिल भी है। उसीके द्वारा प्रशा-सकीय कार्य होता था। १८ जनवरीसे ६ फरवरी १९५६ ई० तक लन्दन-मे सवैधानिक बैठके हुई। उसमे मलयका संविधान वर्तमान रूपसे स्वीकार किया गया। केवल सिगापुर अलग है। मलाया सघ ५०६९० वर्गमीलमे फैला है। इग्लैण्डके आकारका होगा। श्रीलकाका दूना होगा। मलाया संघके उत्तरमे श्याम तथा दक्षिण-पश्चिममे मलक्काके पश्चात् इण्डो-नेशिया गणतन्त्र है। मलाया सघका उसके स्थितिके कारण सामरिक महत्त्व है।

भूमध्यरेखाके समीप होनेके कारण यहाँ प्रायः वर्षा हुआ करती है। ऊमस खूब रहती है। तापमान एक-सा रहता है। ऋतुएँ प्रायः दो होती है। वर्षा दक्षिण-पश्चिम और उत्तर-पूर्व मानसूनसे होती है। प्रति वर्ष १०० इंच वर्षा होती है। मलायाके मध्यमे पर्वतमाला है। सबसे ऊँचा शिखर ७ हजार फुट ऊँचा है। समुद्रतट लगभग एक हजार मील लम्बा है। मलाया संघमे मलय लोगोंकी जनसंख्या ९० प्रतिशत, ४८ प्रतिशत बाहरी लोगोंके आकर आबाद हो जानेके कारण हो गयी है। कुल जनसख्या ६२,५२,३१७ है। उसमें २९,६७,२३३ मलय, २२,६६, ८८३ चीनी तथा ७,१३,८१० भारतीय हैं।

लगभग ११०० मील रेलवे लाइन मलायामे है। सड़कें ६५०० मील सीमेण्ट तथा तारकोलकी हैं।

रेलवे लाइनका सम्बन्ध पोर्ट स्वीटनहम, टेलुक अनसोन, डिक्सन, तथा पोर्ट वेल्डसे है। पोर्ट स्वीटनहमके उत्तरमे एक नवीन पोर्ट बनानेकी योजना है। इसके बननेपर पेनांग तथा सिंगापुरका महत्त्व कम हो जायगा।

संघमे ८ हवाई अड्डे तथा हवाई-जहाज उतरनेके २६ स्थान हैं। मलाया संघका सरकारी विमान विभाग १९ हवाई अड्डोंपर नियमित रूपसे सेवा करता है। सरकारी एयरवेजके अतिरिक्त गैरसरकारी मलाया एयरवेज भी है। कालालम्पुर सन् १९५६ ई० मे अन्तरराष्ट्रीय हवाई अड्डा बन गया है।

आयका स्रोत—मलाया संघकी आमदनी रबड़ तथा खनिज पदार्थोंसे है। सन् ५६ ई० मे मलायाने ६२,२९५ टन टिनका उत्पादन किया था। लागत लगभग ७ करोड़ रुपये थी। यूरोपियन खानोंसे ५८ प्रतिशत तथा चीनी खानोंसे ४२ प्रतिशत टिन निकाला गया था। इसके अतिरिक्त १९,४८,००० टन कोयला, १,५९,२३,००० टन लोहा, २५,९४,००० टन अलमुनियम तथा २२,८३८ औंस सोनेका निर्यात किया गया था। मलाया संघकी ४० प्रतिशत आय निर्यात-करसे होती है।

संघमे ७१ सरकारी अस्पताल है। उनमे १२,६६७ रोगियोके लिए 'शय्याएँ' हैं। इसके अतिरिक्त ५ सरकारी संस्थाएँ है जो 'कुष्ठ-निवारण'-कार्य करती है। उनमे ३३६९ 'वेड' है। दो मेण्टल अस्पताल है, जिनमे ४२ वेड हैं। रबड़ क्षेत्रमे ११६ अस्पताल है। उनमे ५२९४ वेड है। उनकी व्यवस्था रबड़-उत्पादक लोग निजी ढंगसे करते है। सन् १९१० ई० तक मलेरियासे लगभग ६३ प्रतिशत मृत्युएँ होती थीं। सन् १९५१ ई० मे मलेरियासे होनेवाली मृत्युएँ एक प्रतिशतसे भी कम अर्थात् ०.८६ प्रतिशत थी। स्वास्थ्यका इतना उत्तम कार्य शायद ही कही हुआ हो।

मलायामे चार प्रकारके स्कूलोंका विकास हुआ है—मलय, चीनी, इंगलिश तथा भारतीय। इनमे ८,७०,००० विद्यार्थी शिक्षा पाते है। प्रति-सात बालकोमे एक शिक्षा पाता है। मलय स्कूलोकी सख्या २,१४४ है। उनमे ३,६८,०१७ विद्यार्थी पढते है। इंगलिश स्कूलोमे १,७८;६४४ विद्यार्थी शिक्षा पाते है। चीनी स्कूलोंकी सख्या १२७६ है। उनमे २,७७, ४५४ विद्यार्थी अध्ययन करते हैं। भारतीय स्कूलोंकी संख्या सबसे कम अर्थात् ९१८ है। उनमे २६,२४७ विद्यार्थी पढ़ते हैं। परन्तु इंगलिश स्कूलोमे पढ़नेवाले भारतीय विद्यार्थियोकी संख्याका अनुपात २२ प्रतिशत है। वयस्क-शिक्षाके रात्रि-स्कूलोके २९६ क्लास लगते है। उनमे शिक्षा पानेवालोकी संख्या ४०४५ है।

संघीय सेवाकार्यमें भारतीय—मलाया सघकी नौकरियोमे कुल ७,२६,२८५ व्यक्ति लगे हैं। उनमे भारतीयोंकी सख्या २,५६,७६० है। इनमेंसे केवल रबड़के काममे १,४४,९०० अर्थात् ५० प्रतिशतसे ऊपर व्यक्ति लगे है। सघमे भारतीय आबादी ७,१३,८१० है। उसमे ५० प्रतिशत केवल दो राज्यों—परेक तथा सेलगोरमे क्रमशः १,८८,२३३ तथा १,९७,२३६ भारतीय निवास करते हैं।

भारतीयोका मलायामे भविष्य बहुत उज्ज्वल नहीं है। मुसलिम राज्य है। जनता धार्मिक है लेकिन धर्मान्ध नही। हिन्दुओकी सबसे बड़ी कमजोरी उनकी जाति-पाँति तथा विभिन्न भाषाएँ है। भारतीय अपना

एक पैर भारतमे और दूसरा मलायामे रखता है। इस नीतिका परित्याग करना पड़ेगा। मलायामें जो भारतीय हैं उनका त्राण इसीमे है कि वे मलायामे अपने कुटुम्बके साथ आबाद हो जायँ। यदि भारतमे १४ प्रतिशत मुसलमान रह सकते हैं तो १२ प्रतिशत हिन्दू भी ४८ प्रतिशत मुसलमानोंके देशमे रह सकते हैं। अपने धर्म तथा जातिकी रक्षाके लिए जाति-पाँतहीन समाज बनाना आवश्यक है। यदि यह नहीं होगा तो या तो भारतीय मलाया छोड़नेके लिए एक दिन बाध्य होंगे या पुराने हिन्दुओंके समान कालान्तरमे उन्हें भी इसलाम अथवा ईसाई धर्म-प्रचारकोंके सम्मुख मस्तक झुका देना होगा। इसका अर्थ होगा उनकी भारतीयताका अन्त।